



MAHS-11

जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण

Public Health and Community Nutrition



स्वास्थ्य विज्ञान विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण

Public Health and Community Nutrition



उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

तीनपानी बाई पास रोड, ट्रांसपोर्ट नगर के पास, हल्द्वानी-263139

फोन नं. 05946- 261122, 261123

टोल फ्री नं. 18001804025

फैक्स नं. 05946-264232, ई-मेल: info@uou.ac.in

<http://uou.ac.in>

अध्ययन बोर्ड					
प्रोफेसर आर0 सी0 मिश्र निदेशक स्वास्थ्य विज्ञान विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	प्रोफेसर रीता एस0 रघुवंशी अधिष्ठाता, गृह विज्ञान महाविद्यालय गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पन्तनगर, उत्तराखण्ड	प्रोफेसर लता पाण्डे विभागाध्यक्ष, गृह विज्ञान विभाग डी0एस0बी0 कैम्पस कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल, उत्तराखण्ड	डा0 हिना के0 बिजली सह-प्राध्यापक, सामुदायिक संसाधन प्रबंधन एवं विस्तार सतत शिक्षा विद्यापीठ इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली		
डॉ0 प्रीति बोरा अकादमिक एसोसिएट गृह विज्ञान विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	श्रीमती मोनिका द्विवेदी अकादमिक एसोसिएट गृह विज्ञान विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड				
विषय विशेषज्ञ समिति					
प्रोफेसर आर0 सी0 मिश्र निदेशक स्वास्थ्य विज्ञान विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 मनीषा गहलौत प्रोफेसर, वस्त्र एवं परिधान विभाग, गृह विज्ञान महाविद्यालय गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पन्तनगर, उत्तराखण्ड	डॉ0 अपराजिता विभागाध्यक्ष, गृह विज्ञान विभाग इंदिरा प्रियदर्शिनी राजकीय महिला स्नातकोत्तर वाणिज्य महाविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 छवि आर्या सहायक प्राध्यापक, गृह विज्ञान विभाग डी0एस0बी0 कैम्पस कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल, उत्तराखण्ड	डॉ0 लोतिका अमित सहायक प्राध्यापक, गृह विज्ञान विभाग मोतीराम बाबूराम राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 प्रीति बोरा अकादमिक एसोसिएट गृह विज्ञान विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
पाठ्यक्रम संयोजक		पाठ्यक्रम संपादन		इकाई अनुवादन	
डॉ0 प्रीति बोरा अकादमिक एसोसिएट गृह विज्ञान विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड		डॉ0 प्रीति बोरा अकादमिक एसोसिएट गृह विज्ञान विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड		इकाई 13- डॉ0 प्रीति बोरा अकादमिक एसोसिएट गृह विज्ञान विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	
इकाई लेखन	इकाई संख्या	इकाई लेखन	इकाई संख्या	इकाई लेखन	इकाई संख्या
डॉ0 पारुल बोरा अतिथि शिक्षक गृह विज्ञान विभाग राजकीय महाविद्यालय चम्पावत उत्तराखण्ड	1, 2, 3	बी0ए0 गृह विज्ञान, HSC-301 (सामुदायिक पोषण) तथा जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण में डिप्लोमा कार्यक्रम, DPHCN-04 (पोषण शिक्षा) का रूपांतरण एवं संशोधन	4, 5, 6, 10	डॉ0 प्रभा बिष्ट सहायक प्राध्यापक, गृह विज्ञान विभाग एस0डी0एम0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय डोईवाला, देहरादून उत्तराखण्ड	7, 8, 9, 11
इकाई लेखन	इकाई संख्या	इकाई लेखन	इकाई संख्या		
डॉ0 प्रीति बोरा अकादमिक एसोसिएट गृह विज्ञान विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	12	डॉ0 प्रतिभा सिंह विषय विशेषज्ञ (गृह विज्ञान) कृषि विज्ञान केन्द्र (KVK) उधम सिंह नगर काशीपुर उत्तराखण्ड	13		

ISBN-

समस्त लेखों/पाठों से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिए लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद के लिए जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल) होगा।

कॉपीराइट: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष: 2020

संस्करण: सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति

प्रकाशक: एम0पी0डी0डी0, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी- 263139 (नैनीताल)



उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण
Public Health and Community Nutrition
MAHS-11

खण्ड	इकाई	पृष्ठ संख्या
1 जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण का परिचय	इकाई 1: सार्वजनिक स्वास्थ्य की संकल्पना	2-20
	इकाई 2: सामुदायिक पोषण	21-37
	इकाई 3: राष्ट्रीय पोषण नीति	38-55
2 पोषण स्थिति का मूल्यांकन तथा भारत में प्रमुख पोषण सम्बंधी समस्याएं	इकाई 4: प्रत्यक्ष पोषण स्तर	57-90
	इकाई 5: अप्रत्यक्ष पोषण स्तर	91-127
	इकाई 6: भारत में पोषण सम्बंधी समस्याएं	128-175
3 राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय सामुदायिक पोषण कार्यक्रम	इकाई 7: राष्ट्रीय पोषण कार्यक्रम	177-199
	इकाई 8: पोषण स्तर संवर्धन एवं आय उपार्जन कार्यक्रम	200-218
	इकाई 9: राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पोषण संस्थाएं एवं पोषण कार्यक्रम	219- 250
4 सामुदायिक पोषण की अन्य अवधारणाएं	इकाई 10: पोषण शिक्षा	252-275
	इकाई 11: सार्वजनिक वितरण प्रणाली	276-294
	इकाई 12: खाद्य भ्रांतियाँ एवं मिथक	295-309
	इकाई 13: आपातकालीन स्थितियों में पोषण	310-328

खण्ड 1: जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण का परिचय

इकाई 1: सार्वजनिक स्वास्थ्य की संकल्पना

1.1 प्रस्तावना

-
- 1.2 उद्देश्य
 - 1.3 सार्वजनिक स्वास्थ्य की परिभाषा
 - 1.4 स्वास्थ्य के निर्धारक
 - 1.5 स्वास्थ्य के आयाम
 - 1.6 स्वास्थ्य का अर्थ
 - 1.7 स्वास्थ्य संवर्धन हेतु दृष्टिकोण
 - 1.8 स्वास्थ्य सूचक के अनुप्रयोग
 - 1.9 सारांश
 - 1.10 पारिभाषिक शब्दावली
 - 1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
 - 1.12 संदर्भ ग्रंथ सूची
 - 1.13 निबन्धात्मक प्रश्न
-

1.1 प्रस्तावना

भारत जैसे सभी विकासशील देशों में कुपोषण एक स्वास्थ्य समस्या है। पोषण या पर्याप्त आहार की कमी कुपोषण का वह रूप है जो सबसे अधिक व्यापक है। कुपोषण के कई कारण हैं और अक्सर यह अंतःसंबंधित होते हैं। कम खरीद शक्ति, पर्याप्त आहार की कमी के मुख्य कारणों में से गरीबी एक है क्योंकि गरीब परिवार अपने लिए पर्याप्त भोजन नहीं खरीद सकते हैं। कुछ समुदायों में, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में, पौष्टिक भोजन जैसे दूध पूरे वर्ष उपलब्ध नहीं होता है। इस प्रकार कभी-कभी भले ही परिवार पौष्टिक भोजन खरीद सकें, लेकिन खाद्य पदार्थों की गैर-उपलब्धता कुपोषण का कारण हो सकती है। खाद्य पदार्थों के महत्व से अनजान होना भी कुपोषण के प्रसार का एक और कारण है। जैसे प्रोटीन समृद्ध खाद्य पदार्थ जैसे दूध, अंडे और मछली क्षेत्रीय मान्यताओं के कारण बच्चों को नहीं खिलाया जाता है। शहरीकरण में वृद्धि भी कुपोषण का एक और कारण है। गांवों की जनसंख्या शहरों में आजीविका के बेहतर साधनों की उम्मीद से पलायन करती है। अक्सर ऐसे परिवारों के रहने की स्थिति भी गांवों की तुलना में और भी अधिक खराब होती है। भीड़-भाड़, स्वच्छता की कमी, दूषित पानी कुछ समस्याएं हैं। इसके अतिरिक्त पर्याप्त भोजन न होने की वजह से संक्रमण के लिए शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है जिस कारण व्यक्ति कई रोगों जैसे अतिसार आदि से ग्रस्त हो जाता है। इन संक्रमणों से शरीर की पोषक तत्वों की अवशोषण क्षमता भी कम हो जाती है।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी;

- सार्वजनिक स्वास्थ्य को परिभाषित कर स्वास्थ्य के निर्धारकों के बारे में जान पाएंगे;
- स्वास्थ्य के विभिन्न आयामों के बारे में जानेंगे; तथा
- स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतकों को जान पाएंगे।

1.3 सार्वजनिक स्वास्थ्य की परिभाषा

सार्वजनिक स्वास्थ्य रोगों को रोकने, दीर्घायु और संगठित प्रयासों के माध्यम से स्वास्थ्य को बढ़ावा देने का एक विज्ञान है, साथ ही यह समाज, संगठनों, सार्वजनिक और निजी, समुदायों और व्यक्तियों के बारे में जानकारी देता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य एक ऐसा क्षेत्र है जहां कई विषय और कई व्यवसायिक क्षेत्र सहयोग करते हैं। सार्वजनिक स्वास्थ्य पोषण, पोषण के माध्यम से अच्छे स्वास्थ्य के प्रचार पर केंद्रित है और जनसंख्या में पोषण संबंधी रोगों की प्राथमिक रोकथाम करता है।

आगे बढ़ने से पूर्व आइए स्वास्थ्य के निर्धारकों को विस्तार से समझें।

1.4 स्वास्थ्य के निर्धारक

व्यक्तियों और समुदायों के स्वास्थ्य को प्रभावित करने के लिए कई कारक एक साथ संयोजित होते हैं। व्यक्ति का स्वास्थ्य उनकी परिस्थितियों और पर्यावरण के द्वारा निर्धारित किया जाता है। हमारे निवास स्थान, हमारे पर्यावरण की स्थिति, आनुवंशिकी, आय, शिक्षा स्तर, दोस्तों और परिवार के साथ हमारे रिश्ते जैसे सभी कारकों का हमारे स्वास्थ्य पर काफी प्रभाव पड़ता है।

स्वास्थ्य के निर्धारण में निम्न कारक सम्मिलित हैं:

- सामाजिक आर्थिक और भौतिक वातावरण
- व्यक्तिगत विशेषताएं और व्यवहार
- आय और सामाजिक स्थिति: उच्च आय और सामाजिक स्थिति बेहतर स्वास्थ्य से जुड़ी हुई है। व्यक्तियों की आय में अंतर उनके स्वास्थ्य में अंतर को इंगित करता है।

- शिक्षा: शिक्षा का कम स्तर खराब स्वास्थ्य, अधिक तनाव और कम आत्मविश्वास से जुड़ा हुआ है।
- शारीरिक वातावरण: सुरक्षित पानी और स्वच्छ हवा, स्वस्थ कार्यस्थल, सुरक्षित घर, समुदाय और सड़कें सभी अच्छे स्वास्थ्य में योगदान करते हैं।
- संस्कृति: हमारे धार्मिक रिवाज और परंपराएं, परिवार और समुदाय के विश्वास सभी स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं।
- आनुवंशिकी: आनुवंशिकी कुछ रोगों जैसे अपक्षयी विकारों के विकास की संभावना का निर्धारण करने में भूमिका निभाती है।
- व्यवहारिक आदतें: संतुलित भोजन, क्रियाशीलता, धूम्रपान, शराब का सेवन और तनाव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं।
- स्वास्थ्य सेवाएं: स्वास्थ्य सेवाएं रोगों के प्रभावों को रोकने और उनका उपचार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- लिंग: अलग-अलग आयु में पुरुष और महिलाएं विभिन्न प्रकार के रोगों से पीड़ित होते हैं।

स्वास्थ्य के निर्धारक कई व्यापक श्रेणियों के अंतर्गत आते हैं:

- सामाजिक कारक
- स्वास्थ्य सेवाएं
- व्यक्तिगत व्यवहार
- जीवविज्ञान और आनुवंशिकी

इन कारकों के बीच अंतर्संबंध होता है जो व्यक्ति और जनसंख्या के स्वास्थ्य को निर्धारित करता है। इस कारण स्वास्थ्य के कई निर्धारकों को लक्षित करने वाले हस्तक्षेप सबसे ज्यादा प्रभावी होते हैं। स्वास्थ्य के निर्धारक, पारंपरिक स्वास्थ्य देखभाल और सार्वजनिक स्वास्थ्य क्षेत्रों की सीमाओं से परे पहुंचते हैं जैसे शिक्षा, आवास, परिवहन, कृषि और पर्यावरण जैसे क्षेत्र जनसंख्या स्वास्थ्य में सुधार के लिए महत्वपूर्ण सहयोगी हो सकते हैं।

1. सामाजिक कारक

स्वास्थ्य के सामाजिक निर्धारक, पर्यावरण के सामाजिक कारकों और शारीरिक स्थितियों को दर्शाते हैं जिसमें लोग पैदा होते हैं, रहते हैं, सीखते हैं, खेलते हैं, काम करते हैं और जीवन व्यतीत करते हैं। यह स्वास्थ्य के सामाजिक और शारीरिक निर्धारक के रूप में भी जाने जाते हैं। ये कारक स्वास्थ्य, कार्यप्रणाली और जीवन के गुणवत्ता के परिणामों की एक विस्तृत श्रृंखला को प्रभावित करते हैं।

सामाजिक निर्धारकों के उदाहरणों में निम्न शामिल हैं:

- दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए संसाधनों की उपलब्धता, जैसे शैक्षिक और रोजगार के अवसर, वेतन, स्वस्थ खाद्य पदार्थ
- सामाजिक मानदंड और व्यवहार, जैसे भेदभाव, अपराध, हिंसा
- बड़े पैमाने पर मीडिया और उभरती हुई प्रौद्योगिकियाँ जैसे इंटरनेट या मोबाइल फोन
- सामाजिक आर्थिक स्थिति जिसके अंतर्गत गुणवत्ता विद्यालयों तक पहुँच, परिवहन विकल्प, सार्वजनिक सुरक्षा
- भौतिक निर्धारक जैसे प्राकृतिक वातावरण, जलवायु परिवर्तन, सार्वजनिक सेवाएं जैसे इमारतें या परिवहन, कार्य-स्थल, स्कूल और मनोरंजन व्यवस्था, आवास, घर, और पड़ोस।

2. स्वास्थ्य सेवाएं

स्वास्थ्य सेवाएं और उनकी गुणवत्ता दोनों तक पहुंच स्वास्थ्य को प्रभावित करती है। स्वास्थ्य सेवाओं की कमी या सीमित पहुंच से व्यक्ति की स्वास्थ्य स्थिति पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है।

स्वास्थ्य सेवाओं में निम्न बाधाएं शामिल होती हैं:

- उपलब्धता की कमी
- उच्च लागत
- बीमा कवरेज की कमी
- उचित देखभाल प्राप्त करने में विलंब
- निवारक सेवाओं को प्राप्त करने में असमर्थता

3. व्यक्तिगत व्यवहार

उचित स्वास्थ्य के लिए व्यक्तिगत व्यवहार भी भूमिका निभाता है। उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति धूम्रपान छोड़ देता है, तो उसका हृदय रोग विकसित होने का जोखिम बहुत कम हो जाता है। कई सार्वजनिक स्वास्थ्य और स्वास्थ्य देखभाल के हस्तक्षेप, व्यक्तिगत शोषण जैसे पदार्थों के दुरुपयोग, आहार और शारीरिक गतिविधि को बदलने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। व्यक्तिगत व्यवहार में सकारात्मक बदलाव अपक्षयी रोगों की दर को कम कर सकते हैं।

व्यक्तिगत व्यवहार जो स्वास्थ्य के निर्धारक हैं:

- आहार
- शारीरिक गतिविधि
- शराब, सिगरेट, और अन्य नशीली दवाओं के उपयोग
- हाथ धोना

4. जीवविज्ञान और आनुवंशिकी

कुछ जैविक और आनुवंशिक कारक दूसरों की तुलना में कुछ विशिष्ट जनसंख्या को प्रभावित करते हैं, उदाहरण के लिए, आयु बढ़ने के शारीरिक और संज्ञानात्मक प्रभावों के कारण बुजुर्ग किशोरों की तुलना में रोगों के लिए जैविक रूप से प्रवण होते हैं। स्वास्थ्य के जैविक और आनुवंशिक सामाजिक निर्धारकों के उदाहरणों में निम्न शामिल हैं:

- आयु
- लिंग
- एचआईवी स्थिति
- आनुवंशिक बीमारियाँ
- हृदय रोग का पारिवारिक इतिहास

आगे बढ़ने से पूर्व आइए कुछ प्रश्नों को हल करने का प्रयास करें।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।

- a. भारत जैसे सभी विकासशील देशों में..... एक स्वास्थ्य समस्या है।
- b. औरव्यक्तिगत व्यवहार हैं जो स्वास्थ्य के निर्धारक हैं।

c.और..... बेहतर स्वास्थ्य से जुड़ी हुई है।

उपरोक्त प्रश्नों के बाद, आइए स्वास्थ्य के आयामों का विस्तार से अध्ययन करें।



1.5 स्वास्थ्य के आयाम

स्वास्थ्य के पांच आयाम होते हैं- शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक और सामाजिक।

स्वास्थ्य के ये पांच आयाम स्वास्थ्य का पूर्ण चित्र प्रदान करते हैं क्योंकि किसी भी एक आयाम में बदलाव दूसरे आयाम को प्रभावित करता है।

शारीरिक स्वास्थ्य

स्वास्थ्य के भौतिक आयाम स्वास्थ्य के शारीरिक पहलू को दर्शाते हैं। यह रोग और चोट की अनुपस्थिति के रूप में स्वास्थ्य की अधिक परंपरागत परिभाषाओं को संदर्भित करता है। एक निरंतरता के साथ गुणवत्ता में शारीरिक स्वास्थ्य श्रेणी है जहां एक छोर पर कैंसर, मधुमेह, हृदय रोग या उच्च रक्तचाप जैसे रोगों का संयोजन है और दूसरे पर व्यक्ति की इष्टतम शारीरिक

स्थिति है। स्वास्थ्य की गिरावट के रूप में शारीरिक स्वास्थ्य, स्वास्थ्य के अन्य आयामों को प्रभावित कर सकता है या स्वास्थ्य के अन्य रूपों में गिरावट का कारण बन सकता है। जैसे एक व्यक्ति को अचानक फ्लू हो जाता है तब वह अक्सर सामाजिक रूप से अलग होता है ताकि दूसरे संक्रमित नहीं हों और इस अलगाव के परिणामस्वरूप वह दुखी महसूस कर सकता है।

मानसिक स्वास्थ्य

मानसिक स्वास्थ्य, स्वास्थ्य के संज्ञानात्मक पहलू को संदर्भित करता है। अक्सर मानसिक स्वास्थ्य में भावनात्मक स्वास्थ्य शामिल होता है। मानसिक स्वास्थ्य मस्तिष्क से सम्बंधित है, जबकि भावनात्मक स्वास्थ्य व्यक्तियों की उस मनोदशा को संदर्भित करता है जो अक्सर हार्मोन स्रावण से जुड़ा होता है। मानसिक स्वास्थ्य में अल्जीमर और विक्षिप्तता जैसी कई मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं भी शामिल होती हैं। यह व्यक्तियों को उनके मस्तिष्क का उपयोग करने और सोचने की क्षमता को दर्शाता है। यह समस्या को हल करने या सूचना को याद करने के लिए भी हो सकता है, लेकिन व्यक्ति के संज्ञानात्मक पहलू पर अधिक केंद्रित होता है। मानसिक स्वास्थ्य देखभाल, स्वास्थ्य के अन्य आयामों को प्रभावित करती है। मानसिक स्वास्थ्य में वृद्धि बढ़ी हुई शारीरिक गतिविधि का परिणाम हो सकता है और अच्छा मानसिक स्वास्थ्य मानसिक प्रदर्शन में सुधार करता है जिससे आत्मसम्मान में वृद्धि होती है। यह आत्मसम्मान सामाजिक स्थितियों में अधिक आत्मविश्वास की ओर ले जाता है जिससे आध्यात्मिक स्वास्थ्य में वृद्धि हो सकती है।

भावनात्मक स्वास्थ्य

भावनात्मक स्वास्थ्य व्यक्तियों के मन या सामान्य भावनात्मक स्थिति के बारे में होता है। यह पर्याप्त रूप से भावनाओं को पहचानने और व्यक्त करने की हमारी क्षमता है। यह व्यक्ति के आत्मसम्मान से संबंधित होता है और साथ ही उसकी क्षमता स्थितियों पर यथार्थवादी परिप्रेक्ष्य को बनाए रखने के लिए अपनी भावनाओं को नियंत्रित करता है। भावनात्मक और मानसिक स्वास्थ्य के बीच संबंध स्पष्ट है और जैसे कुछ रोग दोनों से संबंधित हैं, जैसे: अवसाद और चिंता। भावनात्मक स्वास्थ्य स्वास्थ्य के अन्य आयामों को प्रभावित करता है जैसे ऐसा व्यक्ति अधिक सामाजिक होता है और शारीरिक गतिविधियों में बेहतर प्रदर्शन करता है।

आध्यात्मिक स्वास्थ्य

आध्यात्मिक स्वास्थ्य हमारे जीवन में समग्र उद्देश्य की भावना से संबंधित होता है। जो व्यक्ति जीवन में उद्देश्य रखता है वह उन लोगों की तुलना में स्वस्थ माना जाता है जो जीवन में कोई

उद्देश्य नहीं रखते हैं। आध्यात्मिक स्वास्थ्य बहुत ही आसानी से भावनात्मक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है क्योंकि जीवन में उद्देश्य होने से लक्ष्य प्राप्त करने के लिए मदद मिल सकती है। जीवन के उद्देश्य से लोगों को जीवन पर उचित परिप्रेक्ष्य बनाए रखने और प्रतिकूलता से उबरने में मदद मिल सकती है।

सामाजिक स्वास्थ्य

स्वास्थ्य के सामाजिक आयाम दूसरों के साथ सार्थक संबंध बनाने और उन्हें बनाए रखने की हमारी क्षमता को दर्शाता है। अच्छे सामाजिक स्वास्थ्य में न केवल संबंध निहित होते हैं, बल्कि उचित व्यवहार करना और सामाजिक रूप से स्वीकार्य मानकों को बनाए रखना भी शामिल होता है। सम्बंधों की आधारभूत सामाजिक इकाई परिवार होता है जो एक व्यक्ति के जीवन को सबसे अधिक प्रभावित करता है। सामाजिक स्वास्थ्य कई मायनों में स्वास्थ्य के अन्य आयामों को प्रभावित करता है। एक बुरा सामाजिक जीवन एक व्यक्ति के जीवन के उद्देश्य में प्रश्न लगा सकता है या वह पृथक और अवांछित महसूस कर सकता है। ऐसी भावनाएं लोगों को अवसाद से पीड़ित कर सकती हैं तथा स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकती हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा स्वास्थ्य की अधिक पूर्ण परिभाषा इस प्रकार दी गई है:

“स्वास्थ्य न केवल बीमारी या दुर्बलता का अभाव है अपितु यह पूर्ण रूप से शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण की स्थिति है”।

यह परिभाषा 1948 के बाद से बदली नहीं गई है और यह स्वास्थ्य के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक आयामों की पहचान करती है, लेकिन अभी भी आध्यात्मिक और भावनात्मक आयामों की उपेक्षा है।

1.6 स्वास्थ्य का अर्थ

स्वास्थ्य का अर्थ, स्वास्थ्य की कई विभिन्न धारणाओं पर जोर देता है। कभी-कभी लोग भावनात्मक और मानसिक स्वास्थ्य को जोड़ते हैं, लेकिन दोनों स्पष्ट रूप से अलग होते हैं। स्वास्थ्य के आयामों से यह समझने में मदद मिलती है कि स्वास्थ्य के लिए कई भिन्न कारक हैं जो हमारे नियंत्रण से बाहर कई तत्वों से प्रभावित होते हैं। यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि स्वास्थ्य के पांच आयाम कैसे एक दूसरे से संबंधित हैं। स्वास्थ्य की सापेक्ष और गतिशील प्रकृति होती है। यह इस तथ्य को दर्शाती है कि स्वास्थ्य स्थिति लगातार बदलती रहती है। कुछ व्यक्तियों में जीवनशैली के कारण रोग विकसित होते हैं, जो अधिकांश धीरे-धीरे विकसित होते हैं। स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव के लिए एक स्वस्थ आहार लाभकारी हो

सकता है। स्वास्थ्य हमारी स्थितियों के अनुसार भी बदलता रहता है जैसे वातावरण की शुद्धता स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव डालती है।

1.7 स्वास्थ्य संवर्धन हेतु दृष्टिकोण

जनसांख्यिकीय संकेतक

किसी देश की जनसांख्यिकीय विशेषताओं में जनसंख्या का आकार, संरचना, क्षेत्रीय विशेषताओं का अवलोकन प्रदान होता है और उसमें परिवर्तन के घटकों जैसे मृत्यु दर और सामाजिक गतिशीलता शामिल होती है। जनसांख्यिकीय संकेतकों को दो भागों में विभाजित किया गया है- जनसंख्या सांख्यिकी और महत्वपूर्ण सांख्यिकी।

जनसंख्या के आंकड़ों में शामिल होने वाले संकेतकों में जनसंख्या का आकार, लिंग अनुपात, घनत्व और निर्भरता अनुपात शामिल हैं जबकि महत्वपूर्ण सांख्यिकी में जन्म दर, मृत्यु दर और प्राकृतिक वृद्धि दर, जीवन प्रत्याशा और प्रजनन दर जैसे संकेतक शामिल हैं।

देश और राज्यों के लिए ये संकेतक ऐसे क्षेत्रों की पहचान करने में मदद करते हैं जिनमें नीति विकास और क्रमादेशित हस्तक्षेपों की आवश्यकता होती है। एक एकीकृत संरचना में उन्हें समझने के अलावा, निकट और दूरगामी लक्ष्यों की स्थापना करने में भी मदद करते हैं।

बेहतर स्वास्थ्य सीधे जनसंख्या आकार, आयु-वर्ग की संरचना, श्रम बल की भागीदारी और उत्पादकता स्तर को प्रभावित करता है।

कुल जनसंख्या

वर्ष के मध्य भाग में (1 जुलाई इंगित) देश की वास्तविक जनसंख्या इस जनसांख्यिकीय संकेतक के रूप में हजारों में प्रस्तुत की जाती है। इस कुल जनसंख्या में जोखिम की जनसंख्या को संरक्षित किया जाना चाहिए जैसे प्रतिरक्षण के लिए पात्र बच्चों की कुल संख्या, जन्मपूर्व देखभाल के लिए गर्भवती महिलाओं की कुल संख्या आदि। दशमलव के लिए यह अनुपात, स्वास्थ्य सेवाओं के प्रदर्शन को निर्धारित करता है।

जनसंख्या वृद्धि दर

वार्षिक जनसंख्या वृद्धि दर एक निश्चित अवधि के दौरान जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि का औसत घातांक दर है जो आमतौर पर पंचवर्षीय (5 वर्ष) अवधि होती है। यह कुल जनसंख्या का एक निर्धारक संकेतक है। एक देश अपनी जनसंख्या वृद्धि को कुछ कारकों के प्रकाश में

क्षेत्र के घनत्व के रूप में उच्च, बहुत कम या संतोषजनक समझ सकता है; जैसे स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली की क्षमता और विकास हेतु आवश्यक मानव संसाधन।

जनसंख्या की प्राकृतिक वार्षिक वृद्धि दर

प्रजनन दर, मृत्यु दर और अंतर्राष्ट्रीय प्रवास किसी देश की जनसंख्या का आकार निर्धारित करते हैं। प्रजनन या जन्म दर और मृत्यु दर दोनों जनसंख्या के प्राकृतिक विकास का निर्धारण करते हैं। एक लंबी अवधि में इन दो चर की परिमाण में तुलनात्मक भिन्नता को जनसांख्यिकीय परिवर्तनकाल (Demographic Transition) कहा जाता है और यह जनसंख्या की उच्च जन्म दर को चिह्नित करता है। इनके बीच में दो अन्य विशेषताएं हैं जिसके चार निम्न चरण हैं:

- जनसांख्यिकीय परिवर्तन का पहला चरण वह समय होता है जब जन्म दर और मृत्यु दर दोनों में काफी अधिक उतार-चढ़ाव होता है। यह वह अवधि है जब जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि दर काफी कम होती है।
- परिवर्तनकाल का दूसरा चरण तब होता है जब मृत्यु दर में गिरावट शुरू होती है जबकि जन्म दर स्थिर रहती है। यह वह अवधि है जब जनसंख्या वृद्धि दर बढ़कर अधिकतम दर तक पहुंचने लगती है।
- तीसरे चरण में, मृत्यु दर में गिरावट की प्रतिक्रिया के रूप में जन्म दर में भी गिरावट शुरू होती है।
- चौथा चरण तब होता है जब जन्म दर और मृत्यु दर काफी करीब होती है और जन्म की दर प्रतिस्थापन स्तर के करीब होती है और उसमें उतार-चढ़ाव होता है। इसमें जनसंख्या का प्राकृतिक विकास या तो बंद हो जाता है या कम हो जाता है। इस स्तर में देश अक्सर कुछ अंतर्राष्ट्रीय प्रवासी जनसंख्या के आप्रवासन के माध्यम से जनसंख्या का आकार संतुलित रखते हैं। जनसांख्यिकीय संतुलन एक दीर्घकालिक लक्ष्य है जिसे तब प्राप्त किया जा सकता है जब जनसंख्या की जन्म दर मृत्यु दर के बराबर हो, जब प्रतिस्थापन का स्तर पूरा हो और दरें स्थिर हों।

अंतर्राष्ट्रीय प्रवासन

यदि जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि दर (जन्म दर और मृत्यु दर के बीच का अंतर) बहुत अधिक या बहुत कम होती है, तब देश की जनसंख्या के आकार को बनाये रखने के लिए यह जरूरी है कि देश अपनी आवश्यकता के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय प्रवास की अनुमति देकर इसे

संतुलित करे। यद्यपि प्रवासियों का बहुत बुद्धिजीवी और अत्यधिक कुशल होने पर अंतर्राष्ट्रीय प्रवासन कुछ लोगों द्वारा प्रतिभा पलायन के रूप में देखा जाता है।

कुल उर्वरता दर या कुल प्रजनन दर

इसका अर्थ है एक औरत के जीवन काल में जन्म लेने वाले बच्चों की कुल संख्या, यदि वह जनसंख्या में आयु विशिष्ट प्रजनन की प्रचलित दर के अधीन है। प्रति महिला 2.1 बच्चों की कुल प्रजनन दर, प्रतिस्थापन स्तर प्रजनन कहलाता है। यह मान बच्चों की औसत संख्या को दर्शाता है।

जनसंख्या आयु संरचना के स्वरूप में बदलाव

आयु और लिंग द्वारा प्रमुख आयु समूहों का स्वरूप बदलना, जनसंख्या पिरामिड द्वारा जनसंख्या के संयोजन में बदलाव, प्रजनन में कमी के परिणामस्वरूप जनसंख्या की संरचना में परिवर्तन आदि आर्थिक विकास के लिए फायदेमंद हैं। जैसे जनसंख्या की प्रजनन क्षमता में गिरावट आती है, जनसंख्या में बच्चों का अनुपात गिरता है और कामकाजी आयु की जनसंख्या का अनुपात बढ़ जाता है। एक देश बढ़े हुए उत्पादन का लाभ उठा सकता है जब कार्यशील आयु की बढ़ती जनसंख्या कार्यरत नौकरी के लिए उपलब्ध हो। यह तथाकथित "जनसांख्यिकीय बोनस" कहलता है जो आर्थिक विकास और गरीबी में कमी के लिए काफी योगदान कर सकता है।

वृद्ध जनसंख्या

अगर लंबे समय तक प्रजनन क्षमता में गिरावट जारी रही तो कामकाजी आयु की जनसंख्या का हिस्सा भी कम हो जाता है और वृद्ध व्यक्तियों की संख्या बढ़ जाती है, जिससे निर्भरता अनुपात बढ़ जाता है। जब ऐसा होता है, तो इस घटना को 'जनसांख्यिकीय बोझ' कहा जाता है। यह जनसांख्यिकीय परिवर्तन का एक अनिवार्य परिणाम है।

लिंग अनुपात

मानव प्रजातियों में जन्म के समय पुरुषों और महिलाओं के बीच का अनुपात महिला लिंग के प्रति पक्षपातपूर्ण रहा है। यदि देश की जनसंख्या का लिंग अनुपात बराबर नहीं होता है, इसका अर्थ है कि पुरुष प्रधान वाले समाज प्रकृति में हस्तक्षेप करते हैं और लिंग-चयनात्मक गर्भपात और शिशुहत्या द्वारा महिलाओं की संख्या को कम करते हैं। संतुलित लिंग अनुपात के लिए महिलाएं वांछनीय हैं।

जनसंख्या घनत्व

महामारीविदों को उच्च जनसंख्या घनत्व और स्वास्थ्य पर इसके नकारात्मक प्रभाव का बहुत अच्छी तरह से पता है। पर्यावरण, संसाधनों पर अधिक बोझ और व्यक्तिगत स्वास्थ्य, महामारी के अलावा कुछ उच्च घनत्व वाले क्षेत्रों में खसरा, गैस्ट्रोएन्टेरिटिसिस, इन्फ्लूएंजा, टीबी जैसी बीमारियाँ इस बात की गवाह हैं।

शहरीकरण

शहरीकरण, औद्योगिकीकरण और विकास प्रक्रिया की देन है। लोगों की नौकरी की तलाश और बेहतर सुविधाओं के लिए ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों में जाने की एक प्राकृतिक प्रवृत्ति है। इससे शहरो पर दबाव बढ़ता है और अक्सर झुग्गी बस्ती पैदा होती है, जहां लोग पानी की आपूर्ति, स्वच्छता जैसे गंभीर समस्याओं का सामना करते हैं। इन स्थितियों में संक्रामक रोग बढ़ते हैं। सशक्त विकास के लिए बेहतर शहरीकरण के लिए सभी हितधारकों के पार-क्षेत्रीय सहयोग की आवश्यकता है।

महत्वपूर्ण पंजीकरण

जीवन में जन्म और मृत्यु महत्वपूर्ण घटनाएं हैं और उनकी रिकॉर्डिंग और रिपोर्टिंग को महत्वपूर्ण पंजीकरण कहा जाता है। हर वर्ष जन्म लेने वाले एवं मरने वाले व्यक्तियों की संख्या के अलावा स्वास्थ्य एजेंसियों को इन घटनाओं के न्यूनतम आवश्यक गुण भी जानना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, मां की आयु और नवजात शिशु के जन्म के आंकड़े उपयुक्त प्रजनन सेवाओं और दीर्घकालिक राष्ट्रीय नीति के लिए योजना बनाने में मदद कर सकते हैं। जनसंख्या समूहों और रोग कार्यक्रमों के लिए तर्कसंगत रूप से संसाधनों को आवंटित करने के लिए लिंग, आयु और अन्य कारणों से होने वाली मौतों पर आंकड़े आवश्यक हैं।

आगे बढ़ने से पूर्व आइए कुछ प्रश्नों को हल करने का प्रयास करें।

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही अथवा गलत बताइये।
 - a. स्वास्थ्य के पांच आयाम होते हैं जो कि स्वास्थ्य का पूर्ण चित्र प्रदान करते हैं।
 - b. मानसिक स्वास्थ्य, व्यक्तियों के उस मनोदशा को संदर्भित करता है जो अक्सर उनके हार्मोन से जुड़े होते हैं।
 - c. आध्यात्मिक स्वास्थ्य बहुत ही आसानी से भावनात्मक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है।

अब हम स्वास्थ्य सूचक के अनुप्रयोगों के बारे में चर्चा करेंगे।

1.8 स्वास्थ्य सूचक के अनुप्रयोग

सामान्यतः स्वास्थ्य संकेतक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीति को निर्देशित करने के लिए उपयोग किए जाते हैं जबकि स्वास्थ्य सूचक को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वैश्विक स्वास्थ्य का वर्णन करने के लिए उपयोग किया जाता है जिसकी विशेषताएं निम्नलिखित हैं:

- स्वास्थ्य सूचकों को इस तरह परिभाषित किया जाना चाहिए जिससे कि वह अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक समान रूप से मापे जा सकें।
- इनमें सांख्यिकीय वैधता होनी चाहिए।
- इन्हें सूचक डेटा के रूप में होना चाहिए जो संभवतः एकत्र किए जा सकें।
- डेटा के विश्लेषण से जो निष्कर्ष निकले उसके परिणामस्वरूप लोग स्वास्थ्य में सुधार करने के लिए परिवर्तन

स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतक

सभी के लिए उत्तम स्वास्थ्य की संकल्पना तभी साकार होगी जब समुदाय के सभी लोग हर स्तर पर अपनी भागीदारी समझें। स्वास्थ्य देखभाल प्रत्येक नागरिक की पहुँच के अन्दर होनी चाहिए। सभी नागरिकों को बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाएँ मुहैया कराना सरकार का अन्तिम लक्ष्य होना चाहिए।

स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतक निम्नलिखित अवयवों से प्राप्त किए जा सकते हैं:

1. पोषण स्तर एवं मनोसामाजिक विकास
2. शिशु मृत्यु दर
3. बाल मृत्यु दर
4. पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों में मृत्यु दर
5. जीवन प्रत्याशा
6. मातृ मृत्यु दर
7. रोग विशिष्ट मृत्यु दर

आइए प्रत्येक के विषय में चर्चा करें।

1. पोषण स्तर एवं मनोसामाजिक विकास

पोषण स्तर एक सकारात्मक स्वास्थ्य सूचक है। मानवमितीय मापों का प्रयोग शारीरिक वृद्धि एवं विकास के आंकलन में प्रयोग किया जाता है। यह माप पोषण स्तर के आंकलन में सर्वाधिक प्रचलित है। वयस्कों में वजन एवं लम्बाई का माप पोषण स्तर की तत्काल स्थिति तो बताता ही है, इससे बचपन के वृद्धि अवरोध का भी ज्ञान होता है। जन्म के समय का वजन सामुदायिक पोषण में एक महत्वपूर्ण संकेतक है। इस संकेतक को व्यक्त करने के लिए कुल बच्चों की संख्या जिनका जन्म के समय वजन 2500 ग्राम है तथा प्रति हजार जीवित जन्मे बच्चों का अनुपात लिया जाता है।

$$\frac{\text{जन्म के समय कम वजन} = \frac{\text{जन्म के समय 2500 ग्राम से कम वजन वाले बच्चों की कुल संख्या} \times 1000}{\text{कुल जीवित जन्मे बच्चों की संख्या}}$$

जन्म के समय कम वजन कई बीमारियों से संबंधित हो सकता है। जैसे मलेरिया, आयोडीन की कमी, माँ का कुपोषित होना। समुदाय में पोषण स्तर मापने के लिए आयु के अनुरूप वजन, आयु के अनुरूप लम्बाई एवं लम्बाई के अनुरूप वजन जैसे संकेतक प्रयोग में लाये जाते हैं। तीनों विधियों के अपने लाभ एवं हानियाँ हैं। इसलिए तीनों को एक साथ प्रयोग किया जाता है। जैसे आयु के अनुरूप वजन से बौनेपन (Stunting) तथा दीर्घकालिक कुपोषण का ज्ञान होता है। इससे तत्काल पोषण की स्थिति का भी पता चलता है। इस विधि का प्रयोग समुदायों के पोषण स्तर को आसानी से ज्ञात करने के लिए किया जा सकता है। इस सूचक में समय की छोटी अवधि में भी परिवर्तन देखा जा सकता है। इस विधि की सबसे बड़ी समस्या यही है कि यदि बच्चों की सही आयु का पता न चले तो आंकड़े गलत हो सकते हैं। यही समस्या आयु के अनुरूप लम्बाई संकेतक के साथ आती है। आयु के अनुरूप लम्बाई दीर्घकालिक कुपोषण का संकेतक है।

उपरोक्त सभी संकेतकों में तुलना करने के लिए स्थानीय या अन्तर्राष्ट्रीय मानकों का उपयोग किया जाता है। मानकों से तुलना करते समय अनुवांशिक कारकों को ध्यान में रखना चाहिए।

समुदाय का पोषण स्तर जानने के लिए ऊपरी बाँह के मध्य भाग का घेरा भी एक अच्छा एवं सटीक संकेतक है। इससे समुदाय के पोषण स्तर का आंकलन तेजी से होता है। इस विधि के साथ कोई परेशानी या कमी जुड़ी हुई नहीं है। मनोसामाजिक विकास के संकेतक भी शारीरिक विकास के संकेतकों की तरह महत्वपूर्ण हैं। परन्तु यह संकेतक अलग-अलग समुदायों के लिए अलग-अलग बनाये जाते हैं।

2. शिशु मृत्यु दर

शिशु मृत्यु दर 1000 जीवित जन्मे शिशुओं में से एक वर्ष या इससे कम आयु में मृत शिशुओं की संख्या है। यह संकेतक न केवल शिशुओं की स्वास्थ्य स्थिति का संकेतक है बल्कि यह पूरी जनसंख्या के स्वास्थ्य का और उनके सामाजिक-आर्थिक स्थिति का भी द्योतक है। इसके साथ-साथ यह स्वास्थ्य देखभाल की उपलब्धता, पहुंच तथा उपयोगिता का भी संवेदनशील संकेतक है। यह प्रसवकालीन स्वास्थ्य देखभाल की स्थिति को दर्शाता है।

3. बाल मृत्यु दर

बाल मृत्यु दर एक वर्ष में प्रति हजार जीवित जन्मों पर 1-4 वर्ष की आयु के बीच के मृत बच्चों की संख्या है। बाल मृत्यु दर में शिशु मृत्यु दर सम्मिलित नहीं होता है। यह संकेतक शिशु मृत्यु दर से ज्यादा संवेदनशील संकेतक है। इससे मृत्यु के पर्यावरणीय कारण, बचपन के संचारी रोग, घर में हुई दुर्घटना आदि कारणों का पता चलता है। यह संकेतक निर्धनता एवं सामाजिक आर्थिक दशा का शिशु मृत्युदर से बेहतर संकेतक है। बाल मृत्युदर वास्तव में बच्चों की सम्पूर्ण देखभाल, चाहे वह माता पिता की तरफ से हो या प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की तरफ से, को दर्शाती है।

4. पाँच वर्ष से कम आयु में मृत्यु दर

पाँच वर्ष के सभी बच्चों की मृत्यु दर को शिशु एवं बाल मृत्यु दर दोनों को प्रतिबिंबित करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। अकेले शिशु मृत्यु दर के आंकड़ों का उपयोग बड़े बच्चों के बीच उच्च मृत्यु दर पर ध्यान आकर्षित नहीं कर पाता है। बहुत से देशों में बच्चे अपने जीवन के दूसरे वर्ष में कुपोषण के लिए अधिक संवेदनशील होते हैं। यदि उचित ध्यान न दिया जाये तो यह कुपोषण मृत्यु का कारण बन जाता है। पाँच वर्ष तक की आयु में होने वाली कुल मौतों के अनुपात की गणना करना आसान है। इसे पाँच वर्ष तक की आयु की मृत्यु का अनुपात कहा जाता है। यह संकेतक उच्च जन्म दर को भी दर्शाता है, इसलिए यह संकेतक उच्च बाल मृत्यु दर, उच्च जन्मदर एवं कम जीवन प्रत्याशा को दर्शाता है।

5. जीवन प्रत्याशा

किसी भी जनसंख्या की जीवन प्रत्याशा किसी विशेष औसत आयु तक जनसंख्या के जीवित रहने की सम्भावना है। जन्म के समय जीवन प्रत्याशा शिशु के औसत वर्षों तक जीवित रहने की आशा है। यानि जीवन प्रत्याशा दर्शाती है कि जन्म के बाद बच्चा औसतन कितने साल तक जीवित रहेगा या कह सकते हैं कि व्यक्ति की औसत मृत्यु आयु उसकी जीवन प्रत्याशा है।

जीवन प्रत्याशा सामाजिक आर्थिक विकास का एक अच्छा संकेतक है। विकसित देशों में जन्म के समय जीवन प्रत्याशा अधिक होती है। जीवन प्रत्याशा में लिंग मतभेद महत्वपूर्ण हो सकता है तथा जन्म के समय जीवन प्रत्याशा उच्च शिशु मृत्यु दर से प्रभावित होती है। एक वर्ष की आयु में जीवन प्रत्याशा में शिशु मृत्यु दर के प्रभाव शामिल नहीं होते हैं। इसी तरह 5 वर्ष की आयु में बाल मृत्यु दर के प्रभाव को शामिल नहीं किया जाता है। किसी भी देश के विकास के आंकलन में जीवन प्रत्याशा एक महत्वपूर्ण संकेतक के रूप में देखा जाता है। परन्तु इस संकेतक की गणना आसान नहीं है क्योंकि यह जनसंख्या की आयु तथा संरचना के ज्ञान और प्रत्येक आयु वर्ग में हुई लोगों की मृत्यु के आंकड़ों पर निर्भर करती है। जीवन प्रत्याशा वास्तव में लम्बे समय तक जीवित रहने का एक संकेतक है। इस संबंध में यह एक सकारात्मक स्वास्थ्य सूचक के रूप में माना जाता है।

6. मातृ मृत्यु दर

यह संकेतक माताओं में गर्भावस्था एवं प्रसव के दौरान जोखिम को दर्शाता है। यह समुदाय की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, पोषण, स्वच्छता एवं मातृ स्वास्थ्य देखभाल जैसे कारकों से प्रभावित होता है। इसकी गणना के लिए शिशु जन्म के कारण होने वाली महिला मृत्यु की संख्या को कुल जीवित शिशु संख्या से भाग देकर 100,000 से गुणा किया जाता है। एक वर्ष में प्रति 100,000 जीवित जन्मों पर प्रति महिला मृत्यु वार्षिक मातृ मृत्यु दर कहलाती है। इस संदर्भ में कुछ तथ्य आप इकाई के पहले भाग में पढ़ चुके हैं। महिलाओं के स्वास्थ्य तथा उनके पोषण की स्थिति उनके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक कारकों पर निर्भर होती है। इसका प्रभाव मात्र उस महिला पर नहीं पड़ता अपितु उसके बच्चों के स्वास्थ्य, घरेलू साधारण क्रिया कलापों तथा विभिन्न साधनों के वितरण पर भी पड़ता है। मातृ जीवन की रक्षा के लिए शिक्षित एवं प्रशिक्षित दाइयों एवं स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की नियुक्ति अति आवश्यक है।

7. रोग विशिष्ट मृत्यु दर

बीमार या रोगग्रस्त होने की अवस्था को रुग्णता कहते हैं। विशिष्ट रोगों जैसे संचारी रोग के कारण हुई मृत्यु की गणना की जा सकती है। यह रोग विशेष से होने वाली मृत्यु की संख्या एवं कुल मृत्यु के अनुपात का प्रतिशत है। इससे रोगों के प्रसार एवं उनकी भयावहता का पता चलता है तथा नये अनुसंधानों एवं शोधों के लिए विचार प्राप्त होते हैं।

इन सब संकेतकों के अतिरिक्त रुग्णता दर, अतिपोषण दर आदि भी स्वास्थ्य संकेतकों के रूप में प्रयोग किए जा सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न 3

1. निम्न को परिभाषित कीजिए।

- शिशु मृत्यु दर
- बाल मृत्यु दर
- जीवन प्रत्याशा
- रोग विशिष्ट मृत्यु दर

1.9 सारांश

सार्वजनिक स्वास्थ्य रोगों को रोकने, दीर्घायु और संगठित प्रयासों के माध्यम से स्वास्थ्य को बढ़ावा देने का एक विज्ञान है, साथ ही यह समाज, संगठनों, सार्वजनिक और निजी, समुदायों और व्यक्तियों के बारे में जानकारी देता है। व्यक्तियों और समुदायों के स्वास्थ्य को प्रभावित करने के लिए कई कारक एक साथ संयोजित होते हैं। स्वास्थ्य के निर्धारक कई व्यापक श्रेणियों के अंतर्गत आते हैं; सामाजिक कारक, स्वास्थ्य सेवाएं, व्यक्तिगत व्यवहार, जीवविज्ञान और आनुवंशिकी। स्वास्थ्य के पांच आयाम होते हैं; शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक और सामाजिक। स्वास्थ्य के ये पांचों आयाम स्वास्थ्य का पूर्ण चित्र प्रदान करते हैं क्योंकि किसी भी एक आयाम में बदलाव दूसरे आयाम को प्रभावित करता है। देश के स्वास्थ्य संवर्धन दृष्टिकोण में कई घटक सम्मिलित हैं। सभी के लिए उत्तम स्वास्थ्य की संकल्पना तभी साकार होगी जब समुदाय के सभी लोग हर स्तर पर अपनी भागीदारी समझें। स्वास्थ्य देखभाल प्रत्येक नागरिक की पहुँच के अन्दर होनी चाहिए। सभी नागरिकों को बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाएँ मुहैया कराना सरकार का अन्तिम लक्ष्य होना चाहिए। स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतक कई अवयवों से प्राप्त किए जा सकते हैं जैसे पोषण स्तर एवं मनोसामाजिक विकास, शिशु मृत्यु दर, बाल मृत्यु दर, पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों में मृत्यु दर, जीवन प्रत्याशा, मातृ मृत्यु दर तथा रोग विशिष्ट मृत्यु दर। इन सभी की इस इकाई में चर्चा की गई है।

1.10 पारिभाषिक शब्दावली

- **सार्वजनिक स्वास्थ्य:** यह संगठित प्रयासों के माध्यम से बीमारी को रोकने, जीवन को लम्बा करने और स्वास्थ्य को बढ़ावा देने का एक विज्ञान है। साथ ही यह समाज, संगठनों, सार्वजनिक और निजी समुदायों और व्यक्तियों के बारे में जानकारी देता है।

- स्वास्थ्य: केवल रोग और कमजोरी का अभाव ही नहीं, स्वास्थ्य को पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण की स्थिति के रूप में परिभाषित किया गया है।
- जनसांख्यिकीय संक्रमण: जन्म दर और मृत्यु दर, यह दोनों जनसंख्या के प्राकृतिक विकास का निर्धारण करते हैं। एक लंबी अवधि में इन दो चर की परिमाण में तुलनात्मक भिन्नता को जनसांख्यिकीय संक्रमण कहा जाता है।

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
 - a. कुपोषण
 - b. आहार और शारीरिक गतिविधि
 - c. आय और शिक्षा स्तर

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही अथवा गलत बताइये।
 - a. सही
 - b. गलत
 - c. सही

अभ्यास प्रश्न 3

1. निम्न को परिभाषित कीजिए।
इकाई का मूल भाग देखें।

1.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. बी0 श्रीलक्ष्मी, मानव पोषण, न्यू एज इंटरनेशनल प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
2. विजयराघवन, के0, राष्ट्रीय पोषण कार्यक्रम- भारतीय पोषण संस्था की वर्तमान स्थिति तथा कार्य, एन0आई0एन0, हैदराबाद।

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. स्वास्थ्य के निर्धारकों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

-
2. स्वास्थ्य के आयामों के बारे में विस्तारपूर्वक चर्चा कीजिए।
 3. स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतकों पर विस्तृत टिप्पणी कीजिए।

इकाई 2 : सामुदायिक पोषण

- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 उद्देश्य
- 2.3 सामुदायिक पोषण का लक्ष्य और बहु-विषयक अवधारणा
- 2.4 सामुदायिक पोषण का दृष्टिकोण
- 2.5 सामुदायिक पोषण का भविष्य के लिए परिदृश्य और राष्ट्र विकास में भूमिका
- 2.6 पोषण संबंधी स्थिति के पारंपरिक संकेतक और ध्यान केंद्रित करने वाले क्षेत्र
- 2.7 पोषण महामारी विज्ञान (Nutrition Epidemiology)
- 2.8 समुदाय के लिए आहार संबंधी दिशानिर्देश
- 2.9 सामुदायिक पोषण के वर्तमान रुझान और लक्ष्य
- 2.10 सारांश
- 2.11 पारिभाषिक शब्दावली
- 2.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 2.13 संदर्भ ग्रंथ सूची
- 2.14 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

आमतौर पर समुदाय एक निर्धारित भौगोलिक क्षेत्र, गांव या शहर में एक साथ रहने वाले व्यक्तियों या परिवारों का एक समूह होता है। यह ग्रामीण क्षेत्र में कुछ परिवारों का प्रतिनिधित्व कर सकता है या फिर इसमें भारी जनसंख्या वाले शहर भी शामिल हो सकते हैं। समुदाय के सदस्य एक साथ रहते हैं, साथ काम करते हैं, समुदाय के प्रति निष्ठा की भावना महसूस करते हैं और हितों को साझा करते हैं। यद्यपि समुदाय के लोगों के स्वास्थ्य में सुधार लाने के लिए विभिन्न प्रयास किए जाते हैं जिसमें पोषण सुधार कार्यक्रम सबसे महत्वपूर्ण हैं। सामुदायिक पोषण का अर्थ पोषण विज्ञान के सिद्धांत को उपभोक्ता के समूह या व्यक्ति में लागू करना है। अधिकतम पोषण हमें घर से प्राप्त होता है। प्रत्येक संस्कृति की अपने विशेष पसंदीदा भोजन, खाद्य पदार्थ और भोजन की आदतें होती हैं। सामुदायिक पोषण के कई स्वास्थ्य सम्बंधी और सामाजिक लाभ हैं। सामुदायिक पोषण उपभोक्ता उन्मुख होता है। इसमें संस्थान या व्यक्तिगत पोषण का भी ध्यान रखा जाता है। पोषण चिकित्सकों को आवश्यक ज्ञान और कार्यान्वयन के

बीच विद्यमान अंतराल के बारे में पता होता है। इस अंतर को सामुदायिक पोषण भरता है। यह एक शैक्षणिक विषय है जो समुदाय या मानव जनसंख्या समूहों के भीतर पोषण संबंधी निहितार्थों की स्वास्थ्य समस्याओं की पहचान कर उनका हल निकालता है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी;

- सामुदायिक पोषण के विभिन्न दृष्टिकोणों को जानेंगे;
- सामुदायिक पोषण के प्रसार हेतु सहायक विभिन्न आयामों की जानकारी लेंगे;
- समुदाय हेतु आहारिय दिशानिर्देशों की व्याख्या कर पाएंगे; तथा
- खाद्य समूहों के बारे में जानेंगे।

आइए, सामुदायिक पोषण के लक्ष्यों के बारे में विस्तार से चर्चा करें।

2.3 सामुदायिक पोषण का लक्ष्य और बहु-विषयक अवधारणा

सामुदायिक पोषण का लक्ष्य जनसंख्या की पोषण संबंधी स्थिति में सुधार करना है। सामुदायिक पोषण विशेषज्ञ पोषण समस्याओं की पहचान के लिए जिम्मेदार होते हैं और समुदाय की जरूरतों और समस्याओं के समाधान विकसित करते हैं। इसके लिए स्वास्थ्य पर आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों के प्रभाव की पूरी तरह से समझ और समुदाय के संसाधनों के प्रभाव की आवश्यकता होती है। पोषण कार्यक्रम की योजना बनाने से पहले स्वास्थ्य और पोषण की पहचान करने के लिए समुदाय निदान या विश्लेषण करना आवश्यक है। इसमें विश्लेषक तथ्य जैसे आम जनसंख्या की विशेषताएं, पारिवारिक चरित्र, रोजगार और आय की स्थिति, शैक्षिक संसाधन, परिवहन सुविधाएं, स्वास्थ्य कार्यक्रम, पूर्व में उपलब्ध सेवाएं और समुदाय के भीतर स्वास्थ्य समस्याएं एकत्रित किए जाते हैं। सबसे महत्वपूर्ण कार्य किसी विशेष कार्यक्रम की आवश्यकता को निर्धारित करना और उसे स्पष्ट रूप से पहचानना होता है। यह अनुकूलन और प्रासंगिक आंकड़ों के मिलान और व्याख्या के माध्यम से किया जाता है। जरूरतों को पहचानने के बाद लक्ष्यों और उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए कार्यक्रम योजना तैयार की जाती है।

कार्यक्रम को प्रभावी बनाने के लिए लक्ष्यों के संबंध में प्राथमिकताएं निर्धारित की जाती हैं। समस्या से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित लोगों के आकार, गंभीरता और अन्य कारक जैसे संसाधन, समुदाय द्वारा ग्रहणशीलता और कार्यक्रम को लागू करने की सामान्य

व्यवहार्यता पर विचार किया जाता है। मूल्यांकन की विधि योजना का एक आवश्यक हिस्सा होती है। प्राथमिकताएं लागू करने पर मजबूत नेतृत्व, संगठन, व्यापक प्रशिक्षण, प्रशासन, अनुसंधान और निरंतर योजना आदि कारकों पर कार्यक्रम की सफलता निर्भर करती है। किसी भी पोषण कार्यक्रम में सामुदायिक भागीदारी सफलता का एक प्रमुख तत्व है जिसमें समुदाय भागीदारी, स्वामित्व और सशक्तिकरण शामिल होते हैं।

आगे बढ़ने से पूर्व आइए सामुदायिक पोषण के दृष्टिकोण को विस्तार से समझ लें।

2.4 सामुदायिक पोषण का दृष्टिकोण

सामुदायिक पोषण का दृष्टिकोण आकलन, विश्लेषण और क्रिया की पुनरावृत्ति प्रक्रिया को संदर्भित करता है जिसमें पुनः मूल्यांकन, पुनः विश्लेषण और आगे की अनुयोजन के परिणामों का विश्लेषण किया जाता है और नए अनुयोजन किए जाते हैं। कई सालों से स्पष्ट और परिष्कृत कार्यक्रम कार्यान्वयन, समुदायों में कुपोषण को कम करने की रणनीति का मुख्य रूप बनते आये है। आमतौर पर कोई भी अनुयोजन समस्या के कारण को हल करने के लिए की जाती है जैसे अतिसार के दौरान और बाद में मौखिक पुनर्जलीकरण प्रदान करना और आहार में वृद्धि करना।

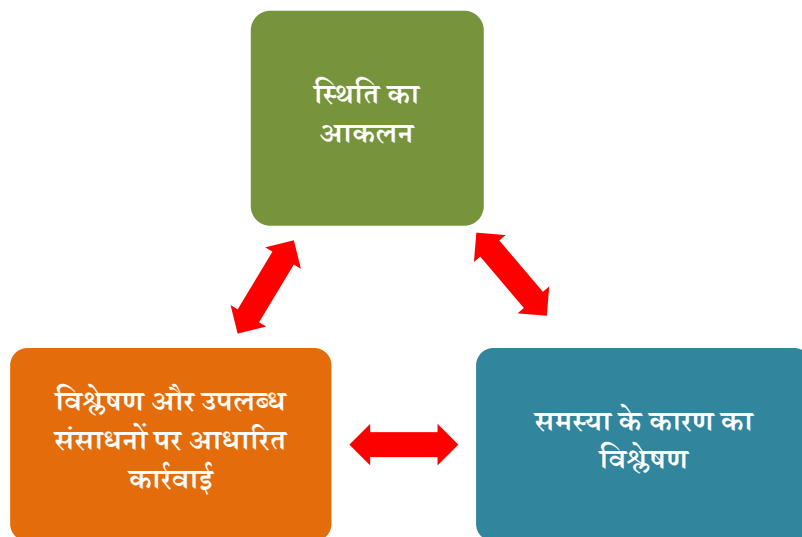
पोषण में सुधार के लिए सामुदायिक पोषण के दृष्टिकोण को मजबूत करने के माध्यम से बेहतर पोषण के लिए मांग बनाने की आवश्यकता है। साथ ही पोषण की समस्या के बारे में जागरूकता स्थापित करना और रोकथाम करना भी आवश्यक है। यह भी स्थापित करना महत्वपूर्ण है कि समस्या का समाधान करने में योगदान देना हर व्यक्ति की जिम्मेदारी है और पोषण सुरक्षा सभी का मूल अधिकार है।

कार्यक्रम के हस्तक्षेप के महत्वपूर्ण तत्व शिक्षा और प्रशिक्षण हैं क्योंकि वे समुदायों की क्षमताओं को बढ़ाने, स्थिति का विश्लेषण करने और समस्या का समाधान करने के बारे में ज्ञान भी देते हैं। सामुदायिक पोषण के दृष्टिकोण में समुदाय के लोगों की भागीदारी होती है जैसे कि यह लोगों के बुनियादी मानदंडों और मूल्यों को दर्शाता है और निर्धारित करता है कि वे समस्याओं को संबोधित करने में क्या महत्वपूर्ण मानते हैं, समस्या अथवा अपनी जिम्मेदारियाँ। सूचना को सामुदायिक पोषण के दृष्टिकोण के एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में माना जाता है क्योंकि यह चक्र के प्रत्येक चरण में महत्वपूर्ण है। सूचना, मूल्यांकन के लिए महत्वपूर्ण है। कार्य और प्रबंधन के आधार के रूप में यह पोषण की वर्तमान स्थिति और प्रवृत्ति का पता लगाने के लिए अनुमति देता है। पोषण समस्या की जागरूकता समुदायों के

भीतर उठायी जानी चाहिए और अन्य स्तरों पर यदि उचित कार्यवाही कर सहायता प्रदान की जाए तो इस तरह के वर्गों के लिए संसाधन समुदायों के भीतर से ही जुटाए जा सकते हैं।

मूल्यांकन और विश्लेषण एक वैचारिक ढांचे होते हैं जो पोषण समस्या की प्रकृति और उसके कारणों से प्रभावित होते हैं। पोषण संबंधी कार्य में समस्या के कारण पर सर्वसम्मति रखने और स्पष्ट वैचारिक ढांचे को साझा करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। कारणों के गलत विश्लेषण के आधार पर समाधान और क्रिया स्पष्ट रूप से बेहतर परिस्थितियों का नेतृत्व नहीं करते हैं। उदाहरण के लिए यदि बच्चों में कुपोषण मुख्य रूप से घर में भोजन की कमी का परिणाम है, तब पूरक आहार कार्यक्रमों के माध्यम से भोजन का प्रावधान वांछित परिणाम उत्पन्न नहीं करेगा। कुपोषण के अक्सर कई कारक होते हैं और अनुयोजन को प्रस्तावित करने में उनको ध्यान में रखा जाना चाहिए। वर्तमान में तेजी से बदलते माहौल में प्रमुख परिवर्तन होने के साथ, सामुदायिक पोषण विशेषज्ञों को चुनौतियों का सामना करने के लिए आगे रहने की जरूरत है। समाज के निर्माण में, भोजन, पोषण और स्वास्थ्य के बारे में ज्ञान सामुदायिक पोषण का एक अनूठा योगदान है। सामुदायिक पोषण विशेषज्ञों के पास अनूठे अवसर होते हैं जिससे वे जनसंख्या की पोषण स्थिति में सुधार कर सकें। पोषण को निवारक, नैदानिक, रोगग्रस्त और पुनर्स्थापन सेवाओं में शामिल करने की आवश्यकता है। पोषण सेवा को चिकित्सा और सामाजिक सेवाओं के साथ एकीकृत करना और स्वास्थ्य देखभाल वितरण प्रणाली के सभी स्तरों पर शामिल किया जाना चाहिए। सामुदायिक पोषण के बारे में लोगों के बीच जागरूकता पैदा करने के लिए हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए ताकि उनके स्वास्थ्य, पोषण और शिक्षा के स्तर में सुधार हो सके।

सामुदायिक पोषण का दृष्टिकोण



2.5 सामुदायिक पोषण का भविष्य के लिए परिदृश्य और राष्ट्र विकास में भूमिका

ग्रामीण आधारित कृषि-अर्थव्यवस्था की निरक्षर जनसंख्या की सामुदायिक रूपरेखा अब बदल रही है और वह शहरी सुविधाओं की तलाश में युवाओं को शिक्षित कर रही है। आज के भारतीय समुदाय को उपग्रह टेलीविजन, इंटरनेट, मोबाइल फोन और परिवहन व्यवस्था के माध्यम से बेहतर जानकारीयां और सुविधाएं मिलती हैं। आज के युवा तकनीकी उन्नति को एक चुनौती के रूप में स्वीकार करते हैं और उसका अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए उसका उपयोग करना सीखते हैं। समुदाय के लोगों की जीवन प्रत्याशा में काफी सुधार हुआ है। टीकाकरण, स्वास्थ्य सुविधाओं और संतुलित आहार सेवन ने लोगों के स्वास्थ्य और जीवन प्रत्याशा में सुधार किया है। परन्तु नई प्रौद्योगिकियों और विकास से शारीरिक कार्य में कमी आई है और शहरी जीवन शैली के साथ जुड़े गैर-संक्रमणीय विकार जैसे मोटापे के स्तर को भी बढ़ाया है।

बदलते हुए परिदृश्य में कुपोषण (अल्प और अति पोषण) से बोझ दोगुना हो गया है। इस दशक में मृत्यु का प्रमुख कारण अपक्षयी और अपक्षयी रोग हैं। इसके कारक भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण, पश्चिमी आहार पद्धति को अपनाना, आवश्यक खाद्य पदार्थों को सीमित करना, परिरक्षकों और नमक की उच्च खुराक, विज्ञापन द्वारा भोजन के व्यवसायीकरण और सामान्य शारीरिक गतिविधियों की कमी है। वैश्विक स्तर पर अनुचित प्रारंभिक पोषण के कारण बच्चों की मृत्यु दर उच्च है। ऐसे जीवित शिशुओं को जीवन के अग्रिम वर्षों में कई स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ हो जाती हैं, जिनमें मस्तिष्क के विकास में अवरोध, कम वृद्धि और विकास निहित है। वयस्कता में मधुमेह, मोटापा, हृदय रोग, उच्च रक्तचाप और हृदयाघात खतरा बढ़ता है। सामुदायिक पोषण का दृष्टिकोण बच्चों में व्याप्त कुपोषण का अंत करना है। पोषण मूल्य और पोषण संबंधी गुणवत्ता के लिए कृषि की समझ, स्थानीय फसलों और प्रतिकूल जलवायु के बारे में अध्ययन किया जाना शामिल है। आजीविका सुरक्षा एक प्रमुख कारक है जो न केवल खाद्य उपलब्धता बल्कि सूक्ष्म पोषक तत्व की उपलब्धता को भी प्रभावित करता है। इसलिए आय सृजन, उद्यमिता विकास और विषय क्षेत्र में बदलते ज्ञान अनुसूची के साथ सही जानकारी शामिल की जानी चाहिए।

2.6 पोषण संबंधी स्थिति के पारंपरिक संकेतक और ध्यान केंद्रित करने वाले क्षेत्र

पौष्टिक स्थिति के पारंपरिक संकेतक मानवमितीय माप, नैदानिक परीक्षण, रक्त या प्लाज्मा में हीमोग्लोबिन और फेरिटिन का निर्धारण तथा अन्य प्रयोगशाला माप, साथ ही विशिष्ट पोषक

तत्वों की पोषण संबंधी स्थिति हैं। इन सभी संकेतकों का आप आने वाली इकाईयों में विस्तृत अध्ययन करेंगे। पोषण संबंधी स्थिति एक समुदाय में पोषण संबंधी समस्याओं का एक सुविधाजनक सूचक और मार्गदर्शक है। विभिन्न स्थितियों में ये सभी मात्रात्मक माप उपयोगी होते हैं।

सामुदायिक पोषण के प्रसार हेतु निम्न कई आयाम सहायक हैं:

- **नई सूचना और संचार प्रौद्योगिकियों का प्रयोग**

पहले ग्रामीण परिवारों तक पहुंचने का एक मुख्य माध्यम रेडियो था। अब अधिक से अधिक परिवारों के पास टीवी उपलब्ध है। सार्वजनिक स्वास्थ्य पोषण विशेषज्ञ, पोषण और स्वास्थ्य सूचना के प्रसार के लिए इस माध्यम का पूर्ण लाभ लेते हैं। वर्तमान में अभिलेखबद्ध और क्षेत्रीय डेटा का अध्ययन करने के लिए पोषण विशेषज्ञों के लिए कंप्यूटर सबसे बड़ी प्रासंगिकता है।

- **पोषण ज्ञान और प्रौद्योगिकी का उपयोग करके गरीबी उन्मूलन का प्रयास**

पोषण शिक्षा के साथ पशु प्रजनक, कृषि, खाद्य प्रौद्योगिकीविद् और खाद्य उद्योग, चिकित्सक, सार्वजनिक स्वास्थ्य पेशेवरों, शिक्षकों और आर्थिक योजनाकारों की प्रभावशीलता आवश्यक है। इस क्षेत्र में नई प्रौद्योगिकियों को विकसित करने की आवश्यकता है।

- **सामुदायिक भागीदारी का सशक्तिकरण**

स्वयं की समस्याओं के निदान के विश्लेषण में समुदायों की सहायता के लिए गुणात्मक तरीकों का विकास किया गया है और उनके निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए समुदाय क्या अनुयोजन कर सकता है, इसमें विचार करना आवश्यक है। इस पद्धति को अब ग्रामीण भागीदारी मूल्यांकन के रूप में कहा गया है। तीव्र मूल्यांकन प्रक्रिया को बेहतर ढंग से नृविज्ञान (Anthropology) प्रक्रिया के रूप में संदर्भित किया गया है क्योंकि वे सामाजिक आवश्यकताओं और धारणाओं को जानने के लिए नृविज्ञान के गुणात्मक दृष्टिकोण का उपयोग करते हैं।

- **कृषि अनुसंधान**

कृषि अनुसंधान का महत्व अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त है। हरित क्रांति ने विकासशील देशों के अनाज उत्पादन को जनसंख्या वृद्धि के अनुरूप बढ़ाया है जो सामुदायिक पोषण को बढ़ावा देता है।

- **खाद्य प्रौद्योगिकी में अग्रिमता**

खाद्य प्रौद्योगिकी के संभावित योगदान को कम नहीं आंका जा सकता है। उदाहरण के लिए, यह गांव के स्तर पर फसल की हानि को कम करता है, प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के पोषण मूल्य को सुधारता या बनाए रखता है। सामुदायिक पोषण को इन पहलुओं के प्रति उन्मुख करना आवश्यक है।

• जैव प्रौद्योगिकी की संभावना

जैव प्रौद्योगिकी एक महत्वपूर्ण विषय है। यह खाद्य उत्पादन और स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है। एक प्रजाति में वांछनीय गुणों के साथ जीनों की पहचान करना और उन्हें एक अन्य प्रजाति में शामिल करने की क्षमता पारंपरिक पौधों और पशु प्रजनन कार्यक्रमों को गति देती है। इन तकनीकों का उपयोग न केवल उत्पादकता और कीट प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने के लिए किया जा रहा है बल्कि बुनियादी खाद्य पदार्थों के पोषण गुणों को भी सुधारने के लिए भी किया जा रहा है।

• प्रभावी पोषण और स्वास्थ्य हस्तक्षेप

स्वास्थ्य हस्तक्षेप और सफल पोषण के बीच प्रगाढ़ सम्बंध है। मानव उपभोग के लिए नमक का आयोडीनीकरण, आयोडीन की कमी संबंधी विकारों को रोकने का एक अच्छा और प्रभावी तरीका है जो इस स्वास्थ्य खतरे को वैश्विक उन्मूलन की सुविधा देता है। वर्तमान में अनाजों में थायमिन, राइबोफ्लेविन, नियासिन, लौह लवण और कैल्शियम का प्रबलीकरण (fortification) किया जा रहा है जो पोषण सम्बंधी समस्याओं के निराकरण में अत्यंत प्रभावी है। विकासशील देशों में सबसे व्यापक और गंभीर पोषण सम्बंधी कमी लौह लवण की है जिसे एनीमिया या रक्ताल्पता कहते हैं। इसके लिए दो दृष्टिकोण प्रभावी हैं, गेहूं के आटे का लोहे से प्रबलीकरण तथा स्कूली बच्चों, किशोरियों और महिलाओं में साप्ताहिक लौह लवण अनुपूरक, जो बहुत प्रभावी सिद्ध हुआ है।

• जैव विविधता और मानव स्वास्थ्य

ऐसे कई तरीके हैं जिनमें जैव विविधता स्वास्थ्य प्रदान करती है। मनुष्यों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए एक विविध खाद्य आपूर्ति आवश्यक है। विभिन्न खाद्य स्रोतों की एक श्रृंखला, जलवायु और मानव निर्मित आपदा से सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

• निगरानी और मूल्यांकन

कार्यक्रमों की निगरानी और मूल्यांकन नवीन दृष्टिकोण नहीं हैं, हालांकि उन्हें नए उन्मुखीकरण और उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। हस्तक्षेप की प्रभावकारिता अच्छी तरह से नियंत्रित

अध्ययनों द्वारा स्थापित की जाने के बाद भी यह आश्वासन नहीं होता कि बड़े पैमाने पर लागू होने पर वे प्रभावी होंगे। इसके लिए निगरानी अत्यंत आवश्यक है। हस्तक्षेपों के सफल परीक्षणों के बाद यह महत्वपूर्ण है कि स्वास्थ्य पोषण कार्यक्रम के सार्वजनिक रूप में कार्यान्वित होने से पहले जनसंख्या के एक प्रतिनिधि नमूने पर इनका आधारभूत प्रभावित अध्ययन किया जाय।

आगे बढ़ने से पूर्व आइए कुछ प्रश्नों को हल करने का प्रयास करें।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।

- पोषण कार्यक्रम की योजना बनाने से पहले स्वास्थ्य और पोषण की पहचान करने के लिए करना आवश्यक है।
- सामुदायिक पोषण का लक्ष्य सार्वजनिक स्वास्थ्य एजेंसी द्वारा जनसंख्या के स्थिति में सुधार करना है।
- किसी भी पोषण कार्यक्रम में सफलता का एक प्रमुख तत्व है।

2.7 पोषण महामारी विज्ञान (Nutrition Epidemiology)

समुदायों के प्रभावी ढंग से काम करने, स्वास्थ्य को बढ़ावा देने और रोग को रोकने में पोषण की भूमिका सहित यह रोग प्रक्रिया में पोषण के मूल संबंधों का सुझाव देता है। यह समाज की पोषण संबंधी आवश्यकताओं और स्वास्थ्य के पाठ्यक्रम को समझने के लिए एक वैचारिक रूपरेखा के रूप में कार्य करता है, साथ ही समुदाय को बीमारी और पोषण संबंधी महामारी के विज्ञान से अवगत कराता है। इसमें महामारी विज्ञान के परिचय सहित, बीमारियों की प्राथमिक रोकथाम, बचाव और जटिलताओं से बचाना और समुदायों का पोषण शामिल होता है।

2.8 समुदाय के लिए आहार संबंधी दिशानिर्देश

पोषण मानव की एक आधारभूत आवश्यकता है जो स्वस्थ जीवन के लिए अनिवार्य है। उचित विकास और सक्रियता के लिए जीवन के शुरुआती चरण से ही उचित भोजन आवश्यक होता है। खाद्य उपभोग, उत्पादन और वितरण पर काफी हद तक निर्भर करता है, जो जनसंख्या के स्वास्थ्य और पोषण संबंधी स्थिति को निर्धारित करता है। अनुशंसित आहार

भत्ते में पोषक तत्व केंद्रित और तकनीकी होते हैं। इसलिए भोजन आधारित दृष्टिकोण पोषण संबंधी इष्टतम स्थिति प्राप्त करने के लिए उन्मुखीकृत हैं।

विशिष्ट आहार सलाह पोषक तत्वों के वैज्ञानिक ज्ञान पर निर्भर है। आहार के संदर्भ में पोषक तत्वों की सिफारिश की जाती है, साथ ही जनसंख्या द्वारा अनुशासित आहार भत्तों का उपभोग किया जाता है। पोषण पर्याप्तता सुनिश्चित करने में आहार लक्ष्यों और विशिष्ट दिशानिर्देश तैयार कर लोगों के लिए आवश्यक मार्गदर्शन मिलने में सहायता मिलती है। भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य महत्व की सामान्य पोषण संबंधी समस्याएं हैं; जन्म के समय कम वजन, बच्चों में प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण, वयस्कों में ऊर्जा की कमी, सूक्ष्म पोषक तत्व हीनता और आहार से संबंधित गैर-सांख्यिकीय रोग। गर्भ में आहार से संबंधित कुपोषण, बाद के जीवन की अपक्षयी बीमारियां निर्धारित करता है। जनसंख्या विस्फोट, जनसांख्यिकीय परिवर्तन, तेजी से शहरीकरण और परंपरागत आदतों में परिवर्तन अस्वास्थ्यकर आहार प्रथाओं और शारीरिक निष्क्रियता को जन्म देते हैं जिसके परिणामस्वरूप आहार से संबंधित अपक्षयी रोग उत्पन्न होते हैं। आहार संबंधी दिशानिर्देशों में स्वास्थ्य को बढ़ावा देना और रोग के रोकथाम पर भी जोर दिया गया है। इसमें सभी आयु समूहों, मुख्यतया संवेदनशील जनसंख्या समूह जैसे शिशुओं, बच्चों, किशोरियों, गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाओं और बुजुर्गों पर विशेष ध्यान दिया गया है। अन्य संबंधित कारक जिनमें विचार की आवश्यकता है, वह शारीरिक गतिविधि, स्वास्थ्य देखभाल, सुरक्षित जल आपूर्ति और सामाजिक-आर्थिक विकास हैं जो पोषण और स्वास्थ्य पर अत्यधिक प्रभाव डालते हैं।

आहार सम्बंधी दिशानिर्देश

सही पोषण संबंधी व्यवहार और आहार विकल्पों को प्राप्त करने के लिए आहार लक्ष्यों की आवश्यकता होती है।

निम्नलिखित आहार दिशा निर्देश आवश्यक कार्यवाही हेतु एक व्यापक ढांचा प्रदान करते हैं:

1. संतुलित आहार सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों का आवश्यक अंतर्ग्रहण।
2. गर्भवती और धात्री महिलाओं को अतिरिक्त भोजन और स्वास्थ्य देखभाल के प्रावधान सुनिश्चित करना।
3. बच्चों में छह महीने की आयु तक केवल स्तनपान कराना और उनके दो साल के हो जाने तक स्तनपान को प्रोत्साहित करना।

4. छह माह की आयु के बाद माँ के दूध के अतिरिक्त शिशु को घर में बना अर्द्ध ठोस खाद्य पदार्थ देना।
5. स्वस्थता और रोग दोनों ही स्थितियों में बच्चों और किशोरों के लिए पर्याप्त और उचित आहार सुनिश्चित करना।
6. सब्जियों और फलों के सेवन में विविधता लाना।
7. प्राणिज खाद्य तेलों जैसे घी, मक्खन और वनस्पति घी जैसे संतृप्त खाद्य पदार्थों का बहुत कम उपयोग करना।
8. अधिक वजन और मोटापा को रोकने के लिए अधिक खाने से बचना।
9. नियमित व्यायाम करना और आदर्श शरीर वजन बनाए रखने के लिए शारीरिक रूप से सक्रिय रहना।
10. नमक का सेवन प्रतिबंधित करना।
11. सुरक्षित और साफ भोजन का उपयोग सुनिश्चित करना।
12. सही पूर्व खाना बनाने की क्रियाओं और उचित खाना पकाने के तरीकों को अपनाना।
13. अधिक मात्रा में पानी पीना और पेय पदार्थों को लेना।
14. नमक, चीनी और वसा जैसे समृद्ध संसाधित खाद्य पदार्थों के उपयोग को कम करना।
15. बुजुर्ग लोगों के आहार में सूक्ष्म पोषक तत्व युक्त खाद्य पदार्थों को शामिल करना और उन्हें सक्रिय रहने के लिए सक्षम करना।

जीवन के लिए पोषण मूलभूत आवश्यकता है। भोजन में विविधता लाना पोषण और स्वास्थ्य का सार है। भोजन जो कई खाद्य समूहों की उचित मात्रा से मिलकर बनता है, सभी आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है। पोषक तत्वों के प्रमुख स्रोत अनाज, दालें, फल, सब्जियाँ एवं दुग्ध पदार्थ हैं। शिशुओं, बच्चों और महिलाओं के लिए भोजन में विशेष रूप से दूध आवश्यक है। दूध अच्छी गुणवत्ता प्रोटीन और कैल्शियम प्रदान करता है। भोजन की ऊर्जा, गुणवत्ता और घनत्व बढ़ाने के लिए तेल और वसा उपयोगी हैं। अंडे, मांस और मछली आहार की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं जिनमें प्रोटीन प्रचुर मात्रा में होता है। सब्जियाँ और फल सुरक्षात्मक पदार्थ जैसे विटामिन, खनिज लवण प्रदान करते हैं। आयु, लिंग, शारीरिक स्थिति और शारीरिक गतिविधि के अनुसार उपयुक्त मात्रा में विविध खाद्य पदार्थों का चयन करना चाहिए। स्थानीय रूप से उपलब्ध ताजा सब्जियों और फलों को भरपूर मात्रा में आहार में शामिल करें।

इष्टतम आहार उद्देश्य

- शरीर का आदर्श वजन बनाए रखते हुए सकारात्मक स्वास्थ्य की इष्टतम स्थिति बनाना।
- गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं के लिए पर्याप्त पोषण सुनिश्चित करना।
- जन्म के समय शिशुओं के वजन और वृद्धि में सुधार करना तथा उचित पोषण से बच्चों और किशोरों की आनुवंशिक क्षमता पूर्णता प्राप्त करवाना।
- सभी पोषक तत्वों की उपलब्धि में पर्याप्तता और उनके कमी से होने वाले रोगों की रोकथाम करना।
- आहार संबंधी विकारों की रोकथाम करना।
- बुजुर्गों के स्वास्थ्य का रखरखाव और उनकी जीवन प्रत्याशा को बढ़ाना।

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही या गलत बताइये।

- भोजन जो कई खाद्य समूहों की उचित मात्रा से मिलकर बनता है, वह सभी आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है।
- भारत में लौह तत्व की अपर्याप्तता के कारण किशोरियों एवं महिलाओं में एनीमिया देखा जाता है।
- अनुशंसित आहार भत्ते में पोषक तत्व केंद्रित और तकनीकी नहीं होते हैं।

आहारीय दिशानिर्देशों का विकास

हमारे दैनिक भोजन में उपयोग किए जाने वाले सभी खाद्य पदार्थों को खाद्य मार्गदर्शिका में पांच समूहों में बांटा गया है। खाद्य समूहों को इसलिए चुना जाता है क्योंकि कुल आहार में से प्रत्येक खाद्य समूहों का विभिन्न पोषक तत्वों के कारण विशिष्ट योगदान होता है। नीचे दी गई तालिका में खाद्य समूह, उनके खाद्य पदार्थ एवं उनमें पाए जाने वाले पोषक तत्वों की जानकारी दी गई है।

खाद्य समूह	खाद्य पदार्थ	मुख्य पोषक तत्व
अनाज और उनके उत्पाद	चावल, गेहूं, ज्वार, बाजरा, रागी, मक्का	ऊर्जा, प्रोटीन, लौह लवण, थायमिन, नियासिन, आहारीय रेशा

प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थ	दालें, फलियां, दूध, अंडे, मछली, मुर्गी, मांस और उनके उत्पाद	प्रोटीन, ऊर्जा, कैल्शियम, लौह लवण, विटामिन बी, अदृश्य वसा, आहारिय रेशा
सुरक्षात्मक सब्जियाँ और फल	सभी हरी पत्तेदार सब्जियाँ, नारंगी, पीले फल और सब्जियाँ, विटामिन सी युक्त फल और सब्जियाँ	कैरोटीनॉयड, विटामिन सी, लौह लवण, कैल्शियम, फोलिक अम्ल, आहारिय रेशा, बीटा कैरोटीन
अन्य सब्जियाँ और फल	लौकी, तोरई, करेला, सेम, मटर, आलू, प्याज, केला, सेब, खरबूजा, अंगूर	खनिज लवण, विटामिन और आहारिय रेशा
चीनी एवं वसा	तेल, घी, शर्करा, मक्खन, वनस्पति, गुड़	ऊर्जा, वसा, आवश्यक वसीय अम्ल

पोषक तत्व घनत्व

खाद्य पदार्थ जो ऊर्जा के मुकाबले पोषक तत्वों को अधिक मात्रा में प्रदान करने वाले हों, उन्हें पोषक तत्व में सघन अथवा पोषक तत्व के अधिक घनत्व का माना जाता है। यह भोजन से ऊर्जा की आवश्यकता के प्रतिशत के लिए पोषक तत्वों के भत्ते के प्रतिशत का अनुपात है।

2.9 सामुदायिक पोषण के वर्तमान रुझान और लक्ष्य

देश में मानव संसाधन विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण अंशदायी कारक स्वास्थ्य और पोषण हैं। भारतीय जनसंख्या में ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 28% और शहरी क्षेत्रों में 26% जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति दिन औसतन 2400 किलो कैलोरी प्रति व्यक्ति और शहरी क्षेत्र में 2100 किलो कैलोरी प्रति व्यक्ति अन्तर्ग्रहण आवश्यक है। कुपोषण के कारण कम लम्बाई, दुर्बलता, गैर-संज्ञेय अपक्षयी रोग, आहार संबंधी विकार, रोग एवं मृत्यु दर में वृद्धि और शारीरिक क्रिया में कमी जैसे परिणाम होते हैं जो देश के लिए एक बहुत बड़ा आर्थिक नुकसान हैं। प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण, सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी जैसे विटामिन ए की कमी, लौह लवण की कमी से एनीमिया, आयोडीन की कमी संबंधी विकार और विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स की कमी जैसी पोषण समस्याएं अक्सर देखी जाती हैं।

गर्भधारण के प्रारंभिक समय से ही मातृ कुपोषण के कारण कम वजन, गर्भावस्था के दौरान सही वजन ना बढ़ना, पोषण संबंधी एनीमिया और विटामिनो की कमी देखी जाती है। ऐसे में लगभग 22% शिशु कम जन्म-भार (<2500 ग्राम) के पैदा होते हैं जिसका प्रतिशत विकसित देशों में 10% से भी कम है। बचपन और किशोरावस्था के दौरान नैदानिक और उप-नैदानिक कुपोषण व्यापक रूप से प्रचलित हैं। राष्ट्रीय सर्वेक्षण से पता चलता है कि यद्यपि कुपोषण का गंभीर रूप पूर्वस्कूली बच्चों के बीच <1% है, लगभग आधे (48%) <5 वर्ष के बच्चे उपनैदानिक कुपोषण से ग्रस्त हैं, जैसे कम वजन का होना (43%), कम लम्बाई और दुर्बलता (20%) जो कि यह इंगित करता है कि कुपोषण दीर्घकालीन है। अध्ययनों से पता चलता है कि बच्चों में आयु बढ़ने के साथ कम वजन के प्रसार में भारी वृद्धि होती है जो 6 महीने की आयु में 27% से 2 साल की आयु तक लगभग 45% तक हो जाती है। इसके लिए समुदाय में प्रचलित शिशु और बच्चों के लिए गलत भोजन प्रथाएं जिम्मेदार हैं। विकास के बढ़ते चरण में निरंतर कुपोषित रहने से वयस्कों में कद छोटा हो जाता है। विटामिन ए की कमी के मामले में, 0.8- 1% पूर्वस्कूली बच्चों में आँखों में धब्बे और रात में अंधापन (रतौंधी) के लक्षण देखे जाते हैं। विटामिन ए की कमी से बीमारियों और मृत्यु का खतरा बढ़ जाता है। 6 से 9 महीनों के बच्चों में 70% बच्चे रक्ताल्पता/एनीमिया से पीड़ित हैं।

भारत में लगभग तीन चौथाई (75%) महिलाएं एनीमिया से पीड़ित हैं जिसमें गर्भवती महिलाओं में मध्यम से गंभीर एनीमिया 50% है। यह अनुमान है कि पोषण संबंधी एनीमिया से हर साल लगभग 24% मातृ मृत्यु होती है और यह जन्म के समय कम वजन (6%) के महत्वपूर्ण कारणों में से एक है। यह वयस्कों में काम करने और बच्चों में सीखने की क्षमता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। आयोडीन की कमी के विकार जनसंख्या के बड़े वर्ग में बहुत आम हैं। देश के कई हिस्सों में लगभग 167 मिलियन अनुमानित जनसंख्या है जो आयोडीन की कमी के विकार के स्थानिक क्षेत्रों में रह रही है। आयोडीन की कमी से गण्डमाला (goiter), नवजात हाइपोथायरॉयडिज्म, मानसिक मंदता, विलंबित शारीरिक विकास, कम लम्बाई आदि विकार होते हैं। गर्भवती महिलाओं में आयोडीन की कमी का सबसे महत्वपूर्ण परिणाम होता है कि बच्चे जन्म से मानसिक और शारीरिक विकास मंदता से पीड़ित होते हैं। जहाँ एक ओर भारत में कुपोषण की एक बड़ी समस्या व्याप्त है, वहीं अति पोषण का प्रसार भी तेजी से हो रहा है। पुरुषों (7.8%) के मुकाबले महिलाओं में (10.9%) मोटापा अधिक है। मधुमेह और हृदयमनी रोग का प्रसार शहरी क्षेत्रों में उनके ग्रामीण समकक्षों की तुलना में अधिक है। कैंसर की घटनायें पुरुषों (100,000 में 113) की तुलना में महिलाओं (123) में अधिक है। विभिन्न पोषक तत्वों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता अनुशंसित आहार भत्ते

के अनुरूप तो है परन्तु समुदाय और परिवार में खाद्य पदार्थों का वितरण बराबर नहीं है जिसके मुख्य कारक हैं व्यक्ति की आय और क्रय शक्ति।

राष्ट्रीय पोषण निगरानी ब्यूरो (National Nutrition Monitoring Bureau) के सर्वेक्षणों से पता चलता है कि भारतीय परिवारों में दैनिक रूप से अनाज को छोड़कर अनुशंसित आहार भत्ते से औसत सभी खाद्य पदार्थों का सेवन कम होता है। दालें और फलियां, जो कि प्रोटीन का महत्वपूर्ण स्रोत हैं, अनुशंसित आहार भत्ते के 50% से भी कम पाये गये हैं। हरी पत्तेदार सब्जियों की खपत और अन्य सब्जियाँ जो बीटा-कैरोटीन, फोलिक अम्ल, कैल्शियम, राइबोफ्लेविन और लौह तत्व जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों के स्रोत हैं, काफी हद तक अपर्याप्त हैं। दृश्य वसा का सेवन अनुशंसित आहार भत्ते के 50% से भी कम है। इस प्रकार अनाज आधारित भारतीय आहार में ऊर्जा की नहीं अपितु प्रोटीन की अपर्याप्तता है।

कुपोषण के वर्णक्रम के दूसरे तरफ, आहार से संबंधित गैर-संचारी रोग हैं। बढ़ते शहरीकरण, ऊर्जा-समृद्ध आहार जिसमें वसा और चीनी की उच्च मात्रा होती है तथा जटिल कार्बोहाइड्रेट और आहारिय रेशे की कमी होती है, की खपत विशेष रूप से उच्च आय समूहों में बढ़ती जा रही है। इसके अतिरिक्त शहरी जनसंख्या में शारीरिक गतिविधियों में बहुत कमी देखी जा रही है। मादक पेय पदार्थों और तंबाकू का उपयोग भी आम हो गया है जो स्वास्थ्य की दृष्टि से उचित नहीं है। इसलिए अपक्षयी रोगों जैसे मोटापा, हृदय रोग, उच्च रक्तचाप, मधुमेह और कैंसर में वृद्धि हो रही है। बड़े पैमाने पर कुपोषण, आहार की अपर्याप्तता और अस्वास्थ्यकर जीवन शैली का एक परिणाम है। अन्य योगदान कारक खराब क्रय शक्ति, भोजन की दोषपूर्ण आदतें, परिवार का बढ़ा आकार, संक्रमण, खराब स्वास्थ्य देखभाल, अपर्याप्त स्वच्छता और कम कृषि उत्पादन हैं।

अभ्यास प्रश्न 3

1. रिक्त स्थान भरिए।

- समाज की पोषण संबंधी आवश्यकताओं और स्वास्थ्य के पाठ्यक्रम को समझने के लिए एक वैचारिक रूपरेखा के बीच सहयोग के रूप में कार्य करता है।
- दूध और का एक उत्तम स्रोत है।
- वसा और तेल हमारी आवश्यक की जरूरतों को पूरा करते हैं।

2.10 सारांश

समुदाय एक निर्धारित भौगोलिक क्षेत्र, गांव या शहर में एक साथ रहने वाले व्यक्तियों या परिवारों का एक समूह होता है। समुदाय के लोगों के स्वास्थ्य में सुधार लाने के लिए विभिन्न प्रयास किए जाते हैं जिसमें पोषण सुधार कार्यक्रम सबसे महत्वपूर्ण हैं। सामुदायिक पोषण का अर्थ पोषण विज्ञान के सिद्धांत को उपभोक्ता के समूह या व्यक्ति में लागू करना है। सामुदायिक पोषण का लक्ष्य जनसंख्या की पोषण संबंधी स्थिति में सुधार करना है। सामुदायिक पोषण विशेषज्ञ पोषण समस्याओं की पहचान के लिए जिम्मेदार होते हैं और समुदाय की जरूरतों और समस्याओं के समाधान विकसित करते हैं। इसके लिए स्वास्थ्य पर आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों के प्रभाव की पूरी तरह से समझ और समुदाय के संसाधनों के प्रभाव की आवश्यकता होती है। सामुदायिक पोषण का दृष्टिकोण आकलन, विश्लेषण और क्रिया की पुनरावृत्ति प्रक्रिया को संदर्भित करता है जिसमें पुनः मूल्यांकन, पुनः विश्लेषण और आगे की अनुयोजन के परिणामों का विश्लेषण किया जाता है और नए अनुयोजन किए जाते हैं। बदलते हुए परिदृश्य में कुपोषण (अल्प और अति पोषण) से बड़ा दोगुना हो गया है। इस दशक में मृत्यु का प्रमुख कारण अपक्षयी और अपक्षयी रोग हैं। इसके कारक भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण, पश्चिमी आहार पद्धति को अपनाना, आवश्यक खाद्य पदार्थों को सीमित करना, परिरक्षकों और नमक की उच्च खुराक, विज्ञापन द्वारा भोजन के व्यवसायीकरण और सामान्य शारीरिक गतिविधियों की कमी है। सामुदायिक पोषण हेतु आहार सम्बंधी कई दिशानिर्देश दिए गए हैं। जहाँ एक ओर अल्प पोषण के कारण प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण, सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी जैसे विटामिन ए की कमी, लौह लवण की कमी से एनीमिया, आयोडीन की कमी संबंधी विकार और विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स की कमी जैसी पोषण समस्याएं अक्सर देखी जाती हैं, वहीं वर्तमान परिदृश्य में अति पोषण भी व्याप्त है जिसके कारण मोटापा, हृदय रोग, मधुमेह आदि अपक्षयी रोग देखे जाते हैं।

2.11 पारिभाषिक शब्दावली

- **समुदाय:** यह आम तौर पर एक निर्धारित भौगोलिक क्षेत्र गांव या शहर में एक साथ रहने वाले व्यक्तियों या परिवारों का समूह होता है।
- **पोषण महामारी विज्ञान:** यह विज्ञान समुदायों के साथ प्रभावी ढंग से काम करने के लिए स्वास्थ्य को बढ़ावा देने और रोग को रोकने में पोषण की भूमिका सहित रोग प्रक्रिया में पोषण के मूल संबंधों का सुझाव देता है।

- **पोषक तत्व घनत्व:** खाद्य पदार्थ जो ऊर्जा के मुकाबले पोषक तत्वों को अधिक मात्रा में प्रदान करने वाले हों, उन्हें पोषक तत्व में सघन अथवा पोषक तत्व के अधिक घनत्व का माना जाता है।

2.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
 - a. समुदाय निदान या विश्लेषण
 - b. पोषण संबंधी
 - c. सामुदायिक भागीदारी

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही या गलत बताइये।
 - a. सही
 - b. सही
 - c. गलत

अभ्यास प्रश्न 3

1. रिक्त स्थान भरिए।
 - a. पोषण महामारी विज्ञान
 - b. प्रोटीन, कैल्शियम
 - c. वसीय अम्ल

2.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. विश्व बैंक विकास संकेतक डेटाबेस, विश्व बैंक, संशोधित, 10 सितंबर 2008।
2. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-3.
3. Prevalence of micro-nutrient deficiencies. NNMB Technical Report number 22. NIN, ICMR, Hyderabad.

-
4. Textbook Human Nutrition. 1996. Mahtab S. Bamji. Editors: Mahtab S. Bamji, Kamala Krishnaswamy, G. N. V. Brahmam. Oxford and IBH Publishing Company, New Delhi.
-

2.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. सामुदायिक पोषण के बारे में विस्तृत चर्चा करें।
2. समुदाय के लिए आहार संबंधी दिशानिर्देशों के विषय में विस्तृत टिप्पणी कीजिये।
3. पोषण महामारी विज्ञान के बारे में व्याख्या कीजिये।

इकाई 3: राष्ट्रीय पोषण नीति

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 भारत की वर्तमान पोषण स्थिति

3.4 राष्ट्रीय पोषण नीति

3.4.1 लघु अवधि प्रत्यक्ष हस्तक्षेप नीति

3.4.2 अप्रत्यक्ष हस्तक्षेप नीति; दीर्घकालिक संस्थागत और संरचनात्मक परिवर्तन

3.5 राष्ट्रीय पोषण लक्ष्य

3.6 पोषण योजना की निगरानी

3.7 सारांश

3.8 पारिभाषिक शब्दावली

3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.11 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

भारत की पोषण के लिए चिंता उसकी सभ्यता जितनी पुरानी है। हमारी पवित्र पुस्तकों और प्राचीन ग्रंथों में पोषण और स्वास्थ्य के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत मौजूद हैं। स्वतंत्र भारत में संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से पोषण के लिए एक स्पष्ट प्रतिबद्धता रही है। भारत का संविधान अनुच्छेद 47 स्पष्ट रूप से यह बताता है कि राज्य का प्राथमिक कर्तव्य है कि वह अपने लोगों के जीवन, पोषण और सार्वजनिक स्वास्थ्य के स्तर को सुधारने का प्रयास करे। पोषण एक आधारभूत मानव अधिकार है और यह प्रत्येक मनुष्य के अच्छे स्वास्थ्य, शारीरिक और मानसिक विकास का महत्वपूर्ण निर्धारक है। बच्चों में आयु से कम लम्बाई, अविकसित मांसपेशियां, कम वजन और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी कुपोषण के संकेत हैं। बाल मृत्यु दर का एक प्रमुख कारक कुपोषण का अल्पपोषण रूप है हालांकि देश में अधिक वजन और पोषण संबंधी गैर संचारी रोग भी वृद्धि पर हैं। कुपोषित बच्चे कई प्रकार के शारीरिक और मानसिक विषमताओं से ग्रस्त हो जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप वयस्क के रूप में उनके लिए

समाज में योगदान देना और राष्ट्रीय विकास करना मुश्किल हो जाता है। भारत में 1993 में राष्ट्रीय खाद्य और पोषण नीति तैयार करने के बाद पोषण संबंधी स्थिति में पहले से सुधार हुआ है। फिर भी यह स्थिति अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुंच पाई है। देश भर में ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में मोटापा, उच्च रक्तचाप, मधुमेह, हृदय रोग, स्ट्रोक, कैंसर और ऑस्टियोपोरोसिस जैसे प्रमुख पोषण संबंधी मुद्दों की बढ़ती हुयी संख्या पर विचार किया गया है। भोजन की अनुचित आदतें और गतिहीन जीवन शैली इसके प्रमुख उभरते हुए कारक हैं जिसके अनुरूप नई पोषण नीति तैयार की गयी है। भारत की राष्ट्रीय पोषण नीति पोषण संबंधी समग्र स्थिति में सुधार करने के लिए विकास कार्यक्रम के साथ विकास रणनीति और कार्यान्वयन के नए तरीके तैयार करने में उपयोगी साबित हुई है। राष्ट्रीय पोषण नीति वैश्विक नीतियों, स्वास्थ्य, भोजन, कृषि, पर्यावरण और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में प्रासंगिक राष्ट्रीय नीतियों को ध्यान में रखती है जो पोषण को सुनिश्चित करने के लिए बहु-रचनात्मक प्रकृति को दर्शाती है।

3.2 उद्देश्य

राष्ट्रीय पोषण नीति का लक्ष्य लोगों के विविध समूहों, जिसमें माताएं, किशोरियां और बच्चे शामिल हैं, उनके लिए पोषण संबंधी स्थिति में सुधार करना है। साथ ही कुपोषण को रोकने और नियंत्रित करने के माध्यम से जीवन स्तर को बढ़ाकर राष्ट्रीय विकास को गति प्रदान करना है।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जानेंगे;

- सभी नागरिकों की पोषण संबंधी स्थिति में सुधार के तरीके जिसमें बच्चे, किशोरियां, गर्भवती महिलाएं और धात्री माताएं शामिल हैं;
- पर्याप्त गुणवत्ता वाले सुरक्षित और विविध भोजन की उपलब्धता और स्वस्थ आहार प्रथाओं को बढ़ावा देने का महत्व;
- विशिष्ट पोषण या प्रत्यक्ष पोषण को हस्तक्षेप द्वारा मजबूत करना;
- पोषण-संवेदनशीलता या अप्रत्यक्ष हस्तक्षेप कर पोषण को मजबूत बनाना;
- बहुराष्ट्रीय कार्यक्रमों को मजबूत बनाना और बेहतर पोषण सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न क्षेत्रों के बीच समन्वय में वृद्धि करना; तथा
- भारत के लोगों को राष्ट्रीय पोषण नीति की दृष्टि के अपेक्षित पोषण प्राप्त कराना ताकि वह एक स्वस्थ और उत्पादक जीवन व्यापन कर सकें।

आइए भारत की वर्तमान पोषण स्थिति को विस्तार से समझें।

3.3 भारत की वर्तमान पोषण स्थिति

पोषण और स्वास्थ्य समानार्थक नहीं हैं लेकिन अच्छे पोषण के बिना स्वास्थ्य उत्तम नहीं हो सकता। वृद्धि और विकास में आहार हमेशा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और इसका जनसंख्या की स्वास्थ्य दक्षता पर प्रभाव पड़ता है। हाल के वर्षों में अनाज के उत्पादन में शानदार वृद्धि के बावजूद कुपोषण की समस्या खासकर बच्चों और महिलाओं के बीच बड़े पैमाने पर अस्तित्व में रही है क्योंकि वे अज्ञानता, गरीबी, अपर्याप्त भोजन का सेवन, बीमारी से ग्रस्त हैं। इसकी वजह से पोषण के महत्व के बारे में योजनाकारों के बीच जागरूकता बढ़ गई है। कुपोषण केवल भोजन की कमी या स्वास्थ्य समस्याओं का नतीजा नहीं है बल्कि एक बहुआयामी समस्या है। राष्ट्र की पोषण संबंधी स्थिति भोजन की पर्याप्तता और उसके वितरण, गरीबी के स्तर, महिलाओं की स्थिति, जनसंख्या वृद्धि दर, स्वास्थ्य, शिक्षा, सुरक्षित पेयजल, पर्यावरण स्वच्छता और अन्य सामाजिक सेवाओं के उपयोग से निकटता से संबंधित है। पोषण संबंधी स्थिति जटिल और अन्तर संबंधित है जिसके परिणामस्वरूप यह तीन व्यापक समूहों में वर्गीकृत की जाती है:

- प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण
- सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी
- गैर संचारी अपक्षयी रोगों का प्रचलन

प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण बच्चों और वयस्कों की लम्बाई और वजन के आधार पर दर्शाए गए विकास से परिलक्षित होता है। अक्सर यह मातृ पोषण संबंधी स्थिति का एक सीधा परिणाम है जिसके परिणामस्वरूप भ्रूण में अंतर्गर्भाशयी कुपोषण और जन्म के समय शिशुओं का वजन कम होता है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी, विटामिन और खनिज लवणों के खराब सेवन से संबंधित है जिनकी विशिष्ट चिकित्सकीय संकेतों द्वारा पहचान की जाती है। सूक्ष्म पोषक तत्व की कमियों में विशेष रूप से विटामिन ए, लौह लवण और आयोडीन की कमी व्यापक रूप से प्रचलित हैं जिसका भोजन में कैलोरी और प्रोटीन के स्तर से कोई प्रासंगिकता नहीं है। प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमियों के कारण वयस्कों में कम उत्पादकता और बच्चों में विकास का अवरोधन होता है। गैर संचारी अपक्षयी रोग जैसे मोटापा, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग और मधुमेह रोग की प्रचुरता निकटता से इससे जुड़ी हुई है। चयापचय संबंधी विकार अक्सर अनुचित भोजन जैसे ऊर्जा और वसा के अत्यधिक सेवन विशेष रूप से संतृप्त वसा और कम आहारिय रेशे के सेवन से संबंधित है। भारत में पिछले 15 वर्षों में पोषण संबंधी

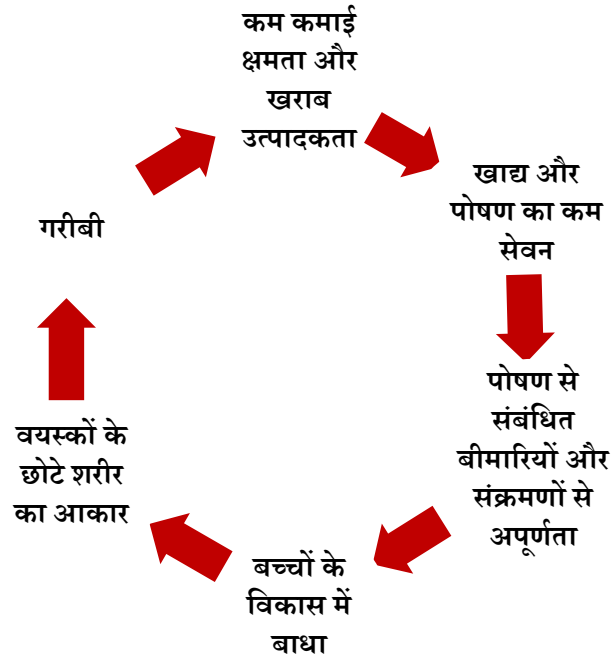
सुधार की प्रवृत्ति हालांकि सकारात्मक रही है। तथ्य यह है कि जनसंख्या में भारी वृद्धि के बावजूद बच्चों की समग्र पोषण संबंधी स्थिति में कुछ सुधार दिखाई देते हैं और 5 वर्ष तक के बच्चों की मृत्यु दर में तेज गिरावट आई है, जो एक स्वस्थ लक्षण है। राष्ट्रीय पोषण निगरानी ब्यूरो द्वारा देश के 10 राज्यों में किए गए अध्ययनों के परिणाम बताते हैं कि गोमेज वर्गीकरण के आधार पर बच्चों के बीच गंभीर और मध्यम स्तर के कुपोषण का असर घट गया है जबकि सामान्य बच्चों के अनुपात में वृद्धि हुई है। विटामिन ए की कमी से अंधापन, लौह लवण की कमी से एनीमिया और आयोडीन की कमी संबंधी विकार राष्ट्रीय महत्व की अन्य पोषक तत्वों की कमी है जो बच्चों और माताओं में पाई गई है। सूक्ष्म पोषक तत्व बहुत थोड़ी मात्रा में आवश्यक होते हैं लेकिन उचित विकास, रखरखाव और संक्रमण के प्रतिरोध की सामान्य प्रक्रियाओं के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। इन सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के कारण गंभीर रोग, बढ़ती मृत्यु दर और विकलांगता दर के संदर्भ में गंभीर परिणाम सामने आते हैं। अब भी देश में सूखा-प्रवण और पहाड़ी इलाकों में कम आय वाले समूहों के पूर्व-विद्यालयी वर्ग बच्चों के बीच में विटामिन ए की कमी एक महत्वपूर्ण सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। विटामिन ए की कमी शरीर में कई ऊतकों को प्रभावित करती है लेकिन आंखों में इसके सर्वाधिक प्रत्यक्ष परिवर्तन दिखाई देते हैं।

लौह लवण और फोलिक अम्ल की कमी के कारण पोषण संबंधी एनीमिया सभी आयु वर्गों और लिंगों को प्रभावित करने वाली सबसे व्यापक रूप से प्रचलित सूक्ष्म पोषक तत्व की कमी है, जिसकी व्यापकता देश में 50 से 80 प्रतिशत है। एनीमिया की समस्या किशोरियों, युवा महिलाओं विशेष रूप से गर्भावस्था के दौरान और कुपोषित माताओं से पैदा हुए शिशुओं में व्यापक है। देश में एनीमिया मातृ मृत्यु दर का एक महत्वपूर्ण कारक है। उत्पादकता में कमी और स्कूली बच्चों की सीखने की क्षमता में अशक्तता, लौह लवण की कमी के एनीमिया के दो महत्वपूर्ण परिणाम हैं जो राष्ट्रीय विकास पर प्रत्यक्ष असर डालते हैं। आयोडीन की कमी के हानिकारक प्रभावों को सामूहिक रूप से आयोडीन की कमी के विकारों के रूप में जाना जाता है जो देश में एक महत्वपूर्ण सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। इसके अंतर्गत मानसिक मंदता (क्रिटिनिज्म), गर्भपात, गण्डमाला जैसे नैदानिक विकारों के व्यापक वर्णक्रम शामिल हैं।

तीसरी प्रकार की पोषण संबंधी समस्या, आहार संबंधी गैर संचारी अपक्षयी रोग हैं जो आर्थिक वर्णक्रम के ऊपरी छोर की जनसंख्या के पोषण के साथ जुड़े हुए हैं। बढ़ती समृद्धि और शहरीकरण के साथ विशेष रूप से आहार ऊर्जा, वसा, संतृप्त वसा, कम रेशा और अधिक मादक पेयों में समृद्ध हो गए हैं। इसके अतिरिक्त व्यायाम और ऊर्जा के व्यय में गिरावट आयी है जबकि धूम्रपान और तनाव बढ़ रहा है। बदलते खाद्य उपभोग के स्वरूप

और गतिहीन जीवनशैली ने गैर-संक्रमणीय रोगों जैसे हृदय रोग, मोटापे, मधुमेह और उच्च रक्तचाप के स्तर में वृद्धि की है। भारतीय जनसंख्या का एक बड़ा भाग पोषण समस्याओं जैसे भूख और पोषण की कमी के साथ जुड़ा हुआ है, जबकि आहार संबंधी गैर संक्रमणीय रोग समृद्ध समुदायों के बीच पोषण से संबंधित प्रवृत्तियों के रूप में उभरकर सामने आ रहे हैं। इसलिए जीवनशैली में पोषण और स्वास्थ्य को अत्यधिक महत्व दिया जाना चाहिए और इसके बारे में समुदाय में जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता है।

गरीबी का दुष्चक्र



आगे बढ़ने से पूर्व आइए कुछ प्रश्नों को हल करने का प्रयास करें।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।

- और..... गैर संचारी अपक्षयी रोग हैं।
- में भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय पोषण नीति को अपनाया गया।
- प्रत्येक इंसान के और..... के लिए पोषण एक महत्वपूर्ण निर्धारक है।

उपरोक्त प्रश्नों के बाद, आइए राष्ट्रीय पोषण नीति का विस्तार से अध्ययन करें।

3.4 राष्ट्रीय पोषण नीति

यह विकास नीति विभिन्न रणनीति उपकरणों के साथ-साथ अल्पकालिक उपायों और लंबे समय तक संस्थागत और संरचनात्मक परिवर्तनों के रूप में कमजोर समूहों के लिए प्रत्यक्ष पोषण हस्तक्षेप के महत्व पर प्रकाश डालती है जिससे उनके बेहतर पोषण की स्थिति उत्पन्न हो सके। पोषण नीति ने खाद्य उत्पादन, खाद्य आपूर्ति, शिक्षा, सूचना, स्वास्थ्य देखभाल, ग्रामीण विकास, महिलाओं और बाल विकास जैसे विभिन्न क्षेत्रों में विशेष आवश्यकता वाले लोगों और महत्वपूर्ण क्षेत्रों की पहचान की है। राष्ट्रीय पोषण नीति के अंतर्गत हम निम्न बिन्दुओं पर चर्चा करेंगे:

3.4.1 लघु अवधि प्रत्यक्ष हस्तक्षेप नीति (Short Term Direct Intervention Policy)

प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के अंतर्गत निम्न पोषण हस्तक्षेप निहित हैं:

संवेदनशील समूहों के लिए पोषण हस्तक्षेप

बच्चों, किशोरियों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं सहित सभी नागरिकों के पोषण संबंधी स्थिति में सुधार करने के लिए पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करना आवश्यक है। व्यक्तिगत और परिवार के पोषण के सुधार में पौष्टिक भोजन की उपलब्धता और उपयोग महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राष्ट्रीय पोषण नीति का लक्ष्य सुरक्षित और संतुलित आहार के माध्यम से जीवन चक्र के सभी चरणों के दौरान उचित पोषण सुनिश्चित करना है। सार्वभौमिक टीकाकरण कार्यक्रम, मौखिक पुनर्जलीकरण चिकित्सा और समेकित बाल विकास सेवाओं का बाल अस्तित्व और कुपोषण के चरम रूपों पर काफी प्रभाव पड़ा है। हालाँकि, स्थिति यह है कि भूख और कुपोषण के मूल रूप से 43.8 प्रतिशत से अधिक बच्चे और हल्के कुपोषण से लगभग 37.6 प्रतिशत बच्चे ग्रस्त हैं। समेकित बाल विकास सेवाओं के द्वारा तत्काल उचित पोषण हस्तक्षेप का विस्तार किया गया है ताकि कमजोर वर्ग के 0-6 वर्ष के बच्चों को शामिल किया जा सके। विशेष रूप से 0-3 आयु के बच्चों के समूह के बीच माता की निकट भागीदारी के साथ विकास में सुधार करना एक महत्वपूर्ण हस्तक्षेप है। माता को अपने बच्चे की वृद्धि की निगरानी में शामिल होने से बच्चे की पोषण प्रक्रिया पर नियंत्रण की भावना मिलती है। संयुक्त रूप से पर्याप्त पोषण और स्वास्थ्य शिक्षा, पोषण संबंधी आवश्यकताओं को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने के लिए सक्षम बनाता है। समेकित बाल विकास सेवाओं के दायरे में किशोरियों को शामिल करने की सरकार की हालिया पहल तेज

हुई है ताकि उनकी पोषण स्थिति में सुधार हो सके और उन्हें सुरक्षित मातृत्व के लिए तैयार किया जा सके। उन्हें गृह आधारित कौशल, उन्नयन प्रशिक्षण और अनौपचारिक शिक्षा, विशेष रूप से पोषण और स्वास्थ्य शिक्षा दी जाती है।

जीवन चक्र की सभी अवस्थाओं में आवश्यक पोषण सुनिश्चित करना

जीवन चक्र की सभी अवस्थाओं में आवश्यक पोषण को सुनिश्चित करना एक निरंतर प्रक्रिया है। कुपोषण का दुष्चक्र कुपोषित मां के माध्यम से कुपोषित बच्चे को जन्म देने के साथ शुरू होता है जो जीवन चक्र और भविष्य की पीढ़ी को प्रभावित करता है। राष्ट्रीय पोषण नीति ने कुपोषण के इस अंतरजन्य प्रभाव को कम करने के लिए निम्नलिखित जीवन चक्र रणनीतियों पर बल दिया है:

- सभी गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताओं के लिए उचित और पर्याप्त पोषण सुनिश्चित करना।
- परिवार में सहायक पर्यावरण, सेवाओं और नियामक सुरक्षा के द्वारा यह सुनिश्चित करना कि धात्री माता 6 महीने तक शिशु को विशिष्ट स्तनपान कराने में सक्षम हो और उसके 2 साल के होने तक स्तनपान जारी रखे जिससे शिशु के उपयुक्त पोषण की नींव सुनिश्चित हो।
- स्तनपान कराने के साथ-साथ 6 महीने की आयु के बाद पूरक भोजन की शुरुआत सुनिश्चित करना और 2 वर्ष की आयु तक स्तनपान जारी रखना।
- किशोर लड़कों और लड़कियों के विकास के लिए सुरक्षित और पर्याप्त पौष्टिक भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
- स्वस्थ और उत्पादक भविष्य की पीढ़ी विकसित करने के लिए कम आयु में विवाह जैसी कुप्रथा पर रोकथाम।
- कुपोषण से संबंधित गैर संचारी रोगों से पीड़ित वयस्क और बुजुर्ग व्यक्तियों के लिए उचित पोषण सुनिश्चित करना।
- उचित भोजन की आदतों और स्वस्थ जीवन शैली को प्रोत्साहित करना।
- दूरस्थ स्थानों, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में रहने वाले गरीब लोगों की पोषण निगरानी द्वारा लक्षित पोषण कार्यक्रम को अपनाना।
- शिशु के जन्म के बाद पहले 6 महीनों के दौरान विशिष्ट स्तनपान का प्रचार करना।

- 6 महीने के बाद स्तनपान के साथ-साथ घर पर उचित रूप से तैयार किया गया पूरक आहार प्रदान करना, बच्चे को खिलाने से पहले हाथ धोना, तीव्र और मध्यम कुपोषण का उपचार करना।
- किशोरियों और महिलाओं के पोषण-व्यवहार में सुधार करना।
- पारिवारिक स्तर पर परामर्श के माध्यम से पोषण ज्ञान प्रदान करने के लिए वार्तालाप करना।
- कई सूक्ष्म पोषक तत्वों का पूरक के रूप में प्रावधान और आयोडीनयुक्त नमक के उपयोग का संवर्धन करना।
- मौजूदा स्वास्थ्य प्रणाली का प्रभावी ढंग से उपयोग करना और सार्वभौमिक बनाना।
- आपातकाल जैसे महामारी, युद्ध, प्राकृतिक आपदा में लोगों के लिए पर्याप्त पोषण सुनिश्चित करना।
- एच0आई0वी0 जैसी बीमारी से ग्रस्त लोगों हेतु पर्याप्त पोषण सुनिश्चित करना।

आवश्यक खाद्य पदार्थों का प्रबलीकरण (Fortification)

आवश्यक खाद्य पदार्थों को उपयुक्त पोषक तत्वों के साथ सुदृढ़ करना जैसे नमक को आयोडीन और चावल को लौह लवण के साथ प्रबलीकृत करना। देश के स्थानिक क्षेत्रों में आयोडीन की कमी को कम करने के लिए सभी जनसंख्या को आवरित करने हेतु स्थानीय स्तर पर आयोडीनयुक्त नमक का वितरण करना। भोजन का उपयुक्त पोषक तत्वों के साथ प्रबलीकरण कार्यक्रम शुरू करना और इसका विस्तार करना।

कम लागत वाले स्थानीय पौष्टिक भोजन को लोकप्रिय बनाना

स्वदेशी और स्थानीय रूप से उपलब्ध कच्चे माल से कम लागत वाले पौष्टिक खाद्य पदार्थों को लोकप्रिय करने के प्रयासों को तेज करना। इस गतिविधि में विशेष रूप से महिलाओं को शामिल करना आवश्यक है। साथ ही पर्याप्त, विविध और गुणवत्ता वाले सुरक्षित भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करना और स्वस्थ आहार प्रथाओं को बढ़ावा देना भी आवश्यक है। भारतीयों के आहार में अधिकांश भाग अनाज का होता है, जो लगभग 70 प्रतिशत ऊर्जा की आवश्यकता प्रदान करते हैं। आहार में दूध, दालों, फलों, सब्जियों की कमी से प्रोटीन और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी हो जाती है। खाद्य विविधता को बढ़ाने के लिए रणनीतियां बनाकर उनका अंतर्ग्रहण सुनिश्चित करना जरूरी है। पोषण शिक्षा के अलावा व्यवहार परिवर्तन संचार सुनिश्चित करना। सरकार द्वारा खाद्य-विविधता को प्राप्त करने के लिए खाद्य

आधारित रणनीतियों को प्रोत्साहित किया जा रहा है जिसमें मत्स्य पालन और पशुधन सहित कृषि क्षेत्र पर जोर दिया गया है। सुरक्षित और पौष्टिक भोजन की उपलब्धता में वृद्धि के लिए पारिवारिक स्तर पर या सामूहिक रूप से घर में समन्वित बागान और छोटे पैमाने पर पशुधन और कुक्कुट पालन विविध को प्रोत्साहित करना। जैव विविधता और निर्बाध खाद्य विविधता को बढ़ावा देने के लिए स्थानीय उत्पादन और स्वदेशी किस्म की फसलों, फल और सब्जी को प्रोत्साहित करना। विभिन्न प्रकार के भोजन के संयोजन के माध्यम से पोषण मूल्य बढ़ाना, खाद्य सुरक्षा को प्राप्त करने के लिए उचित भोजन संयोजन प्रदान करना। वर्षभर भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय और उपयुक्त तकनीकों का उपयोग करके भोजन संरक्षण को प्रोत्साहित करना। आपदाओं और गंभीर खाद्य असुरक्षा के दौरान प्रभावित जनसंख्या को पूरक भोजन प्रदान करना।

संवेदनशील समूहों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का नियंत्रण

बच्चों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं में विटामिन ए, लौह लवण, फोलिक अम्ल और आयोडीन की कमियों को पोषण सम्बंधित कार्यक्रमों के जरिये नियंत्रित करना। किशोरियों को लौह अनुपूरक देना। साथ ही इन कार्यक्रमों का विस्तार समुदाय के सभी सदस्यों को आवरित करने के लिए करना।

अब हम अप्रत्यक्ष नीति के बारे में जानेंगे जो दीर्घकालिक संस्थागत और संरचनात्मक परिवर्तन उपकरण है।

3.4.2 अप्रत्यक्ष हस्तक्षेप नीति; दीर्घकालिक संस्थागत और संरचनात्मक परिवर्तन

(Indirect Intervention Policy; Long term institutional and structural changes)

अप्रत्यक्ष हस्तक्षेप के अंतर्गत निम्न पोषण हस्तक्षेप निहित हैं:

खाद्य सुरक्षा

सम्पूर्ण खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए 215 किलोग्राम अनाज प्रति व्यक्ति की उपलब्धता को प्राप्त करना आवश्यक है।

उत्पादन में सुधार

आत्मनिर्भरता और अधिशेष प्राप्त करने और भंडारण बनाने के उद्देश्य से दालों, तिलहन और अन्य खाद्य फसलों के उत्पादन में वृद्धि हुई है। खाद्य पदार्थ जैसे बाजरा, फलियां, हरी पत्तेदार सब्जियां और फलों जैसे अमरूद, पपीता, आमला और गाजर को प्राथमिकता दी गई है।

खाद्य नीति राष्ट्रीय पोषण संबंधी आवश्यकताओं के अनुरूप होनी चाहिए, जिसके लिए उचित प्रोत्साहन, मूल्य निर्धारण और कराधान नीतियों को लागू करने की आवश्यकता है।

प्रभावी आय स्थानान्तरण के लिए नीतियां

क्रय शक्ति को सुधारना

जनसंख्या के सबसे निम्न आर्थिक क्षेत्रों की क्रय शक्ति को सशक्त बनाने के लिए गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम जैसे ग्रामीण विकास योजना, जवाहर रोजगार योजना जैसी उत्पादन नियोजन योजनाओं को पुनर्निर्मित किया गया है। रोजगार सृजन कार्यक्रमों को लागू करके भूमिहीन ग्रामीण और शहरी गरीबों की क्रय शक्ति को सुधारना आवश्यक है ताकि प्रत्येक भूमि रहित ग्रामीण परिवार के लिए कम से कम 100 दिनों का अतिरिक्त रोजगार बनाया जा सके। रोजगार के यह अवसर शहरी इलाकों में झोपड़पट्टी में रहने वाले लोगों और शहरी गरीबों के लिए भी बनाए गए हैं।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली

इसके द्वारा सस्ते राशन की सरकारी दुकानों द्वारा कम दरों पर चावल, गेहूं, चीनी और तेल के अलावा आवश्यक खाद्य पदार्थों की उपलब्धता को सुनिश्चित किया जाता है। विशेष रूप से गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोगों के लिए उन्हें उचित मूल्य पर उपलब्ध कराया जाता है।

भूमि सुधार

भूमि सुधार के उपायों को लागू करना ताकि भूमिहीन और अत्यधिक गरीबों की भेद्यता (Vulnerability) कम हो सके। इसमें सामंती सुधार और उच्चतम भूमि-सीमा अधिनियम के कार्यान्वयन दोनों शामिल होते हैं।

स्वास्थ्य और परिवार कल्याण

सभी को स्वास्थ्य और प्रतिरक्षण सुविधाएं प्रदान करना। सभी माताओं के लिए सुरक्षित मातृत्व सुनिश्चित करने के लिए प्रसवपूर्व और प्रसवोपरांत बेहतर स्वास्थ्य देखभाल सुलभ करना। प्रजनन आयु वर्ग की जनसंख्या को शिक्षा के माध्यम से जागरूक करना ताकि वह अपने परिवार के आकार के लिए स्वयं जिम्मेदार हों। छोटे परिवार के मानदंड और बच्चों में पर्याप्त अंतर को प्रोत्साहित करना।

बुनियादी स्वास्थ्य और पोषण ज्ञान

शिशुओं को भोजन खिलाने की प्रथाओं पर विशेष ध्यान देने के साथ लोगों को प्रभावी ढंग से बुनियादी स्वास्थ्य और पोषण ज्ञान प्रदान करना। पोषण की समस्या के संदर्भ में पोषण और स्वास्थ्य शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण हैं।

पोषण निगरानी

राष्ट्रीय पोषण संस्थान और राष्ट्रीय पोषण निगरानी ब्यूरो को अधिक सशक्त करने की आवश्यकता है ताकि गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले बच्चों, किशोरियों, गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताओं की पोषण संबंधी स्थिति की नियमित निगरानी और उसके परिणाम संचरित हों। तत्काल कार्रवाई शुरू करने के लिए राष्ट्रीय पोषण निगरानी ब्यूरो का प्रारंभिक चेतावनी प्रणाली के रूप में कार्य करना बहुत महत्वपूर्ण है। पोषण संबंधी कार्यक्रमों की निगरानी जैसे एकीकृत बाल विकास योजना और पोषण शिक्षा को जारी रखना इसके अंतर्गत निहित हैं।

अनुसंधान

कुपोषण से पीड़ित लोगों की सही पहचान करना आवश्यक है। अनुसंधान से उच्च पोषण मूल्य वाले नए भोजन प्रकारों का चयन सक्षम करना जो गरीबों की क्रय शक्ति के भीतर हों।

समान पारिश्रमिक

महिलाओं की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए उनकी मजदूरी पुरुषों के समान करना। इसके लिए समान पारिश्रमिक अधिनियम के सख्त प्रवर्तन की आवश्यकता है। महिलाओं के लिए रोजगार अवसरों के विस्तार के लिए विशेष जोर देना।

संचार

पोषण नीति के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए अपनाई जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण रणनीति में से एक स्थापित मीडिया के माध्यम से संचार होता है। संचार उपकरणों का उपयोग करते समय जन संचार के साथ-साथ समूह या अंतर-व्यक्तिगत संचार का इस्तेमाल केवल इलेक्ट्रॉनिक संचार के माध्यम से ही नहीं बल्कि लोक और प्रिंट मीडिया के व्यापक रूप से करना।

न्यूनतम मजदूरी व्यवस्था

उचित पोषण सूत्र के माध्यम से न्यूनतम मजदूरी को मूल्य वृद्धि के साथ जोड़ना। कृषि महिला श्रमिकों को न्यूनतम समर्थन प्रदान करना और गर्भावस्था की अंतिम तिमाही में नियोक्ता द्वारा कम से कम 60 दिन की छुट्टी देने के लिए एक विशेष कानून पेश करना।

समुदाय की भागीदारी

राष्ट्रीय पोषण नीति के बारे में समुदाय में जागरूकता पैदा करना और परिवारों के पोषण संबंधी स्थिति में सुधार के लिए सभी कार्यक्रमों में, विशेष रूप से महिलाओं की भागीदारी को प्रोत्साहित करना महत्वपूर्ण है।

शिक्षा और साक्षरता

यह देखा गया है कि विशेष रूप से महिलाओं की शिक्षा और साक्षरता बेहतर पोषण संबंधी स्थिति के लिए महत्वपूर्ण निर्धारक है। उदाहरण के लिए केरल राज्य में महिलाओं की साक्षरता का स्तर उच्चतम है और वहाँ जनसंख्या की पोषण स्थिति भी अच्छी है।

महिलाओं की स्थिति में सुधार

कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा और ग्रामीण विकास में मुख्यधारा की गतिविधियों के साथ पोषण को लागू करने का सबसे प्रभावी उपाय विशेष रूप से महिलाओं की आर्थिक स्थिति पर ध्यान केंद्रित करना है। महिलाओं का रोजगार घरेलू पोषण को लाभ देता है, घरेलू आय में वृद्धि के साथ ही महिलाओं की स्थिति, स्वायत्तता और विशेषकर पोषण से संबंधित निर्णय लेने की शक्ति में वृद्धि होती है।

पोषणज एनीमिया रोगनिरोधक कार्यक्रम

इस कार्यक्रम का शुभारंभ भारत सरकार ने 1970 में किया। कार्यक्रम के अंतर्गत गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताओं के साथ-साथ परिवार नियोजन के स्वीकारकर्ता महिलाओं को दैनिक टैबलेट दिया जाता है जिसमें 100 मिलीग्राम मूल लौह तत्व और 0.5 मिलीग्राम फोलिक अम्ल शामिल हैं। 1-5 साल आयु वर्ग के बच्चों को 100 दिन की अवधि के लिए 60 मिलीग्राम मूल लौह तत्व और 0.1 मिलीग्राम फोलिक अम्ल युक्त एक टैबलेट दिया जाता है। इस कार्यक्रम में क्रमशः 8 ग्राम और 10 ग्राम प्रतिशत से कम हीमोग्लोबिन स्तर वाले बच्चों और गर्भवती महिलाओं को शामिल किया गया है।

विटामिन ए की कमी के लिए रोगनिरोधक कार्यक्रम

इस कार्यक्रम का शुभारंभ 1970 में भारत सरकार द्वारा किया गया। 1-5 वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों को प्रत्येक 6 महीनों में 2 मिलियन आई0यू0 (International Unit) मौखिक खुराक दी जाती है। 1980 के दौरान भोजन विभाग ने पोषणज अंधपन को रोकने के लिए दूध के साथ विटामिन ए के प्रबलीकरण की योजना की शुरुआत भी की है।

आयोडीन अल्पता विकार नियंत्रण कार्यक्रम

यह कार्यक्रम भारत सरकार ने 1962 में गण्डमाला स्थानिकमारी (Goitre endemic) वाले क्षेत्रों की पहचान करने और गण्डमाला नियंत्रण उपायों के प्रभाव का आकलन करने के लिए शुरू किया था। देश में आयोडीन की कमी के विकार के व्यापक वर्णक्रम के बारे में जागरूकता बढ़ी है। भारत सरकार ने 1986 से पूरे देश में चरणबद्ध तरीके से खाद्य नमक के सार्वभौमिक आयोडीनीकरण की योजना शुरू की। सभी राज्यों से अनुरोध किया गया कि वे सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से आयोडीन नमक के वितरण की व्यवस्था करें।

राष्ट्रीय अतिसार रोग नियंत्रण कार्यक्रम

यह कार्यक्रम 1981 में 5 साल से कम आयु के बच्चों में मौखिक पुनर्जलीकरण चिकित्सा के माध्यम से अतिसार के कारण बच्चों में मृत्यु दर को कम करने के लिए शुरू किया गया था।

खाद्य और पोषण बोर्ड

खाद्य और पोषण बोर्ड सरकार को पोषण संभावित मुद्दों में सलाह देता है। साथ ही खाद्य और पोषण, प्रसार शिक्षा, विकास, उत्पादन और लोकप्रियता के संबंध में गतिविधियों की समीक्षा भी करता है। इसके निम्न कार्य हैं:

- खाद्य सुरक्षा के संबंध में विशेष रूप से पोषण संबंधी संवेदनशील हस्तक्षेप जैसे कुपोषण, महिला शिक्षा और सशक्तिकरण, रोजगार के अवसरों में वृद्धि, स्वच्छता, कृषि और सामाजिक सुरक्षा का विस्तार करना।
- घरेलू स्तर पर खाद्य सुरक्षा को बढ़ाना, खाद्य आधारित आहार संबंधी दिशानिर्देशों का प्रचार और बढ़ावा देना।
- सूचित खाद्य चयन और उपभोक्ता अधिकारों को सुनिश्चित करना।
- फल, सब्जियां, मांस, मछली, दूध और मांस का उत्पादन बढ़ाने के लिए पौष्टिक संवेदनशील कृषि में निवेश को प्रोत्साहित करना।
- महिलाओं के लिए रोजगार के अवसर बनाना जिससे महिला शिक्षा और महिला सशक्तिकरण की दर में वृद्धि हो।
- अतिसार, निमोनिया की तरह विभिन्न प्रकार के संक्रमण जो बच्चे के पोषण पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं, उनको रोकने के लिए लोगों को स्वच्छता अभ्यास का पालन करने के लिए प्रेरित करना। साथ ही इन संक्रमणों के जोखिम को कम करने के लिए सुरक्षित पेयजल और स्वच्छता प्रणाली को मजबूत करना।
- पोषण हस्तक्षेप में सभी संबंधित मंत्रालयों, विभाग, संस्थानों और गैर सरकारी संगठनों जैसे भोजन, मत्स्य पालन, पशुधन, महिलाओं और बच्चों के मामले, शिक्षा, उद्योग और स्थानीय सरकार को शामिल करना।
- गैर अनाज कृषि उत्पादों जैसे दालें, फल, सब्जियां का उत्पादन बढ़ाने के लिए अनुसंधान गतिविधियों को तेज करना।
- संवेदनशील पोषण संबंधी और विशिष्ट पोषण प्रत्यक्ष कार्यक्रमों को मजबूत बनाना।

- पोषण सेवाओं के प्रभावी पर्यवेक्षण और निगरानी सहित नए सिरे से पोषण प्रयासों में मानव संसाधन को शामिल करना और पोषण कार्यक्रम के कार्यान्वयन का मूल्यांकन करना।
- खाद्य सुरक्षा, रोजगार और रोग प्रबंधन रणनीतियों को अनुकूलित करना और सार्वजनिक जागरूकता बढ़ाने के लिए मजबूत बनाना।

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही अथवा गलत बताइये।
 - a. विटामिन ए की कमी के लिए रोगनिरोध कार्यक्रम में 1-5 वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों को प्रत्येक 6 महीनों में 5 मिलियन आई0यू0 (International Unit) मौखिक खुराक दी जाती है।
 - b. सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी, विटामिन और खनिजों के खराब सेवन से संबंधित है।
 - c. पोषणज एनीमिया रोगनिरोधक कार्यक्रम का शुभारंभ भारत सरकार ने 1970 में किया।

अब हम राष्ट्रीय पोषण लक्ष्यों के बारे में चर्चा करेंगे।

3.5 राष्ट्रीय पोषण लक्ष्य

अंतर-क्षेत्रीय दृष्टिकोण के आधार पर सरकार का लक्ष्य एक व्यापक, एकीकृत और बहुआयामी वर्गीकरण के विकास को क्रियान्वित करना है। प्रत्येक क्षेत्र में पोषण के प्रति योगदान को अधिकतम करने के लिए राष्ट्रीय पोषण लक्ष्य निम्नानुसार हैं:

- गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के माध्यम से घरेलू खाद्य सुरक्षा में सुधार लाना।
- उचित भोजन और स्वस्थ जीवन शैली को बढ़ावा देना।
- समुदाय में ऊर्जा और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के बारे में जागरूकता और मौजूदा संसाधनों से निपटने के लिए परिवारों और समुदायों को सशक्त बनाना।
- आहार में सुधार लाने और स्वस्थ जीवन शैली को बढ़ावा देने के लिए सामुदायिक स्तर पर सेवाओं के बेहतर उपयोग और उपयुक्त व्यवहार संबंधी कार्यों के लिए निरंतर समर्थन और मार्गदर्शन प्रदान करने पर जोर देना।
- जन्म के पहले घंटे से स्तनपान की शुरुआत करना।

- पूरक आहार प्राप्त करने वाले 6-23 महीने के बच्चों के अनुपात में वृद्धि करना।
- जन्म के समय कम वजन की दर कम करना।
- 5 वर्ष तक के बच्चों के बीच गंभीर कुपोषण की दर को कम करना।
- किशोरियों के बीच कुपोषण कम करना।
- विटामिन ए कमी सम्बंधी विकारों की रोकथाम के कार्यक्रम का आवरण बढ़ाना।
- गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं के बीच कुपोषण कम करना।
- आयोडीनयुक्त नमक के सेवन की दर में वृद्धि करना।
- एनीमिया की दर को कम करना।

3.6 पोषण योजना की निगरानी

किसी भी प्रयास का आकलन, विश्लेषण और निगरानी अनिवार्य तत्व है जो पोषण के स्तर को अच्छी तरह से जांच सकता है। पोषण संबंधी अपक्षयी समस्याओं, लक्षित जनसंख्या समूहों की अल्पावधि, दीर्घकालिक नीति और कार्यक्रम विकास, परिवर्तनों की निगरानी, कार्यक्रम प्रबंधन के हस्तक्षेप और विकास कार्यक्रमों के मूल्यांकन के लिए जानकारी की आवश्यकता है। राष्ट्रीय पोषण नीति का एक महत्वपूर्ण कार्य पोषण निगरानी है, विशेष रूप से कमजोर समूहों की। महिला और बाल विकास विभाग द्वारा पोषण निगरानी के लिए एक राष्ट्र व्यापक निगरानी कार्य बल प्रणाली स्थापित की गयी है। देश के सभी भागों से भोजन और पोषण की स्थिति पर आकड़ों की कमी एक निश्चित बाधा है। देश में विश्वसनीय डेटा बेस की स्थापना प्राथमिकता के आधार पर की गयी है। प्रत्येक क्षेत्र अपनी सूचना प्रणाली को सुदृढ़ और उसकी सामयिक समीक्षा करेगा ताकि राष्ट्रीय पोषण नीति में निर्धारित लक्ष्यों की निगरानी के लिए विभिन्न संकेतकों पर विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध करा सकें। नवीनतम पोषण निगरानी प्रतिक्रिया और रिपोर्ट की समीक्षा अंतर-मंत्रिस्तरीय समन्वय समिति और राष्ट्रीय पोषण परिषद द्वारा की जाएगी और नीति का मार्गदर्शन करेगी। कार्यक्रम के पुनर्निर्देशन, विभिन्न विभागीय कार्यक्रमों को मजबूत करने के लिए राष्ट्रीय पोषण योजना की कार्रवाई की जाएगी।

अभ्यास प्रश्न 3

1. सही अथवा गलत बताइये।

-
- a. आहार में सुधार लाने और स्वस्थ जीवन शैली को बढ़ावा देने के लिए सामुदायिक स्तर पर सेवाओं के बेहतर उपयोग संबंधी कार्यों के लिए निरंतर समर्थन और मार्गदर्शन प्रदान करना चाहिए।
 - b. खाद्य सुरक्षा अप्रत्यक्ष नीति के साधन या दीर्घकालिक संस्थागत परिवर्तन के अंतर्गत आती है।
 - c. सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को नियंत्रित करना आवश्यक नहीं है।
2. रिक्त स्थान भरिए।
- a. भारत सरकार ने 1970 मेंकार्यक्रम का शुभारंभ किया।
 - b.के द्वारा जनता को उचित मूल्य पर चावल, गेहूं, चीनी और तेल के अलावा आवश्यक खाद्य पदार्थों की उपलब्धता को सुनिश्चित किया जाता है।
 - c. सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी और..... के खराब सेवन से संबंधित है।
-

3.7 सारांश

कुपोषण एक जटिल समस्या है जिसके निर्धारक खाद्य पर्याप्तता, साक्षरता स्तर, संक्रमण की रोकथाम, स्वास्थ्य देखभाल, महिलाओं का सशक्तिकरण, सुरक्षित पेयजल तक पहुंच और आर्थिक विकास है। कोई भी संगठन अकेले कुपोषण की बहुमुखी समस्या को हल नहीं कर सकता है। इसके लिए विभिन्न सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में निवेश आवश्यक हैं। विभिन्न महत्वपूर्ण स्तरों पर एकीकृत नियोजन निर्णय आवश्यक हैं जैसे पोषण निगरानी, सार्वजनिक शिक्षा, शिशु और बच्चों का पोषण, सूक्ष्म पोषक कुपोषण नियंत्रण। साथ ही सभी स्तरों पर पोषण संबंधी जागरूकता पैदा करना आवश्यक है।

राष्ट्रीय पोषण नीति ने विभिन्न कारणों की पहचान कर उचित पोषण सुनिश्चित करने को महत्व दिया है। यह नीति मौजूदा रणनीतियों को लागू करने और उन्हें मजबूत करने के लिए आवश्यक निर्देश प्रदान करती है। साथ ही साथ भारत में लोगों के पोषण स्थिति में सुधार लाने के लिए नई रणनीति विकसित करती है। राष्ट्रीय पोषण नीति का जनसंख्या के पोषण संबंधी स्थिति पर महत्वपूर्ण असर हुआ है। राष्ट्रीय स्तर और अन्य विभिन्न क्षेत्रों में पोषण संबंधी विकास नीतियों के सकारात्मक प्रभावों को अधिकतम करने से पोषण का दर्जा सुधारने में

काफी योगदान हो सकता है। सभी विकास नीतियों और क्षेत्रीय नीतियों के संदर्भ में विशिष्ट पोषण हस्तक्षेप से पर्याप्त प्रभाव सुनिश्चित करने के लिए एक अनुकूल वातावरण आवश्यक है।

3.8 पारिभाषिक शब्दावली

- कुपोषण: कुपोषण पोषक तत्वों की अपर्याप्त, अत्यधिक या असंतुलित खपत की स्थिति है।
- स्वास्थ्य: स्वास्थ्य को केवल रोग और कमजोरी का अभाव ही नहीं अपितु पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण की स्थिति के रूप में परिभाषित किया गया है।
- एनीमिया: एनीमिया या रक्ताल्पता वह स्थिति है जिसमें रक्त में स्वस्थ लाल रक्त कोशिकाओं या हीमोग्लोबिन का अभाव हो जाता है।

3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
 - a. मोटापा और मधुमेह
 - b. 1993
 - c. शारीरिक विकास और मानसिक विकास

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही अथवा गलत बताइये।
 - d. गलत
 - e. सही
 - f. सही

अभ्यास प्रश्न 3

1. सही अथवा गलत बताइये।
 - a. सही
 - b. सही

c. गलत

2. रिक्त स्थान भरिए।

- पोषणज एनीमिया रोगनिरोधक कार्यक्रम
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली
- विटामिन और खनिज लवणों

3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

- खाद्य और पोषण बोर्ड, महिला और बाल विकास विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
- B. Srilaxmi, Human Nutrition, New Age International Private Limited Publication, New Delhi.
- दसवीं पंचवर्षीय योजना [2002-2007] खंड 2, क्षेत्रीय नीतियों और कार्यक्रम-पोषण, योजना आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली।
- राष्ट्रीय पोषण नीति -10, योजना आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली।

3.11 निबंधात्मक प्रश्न

- राष्ट्रीय पोषण नीति की मुख्य विशेषताएं क्या हैं?
- गरीबी का दुष्चक्र क्या है?
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर टिप्पणी करें।
- खाद्य सुरक्षा क्या है? इसे राष्ट्रीय, समुदायिक और घरेलू स्तर पर समझाइए।

खण्ड 2: पोषण स्थिति का मूल्यांकन एवं भारत में प्रमुख पोषण सम्बंधी समस्याएं

इकाई 4 : प्रत्यक्ष पोषण स्तर

- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 उद्देश्य
- 4.3 मानव समूहों में प्रत्यक्ष पोषण स्तर का आकलन
 - 4.3.1 पोषण स्तर
 - 4.3.2 पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले कारक
 - 4.3.3 पोषण स्तर का आकलन
- 4.4 सारांश
- 4.5 पारिभाषिक शब्दावली
- 4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 4.8 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

भोजन या आहार हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। सभी जीव जन्तु जीवित रहने के लिए तथा स्वस्थ और सक्रिय जीवन बिताने के लिए भोजन ग्रहण करते हैं। ग्रहण किया हुआ भोजन शरीर को पोषण प्रदान करता है। उचित पोषण के लिए सभी पोषक तत्व (वसा, कार्बोज, प्रोटीन, विटामिन, खनिज लवण, रेशा एवं जल) उचित मात्रा तथा अनुपात में आवश्यक हैं। भोजन प्रत्यक्ष रूप से पोषण स्तर को प्रभावित करता है। पोषण स्तर व्यक्ति के स्वास्थ्य की ऐसी स्थिति है जो शरीर में पोषक तत्वों की उपयोगिता से प्रभावित होती है। दूसरे शब्दों में पोषण स्तर व्यक्ति के स्वास्थ्य की ऐसी स्थिति है जो तत्वों के अंतर्ग्रहण एवं उपयोग के प्रभाव से उत्पन्न होती है।

अतः उपरोक्त की चर्चा से पता चलता है कि भोजन से पोषण स्तर प्रभावित होता है। इस इकाई में हम पोषण स्तर के आकलन के उन विभिन्न तरीकों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे जिनसे यह पता चलता है कि किसी व्यक्ति या समूह का पोषण स्तर अच्छा है या नहीं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप:

- पोषण स्तर तथा पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले कारकों के विषय में जानकारी ले सकेंगे;
- पोषण स्तर के आकलन के उद्देश्यों के विषय में जान पाएंगे; तथा
- पोषण स्तर के आकलन की विविध विधियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

आइए, इकाई का अध्ययन प्रारंभ करें।

4.3 मानव समूहों में प्रत्यक्ष पोषण स्तर का आकलन

किसी भी समुदाय में पोषण स्तर के आकलन के बारे में जानकारी प्राप्त करने से पूर्व पोषण स्तर एवं उसे प्रभावित करने वाले कारकों के बारे में जानना आवश्यक है। आइए हम इस पर विस्तृत चर्चा करें।

4.3.1 पोषण स्तर

हम सभी जानते हैं कि अच्छे स्वास्थ्य एवं स्वस्थ शरीर के लिए हमें उचित पोषण की आवश्यकता होती है। यह पोषण हमें पौष्टिक भोजन से प्राप्त होता है। जब हम सभी पौष्टिक तत्व उचित मात्रा में ग्रहण करते हैं एवं वह तत्व शरीर में जाकर उचित रूप से चयापचित होते हैं, तो हम सुपोषण की अवस्था में होते हैं। अल्पाहार से पोषण का स्तर उपयुक्त नहीं रहता है। जब हमारे भोजन में सभी पोषक तत्व उचित मात्रा में उपलब्ध नहीं होते या सुचारु रूप से शरीर द्वारा ग्रहण नहीं किये जाते तो शरीर में कुपोषण की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। कुपोषण निम्न पोषण स्तर का द्योतक है। कुपोषण दो प्रकार का होता है। यदि एक या एक से अधिक पोषक तत्वों की कमी हो जाये तो यह न्यून पोषण की स्थिति कहलाती है। जब शरीर में पोषक तत्वों की अधिकता हो जाये तो यह अतिपोषण की स्थिति कहलाती है।

पोषण स्तर के विषय में जानकारी प्राप्त करने के पश्चात ही समुदाय के लिए स्वास्थ्य एवं पोषण संबंधी कार्यक्रमों की योजनाओं के विषय में सोचा जा सकता है। यदि समुदाय का पोषण स्तर अच्छा है तो उनके विकास से संबंधित योजनाओं पर विचार किया जा सकता है परन्तु यदि समुदाय का या समुदाय के किसी विशेष वर्ग का पोषण स्तर अच्छा नहीं है तो सम्पूर्ण ध्यान इसी समस्या को दूर करने पर केन्द्रित होता है। पोषण स्तर को ज्ञात करने के निम्न उद्देश्य हैं:

- स्वास्थ्य को पोषण की दृष्टि से देखना एवं समझना।
- बच्चों की विकास दर की निगरानी करना एवं उनमें मृत्यु दर को कम करना।
- कुपोषण की रोकथाम के राष्ट्रीय कार्यक्रमों में योगदान प्रदान करना।

- उच्च पोषण स्तर हेतु विभिन्न योजनाएं बनाना।
- सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को पहचानना एवं उनको कम करने के उपायों को ढूंढना।
- पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों को खोजना एवं उनका निवारण करना।
- समुदाय में संवेदनशील समूहों (Vulnerable groups) को पहचानना।
- प्रभावी योजनाओं (पोषण सम्बन्धी कार्यक्रमों) की प्रभावशीलता को मापना।
- जनसंख्या समूहों में कुपोषण हेतु संवेदनशील व्यक्तियों को पहचानना।

4.3.2 पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले कारक

पोषण स्तर हमारे स्वास्थ्य का एक बहुआयामी पहलू है। ऊपरी तौर पर इसका संबंध भोजन एवं पोषण से ही दिखता है परंतु वास्तव में इसकी जड़ें काफी गहरी एवं फैली हुई हैं। यह अनेक आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय कारकों से प्रभावित होती है।

पोषण को प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं:

आर्थिक स्थिति

आर्थिक स्थिति पोषण स्तर को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। विशेषकर निम्न आर्थिक वर्ग के समूहों में निर्धनता के कारण आहार में पर्याप्त ऊर्जा, प्रोटीन अथवा सूक्ष्म पोषक तत्व उपलब्ध नहीं होते हैं। ऐसे लोगों का पोषण स्तर निम्न रह जाता है। यदि आर्थिक स्थिति अच्छी हो तो अतिपोषण के कारण मोटापा जैसी समस्या हो सकती है जिस कारण पोषण स्तर प्रभावित होता है।

अज्ञानता

गरीबी के साथ-साथ अज्ञानता भी पोषण स्तर को प्रभावित करती है। यदि समुदाय के लोगों को पौष्टिक तत्वों तथा उनके खाद्य स्रोतों का उचित ज्ञान है, यह पोषण स्तर पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। दैनिक जीवन में उचित पोषण का ज्ञान, साफ-सफाई की महत्ता पोषण स्तर को उचित बनाने में मददगार होता है। जैसे 6 माह के शिशु को ऊपरी आहार देना शुरू कर देना चाहिए। अगर इस बात को ध्यान में नहीं रखा जाता है तो बच्चे का पोषण स्तर जल्द ही घटने लगता है। यदि गरीबी तथा अज्ञानता साथ में हैं तो स्थिति और गम्भीर हो जाती है तथा कुपोषण के परिणाम दिखने लगते हैं।

बेरोजगारी

जनसंख्या वृद्धि, अशिक्षा के कारण बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न होती है जिससे अप्रत्यक्ष रूप से पोषण स्तर प्रभावित होता है।

भोजन की उपलब्धता

जनसमुदाय में भोजन की आपूर्ति की स्थिति पोषण स्तर को प्रभावित करती है। दूसरी ओर भोजन की आपूर्ति, कृषि स्थिति, वार्षिक पैदावार, महंगाई, भण्डारण एवं परिवहन पर निर्भर करती है। यदि बाजार में अनाज उचित मात्रा तथा उचित दरों पर उपलब्ध नहीं होता है तो इसका प्रभाव समुदाय के व्यक्तियों के निम्न पोषण स्तर के रूप में देखा जा सकता है।

बीमारी की अवस्था

बीमारी के कारण भी पोषण स्तर प्रभावित हो सकता है। बीमारी में भोज्य तत्वों का शरीर में पूर्णतः पाचन, अवशोषण एवं चयापचय नहीं हो पाता है। इसलिए शरीर में पौष्टिक तत्वों की कमी हो जाती है जिससे पोषण स्तर प्रभावित होता है।

अन्य कारण

पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले अन्य अप्रत्यक्ष कारण भी हैं। इन कारकों में भोजन सम्बन्धी भ्रान्तियां, धर्म, संस्कृति, परिवार का आकार, व्यक्तिगत पसन्द-नापसन्द, आधुनिकता आदि सम्मिलित हैं।

पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले कारकों को जानने के बाद आइए पोषण स्तर के आकलन के विषय में जानें।

4.3.3 पोषण स्तर का आकलन

जैसा कि हम जान चुके हैं, किसी भी व्यक्ति के पोषण स्तर को जानने से उसके स्वास्थ्य की स्थिति के बारे में पता चलता है। इकाई के इस भाग में हम पोषण स्तर के आकलन की विविध विधियों के बारे में ज्ञान अर्जित करेंगे। इन विधियों के उपयोग से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि किसी व्यक्ति विशेष अथवा समूह का पोषण स्तर अच्छा है या नहीं। क्योंकि पोषण स्तर बहुआयामी घटक है इसलिए इसके आकलन के लिए भी विभिन्न तरीकों को प्रयोग में लाया जाता है। प्रत्यक्ष रूप से पोषण स्तर को मापने के लिए निम्नलिखित तीन विधियों का प्रयोग किया जाता है:

(1) आहार सर्वेक्षण (Diet Survey)

(2) पोषण सम्बन्धी मानवमितीय माप (Anthropometric measurements)

(3) नैदानिक लक्षण (Clinical signs and symptoms)

(4) जैवरासायनिक आकलन (Biochemical Estimation)

1. आहार सर्वेक्षण

व्यक्तियों या समूहों के खान-पान सम्बन्धी आदतों की विविध रूप से जाँच आहार सर्वेक्षण कहलाती है। इस विधि में पोषण स्तर ज्ञात करने के लिए व्यक्ति/परिवार/समूह द्वारा ग्रहण की गई भोज्य सामग्री की मात्रा को सही-सही ज्ञात किया जाता है। भोजन का सीधा सम्बन्ध पोषण स्तर से होता है। इसलिए भोजन ग्रहण करने का नियम, मात्रा आदि पोषण की प्रत्यक्ष जानकारी प्रदान करता है।

आहार सर्वेक्षण के उद्देश्य

आहार सर्वेक्षण के प्रमुख उद्देश्य निम्नांकित हैं:

1. व्यक्ति/परिवार/समूह विशेष द्वारा उपयोग में लाए गये भोज्य पदार्थ के संबंध में भिन्न-भिन्न प्रकार की जानकारी प्राप्त करना तथा भोज्य पदार्थ/भोज्य तत्वों की प्रचुरता को जानना।
2. आहार सर्वेक्षण के माध्यम से व्यक्ति तथा परिवार की आर्थिक, सामाजिक तथा क्षेत्रीय वातावरण संबंधी जानकारी प्राप्त की जा सकती है जैसे,
 - □ किसी क्षेत्र विशेष में किस प्रकार का भोजन खाया जाता है।
 - □ वहां का मुख्य भोजन एवं खान-पान की आदतें क्या हैं।
 - □ परिवार या समूह कौन से भोज्य समूह से भोजन लेता है एवं किस समूह का उपयोग नहीं करता है आदि।
3. आहार सर्वेक्षण द्वारा जानकारी प्राप्त की जा सकती है कि व्यक्ति प्रतिदिन अपनी शारीरिक आवश्यकताओं के अनुसार खाद्य पदार्थों को सेवन कर रहा है या नहीं। इसके अतिरिक्त वह मात्रा कितनी कम या ज्यादा है यह भी आहार सर्वेक्षण से ज्ञात हो सकता है।
4. आहार सर्वेक्षण से भोजन में पौष्टिक तत्वों की उपलब्ध मात्रा की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इससे भोजन में किसी विशेष पौष्टिक तत्व की कमी को आसानी से पता लगाया जा सकता है तथा तदानुसार उस कमी को ठीक करने हेतु उचित कदम उठाए जाते हैं।

5. आहार सर्वेक्षणों से उपलब्ध आंकड़े विभिन्न पोषाहार एवं स्वास्थ्य योजनाओं को बनाने में प्रयोग होते हैं।

6. आहार सर्वेक्षणों द्वारा सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से उत्पन्न हुई बीमारियों का पता चलता है।

आहार सर्वेक्षण का वर्गीकरण

आहार सर्वेक्षणों को दो वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

(1) गुणात्मक सर्वेक्षण (Qualitative survey): इस तरह के सर्वेक्षणों में खाद्य पदार्थों के नाम, व्यंजनों के नाम, अवसर जिनमें विशेष व्यंजन बनाये जाते हों आदि की जानकारी प्राप्त की जाती है।

गुणात्मक सर्वेक्षण में विशिष्ट रूप से आहार में प्रयुक्त खाद्य पदार्थों के प्रकार, उनकी आवृत्ति, व्यक्ति/समूह के खाद्य पदार्थों, भोजन पकाने आदि के विषय में ज्ञान का पता किया जाता है। इसी सर्वेक्षण से स्वास्थ्य एवं विभिन्न रोगों में उपयोग में लाए जाने वाले व्यंजनों तथा आहार की प्रथाओं के बारे में जानकारी एकत्रित की जाती है।

(2) मात्रात्मक सर्वेक्षण (Quantitative survey): इस प्रकार के सर्वेक्षणों में खाद्य पदार्थ विशेष की ग्रहण की गई मात्रा से संबन्धित जानकारी एकत्रित की जाती है। मात्रात्मक सर्वेक्षण में प्रयोग में लाए गये खाद्य पदार्थों की प्रतिदिन ग्रहण की गई मात्रा ग्राम या मिलीलीटर में मापी जाती है। इन खाद्य पदार्थों की मात्रा की गणना की जाती है। इसके लिए भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (आई.सी.एम.आर.) द्वारा जारी “भारतीय खाद्यान्नों के पोषणमान” में दी गई तालिकाओं की मदद ली जाती है। फलस्वरूप सर्वेक्षण के आधार पर ग्रहण की गई पोषक तत्वों की मात्रा तय मात्रा (दैनिक अनुशंसित मात्रा) से कितनी कम या अधिक है इसका प्रतिशत ज्ञात कर सुधार करने का प्रयास किया जाता है।

आहार सर्वेक्षण के लिए विभिन्न विधियों का उपयोग किया जाता है। किस समय किस विधि का उपयोग करना है यह इस बात पर निर्भर करता है कि किस प्रकार की पोषण सम्बन्धी जानकारी चाहिए।

आहार सर्वेक्षण की प्रमुख विधियां निम्न हैं:

- 24 घण्टे के आहार का स्मरण (24 hour dietary recall)
- आवृत्तित 24 घण्टे के आहार का स्मरण (Repeated 24 hour dietary recall)
- आहार की पूर्वस्थिति (Diet history)

- आहार आवृत्ति प्रश्नावली (Food frequency dietary recall)
- खाद्य तोल विधि (Food weighing method)

आइए इन सभी विधियों पर विस्तृत चर्चा करें।

1. 24 घण्टे के आहार का स्मरण

इस विधि में व्यक्ति या परिवार के सदस्य द्वारा पहले दिन ग्रहण किये गये भोजन का पूरा लेखा-जोखा लिया जाता है। व्यक्ति पिछले 24 घंटों में खाए गये आहार के बारे में स्मरण कर जानकारी देता है। छोटे बच्चों के संदर्भ में यह जानकारी उसकी माँ से ली जा सकती है।

इसमें सभी भोज्य पदार्थों एवं पेय पदार्थों का विस्तृत विवरण तथा भोजन पकाने की विधि भी नोट की जाती है। यदि किसी व्यक्ति ने कोई विटामिन अथवा खनिज लवण की गोली ली है तो वह भी दर्ज की जाती है। भोज्य सामग्री की मात्रा घरेलू नाप तोल में लिखी जाती है, जैसे एक कटोरी, 1/2 प्लेट आदि। यह जानकारी इंटरव्यू या प्रश्न सूची तैयार कर ली जा सकती है। यह विधि किसी प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा भोजन मापक यंत्रों का प्रयोग कर सम्पन्न की जाती है।

एक 24 घंटे के आहार का स्मरण व्यक्तिगत स्तर पर सामान्य आहार का प्रतिनिधि नहीं माना जाता है। परंतु यह विधि बड़े समूह सर्वेक्षण के औसत सेवन के आकलन के लिए पर्याप्त तथा उपयुक्त विधि है।

लाभ

- बड़े समूह या जनसंख्या का आहार सर्वेक्षण करने के लिए यह एक त्वरित तथा उत्तम विधि है।
- इस विधि का उपयोग अशिक्षित जनसंख्या पर भी किया जा सकता है।
- इसके लिए किसी विशेष उपकरण की आवश्यकता नहीं पड़ती है।
- यह आहार सर्वेक्षण की अन्य विधियों से अपेक्षाकृत सस्ती विधि है।

हानियाँ

- किसी एक व्यक्ति के आहार अंतर्ग्रहण को जानने के लिए इसका उपयोग उपयुक्त नहीं होता है।
- पिछले 24 घण्टे में ग्रहण किया गया आहार हमेशा के आहार का प्रतिनिधि नहीं होता है।

- यह विधि स्मरण पर आधारित है, इसलिए बच्चों एवं बूढ़ों के लिए यह विधि उचित नहीं है।
- भोजन की ग्रहण की गई सही मात्रा के आकलन में मुश्किल होती है। जैसे 2 रोटी का अर्थ 50 ग्राम आटा या 80 ग्राम आटा कुछ भी हो सकता है। इसी प्रकार तरी वाली सब्जियों में पानी की मात्रा भिन्न हो सकती है।
- इस विधि के लिए एक प्रशिक्षित साक्षात्कारकर्ता की आवश्यकता होती है।

2. आवृत्ति 24 घण्टे के आहार का स्मरण

भोज्य पदार्थ के लम्बे समय के औसत अंतर्ग्रहण के लिए 24 घण्टे के आहार का स्मरण विधि को दोहरा कर लिया जा सकता है। सटीक परिणामों के लिए इस विधि की आवृत्ति बढ़ायी जा सकती है। इस प्रकार 24 घण्टे के आहार के स्मरण विधि की जो भी कमियाँ हैं, आवृत्ति कर दूर की जा सकती है।

इस विधि को सप्ताह के हर दिन हर महीने में या अलग-अलग मौसम में दोहरा कर परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं।

इस विधि की कार्यप्रणाली 24 घण्टे के आहार के स्मरण विधि जैसी ही है। इस विधि का उपयोग किसी व्यक्ति के आहार अंतर्ग्रहण को मापने के लिए भी किया जा सकता है।

3. आहार की पूर्वस्थिति

जब आहार के सेवन के बारे में विस्तृत जानकारी की आवश्यकता हो तब इस पद्धति का उपयोग करना चाहिए। इस विधि में व्यक्ति की भोजन ग्रहण की लम्बे समय की आदतें, पसन्द, नापसन्द का अनुमान लगाने का प्रयास किया जाता है। यह एक साक्षात्कार पद्धति है जो आवश्यकतानुसार एक, दो या तीन चरणों में सम्पन्न होती है। आहार की पूर्वस्थिति विधि आमतौर पर मात्रात्मक से अधिक गुणात्मक है। इसके द्वारा भोजन तैयार करने के तरीके और खाने की आदतों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

प्रथम चरण एक तरह से 24 घण्टे के आहार स्मरण पर आधारित होता है। इस चरण में पिछले 24 घण्टे में खाये गये पदार्थों के बारे में पूर्ण जानकारी ली जाती है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि जहां 24 घण्टे के आहार की स्मरण विधि में खाये गये भोज्य पदार्थों की मात्रा बतानी होती है, इस विधि में सिर्फ यह बताना होता है कि क्या खाया है।

दूसरे चरण में एक खाद्य आवृत्ति प्रश्नावली/चैकलिस्ट का प्रयोग किया जाता है। इसमें खाद्य पदार्थों की एक विस्तृत सूची के साथ व्यक्ति से पूछा जाता है कि वह अमुक खाद्य पदार्थ खाते हैं या नहीं। यदि हाँ तो उसकी आवृत्ति कितनी है। व्यक्ति से उन खाद्य पदार्थों से सम्बन्धित पसन्द, नापसन्द, खरीददारी तथा उपयोग के संबंध में भी प्रश्न पूछे जाते हैं।

यदि आवश्यकता होती है तो तीसरे चरण में पिछले 3 दिनों के भोजन सेवन का रिकॉर्ड लिया जाता है। सामान्यतः तीसरा चरण छोड़ ही दिया जाता है।

लाभ

- इस विधि द्वारा भोजन संबंधी आदतें, पकाने की विधि, रुचिकर एवं अरुचिकर भोज्य पदार्थों की सूची, भोजन की मात्रा आदि पर व्यापक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।
- किसी नये समाज विशेष की भोजन संबंधी विशेषता/स्थिति को ज्ञात करने हेतु यह विधि उपयुक्त है।
- यह विधि दीर्घकालिक आदतों को बेहतर रूप से दर्शाती है।
- इस विधि का उपयोग नैदानिक निदान (Clinical Diagnosis) में आवश्यक रूप से किया जाता है।

हानियां

- यह विधि बड़ी जनसंख्या के आहार सर्वेक्षण हेतु उपयोगी नहीं है।
- यह एक महँगी विधि है।
- तीनों चरणों द्वारा जानकारी लेने में काफी समय लगता है।
- प्राप्त जानकारी से निष्कर्ष निकालने में कठिनाई होती है।

4. खाद्य आवृत्ति प्रश्नावली

खाद्य आवृत्ति प्रश्नावली का प्रयोग खाद्य सेवन संबंधी गुणात्मक जानकारी प्राप्त करने हेतु किया जाता है। इसका उपयोग अभ्यस्त आहार का आकलन करने के लिए किया जाता है। इस विधि द्वारा खाद्य पदार्थों तथा पोषक तत्वों की मात्रा के बारे में जानकारी एकत्र करने पर बल नहीं दिया जाता है।

खाद्य आवृत्ति प्रश्नावली में दो घटक होते हैं।

क. खाद्य पदार्थों की सूची

ख. सूचीबद्ध खाद्य पदार्थों की आवृत्ति का प्रकार

खाद्य पदार्थों की सूची बनाते समय यह बात अवश्य ध्यान में रखनी चाहिए कि जिन व्यक्तियों पर इस विधि का उपयोग किया जा रहा है वह लोग उन खाद्य पदार्थों से परिचित हों। खाद्य पदार्थों की सूची में लगभग 20-200 खाद्य पदार्थ हो सकते हैं। सूचीबद्ध खाद्य पदार्थ किन्हीं विशेष पोषक तत्वों का प्रमुख स्रोत हो सकते हैं। जैसे यदि हम जानना चाहते हैं कि समुदाय में विटामिन ए का अंतर्ग्रहण उचित है या नहीं, तो सूची में विटामिन ए के स्रोत वाले खाद्य पदार्थ सूचीबद्ध करने चाहिए। इसके पश्चात् खाद्य पदार्थों या विशिष्ट खाद्य समूहों के अंतर्ग्रहण की आवृत्ति के विषय में पूछा जाता है। इसका आकलन यह पूछकर किया जाता है कि एक विशेष भोजन या पेय पदार्थ का सेवन दिन, हफ्ते, महीने में कितनी बार किया जाता है। इसके अन्तर्गत कभी नहीं या एक महीने में एक बार से कम या दिन में 2-3 या 4-5 बार आदि श्रेणियों में से एक को चुनना होता है।

लाभ

- इस विधि द्वारा मादक पेय पदार्थ, मांस, मछली या अन्य किसी विशिष्ट खाद्य पदार्थ की आवृत्ति का भी पता चल जाता है।
- इस विधि में कम समय लगता है।
- आहार में लिए गए खाद्य समूहों की जानकारी से पोषक तत्वों के सेवन का पता चल जाता है।
- प्राप्त आंकड़ों से निष्कर्ष निकालना अपेक्षाकृत आसान होता है।

हानियां

- इस विधि द्वारा प्राप्त परिणाम अन्य विधियों से कम सटीक होते हैं।
- यह विधि उत्तरदाता की स्मरण शक्ति पर निर्भर करती है।
- पोषक तत्वों की खपत का मात्र अनुमान लगाया जा सकता है।

5. खाद्य तोल विधि

आहार सर्वेक्षण की इस विधि में भोज्य पदार्थों का वास्तविक वजन तराजू से (ग्राम या किलोग्राम में) लेकर प्रारूप में भोज्य पदार्थ के सम्मुख सूचीबद्ध किया जाता है। भोज्य पदार्थों

के वजन द्वारा आहार सर्वेक्षण की विधि में कच्चा एवं पका हुआ दोनों प्रकार के भोज्य पदार्थों को तोलकर पोषण स्तर की गणना हेतु प्रयोग में लाया जा सकता है।

परिवार के प्रत्येक व्यक्ति के बारे में सामान्य जानकारी जैसे आयु, लिंग, क्रियाशीलता, विशेष अवस्था जैसे गर्भावस्था, धात्री अवस्था के बारे में जानकारी एकत्र कर ली जाती है। परिवार के बाहर का कोई व्यक्ति/सदस्य/ मेहमान जिस दिन और समय भोजन में सम्मिलित हो रहे होते हैं उनकी भी जानकारी जहाँ तक संभव हो सके (आयु, लिंग, क्रियाशीलता, अवस्था आदि) लिख ली जाती है। इस विधि में सर्वेक्षण कर्ता को इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि सभी भोज्य पदार्थों का वजन उसे स्वयं ही करना चाहिए। इस विधि से प्रति व्यक्ति प्रतिदिन भोज्य पदार्थ की कितनी मात्रा ग्रहण कर रहा है, यह जानकारी आसानी से प्राप्त की जा सकती है।

$$\text{भोज्य पदार्थ प्रति व्यक्ति प्रतिदिन} = \frac{\text{कच्चे भोज्य पदार्थ की मात्रा (ग्राम)}}{\text{व्यक्तियों की संख्या} \times \text{सर्वेक्षण की अवधि}}$$

परिवार में जहाँ छोटे बड़े सभी व्यक्तियों की आयु अलग-अलग होती है, सर्वेक्षण में प्रतिदिन प्रति भोज्य पदार्थ प्रति उपभोक्ता इकाई की गणना करना अधिक उपयुक्त होता है। प्रति व्यक्ति प्रति उपभोक्ता इकाई प्रतिदिन प्रति भोज्य पदार्थ की मात्रा ग्राम या मिली लीटर में ज्ञात कर लेने से आहार में पोषक तत्वों की मात्रा का ज्ञान हो जाता है।

उपभोक्ता इकाई: परिवार में सभी सदस्यों की आयु भिन्न-भिन्न होती है। अतः भोज्य पदार्थों की प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति औसत मात्रा उचित प्रतीत नहीं होती है। क्योंकि आयु, लिंग तथा क्रियाशीलता के अनुसार व्यक्ति की ऊर्जा की आवश्यकता, शरीर की वृद्धि, टूट-फूट एवं स्वास्थ्य को बनाए रखने हेतु ऊर्जा की आवश्यकता अलग-अलग है, इसलिए उपभोक्ता इकाई प्रति व्यक्ति, आयु, लिंग एवं क्रियाशीलता के अनुरूप निर्धारित की गई है।

उपभोक्ता इकाई

वयस्क पुरुष	(साधारण क्रिया शील)	1.0
	(मध्यम क्रिया शील)	1.2
	(अधिक क्रिया शील)	1.6
वयस्क महिला	(साधारण क्रिया शील)	0.8
	(मध्यम क्रिया शील)	0.9

जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण		MAHS-11
	(अधिक क्रिया शील)	1.2
किशोरावस्था	12-21 वर्ष	1.0
	9-12 वर्ष	0.8
	7-9 वर्ष	0.7
	5-7 वर्ष	0.6
	3-5 वर्ष	0.5
	1-3 वर्ष	0.4

शिशुओं को उपभोक्ता इकाई में सम्मिलित नहीं किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न 1

- पोषण स्तर से आप क्या समझते हैं?
.....
.....
- पोषण स्तर किन उद्देश्यों से ज्ञात किया जाता है?
.....
.....
- पोषण स्तर किन कारकों से प्रभावित होता है?
.....
.....
- पोषण स्तर का आकलन किन विधियों द्वारा किया जाता है?
.....
.....
- गुणात्मक सर्वेक्षण की क्या विशेषता है?
.....
.....

अगले भाग में हम पोषण सम्बन्धी मानवमितीय परीक्षण के विषय में जानेंगे।

2. पोषण सम्बन्धी मानवमितीय परीक्षण

शरीर में वृद्धि तथा विकास अनुवांशिकता पर आधारित होते हैं परन्तु आहार, पोषण, संक्रमण तथा रोग की अवस्था शरीर की वृद्धि दर एवं विकास को समय-समय पर अवरुद्ध कर सकते हैं। शारीरिक वृद्धि एवं विकास अवरुद्ध होने की स्थिति का प्रतिशत, प्रकार एवं देश या स्थान पर कुपोषण की व्यापकता जानने हेतु शरीर की वृद्धि के आधार पर पोषण स्तर ज्ञात किया जाता है।

विभिन्न आयु और पोषण की स्थिति में मानव शरीर की माप को मानवमितीय परीक्षण कहते हैं। मानवमितीय परीक्षण इस विचारधारा के अन्तर्गत किये जाते हैं कि आहार एवं पोषक तत्वों के प्रभाव से शारीरिक परिवर्तन होते हैं जिसमें शरीर के ऊतकों के आकार/प्रकार में भी परिवर्तन आता है। फलस्वरूप शारीरिक नाप में परिवर्तन आता है, जिसको लम्बाई, वजन तथा परिधि के रूप में मापा जा सकता है।

मानवमितीय परीक्षण में शरीर का वजन, ऊँचाई, बाँह, कमर तथा नितम्बों की परिधि आदि लेकर मानक मापों से तुलना की जाती है। मानक मापों की विभिन्न तालिकाएं उपलब्ध हैं। सामान्य स्तर से कम अथवा अधिक नाप के आधार पर पोषण स्तर ज्ञात किया जाता है।

मानवमितीय परीक्षणों के उद्देश्य:

- (1) पोषक तत्वों की कमी से प्रभावित समूह को पहचानना।
- (2) कुपोषण के स्तर का अवलोकन करना।
- (3) स्वास्थ्य सुधार कार्यक्रम हेतु कुपोषण से प्रभावित समुदाय का चयन करना।
- (4) पोषण-स्तर सुधार कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना।

मानवमितीय माप से पोषण स्तर ज्ञात करने के लिए कुछ बातों को ध्यान में रखना चाहिए। यदि बच्चों के लिए यह माप लिए जा रहे हैं तो विशेष रूप से यह ध्यान रखना चाहिए कि बच्चों की निश्चित आयु क्या है। शारीरिक विकास का स्तर तथा मुँह में दाँतों की संख्या द्वारा भी आयु का अनुमान लगा लिया जाता है। स्कूल जाने वाले बालकों की आयु का अनुमान वर्ष के हिसाब से लगाया जा सकता है। दूध के दाँत गिरना शुरू होते समय भी आयु का अनुमान लगाया जाता है।

अन्य ध्यान देने योग्य विषय हैं, नापने हेतु उचित उपकरण या साधन। जैसे वजन नापने के लिए उचित मशीन या तराजू, लम्बाई के लिए उचित एवं सटीक स्केल, फीता या रॉड आदि। सभी उपकरण संवेदनशील तथा विश्वसनीय होने चाहिए।

अन्य महत्वपूर्ण विषय है तुलना के लिए उचित सामान्य माप या मानक। मानकों द्वारा प्राप्त आंकड़ों से तुलना करके ही पोषण स्तर का निर्धारण किया जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा अनुमोदित स्वास्थ्य सांख्यिकी राष्ट्रीय केन्द्र के मानक, वजन एवं लम्बाई की तुलना करने के लिए उपयोग किये जाते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा अन्य मानक भी जारी किये गये हैं। इनके उपयोग द्वारा भी पोषण स्तर ज्ञात किया जाता है।

पोषण स्तर ज्ञात करने हेतु निम्नलिखित मानवमितीय माप उपयोग में लाए जाते हैं:

1. वजन
2. लम्बाई
3. सिर का घेरा (परिधि)
4. ऊपरी बांह के मध्य भाग का घेरा
5. छाती का घेरा
6. त्वचा में वसा की मोटाई को नापना
7. कमर तथा नितम्ब का अनुपात

1. वजन

पोषण स्तर के आकलन में वजन सबसे सरल एवं महत्वपूर्ण माप है। यह सर्वाधिक प्रयोग किया जाने वाला माप है। शरीर का वजन शरीर की वृद्धि एवं विकास का प्रतीक है। वजन नापने के लिए तोलने वाली मशीन प्रयोग में लायी जाती है। आजकल बाजार में विभिन्न प्रकार की वजन नापने की मशीनें उपलब्ध हैं। दो साल से कम उम्र के बच्चों का वजन नापने के लिए स्प्रिंग बैलेंस या सालटर स्केल का प्रयोग किया जाता है। यह मशीन काफी सटीक होती है तथा 100 ग्राम तक के वजन को नाप सकती है। यदि इस प्रकार की मशीन उपलब्ध न हो तो साधारण मशीन पर ही माँ एवं बच्चे दोनों का वजन माप लेते हैं। इसके पश्चात सिर्फ माँ का वजन माप कर पहले वजन से घटा लेते हैं।

वजन लेते समय निम्न बातों का सावधानीपूर्वक ध्यान रखना चाहिए:

1. वजन नापने की मशीन सही वजन नापती हो।

2. जिसका वजन नापना हो, उस व्यक्ति ने कम से कम कपड़े पहने हुए हों तथा जूते चप्पल न पहने हों।
3. वह व्यक्ति सीधा खड़ा हुआ हो, किसी दीवार, व्यक्ति या मेज का सहारा लेकर न खड़ा हो।
4. वजन करने से 10-15 मिनट पहले उसने कोई पेय पदार्थ न लिया हो।
5. सभी माप को उचित प्रकार से दर्ज करने के पश्चात प्राप्त माप को मानक से तुलना कर निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए।

2. लम्बाई

सामान्यतः लम्बाई का सम्बन्ध अनुवांशिक एवं वातावरण से माना जाता है। उचित पोषण की स्थिति में लम्बाई विकसित होती है। पोषण स्तर पर लम्बाई का प्रभाव केवल बच्चों के विकास की अवधि में ही दिखाई देता है। दो वर्ष से बड़े बच्चों एवं वयस्कों की लम्बाई सीधे खड़ा करके नापी जाती है। इसके लिए एक सीधी रॉड जिसे एन्थ्रोपोमीटर कहते हैं, का प्रयोग किया जाता है। दो वर्ष के कम उम्र के बच्चे जो खड़े नहीं हो सकते, उनको लेटा कर इन्फेंटोमीटर से लम्बाई नापी जाती है। लम्बाई नापते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए:

1. लम्बाई नापने वाले व्यक्ति को लम्बाई नापने के उपकरण की सम्पूर्ण जानकारी हो तथा उसे उपकरण को भली-भांति प्रयोग करना आता हो।
2. जिस व्यक्ति की लम्बाई नापनी हो, उसने पाँव में जूते, चप्पल तथा सिर पर टोपी, पगड़ी या अन्य कोई कपड़ा न रखा हो।
3. व्यक्ति को समतल फर्श पर दीवार या रॉड के साथ एकदम सीधे खड़े होकर दोनों पैरों को समान्तर रखकर तथा एड़ी, नितंब, कन्धों तथा सिर के पिछले भाग को दीवार से सटाकर खड़े होकर लम्बाई नापवानी चाहिए।
4. लम्बाई नापते समय व्यक्ति को क्षितिज के समान्तर देखना चाहिए।
5. माप को सही एवं सटीक तरीके से नापना एवं दर्ज करना चाहिए। इसके पश्चात आंकड़ों की तुलना मानकों से करनी चाहिए।

3. सिर का घेरा

सिर का घेरा मस्तिष्क के आकार से संबंधित होता है। सिर का घेरा नापने हेतु फायबर ग्लास टेप (फीता) जो कि 0.6 से 0.7 मी चौड़ा हो, का प्रयोग उत्तम रहता है। सिर का घेरा आंख के

ऊपर से माथे पर तथा सिर के पीछे से अधिकतम उभरे भाग के ऊपर से नापकर रिकॉर्ड किया जाता है। शिशुओं के प्रथम दो वर्ष तक सिर का घेरा बढ़ता है क्योंकि इसी समय मस्तिष्क में तेजी से वृद्धि होती है। दो वर्ष की आयु के पश्चात सिर के घेरे का नाप उतना महत्वपूर्ण नहीं रह जाता है।

4. ऊपरी बांह के मध्य भाग का घेरा

ऊपरी बांह के मध्य भाग का घेरा नापने से मांसपेशियों के विकास के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। 1-5 वर्ष तक के बच्चों में पोषण स्तर के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए यह माप अत्यन्त उपयोगी है।

5. ऊपरी बांह के मध्य भाग को पहचानना

इस माप के लिए सर्वप्रथम बांह के मध्य भाग को सही तरीके से पहचानना चाहिए। इसके लिए प्रयोग जाने वाला फीता 7 से 12 सेंटीमीटर चौड़ा होना चाहिए तथा किसी फाइबर ग्लास का बना होना चाहिए। टेप या फीता रबड़ की तरह खिंचने वाला नहीं होना चाहिए। मध्य भाग जानने के लिए बायीं भुजा की कन्धे की हड्डी से लेकर कोहनी की हड्डी तक की लम्बाई मापी जाती है। इस लम्बाई का आधा कर दो भाग देकर ऊपरी बांह के मध्य भाग को पहचाना जा सकता है। इस स्थान पर किसी पेन से हलका निशान बना लेना चाहिए। इसके बाद ऊपरी बांह के मध्य भाग के घेरे को बनाए गये निशान के चारों तरफ फीता या टेप लगा कर नापा जाता है।

इसके लिए निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए:

1. नाप लेते समय बच्चे को अपना बायां हाथ ढीला रखना चाहिए।
2. टेप या फीते को बांह के मध्य भाग, जो कि पहले से पहचान कर चिन्हित किया गया है, पर रख कर नाप लेना चाहिए।
3. सभी माप 0.1 सेमी तक की शुद्धता को नाप लेने वाले होने चाहिए।
4. उसके पश्चात प्राप्त आंकड़ों की तुलना मानकों से करके निष्कर्ष निकालना चाहिए।

6. छाती का घेरा

आयु के दूसरे व तीसरे वर्ष में छाती या सीने का घेरा नापने से पोषण स्तर का निर्धारण किया जा सकता है। छाती का घेरा स्तनाग्र रेखा के ऊपर से पीछे पीठ पर ले जाकर श्वसन की मध्यम अवस्था में रिकॉर्ड करना चाहिए।

7. त्वचा में वसा की मोटाई का माप (स्किन फोल्ड मोटाई)

शरीर में त्वचा के नीचे संग्रहित वसा को माप कर भी पोषण स्तर ज्ञात किया जा सकता है। त्वचा में उपस्थित वसा की मोटाई को हारपेनडेन कैलीपर्स या लैंज कैलीपर्स या होटेन कैलीपर्स के प्रयोग से नापा जाता है।

त्वचा में जमी वसा की मोटाई मापने के लिए सबसे उपयुक्त स्थान त्रिशिस्का पेशी (Triceps Skinfold) है। यह बांह के ऊपरी भाग में उसी स्थान पर उपस्थित होती है जहां बांह का घेरा नापा जाता है। बांह के घेरे वाले स्थान पर अंगूठे एवं तर्जनी से त्वचा पकड़कर तथा थोड़ा-सा खींच कर लगभग 1 से 0मी0 की दूरी पर उस मोटाई को कैलीपर्स द्वारा नापा जाता है एवं रिकॉर्ड किया जाता है। वसा की मात्रा पीठ की हड्डी के नीचे (Subscapular Skinfold) एवं रीढ़ की हड्डी के बाईं या दाईं ओर भी मापी जा सकती है। इस स्थान पर भी कैलीपर्स का वैसे ही प्रयोग करते हैं जैसे ऊपर वर्णन किया गया है। त्वचा में जमी वसा को नापने के लिए वजन और लम्बाई मापने की तुलना में अधिक प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

7. कमर तथा नितम्ब का अनुपात

कमर तथा नितम्ब की परिधि के अनुपात को ज्ञात कर हम उस व्यक्ति के स्वास्थ्य का आकलन कर सकते हैं। यह अनुपात कमर की परिधि को नितम्ब की परिधि से विभाजित कर मापा जाता है। यह अनुपात मुख्यतः शरीर में वसा वितरण तथा मोटापे का संकेत है। महिलाओं में 0.8 से अधिक तथा पुरुषों में 1.0 से अधिक का कमर-नितम्ब का अनुपात मोटापे, हृदय रोग तथा मधुमेह विकसित होने के खतरे को दर्शाता है।

उपरोक्त सभी विधियों द्वारा पोषण स्तर ज्ञात किया जा सकता है। बड़े सर्वेक्षणों में सभी विधियों का उपयोग नहीं किया जा सकता है। पोषण स्तर ज्ञात करने के लिए मानवमितीय विधि का चुनाव समय, आयु वर्ग, व्यक्तियों की संख्या आदि पर निर्भर करता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा मानवमितीय परीक्षण की निम्न विधियों को पोषण स्तर निर्धारण हेतु अलग-अलग आयु के लिए उपयुक्त माना गया है। जैसे:

0-1 वर्ष	वजन, ऊँचाई
1-5 वर्ष	वजन, ऊँचाई, सिर और का छाती घेरा, बांह का घेरा
5-20 वर्ष	वजन, ऊँचाई, त्वचा में वसा का जमाव
20 से अधिक	वजन, ऊँचाई, त्वचा में वसा का जमाव

मानवमितीय परीक्षणों से बच्चों/वयस्कों के समूह का पोषण स्तर निर्धारण करने के लिए कम से कम तीन प्रकार के नाप एक साथ लेकर गणना करनी चाहिए।

पोषण स्तर का वर्गीकरण

पांच वर्ष तक के बच्चों के लिए वजन, लम्बाई एवं ऊपरी बांह के मध्य भाग का घेरा पोषण स्तर ज्ञात करने के लिए उपयुक्त एवं सटीक नाप माने जाते हैं। इन नापों के आधार पर पोषण स्तर को वर्गीकृत करने के लिए कई विधियां अपनायी गयी हैं। आइए इनका अध्ययन करें।

1. आयु के अनुरूप वजन

वजन के अनुसार बच्चों की पोषण की विभिन्न श्रेणियों में रखने के लिए अलग मानक दिये गये हैं। इनमें सबसे प्रचलित गोमेज वर्गीकरण (1956) है। इस वर्गीकरण में कुपोषण का स्तर बालकों की आयु के लिए वजन के प्रतिशत पर आधारित होता है। इसमें एन.सी.एच.एस. के आंकड़ों के मानक के रूप में प्रयोग किया जाता है। मानक का प्रतिशत, वर्गीकरण का आधार बनता है।

तालिका 4.1: गोमेज वर्गीकरण

मानक का प्रतिशत	कुपोषण की श्रेणी
60 से कम प्रतिशत	तृतीय श्रेणी कुपोषण
60-65 प्रतिशत	द्वितीय श्रेणी कुपोषण
75-90 प्रतिशत	प्रथम श्रेणी कुपोषण
90 से ज्यादा प्रतिशत	सामान्य/उचित पोषण

तालिका 4.2: इंडियन एकेडेमी आफ पिडीट्रीशियन्स (1972) के वर्गीकरण के अनुसार

मानक का प्रतिशत	कुपोषण की श्रेणी
50 से कम प्रतिशत	अति गंभीर कुपोषण
51-60 प्रतिशत	गंभीर कुपोषण
61-70 प्रतिशत	मध्यम कुपोषण
71-80 प्रतिशत	कम पोषण

80 से अधिक प्रतिशत

सामान्य पोषण

उदाहरण

यदि किसी बालक की उम्र चार वर्ष है तथा उसका वजन 12 किलो ग्राम है तो उसका पोषण स्तर कैसा है, आइए जानें।

वजन = 12 किलो

मानक वजन = 16.5 किलो

प्रतिशत = $\frac{12 \times 100}{16.5} = 72.2$ प्रतिशत

इस बालक को गोमेज वर्गीकरण के अनुसार द्वितीय श्रेणी कुपोषण में वर्गीकृत करेंगे। आयु के अनुरूप वजन कम वजन वाले बालकों की वृद्धि निगरानी के लिए उचित सूचकांक है।

2. आयु के अनुरूप लम्बाई

आयु के अनुरूप लम्बाई दीर्घकालीन कुपोषण मापने का सूचकांक है। प्राप्त लम्बाई की मानक से तुलना करके हम ज्ञात कर सकते हैं कि बच्चा सामान्य रूप से बढ़ रहा है या नहीं। लम्बाई अल्पकालिक कुपोषण को नहीं दर्शाती है। आयु के अनुरूप लम्बाई बौनेपन को मापती है। बौने बच्चों की मानसिक एवं शारीरिक कार्यक्षमता कम होती है।

3. लम्बाई के अनुरूप वजन

आयु के अनुरूप वजन के अनुसार वर्गीकरण में लम्बाई से प्रभावित वजन को ध्यान में नहीं रखा जाता है। एक ही आयु के स्वस्थ बच्चों की लम्बाई कम या अधिक हो सकती है जिसका सीधा असर वजन पर पड़ता है। अतः आयु के लिए औसत वजन को ऊँचाई के साथ सम्बन्धित करना उचित रहता है। आयु संबंधी सही जानकारी न होने पर यह सूचकांक पोषण स्तर निर्धारण में अधिक उपयोगी है क्योंकि यह आयु पर निर्भर नहीं है। जब किसी बच्चे का वजन लम्बाई के अनुरूप न हो या मानक वजन से कम हो तो उसे क्षीणता कहते हैं। ऐसे बच्चों में मांसपेशियों की कमी पायी जाती है। लम्बाई के अनुरूप वजन का निर्धारित मात्रा से 80 प्रतिशत वजन कम होने पर ऐसे बच्चों को तीव्र कुपोषण की श्रेणी में रखा जाता है जिसे वेस्टिंग डिजीज (wasting disease) कहते हैं।

वाटर लो द्वारा क्षीणता एवं बौनापन वर्गीकृत करने के लिए लम्बाई के अनुरूप वजन तथा आयु के अनुरूप लम्बाई दोनों सूचकांकों का प्रयोग किया गया है। वाटर लो के अनुसार वर्गीकरण तालिका 2.3 में दिया जा रहा है।

तालिका 4.3: कुपोषण का वाटर लो वर्गीकरण

बौनापन (%) आयु के अनुरूप लम्बाई	क्षीणता (%) लम्बाई के अनुरूप वजन	कुपोषण की श्रेणी
सामान्य (ग्रेड: 0)	>95%	>90%
कम (ग्रेड: I)	87.5-95%	80-90%
मध्यम (ग्रेड: II)	80-87.5%	70-80%
गंभीर (ग्रेड: III)	<80%	<70%

प्रतिशत लम्बाई के अनुरूप वजन = $\frac{\text{बच्चे का वजन}}{\text{मानक वजन (उसी लम्बाई के लिए)}} \times 100$

प्रतिशत आयु के अनुरूप लम्बाई = $\frac{\text{बच्चे की लम्बाई}}{\text{मानक लम्बाई (उसी आयु के लिए)}} \times 100$

उपरोक्त चर्चा में वर्णित सभी विधियां मानकों के प्रतिशत पर आधारित हैं।

वयस्कों के लिए

शरीर में वसा की मात्रा जानने हेतु शरीर द्रव्यमान सूचकांक/बॉडी मास इन्डेक्स (बी.एम.आई.) उपयुक्त साधन है। इसकी गणना के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है:

$$\text{शरीर द्रव्यमान सूचकांक} = \frac{\text{वजन (किलोग्राम)}}{\text{लम्बाई (मीटर}^2\text{)}}$$

तालिका 4.4 में शरीर द्रव्यमान सूचकांक के वर्गीकरण द्वारा पोषण स्तर की विभिन्न श्रेणियों को दर्शाया गया है।

पोषण स्तर वर्गीकरण	शरीर द्रव्यमान सूचकांक (किलोग्राम/मीटर ²)
अल्पभार	<18.5
सामान्य	18.5-24.9
कम मोटापा/अतिभार	25-29.9
मोटापा (ग्रेड: I)	30-34.9
मोटापा (ग्रेड: II)	35-39.9
मोटापा (ग्रेड: III)	≥40

निम्न तालिका हमें विभिन्न पोषण स्तरों में विभिन्न सूचकांकों के वर्गीकरण के बारे में बताती है।

तालिका 4.5: पोषण स्तर के सूचकांक

पोषण स्तर	आयु के अनुरूप लम्बाई	आयु के अनुरूप वजन	लम्बाई के अनुरूप वजन
सामान्य	सामान्य	सामान्य	सामान्य
दीर्घकालीन कुपोषण (Chronic undernutrition)	कम	कम	सामान्य
वर्तमान कम अवधि तीव्र कुपोषण (Acute undernutrition)	सामान्य	कम	कम
वर्तमान तथा पूर्व कुपोषण	कम	कम	कम

शरीर में वसा रहित द्रव्यमान जानने हेतु आयु के अनुरूप ऊपरी मध्य बाँह का घेरा एक सटीक सूचकांक है। यह बच्चों एवं गर्भवती स्त्रियों का पोषण स्तर ज्ञात करने के लिए उपयोगी है।

तालिका 4.6 आयु के अनुरूप ऊपरी मध्य बांह का घेरा

लक्षित समूह	मध्य बाँह के घेरे का नाप (सें.मी.)	पोषण स्तर
पांच वर्ष तक की उम्र के बच्चे	>12.5	सामान्य
	≥11.5-<12.5	मध्यम श्रेणी का तीव्र कुपोषण
	<11.5	गम्भीर श्रेणी का तीव्र कुपोषण
गर्भवती स्त्री	17-21	मध्यम कुपोषण
	<17	गम्भीर कुपोषण

पोषण स्तर ज्ञात करने हेतु नैदानिक लक्षणों के परीक्षण के बारे में जानने से पूर्व आइए कुछ अभ्यास प्रश्नों को हल करें।

अभ्यास प्रश्न 2

1. निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए।

a. मानवमितीय माप

.....

b. गोमेज वर्गीकरण

.....

c. वाटर लो वर्गीकरण

.....

बौनापन

.....

d. क्षीणता

.....

3. नैदानिक लक्षणों का परीक्षण (Clinical trial)

नैदानिक लक्षणों के परीक्षण की सामान्य विधि में सामान्य चिकित्सकीय इतिहास एवं भौतिक लक्षणों की जांच द्वारा पोषण स्तर ज्ञात किया जाता है। इन आकलन प्रक्रियाओं का उपयोग सामान्य रूप से समुदाय पोषण सर्वेक्षण और नैदानिक चिकित्सा में किया जाता है। यह विधि पोषक तत्वों में कमी के कारण उत्पन्न लक्षणों को पहचानने के लिए उत्तम है। अविशिष्ट लक्षणों की उपस्थिति में पोषण स्तर का आकलन मानवमितीय माप, आहार सर्वेक्षण एवं जांच परीक्षण द्वारा करके ही पुष्टि करनी चाहिए।

चिकित्सकीय इतिहास (Medical history)

चिकित्सकीय इतिहास जानने के लिए व्यक्ति से साक्षात्कार करके पूछा जा सकता है अथवा चिकित्सकीय रिकॉर्ड उपयोग में लाए जा सकते हैं। पोषण स्तर आकलन में इस विधि का उपयोग केवल अस्पताल रोगियों तक ही सीमित है।

भौतिक लक्षणों की जांच

पोषण स्तर को ज्ञात करने के लिए शरीर के विभिन्न भागों में उत्पन्न लक्षणों/चिन्हों की जांच की जाती है। जेलिफ (1966) के अनुसार कुपोषण के कारण शरीर के विभिन्न भाग जैसे त्वचा, आँखों, बाल, होंठ, जीभ, दाँत, थायराइड ग्रंथि आदि में परिवर्तनों की जांच कर पोषण स्तर ज्ञात किया जा सकता है।

इस विधि के उपयोग के लिए जाँचकर्ता को विभिन्न पोषणहीनता रोगों के नैदानिक लक्षणों और चिन्हों की उपयुक्त जानकारी होनी चाहिए तथा इनको पहचानने की कुशलता होनी आवश्यक है।

शारीरिक लक्षण जैसे चिड़चिड़ापन, थकान, पीली आंखें, बढ़ी हुयी थायराइड ग्रन्थि आदि कुपोषण के लक्षण हैं। समुदाय में पोषण स्तर जानने के लिए इस प्रकार लक्षणों को रिकॉर्ड में रखना लाभप्रद रहता है।

कुछ नैदानिक लक्षणों की पहचान व परिभाषा

नैदानिक लक्षणों का उपयोग किसी विशेष पोषक तत्व की कमी को ज्ञात करने के लिए किया जाता है। इस दिशा में कुशलता प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम यह जानना जरूरी है कि कौन-कौन से लक्षणों की जांच करनी चाहिए तथा लक्षणों को कैसे पहचानना चाहिए। इस तरह के परीक्षणों में लक्षणों/चिन्हों की उपस्थिति को देखने के लिए उचित प्रकाश में व्यक्ति की सम्पूर्ण जाँच की जाती है, जिनका विवरण निम्नलिखित है:

● बाह्य आकृति एवं व्यवहार

कम वजन: लम्बाई के अनुरूप मानक वजन से 10 प्रतिशत वजन कम होना।

कम लम्बाई: आयु के अनुरूप मानक लम्बाई से कम होना।

जल्दी थकान: थोड़ा सा कार्य करने पर जल्दी थक जाना।

सुस्त: किसी भी कार्य को करने का मन न होना।

चिड़चिड़ापन: जल्दी गुस्सा करना, असहनशीलता।

अनिद्रा: नींद न आना या कम सोना।

● बाल

पतले और अपर्याप्त: बालों का व्यास कम होना, सिर पर बालों का इतना कम होना कि सिर की त्वचा दिखाई दे। रूखे, भंगुर, शुष्क तथा जल्दी टूटने वाले बाल।

चमकहीन: फीके चमकहीन बाल।

डिस्पिगमेंटेशन (dyspigmentation): बालों के रंग में परिवर्तन।

● मुख

त्वचा का डिस्पिगमेंटेशन (dyspigmentation): चेहरे की त्वचा के रंग में परिवर्तन एवं जगह-जगह सफेद धब्बे।

नाक से स्राव: नाक के पास स्लेटी, पीला, चिपचिपा पदार्थ स्रावित होता है।

चन्द्राकार मुख: चेहरा फूला हुआ व गाल लटके हुए।

● आंखें

पीला कंजक्टिवा: कंजक्टिवा का रंग सामान्य न रहना।

कंजक्टिवल जिरोसिस (Conjunctival Xerosis): कंजक्टिवा मटमैला एवं झुरियां से युक्त। यह काफी शुष्क बन जाता है।

कोरनियल जिरोसिस (Corneal Xerosis): यह अवस्था कोरनिया के सूखेपन को बताती है।

बिटॉट बिन्दु (Bitot Spot): ये नेत्र श्लेष्मा पर स्लेटी रंग के त्रिकोण, फेन युक्त थक्के होते हैं।

किरेटोमलेशिया (Keratomalacia): इसमें कोरनिया की सम्पूर्ण स्थलता दिखती है। इससे आंख की पुतली नष्ट हो सकती है।

- होंठ

कोणीय मुखपाक (Angular Stomatitis): मुख के दोनों कोने फट जाते हैं।

चिलोसिस (Cheilosis): होठों का फटना, सूजना, लाल होना, विशेषतः निचला होंठ।

- जीभ

पीली: जीभ का रंग सामान्य न होना। उस पर परत जमना।

एडीमा/सूजन: जीभ में सूजन जो दातों के निशान से पहचानी जा सकती है।

ग्लोसाइटिस: जीभ में दर्द, जीभ गहरे लाल रंग की हो जाती है।

मैजेण्टा जीभ: जीभ का रंग बैंगनी होना। जीभ का सपाट तथा चमकदार होना।

- दांत

सड़न: दांतों में सड़न या दांतों का क्षय।

मोटल्ड इनैमल (Mottled Enamel): दांतों पर सफेद या भूरे धब्बे, ऊपर के दांतों में छेद।

- मसूड़े

स्पंजी एवं स्रावी: मसूड़े लाल, बैंगनी व फूले हुए हो जाते हैं। उनसे रक्त बहता है तथा सूजन आ जाती है। थोड़ा सा दबाने से ही रक्त बहने लगता है।

- त्वचा

जिरोसिस (Xerosis): शरीर की त्वचा में अत्यधिक सूखापन।

फॉलीक्यूलर हाइपर किरेटोसिस (Follicular Hyperkeratosis): शरीर पर बालों की जड़ों में छोटे-छोटे खूँटदार दाने।

डर्मेटाइटिस (Dermatitis): त्वचा पर धूप पड़ने वाले हिस्सों का रंग गहरा हो जाता है। त्वचा लाल एवं दानेदार हो जाती है।

पीचीया (Petechiae): शरीर पर जगह-जगह छोटे-छोटे चोट के जैसे नीले निशान।

- नाखून

भंगुर: जल्दी टूटने वाले नाखून।

धारीदार: नाखूनों पर उभरी खड़ी धारियाँ।

पीलापन: नाखूनों का जड़ों के पास से पीलापन।

कोइलोनाकिया (Koilonychia): पतले नाखून जो बीच से दब कर चम्मचनुमा हो जाते हैं।

- मांसपेशियां

क्षीणता: मांसपेशियों की कमी, कमजोरी, पतला शरीर।

- हड्डियां

धनुजंघा (Bowlegs): टांगे कमजोर होकर धनुषाकार हो जाती हैं। घुटनों के बीच जगह बढ़ जाती है।

नॉक नी (Knock knee): घुटने असामान्य रूप से पास-पास हो जाते हैं या मिल जाते हैं जबकि टखने काफी दूर-दूर होते हैं।

पसलियों का मणिमय (Rachitic rosary): पसलियों की उपस्थियों पर माला के दाने के रूप में उभार निकलना।

कबूतर छाती (Pigeon chest): छाती में विकृति जिसमें छाती की हड्डी बाहर निकल आती है।

अधिवर्धी अन्त्यों का चौड़ापन (Epiphyseal enlargement): लम्बी हड्डियों के सिरे चौड़े होने लगते हैं।

करोटि अन्तरालों के बन्द होने में विलम्ब: मष्तिष्क की हड्डियां 18 महीने तक खुली रहती हैं। इससे खोपड़ी का अगला भाग बाहर उभर आता है।

- ग्रन्थि

थाइराइड ग्रन्थि का बढ़ना: बढ़ी हुयी ग्रन्थि दिखाई देती है।

- सबक्यूटेनियस ऊतक

एडीमा: पैरों एवं एड़ी के आसपास पानी जमा होने के कारण सूजन। दबा कर देखने से पता चलता है।

सबक्यूटेनियस वसा: त्वचा के नीचे अत्यधिक वसा का जमाव।

नैदानिक लक्षणों की पहचान विधि को शुरू करने से पूर्व एक प्रारूप बना लेना चाहिए। उस प्रारूप में शरीर के सभी हिस्सों की जानकारी प्राप्त करने वाला विवरण होता है। प्रारूप में परीक्षण करने के पश्चात उचित चिन्ह अंकित किया जाता है। बच्चों में परीक्षण के दौरान कोई भी लक्षण उपस्थित न होने पर उनकी गिनती सामान्य श्रेणी/स्वस्थ श्रेणी के बालकों में की जाती है।

पोषण स्तर ज्ञात करने हेतु एकीकरण के आधार पर प्रत्येक कमी के प्रभाव के लक्षण को भोज्य तत्व के साथ संबंधित किया जाता है।

परीक्षण में लक्षणों के साथ भोज्य तत्वों की कमी का सम्बन्ध

नैदानिक लक्षणों के परीक्षण, पहचान, आकलन के पश्चात पोषक तत्व की कमी या अधिकता से उत्पन्न लक्षणों में सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए। इसके लिए पोषक तत्वों एवं उनसे जुड़े रोगों के विषय में सम्पूर्ण जानकारी होनी चाहिए।

अपर्याप्त पोषण

लक्षण: आलस्य, सुस्ती, अशक्तता, क्षीणता, थकान, लम्बाई के अनुरूप वजन में कमी, रूखी-सूखी त्वचा, मांसपेशियों की कमी।

तीव्र कुपोषण

लक्षण: वजन में अत्यधिक कमी, एडिमा/सूजन, अत्यधिक कमजोर हाथ पैर, पतले चमकहीन एवं भंगुर बाल।

आइए कुछ पोषक तत्वों की कमी से उत्पन्न विभिन्न नैदानिक लक्षणों के बारे में जानें।

विटामिन ए की कमी

- सूजी हुई आंखें
- कॉर्निया पर सफेद या भूरे रंग के दाग
- कन्जेक्टाइवा का पीला होना
- कन्जेक्टाइवा पर चुभन

- त्वचा का सूखापन
- बिटॉट स्पॉट
- किरेटोमलेशिया

विटामिन बी 1 (थायमिन) की कमी

- मांसपेशियों में कमजोरी
- एडिमा/सूजन
- संवेदना में परिवर्तन
- एड़ी तथा घुटने के हिलने में कमी

विटामिन बी 2 (राइबोफ्लेविन) की कमी

- कोणीय मुखपाक, होठों के मध्य दरार/घाव
- जीभ का बैंगनी रंग का होना
- मांसपेशियों का क्षय
- वजन में कमी
- बालों के रंग में परिवर्तन
- बालों का आसानी से टूटना
- पतले/बहुत कम बाल

नायसिन की कमी

- हाथ की त्वचा में परिवर्तन
- जीभ का बैंगनी रंग का होना
- अतिसार
- डरमैटाइटिस/रूखी त्वचा

विटामिन सी (एस्कार्बिक एसिड) की कमी

- मसूड़े सूज जाना
- मसूड़े मुलायम होना

- मसूड़ों से रक्त आना

कैल्शियम/विटामिन डी की कमी

- सिर का बाहर निकल आना
- घुटनों का धनुषाकार होना
- घुटनों का आपस में टकराना
- पसलियों का बाहर की तरफ निकला दिखाई देना
- अस्थि विकृति

उपरोक्त सभी लक्षणों को पोषक तत्वों से मिलान कर व्यक्ति का पोषण स्तर ज्ञात किया जा सकता है।

नैदानिक लक्षण परीक्षण के लाभ

यह विधि सरल एवं अल्पव्ययी है। इसको प्रयोग करने में समय कम लगता है। इस विधि से प्राप्त आंकड़े जल्द ही परिणाम प्रदान कर देते हैं। अन्य विधियों की अपेक्षा यह कम खर्चीली है।

नैदानिक लक्षण परीक्षण विधि की कमियाँ

यह बहुत सटीक विधि नहीं है। इससे प्राप्त आंकड़े कार्य करने वाले व्यक्ति की दक्षता पर निर्भर रहते हैं। इस विधि को प्रयोग करने से पहले उचित प्रशिक्षण की आवश्यकता है। कई भोज्य तत्वों की कमी से मिलते जुलते लक्षण दिखाई देते हैं जिससे वास्तविक भोज्य तत्व के स्थान पर अन्य भोज्य तत्व को कारण माना जा सकता है। जैसे ग्लोसाइटिस (Glossitis) शरीर में नायसिन एवं विटामिन बी2 दोनों की कमी से होता है।

इस विधि के प्रयोग से बीमारी या रोग की प्रारम्भिक अवस्था का ज्ञान नहीं हो पाता है। इस विधि में चाहे कितनी भी कमियाँ हों, परन्तु इसके उपयोग से प्राप्त आंकड़े पोषण स्तर ज्ञात करने में मदद करते हैं।

4. प्रयोगशाला परीक्षणों द्वारा पोषण संबंधी जैवरासायनिक आकलन (Nutritional Biochemical Estimation by Laboratory Tests)

प्रयोगशाला परीक्षणों के माध्यम से किए गए जैव रासायनिक परीक्षण पोषण की स्थिति के आकलन और साथ ही निदान के उद्देश्य हेतु बहुत उपयोगी हैं। जैव रासायनिक परीक्षणों के

साथ नैदानिक निष्कर्षों को सहसंबंधित करने से पोषण संबंधी विकारों का सही निदान होता है। जैव रासायनिक मूल्यांकन शरीर के तरल पदार्थ (सामान्य रूप से रक्त और मूत्र) में आवश्यक आहार घटकों के स्तर को मापने से संबंधित है जो कुपोषण की संभावना का मूल्यांकन करने में सहायक है। उदाहरण के लिए, रक्त में हीमोग्लोबिन के स्तर का माप लौह लवण की कमी से सम्बंधित एनीमिया की संभावना का मूल्यांकन करने में सहायक है। आहार की मात्रा और संरचना में परिवर्तन, शरीर के ऊतकों और तरल पदार्थों में रासायनिक पदार्थों की सांद्रता में परिवर्तन के रूप में परिलक्षित होते हैं।

पोषण संबंधी स्थिति के आकलन के लिए निम्न प्रयोगशाला परीक्षण निहित हैं:

- रक्त या मूत्र में पोषक तत्व, इसके मेटाबोलाइट का मापना
- पोषक तत्वों पर निर्भर एंजाइमों की गतिविधि का मापना
- संचित मेटाबोलाइट का मापना।

तालिका 4.7: पोषण सर्वेक्षण के लिए उपयुक्त जैव रासायनिक परीक्षण

पोषण न्यूनता	जैव-रासायनिक परीक्षण
प्रोटीन	कुल सीरम प्रोटीन सीरम एल्ब्युमिन मूत्र में यूरिया (क्रिएटिनिन के प्रति ग्राम के अनुसार) मूत्र में यूरिया / क्रिएटिनिन अनुपात प्लाज्मा में मुक्त अमीनो अम्ल
विटामिन ए	सीरम विटामिन ए सीरम कैरोटीन स्तन के दूध में विटामिन ए की सांद्रता
विटामिन डी	सीरम एल्केलाइन फॉस्फेट
एस्कॉर्बिक अम्ल	सीरम एस्कॉर्बिक अम्ल
थायमिन	मूत्र में थायमिन
राइबोफ्लेविन	मूत्र में राइबोफ्लेविन

नायसिन	मूत्र में N-मिथायल निकोटिनामाइड का स्तर
लौह तत्व	हीमोग्लोबिन सीरम फेरिटिन स्तर
आयोडीन	मूत्र में आयोडीन
फोलिक अम्ल	सीरम फोलेट स्तर

पोषण संबंधी मूल्यांकन की इस विधि हेतु उचित प्रयोगशाला व्यवस्था और प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। जैव रासायनिक मूल्यांकन मूल रूप से इस सिद्धांत पर काम करता है कि आहार की मात्रा और संरचना में कोई भी परिवर्तन ऊतकों या शरीर के तरल पदार्थों में पोषक तत्वों या उनके यौगिकों की सांद्रता में परिवर्तन और / या विशिष्ट पदार्थों (मेटाबोलाइट्स) की उपस्थिति या अनुपस्थिति को परिलक्षित करता है।

अभ्यास प्रश्न 3

1. नैदानिक लक्षणों से आप क्या समझते हैं?

.....
.....

2. जिरोसिस किसे कहते हैं?

.....
.....

3. विटामिन सी की कमी की पहचान कैसे करते हैं?

.....
.....

4.4 सारांश

किसी समुदाय में पोषण सर्वेक्षण करने से समुदाय में विशेष रूप से अतिसंवेदनशील वर्ग जैसे शिशुओं, स्कूल पूर्व बच्चों, गर्भवती स्त्रियों तथा दूध पिलाने वाली माताओं में व्याप्त पोषण समस्या के विषय में उपयुक्त जानकारी मिल सकती है। पोषण सर्वेक्षण से पोषण स्तर की प्रत्यक्ष जानकारी प्राप्त होती है।

प्रत्यक्ष पोषण सर्वेक्षण के लिए आहार सर्वेक्षण, मानवमितीय परीक्षण तथा नैदानिक लक्षण परीक्षण जैसी विधियां प्रयोग में लायी जाती हैं।

आहार सर्वेक्षण से एकत्रित आंकड़ों का विश्लेषण करके अनाज, दालों, सब्जियों, फलों, दूध, अण्डों, मछली तथा मांस आदि का भोजन के रूप में औसत अन्तर्ग्रहण ज्ञात किया जाता है। प्राप्त आंकड़ों से ऊर्जा, प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन तथा खनिज लवणों का औसत अन्तर्ग्रहण ज्ञात किया जाता है। इससे पोषक तत्वों की कमी या असंतुलन के बारे में जानकारी प्राप्त हो जाती है।

मानवमितीय माप से पोषण स्तर ज्ञात किया जा सकता है। इस विधि के अंतर्गत शरीर की लम्बाई, वजन, सिर, छाती एवं बांह की परिधि, त्वचा की परत की मोटाई जैसे शारीरिक नाप का प्रयोग किया जाता है। मानवमितीय मापों की समय-समय पर जानकारी से व्यक्ति की शारीरिक वृद्धि और विकास के स्वरूप का पता चल जाता है। शरीर की लम्बाई, शिशुओं, बच्चों तथा किशोरों में होने वाली वृद्धि का एक सामान्य संकेतक है एवं आयु के अनुरूप कम लम्बाई होने पर कुपोषण होने के संकेत मिलते हैं। लम्बाई के अनुरूप वजन वर्तमान पोषण स्तर का सूचकांक है। बच्चों के सिर, छाती तथा बांह की परिधि के सामान्य से कम होने पर प्रोटीन उर्जा कुपोषण होने का संकेत मिलता है। त्वचा की परत की मोटाई शरीर में उपस्थित वसा का सूचक है। इसी प्रकार नैदानिक लक्षणों को पहचान कर पोषक तत्वों की कमी से मिलान कर पोषण स्तर ज्ञात किया जाता है। इनके अतिरिक्त प्रयोगशाला परीक्षणों के माध्यम से किए गए जैव रासायनिक परीक्षण पोषण की स्थिति के आकलन और निदान के उद्देश्य हेतु बहुत उपयोगी हैं।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

- **कुपोषण:** यह असंतुलित भोजन (ऐसा भोजन जिसमें एक या अधिक पोषक तत्वों की कमी या अधिकता होती है) ग्रहण करने से उत्पन्न स्थिति है। कभी कभी यह स्थिति भोजन के पाचन, अवशोषण तथा चयापचय सम्बन्धी कारणों से उत्पन्न हो जाती है।
- **अल्प पोषण:** यह लम्बे समय तक अपर्याप्त भोजन ग्रहण करने से उत्पन्न दशा है। उदाहरण प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण।
- **मानवमितीय माप:** वह विज्ञान जिसमें मानव शरीर के विभिन्न अंगों के मापों का अध्ययन किया जाता है।
- **एडिमा:** हाथों, पैरों में पानी एकत्र होने के कारण सूजन।

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. इकाई का भाग 2.3 देखें।
2. इकाई का भाग 2.3 देखें।
3. इकाई का भाग 2.3.2 देखें।
4. इकाई का भाग 2.3.3 देखें।
5. इकाई का भाग 2.3.3 देखें।

अभ्यास प्रश्न 2

1. निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए।
 - a. मानवमितीय माप: विभिन्न आयु और पोषण की स्थिति में मानव शरीर के माप को मानवमितीय परीक्षण कहते हैं। मानवमितीय परीक्षण में शरीर का वजन, ऊँचाई, बाँह, कमर तथा नितम्बों की परिधि आदि लेकर मानक मापों से तुलना की जाती है।
 - b. गोमेज वर्गीकरण: वजन के अनुसार बच्चों को पोषण की विभिन्न श्रेणियों में रखने के लिए दिये गये मानकों में सबसे प्रचलित गोमेज वर्गीकरण (1956) है। इस वर्गीकरण में कुपोषण का स्तर बालकों की आयु के लिए वजन के प्रतिशत पर आधारित होता है।
 - c. वाटर लो वर्गीकरण: वाटर लो वर्गीकरण द्वारा क्षीणता एवं बौनापन को वर्गीकृत करने के लिए लम्बाई के अनुरूप वजन तथा आयु के अनुरूप लम्बाई दोनों सूचकांकों का प्रयोग किया जाता है।
 - d. बौनापन: आयु के अनुरूप लम्बाई दीर्घकालीन कुपोषण मापने का सूचकांक है। आयु के अनुरूप कम लम्बाई बौनापन को मापती है। बौने बच्चों की मानसिक एवं शारीरिक कार्यक्षमता कम होती है।
 - e. क्षीणता: जब किसी बच्चे का वजन लम्बाई के अनुरूप न हो या मानक वजन से कम हो तो उसे क्षीणता कहते हैं। ऐसे बच्चों में मांसपेशियों की कमी पायी जाती है।

अभ्यास प्रश्न 3

1. नैदानिक लक्षणों का उपयोग किसी विशेष पोषक तत्व की कमी को ज्ञात करने के लिए किया जाता है।

-
2. जिरोसिस: शरीर की त्वचा में अत्यधिक सूखापन।
 3. विटामिन सी (एस्कॉर्बिक एसिड) की कमी के लक्षण निम्नलिखित हैं:
 - मसूड़े सूज जाना
 - मसूड़े मुलायम होना
 - मसूड़ों से रक्त आना
-

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- [Sehgal S. and Raghuvanshi R.S. (Eds). 2007. Text book of community nutrition. ICAR, New Delhi. 524p.
 - Kleinman.R.E. (ed.). 2009. Pediatric Nutrition Handbook. American Academy of Pediatrics.IL.559-575pp.
-

4.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. आहार सर्वेक्षण की विभिन्न विधियों के प्रयोग द्वारा अपने आसपास के दस लोगों का पोषण स्तर ज्ञात कीजिए।
2. विभिन्न मानवमितीय मापों एवं उनके प्रयोगों की विवेचना कीजिए।
3. नैदानिक लक्षणों के प्रयोग द्वारा पोषण स्तर कैसे ज्ञात किया जा सकता है?
4. अपने पूरे दिन के आहार अन्तर्ग्रहण का प्रपत्र बना कर उसके पोषक मान की गणना कीजिए।

इकाई 5: अप्रत्यक्ष पोषण स्तर

- 5.1 प्रस्तावना
- 5.2 उद्देश्य
- 5.5 जीवन संबंधी सांख्यिकी
- 5.4 जीवन संबंधी सांख्यिकी संकेतक एवं उनका प्रयोग
- 5.5 स्वास्थ्य नीति संकेतक
- 5.6 सामाजिक एवं आर्थिक संकेतक
- 5.7 स्वास्थ्य देखभाल के संकेतक
- 5.8 प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की व्यापकता
- 5.9 स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतक
- 5.10 सारांश
- 5.11 पारिभाषिक शब्दावली
- 5.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 5.15 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 5.14 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

जीवन संबंधी सांख्यिकी प्रमुख जनस्वास्थ्य के मुद्दों की पहचान करने और समाधान के लिए सबसे व्यापक रूप से प्रयोग होने वाले राष्ट्रीय, राजकीय एवं स्थानीय आंकड़े हैं। जीवन संबंधी सांख्यिकी आंकड़े इसलिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ये एक समुदाय (नगर, राज्य, राष्ट्र) के लिए विभिन्न स्वास्थ्य संकेतकों को दर्शाते हैं। जीवन संबंधी सांख्यिकी के संबंध में पढ़ने से पूर्व यह जान लेना उचित होगा कि स्वास्थ्य संकेतक क्या हैं एवं इनके क्या लाभ हैं।

हम पहले भी अध्ययन कर चुके हैं कि स्वास्थ्य राष्ट्र के विकास का सूचक है। विभिन्न स्वास्थ्य संकेतक जनसंख्या के स्वास्थ्य के विभिन्न पहलुओं को मापते हैं। जैसे जीवन प्रत्याशा, शिशु मृत्युदर आदि। इन सब संकेतकों से हमें ज्ञात होता है कि हमारा समुदाय/राष्ट्र कितना स्वस्थ है, समुदाय स्वास्थ्य के सभी संकेतकों में संतुलित है या नहीं तथा समुदाय स्वास्थ्य के सभी लक्ष्यों को पूर्ण कर रहा है या नहीं आदि।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप;

- बता सकेंगे कि जीवन संबंधी सांख्यिकी क्या है तथा उसके अध्ययन से क्या लाभ हैं;
- स्वास्थ्य नीति बनाने में प्रयोग संकेतकों को जान सकेंगे;
- विभिन्न सामाजिक एवं आर्थिक संकेतकों को समझ सकेंगे;
- प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के प्रबन्ध के संकेतकों को जान सकेंगे; तथा
- स्वास्थ्य के बुनियादी संकेतकों के बारे में व उनके प्रयोग के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

5.3 जीवन संबंधी सांख्यिकी

जैसा कि आप जान चुके हैं कि जीवन संबंधी सांख्यिकी के अध्ययन से महत्वपूर्ण स्वास्थ्य संकेतकों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। जीवन संबंधी सांख्यिकी से समग्र जनसंख्या के संदर्भ में आंकड़े प्राप्त होते हैं। ये आंकड़े मुख्यतः जीवन मृत्यु से संबंधित होते हैं। आइये इस बात पर चर्चा करें कि जीवन संबंधी सांख्यिकी आंकड़े महत्वपूर्ण क्यों हैं या इन्हें जानने से क्या लाभ होता है।

सर्वप्रथम चूंकि इन आंकड़ों से जन्म और मृत्यु दर का पता चलता है, इन आंकड़ों के द्वारा भविष्य में जनसंख्या का अनुमान लगाया जाता है। जीवन संबंधी सांख्यिकी आंकड़ों के माध्यम से स्वास्थ्य लक्ष्यों को प्राप्त करने की ओर प्रगति की जानकारी एवं निगरानी दोनों ही रखी जाती है।

इन आंकड़ों से जन स्वास्थ्य अधिकारी को जनसंख्या को स्वास्थ्य लाभ पहुंचाने में एवं प्रभावी उपायों को विकसित करने में मदद मिलती है। जैसे यदि आंकड़ों से पता चलता है कि बाल मृत्युदर एवं मातृ मृत्यु दर अधिक है, तो बाल एवं मातृ स्वास्थ्य सेवाओं की योजना बनायी जाती है तथा पूर्व में चल रहे कार्यक्रमों की निगरानी एवं सघन मूल्यांकन किया जाता है। जीवन संबंधी सांख्यिकी आंकड़ों से प्राप्त निष्कर्ष को उचित स्वास्थ्य शिक्षा देने में प्रयोग किया जाता है। स्वास्थ्य और चिकित्सा अनुसन्धान महंगा है। वर्तमान में यह अधिकांश रूप से राष्ट्रीय सरकार, निजी संस्थानों एवं दवा कंपनियों द्वारा वित्त पोषित है। स्वास्थ्य एवं चिकित्सा शोध के लिए प्राथमिकताएं, जैसे कैंसर, हृदय रोग, मोटापा, मधुमेह आदि बीमारियों से होने वाली मौतों पर सांख्यिकीय आंकड़ों से प्राप्त जानकारी पर ही निर्भर करती

है। जीवन संबंधी सांख्यिकीय आंकड़े अनुसंधान की प्राथमिकताओं का केंद्र बिंदु तेजी से बदल सकते हैं। उदाहरण के लिए दो दशक पहले एड्स के अनुसंधान की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता में अचानक परिवर्तन आया। अभी हाल ही में अल्जाइमर रोग के कारण और निवारण से संबंधित नैदानिक परीक्षणों और अध्ययन की संख्या में वृद्धि हुई है।

भारत में कुपोषण एवं मोटापे की बढ़ती दरों के आंकड़े उपचार और इस स्वास्थ्य समस्या के निवारण पर अधिक ध्यान देने की जरूरत पर बल देते हैं। जीवन सांख्यिकी आंकड़े इन स्वास्थ्य समस्याओं के लिए कार्यक्रम योजना बनाने एवं मूल्यांकन के लिए आधारभूत आंकड़े प्रदान करते हैं। यही आंकड़े नौकरी से संबंधित दुर्घटनाओं जैसे अस्थमा, सीसा विषाक्तता आदि को अच्छे एवं प्रभावी ढंग से कम करने में मदद करते हैं। इन आंकड़ों का प्रयोग पर्यावरणीय स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं के साथ-साथ कार्यस्थल पर स्वास्थ्य की निगरानी के लिए भी किया जा सकता है।

चाहे विकासशील देश की बात हो या विकसित देश में किसी भी प्रकार की महामारी के प्रसार की हो, जीवन सांख्यिकी आंकड़े हमेशा महत्वपूर्ण होते हैं। यह आंकड़े नैदानिक अध्ययन के लिए तुलनात्मक आंकड़े प्रदान करते हैं।

उपरोक्त चर्चा से आप जान चुके होंगे कि जीवन सांख्यिकी आंकड़े महत्वपूर्ण क्यों हैं। यह आंकड़े वास्तव में जनसंख्या के स्वास्थ्य स्तर का दर्पण हैं। इन्हीं आंकड़ों के आधार पर स्वास्थ्य नीतियाँ, स्वास्थ्य योजनाएं विकसित की जाती हैं। आइये अब जीवन संबंधी सांख्यिकी संकेतकों के विषय में जानकारी लें।

5.4 जीवन संबंधी सांख्यिकी संकेतक एवं उनका प्रयोग

संकेतक वह सूचकांक है जिसके द्वारा किसी स्थिति विशेष पर जानकारी उपलब्ध होती है। यह संकेतक जन्म, मृत्यु, विवाह आदि के विषय में जनसंख्या के मात्रात्मक आंकड़े प्रदान करते हैं। आइये इन संकेतकों के विषय में जानकारी प्राप्त करें।

1. अशोधित जन्म दर (Crude Birth Rate)

यह सबसे आसान तथा सबसे अधिक प्रयोग किया जाने वाला माप है। यह वर्ष की प्रति हजार जनसंख्या के अनुपात में होने वाले जन्मों की संख्या के रूप में व्यक्त किया जाता है। यह माप केवल जीवित शिशुओं के जन्म को ही गिन कर लिया जाता है। इसे निम्न सूत्र से ज्ञात किया जाता है:

$$\text{अशोधित जन्म दर} = \frac{\text{एक वर्ष में हुए जीवित जन्म} \times 1000}{\text{उस वर्ष की कुल जनसंख्या}}$$

इस गणना से प्राप्त 40-50 प्रति हजार की जन्म दर उच्च तथा 10-20 प्रति हजार की जन्म दर कम मानी जाती है। उच्च तथा कम जन्म दर दोनों से जुड़ी अपनी समस्याएं हैं। उच्च जन्म दर से जनसंख्या वृद्धि का जोखिम जुड़ा रहता है। इससे सरकार को जन कल्याण कार्यक्रमों को चलाने में परेशानियों का सामना करना पड़ता है। बढ़ी हुई जनसंख्या के साथ अशिक्षा, बेरोजगारी एवं पर्यावरण सम्बंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

वहीं कम जन्म दर से एक समय पश्चात् अधिक कार्यशील पीढ़ी की संख्या कम हो जाती है एवं अधिक देखरेख की आवश्यकता वाली बुजुर्ग पीढ़ी की संख्या बढ़ जाती है जिससे देश की अर्थव्यवस्था बिगड़ सकती है।

अशोधित जन्म दर का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे जनसंख्या की वृद्धि दर का सही अनुमान लगाया जा सकता है। दूसरी तरफ इसका सबसे बड़ा दोष यह है कि इस माप में बच्चे तथा बूढ़े भी शामिल किए जाते हैं जबकि जनसंख्या का यह वर्ग प्रजनन कार्य में सक्रिय नहीं होता है। इसके अतिरिक्त इस माप से आयु, लिंग, संरचना तथा वैवाहिक स्थिति का ध्यान नहीं रखा जाता है और यह प्रजनन का सामान्य ज्ञान नहीं देता है। इसलिए इसे अशोधित जन्म दर कहते हैं।

2. अशोधित मृत्यु दर

संयुक्त राष्ट्रसंघ ने सन् 1953 में मृत्यु की परिभाषा दी थी। इस परिभाषा के अनुसार जन्म के बाद किसी भी समय जीवन के सभी प्रमाणों के स्थायी रूप से विलुप्त हो जाने को मृत्यु कहते हैं।

एक वर्ष में प्रति हजार जनसंख्या के अनुपात में मरने वाले व्यक्तियों की संख्या को अशोधित मृत्युदर कहते हैं। यह भी एक आसान माप है जिसे निम्न सूत्र से ज्ञात किया जा सकता है:

$$\text{अशोधित मृत्यु दर} = \frac{\text{एक वर्ष में मृतकों की संख्या}}{\text{उस वर्ष की कुल जनसंख्या}} \times 1000$$

उस वर्ष की कुल जनसंख्या

जनसंख्या में वार्षिक वृद्धि अथवा हास की दर, जन्म तथा मृत्यु दर पर निर्भर करती है। यदि जन्म दर, मृत्यु दर से अधिक है तो जनसंख्या में वृद्धि होती है। इसके विपरीत यदि मृत्यु दर जन्मदर से अधिक होती है, तो जनसंख्या में कमी होती है।

जन्मदर तथा मृत्युदर कई बातों पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए महामारियों और दीर्घकालीन अकाल से मृत्यु में तीव्र वृद्धि हो सकती है। दूसरी ओर असाध्य और संक्रामक

रोगों की रोकथाम के लिए विस्तृत पैमाने पर टीकाकरण, साफ पेयजल की आपूर्ति, नगरीय स्वच्छता की प्रणाली का विकास कर मृत्युदर को कम किया जा सकता है।

इस मृत्युदर को अशोधित निम्नलिखित कारणों एवं दोषों के कारण कहा जाता है:

1. यह संकेतक केवल औसत दर बताता है। इससे सही जानकारी प्राप्त नहीं हो सकती।
2. इसकी गणना करते समय सम्पूर्ण जनसंख्या को सम्मिलित किया जाता है। परन्तु जनसंख्या के विभिन्न आयु वर्गों में मृत्युदर भिन्न होती है। जैसे वृद्धों में वयस्कों की अपेक्षा मृत्युदर अधिक होती है।
3. यह सम्भव है कि चुनी गयी जनसंख्या किसी विशिष्ट आयु वर्ग का ही प्रतिनिधित्व करे, जबकि जनसंख्या के अन्य वर्गों में मृत्यु दर काफी भिन्न हो सकती है।

3. आयु विशिष्ट मृत्यु दर

अशोधित मृत्यु दर की गणना करते समय सभी आयु वर्गों में मरने वाले व्यक्तियों का समावेश किया जाता है। इसकी सहायता से इस बात की जानकारी नहीं प्राप्त हो पाती है कि विभिन्न आयु वर्गों में मृत्यु दर क्या है। इसे आयु विशिष्ट मृत्यु दर द्वारा ज्ञात किया जाता है। इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण जनसंख्या को विभिन्न आयु वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है और उसके उपरान्त प्रत्येक आयु वर्ग में मृत व्यक्तियों की संख्या को उसी आयु वर्ग की जनसंख्या से भाग देकर भागफल को 1000 से गुणा कर उस आयु विशिष्ट वर्ग की मृत्यु दर ज्ञात की जाती है।

$$\text{आयु विशिष्ट मृत्यु दर} = \frac{\text{विशिष्ट आयु वर्ग में मृतकों की संख्या} \times 1000}{\text{उसी आयु की वर्ष भर में जनसंख्या}}$$

आयु विशिष्ट मृत्यु दर की ही भांति अन्य विशिष्ट मृत्यु दरें भी ज्ञात की जा सकती हैं। जैसे क्षेत्र विशिष्ट मृत्यु दर, लिंग विशिष्ट मृत्यु दर आदि। इसके अतिरिक्त मृत्यु के कारणों के अनुसार भी मृत्यु दर की गणना की जा सकती है।

4. शिशु मृत्यु दर

शिशु मृत्यु दर 1000 जीवित जन्मे शिशुओं में से एक वर्ष या इससे कम आयु के मृत शिशुओं की संख्या है। शिशु मृत्यु दर से तात्पर्य आयु के प्रथम वर्ष (0-1) में होने वाली मृत्यु से है। शिशु मृत्यु दरें समाज की सामान्य स्वास्थ्य दशाओं का सर्वश्रेष्ठ सूचकांक माना जाता है। यह दर जितनी कम होगी जीवन स्तर एवं जनस्वास्थ्य उतना ही अच्छा होगा।

शैशवावस्था के प्रथम वर्ष के दौरान मृत्यु होने के कई कारण हैं जिसमें प्रमुख हैं, जन्म के समय कम भार होना, कुपोषण, अतिसार एवं स्वास नली में तीव्र संक्रमण। शिशु मृत्यु दर उच्च होने के कारण प्रजनन दर तथा जन्म दर भी उच्च होते हैं। यह इसलिए क्योंकि माता पिता मृत बच्चे की पूर्ति करने कारण अधिक बच्चे पैदा करते हैं। माताएं बच्चों को जन्म देती रहती हैं, जबकि खुद उनके जीवित रहने की सम्भावना बहुत कम होती है क्योंकि उनका अपना स्वास्थ्य क्षीण होता रहता है। इस प्रकार यह चक्र चलता रहता है। इसलिए सरकार को शिशु मृत्यु दर को कम करने पर अधिक ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

शिशु मृत्यु दर को कम करने के लिए टीकाकरण, सुरक्षित पेयजल तक पहुंच, साफ-सफाई, महिलाओं का स्वास्थ्य एवं उनकी साक्षरता की संयुक्त भूमिका है।

शिशु मृत्यु दर को आयु के आधार पर पुनः दो भागों में बांटा जाता है:

क. नवजात शिशु मृत्यु दर (Neonatal Mortality Rate)

यह भी एक आयु विशिष्ट मृत्यु दर है जिसके अन्तर्गत 04 सप्ताह अथवा एक माह से कम (0-28 दिन) आयु के बच्चों की मृत्यु दर का अध्ययन किया जाता है।

नवजात शिशु मृत्यु दर = $\frac{\text{नवजात मृत शिशुओं की संख्या (0-28 दिन के मध्य)}}{\text{कुल जीवित जन्मे शिशुओं की संख्या (वर्ष में)}} \times 1000$

कुल जीवित जन्मे शिशुओं की संख्या (वर्ष में)

यह संकेतक नवजात शिशु की देखभाल के लिए एक महत्वपूर्ण परिणाम सूचक है। यह प्रत्यक्ष रूप से जन्म से पूर्व, प्रसव के दौरान तथा जन्म के पश्चात् शिशु की देखभाल का स्तर दर्शाता है। उच्च नवजात मृत्युदर तब होती है जब माँ अठारह वर्ष से कम अथवा 35 वर्ष से अधिक आयु की हो एवं दो बच्चों के मध्य एक वर्ष से कम का अंतर हो। नवजात शिशुओं की मृत्युदर कम करने के लिए माता-पिता का भी स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहना जरूरी है। गर्भावस्था के हर चरण में गर्भस्थ शिशु के विकास की निगरानी आवश्यक है। इसके लिए समुदाय में बड़े पैमाने पर जागरूकता अभियान चलाना जरूरी है। इसके अलावा प्रसव के समय समुचित सुविधाओं और प्रशिक्षित चिकित्साकर्मियों की उपलब्धता बेहद जरूरी है।

ख. जन्मोपरांत नवजात शिशु मृत्यु दर (Post Neonatal Mortality Rate)

प्रथम चार सप्ताह या 28 दिन के बाद, वर्ष के शेष 18 सप्ताहों में हुई मृत्यु को इसके अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है और इसकी गणना भी नवजात शिशु मृत्यु दर की गणना की तरह ही की जाती है।

जन्मोपरांत नवजात शिशु मृत्यु दर

$$= \frac{\text{जन्मोपरांत (28 दिन-एक वर्ष के पूर्व) मृत नवजात शिशुओं की संख्या} \times 1000}{\text{कुल जीवित जन्मे शिशुओं की संख्या (उसी वर्ष में)}}$$

जन्मोपरांत नवजात शिशु की मृत्यु के मुख्य कारण नवजात शिशु की उचित देखभाल न करना, कुपोषण, अस्वच्छता का वातावरण तथा टीकाकरण न होना है।

5. पांच वर्ष से कम आयु में मृत्युदर

प्रति हजार जीवित जन्मों पर जन्म से पाँच वर्ष की आयु के बीच मृत्यु की संभावना को पांच वर्ष से कम आयु के बच्चों में मृत्युदर कहते हैं। इसकी गणना करने के लिए जन्म से पांच वर्ष के बीच मृत बच्चों की संख्या को उसी वर्ष विशेष में पंजीकृत कुल जीवित जन्मे बच्चों की संख्या से भाग देकर भागफल को 1000 से गुणा किया जाता है।

$$\text{पांच वर्ष से कम आयु में मृत्यु दर} = \frac{\text{पांच वर्ष के कम आयु के बच्चों की संख्या} \times 1000}{\text{उसी वर्ष में जन्मे कुल बच्चों की संख्या}}$$

पांच वर्ष के कम आयु में मृत्यु दर के आंकड़ों के कई फायदे हैं। पहला यह विकास प्रक्रिया के किसी अन्य संकेत को नापने के बजाय उसके नतीजे का आंकलन करते हैं। दूसरा पांच वर्ष से कम आयु में मृत्युदर के आंकड़ों को अनेक प्रकार के संकेतों का परिणाम माना जाता है जैसे पोषण तथा माताओं को स्वास्थ्य संबंधी जानकारी, टीकाकरण का स्तर तथा मौखिक पुनर्जलीकरण चिकित्सा का उपयोग, मातृ एवं बाल स्वास्थ्य सेवाओं (प्रसव पूर्व देखरेख समेत) की उपलब्धता, परिवार की आय तथा भोजन की उपलब्धता तथा कुल मिलाकर बच्चे के वातावरण की सुरक्षा इत्यादि। ये सभी घटक उचित एवं सामान्य होते हैं तो पांच वर्ष से कम आयु में मृत्यु दर कम होती है। यह सूचकांक अधिकांश बच्चों और सम्पूर्ण समाज की स्वास्थ्य की स्थिति का उचित आंकलन करने में सक्षम है।

6. मातृ मृत्यु अनुपात (Maternal Mortality Ratio)

मातृ मृत्यु अनुपात का तात्पर्य शिशु जन्म के कारण हुई महिलाओं की मृत्युदर से है। इसकी गणना के लिए शिशु जन्म के कारण होने वाली मातृ मृत्यु की संख्या को कुल जीवित शिशु संख्या से भाग देकर 100,000 से गुणा कर दिया जाता है। प्रति 100,000 जीवित जन्मों पर प्रति महिला मृत्यु की वार्षिक संख्या मातृ मृत्यु अनुपात कहलाती है। इसके अन्तर्गत सिर्फ गर्भावस्था या प्रसव कराने के 42 दिनों के भीतर हुई महिला मृत्यु की गणना की जाती है।

कुपोषण, बार-बार गर्भधारण, असुरक्षित गर्भपात, यौन संचारित संक्रमण आदि मातृ मृत्यु के कारण हैं। इनसे भी बड़ा कारण प्रसव से पूर्व एवं प्रसव के दौरान पर्याप्त तथा कुशल चिकित्सकीय सुविधाओं की अनुपलब्धता है। मातृ मृत्यु अनुपात को कम करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रमों का व्यापक प्रचार प्रसार होना चाहिए। साथ-साथ कुशल चिकित्सकीय सेवाओं की उपलब्धता भी सुनिश्चित होनी चाहिए। जब तक मातृ मृत्यु तथा शिशु मृत्यु पर नियंत्रण प्राप्त नहीं होता तब तक राष्ट्र प्रगति के मार्ग पर प्रशस्त नहीं हो सकता।

7. मातृ मृत्यु दर (Maternal Mortality Rate)

प्रति वर्ष, प्रति लाख प्रजनन आयु की महिलाओं की संख्या पर मातृ मृत्यु की संख्या को मातृ मृत्यु दर कहते हैं। यह मातृ मृत्यु अनुपात से अलग है क्योंकि इससे प्रजनन के विषय में भी आंकड़े प्राप्त किए जाते हैं।

$$\text{मातृ मृत्यु दर} = \frac{\text{एक वर्ष में मातृ मृत्यु की संख्या}}{\text{वर्ष में कुल प्रजनन आयु की महिलाओं की संख्या}} \times 1000$$

वर्ष में कुल प्रजनन आयु की महिलाओं की संख्या

मातृ मृत्यु अनुपात एवं मातृ मृत्यु दर दोनों ही महिलाओं और लड़कियों के प्रति सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक असमानता को मापने के महत्वपूर्ण संकेतक हैं। उच्च मातृ मृत्यु दर के कारण मुख्यतः संक्रमण, रक्त वाहिनियों का टूटना, प्रसवाक्षेप (Eclampsia), बाधित जन्म, गर्भपात तथा एनीमिया हैं।

8. कुल प्रजनन दर (Total Fertility Rate)

कुल प्रजनन दर बच्चों की वह संख्या है जो किसी भी स्त्री के संपूर्ण प्रजनन काल में जीवित जन्म लेते हैं। प्रजननता से तात्पर्य महिलाओं द्वारा जीवित शिशुओं को जन्म देने की क्षमता से है। जो महिलाएं गर्भधारण कर लेने के बाद, समय आने पर शिशुओं को जन्म नहीं दे पाती या उससे पूर्व गर्भपात करा लेती हैं या किन्हीं कारणों से स्वतः गर्भपात हो जाता है, उसे प्रजननता में शामिल नहीं किया जाता। वस्तुतः प्रजननता का अर्थ समय विशेष में जन्म लेने वाले बच्चों की बारम्बारता से होता है।

प्रजनन दर जन्मों की वह संख्या है जो प्रति हजार मातृत्व काल वाली स्त्रियों के द्वारा होते हैं। सामान्य प्रजनन दर में उन स्त्रियों को भी (15-49) इस आयु वर्ग में शामिल कर लिया जाता है जो इस आयुकाल में बच्चों को जन्म नहीं देती हैं।

9. विशिष्ट आयु प्रजननशीलता दर (Specific age fertility rate)

यह किसी विशेष आयु वर्ग की महिलाओं के द्वारा जन्म लिए हुए बच्चों की संख्या को परिलक्षित करती है।

10. जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy)

किसी भी देश के निवासी की जन्म के समय जीवित रहने की आशा को जीवन प्रत्याशा कहते हैं। युनिसेफ के अनुसार जीवन प्रत्याशा “नवजाज शिशु के जीवित रहने की प्रत्याशा (वर्षों में) है”। किसी भी देश के लोगों की जीवन प्रत्याशा मुख्यतः मृत्यु दर और मृत्यु के समय की आयु पर निर्भर करती है। अन्य शब्दों में बाल मृत्युदर कम होने तथा मृत्यु के समय लोगों की आयु अधिक रहने पर जीवन प्रत्याशा अधिक होती है। अल्प जीवन प्रत्याशा वाले देशों में वृद्धों की संख्या कम होती है। इसके विपरीत कम जन्म दर तथा लम्बी जीवन प्रत्याशा वाले देशों में बच्चों की संख्या कम तथा वृद्धों की संख्या अधिक होती है। जीवन प्रत्याशा बढ़ने का सीधा निष्कर्ष निकलता है कि गत वर्षों के मुकाबले चिकित्सकीय सेवा एवं प्राथमिक देखभाल क्षेत्र में भी वृद्धि हुई है। बेहतर स्वास्थ्य सेवाओं के कारण मृत्यु दर घटती है जिससे जीवन प्रत्याशा बढ़ती है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान की पूर्ति करें।

a. अशोधित जन्म दर = _____ × 1000
उस वर्ष की कुल जनसंख्या

b. अशोधित मृत्यु दर = _____ × 1000
उस वर्ष की कुल जनसंख्या

c. नवजात शिशु मृत्यु दर = _____ × 1000
उस वर्ष में कुल जीवित जन्मे शिशुओं की संख्या

d. मातृ मृत्यु दर = $\frac{\text{एक वर्ष में मातृ मृत्यु संख्या}}{\text{उस वर्ष में प्रजनन आयु की महिलाओं की कुल संख्या}} \times \text{_____}$

e. जन्मदर एवं मृत्युदर के साथ अशोधित शब्द क्यों जोड़ा जाता है?

.....

f. मातृ मृत्यु अनुपात एवं मातृ मृत्यु दर में क्या अंतर है?

g. यदि शिशु मृत्यु दर में वृद्धि होती है तो जनसंख्या पर क्या प्रभाव पड़ता है?

आइए अब हम स्वास्थ्य नीति संकेतकों की चर्चा करें।

5.5 स्वास्थ्य नीति संकेतक

समुदाय एवं समाज की विशिष्ट स्वास्थ्य देखभाल के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए जो निर्णय, योजनाएं तथा कार्य किए जाते हैं उन्हें स्वास्थ्य नीतियों के रूप में उल्लेखित किया जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार एक स्पष्ट स्वास्थ्य नीति से कई आयाम प्राप्त किए जा सकते हैं। यह भविष्य की स्वास्थ्य स्थिति के लिए दृष्टि को परिभाषित करती है। यह प्राथमिकताओं और विभिन्न समूहों की रूपरेखा भी तय करती है।

स्वास्थ्य नीति संकेतकों में वह संकेतक सम्मिलित किए जाते हैं जिनसे राष्ट्र की स्वास्थ्य नीति के बारे में पता चलता है। इन संकेतकों से स्वास्थ्य नीति के गुणों एवं सामर्थ्य के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्वास्थ्य नीति के निम्नलिखित संकेतक जारी किए हैं:

1. सभी के स्वास्थ्य हेतु राजनैतिक प्रतिबद्धता
2. संसाधन आवंटन
3. सामुदायिक भागीदारी
4. संगठनात्मक ढांचा और प्रबन्धकीय प्रक्रिया

1. सभी के स्वास्थ्य हेतु राजनैतिक प्रतिबद्धता

स्वास्थ्य किसी भी राष्ट्र के विकास एवं उत्पादकता का मुख्य स्तम्भ है। यह वैयक्तिक, पारिवारिक एवं सामाजिक प्रसन्नता, उन्नति एवं विकास का आधार है। सभी के उत्तम स्वास्थ्य के लिए राजनैतिक प्रतिबद्धता आवश्यक है। स्वास्थ्य नीतियाँ सरकार द्वारा बनायी जाती हैं। स्वास्थ्य नीति के तत्व इसी संकेतक पर निर्भर करते हैं। इस संकेतक द्वारा पता चलता है कि सरकार द्वारा स्वास्थ्य को कितना महत्व दिया जा रहा है, सरकार की स्वास्थ्य संबंधित आवश्यकताओं में दिलचस्पी है या नहीं, सरकार द्वारा संचालित प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल का प्रबंधन उचित है या नहीं आदि। इस संकेतक से वास्तव में सरकार का तात्कालिक

स्वास्थ्य स्थिति के विषय में नजरिया दिखाई देता है। यदि स्वास्थ्य नीति में महिलाओं एवं बच्चों के स्वास्थ्य के लिए कोई व्यवस्था न हो तो उस स्वास्थ्य नीति को उचित नहीं माना जाता है। पोषण शोधकर्ताओं और अधिवक्ताओं के बीच यह आम सहमति है कि राजनैतिक प्रतिबद्धता की कमी के कारण ही विश्व में कुपोषण नियंत्रित नहीं किया जा रहा है। माना जाता है कि ज्यादातर देशों में सरकारें मौखिक एवं प्रतीकात्मक रूप से स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से लड़ने का वादा करती हैं परन्तु विशिष्ट योजनाओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त वित्तीय संसाधन आवंटित नहीं किए जाते हैं।

राजनीतिक प्रतिबद्धता को तीन आयामों के साथ मापा जा सकता है:

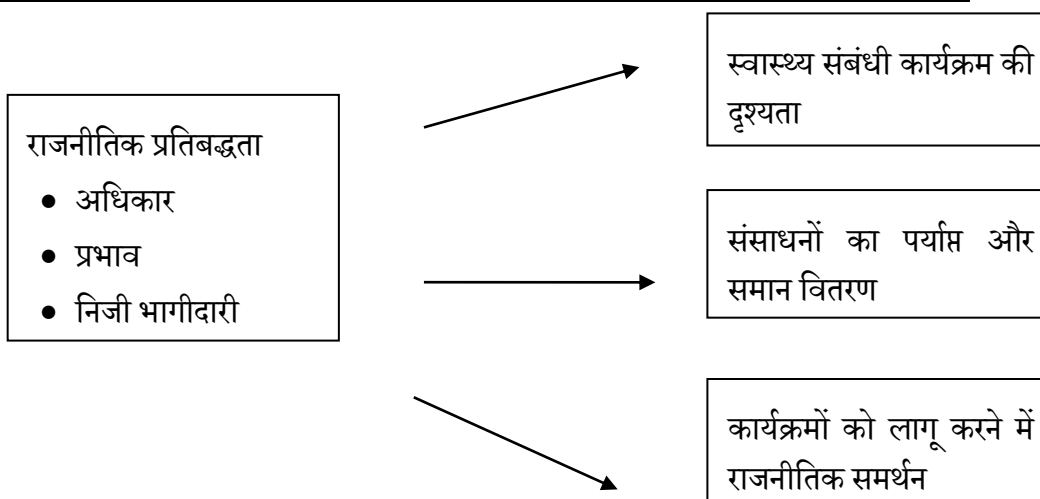
1. अभिव्यक्त प्रतिबद्धता
2. संस्थागत प्रतिबद्धता
3. बजटीय प्रतिबद्धता

अभिव्यक्त प्रतिबद्धता किसी प्रभावशाली राजनीतिक व्यक्ति द्वारा स्वास्थ्य की किसी समस्या के समर्थन में मौखिक घोषणाओं से संबंधित है। जैसे प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति द्वारा किसी राष्ट्रीय समारोह या पर्व पर स्वास्थ्य संबंधी घोषणा करना या स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों के विषय पर बात करना।

संस्थागत प्रतिबद्धता में स्वास्थ्य संबंधित मुद्दों के लिए संगठनात्मक ढांचे की बात आती है।

बजटीय प्रतिबद्धता में किसी विशेष मुद्दे के लिए संसाधनों का आवंटन निर्धारित होता है।

राजनीतिक प्रतिबद्धता वाले सूचक एक रिकॉर्ड की तरह हैं कि वास्तव में कोई घोषणा की गयी है या नहीं। सरकार द्वारा की गई घोषणा से पता चलता है कि सरकार स्वास्थ्य की तत्काल स्थिति एवं मुद्दों के विषय में चिन्तित है तथा उन्हें हल करने का प्रयास करेगी। राजनीतिक प्रतिबद्धता के लिए सबसे अधिक प्रासंगिक सूचक हैं; कानून लागू करना, योजनाओं एवं कार्यक्रमों का निर्माण तथा नियोजन, बजटीय आवंटन और व्यय। इन संकेतकों से प्रतिबद्धता के क्रियान्वयन का संकेत मिलता है।



चित्र 5.1: राजनीतिक प्रतिबद्धता के तत्व

राजनीतिक प्रतिबद्धता सरकार की इच्छा, किए गये कार्य व भविष्य में करने वाले कार्यों से संबंधित है। उचित स्वास्थ्य नीति इन्हीं तीन आयामों पर निर्भर करती है।

2. संसाधन आवंटन

सभी के लिए उत्तम स्वास्थ्य की रणनीति में संसाधनों का उचित आवंटन आवश्यक है। इन संसाधनों के आवंटन की स्थिति का पता बजट से चलता है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में कार्य करने की सरकार की इच्छा का पता इस बजट से चलता है। इसके अन्तर्गत स्वास्थ्य देखभाल के लिए धन तथा संसाधन वितरण से संबंधित फैसले आते हैं। संसाधन आवंटन सूचकांक के लिए यह देखना जरूरी होता है कि सम्पूर्ण स्वास्थ्य के लिए राष्ट्र के कुल कितने संसाधन आवंटित किए गये हैं। तत्पश्चात प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के लिए क्या-क्या संसाधन उपलब्ध कराये गये हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्र में संसाधन आवंटन का आंकलन इसलिए आवश्यक है क्योंकि इस क्षेत्र में मांग हमेशा आपूर्ति से ज्यादा होती है। इसलिए संसाधन के आवंटन में हमेशा तत्काल परेशानियों को प्राथमिकता दी जाती है। संसाधन के लिए यह भी देखना एवं समझना उचित रहता है कि अलग-अलग क्षेत्र, विभाग स्वास्थ्य को कैसे प्रभावित करते हैं।

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के लिए आवंटित संसाधनों के अनुपात को एक संकेतक के रूप में विचार करने हेतु यह देखा जाता है कि सामुदायिक स्तर पर प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के प्रावधान पर कितना और कैसे व्यय किया जाएगा। प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के

‘अल्माअटा सम्मेलन’ में निश्चित सभी आयामों एवं तत्वों को भी संज्ञान में लेना चाहिए परन्तु प्रत्येक देश में प्राथमिक देखभाल के क्रियान्वयन का तरीका अलग है इसलिए प्रत्येक राष्ट्र को प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के राष्ट्रीय संकेतक बनाने चाहिए।

स्वास्थ्य के लिए वित्त संसाधन आवंटन के संबंध में निम्नलिखित संकेतक सामान्य उपयोग के लिए प्रासंगिक हैं:

- सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GDP) का कितना प्रतिशत स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च किया जा रहा है।
- सकल राष्ट्रीय उत्पाद का कितना प्रतिशत स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं जैसे पोषण, शिक्षा, सामुदायिक विकास, जल आपूर्ति, स्वच्छता, आवासीय सुविधा एवं पोषण पर खर्च किया जा रहा है।
- कुल स्वास्थ्य संसाधनों का कितना प्रतिशत प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के लिए खर्च किया जा रहा है।

यह सभी संकेतक सरकार द्वारा वास्तव में किए गये खर्चों से निकालने चाहिए, न कि बजट की घोषणाओं एवं आवंटनों से। बजट आने के एक या दो साल तक शायद आंकड़े प्राप्त करना मुश्किल होता है, इसलिए बजट आवंटन से भी संकेत प्राप्त किए जा सकते हैं। आंकड़े प्राप्त करने के पश्चात् बाद में समीक्षा भी की जा सकती है। स्वास्थ्य नीति संकेतकों के विषय में जानकारी सरकारी विश्लेषणों, स्वास्थ्य मंत्रालय या मीडिया द्वारा किए गए विश्लेषणों से प्राप्त की जा सकती हैं।

स्वास्थ्य संसाधनों के वितरण की स्थिति

स्वास्थ्य नीति विश्लेषण के इस भाग के माध्यम से उन संकेतकों को देखा जाता है जो संसाधनों के वास्तविक वितरण के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। जैसे जनसंख्या का कितना प्रतिशत प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित है या कितने लोगों को स्वच्छ पीने का पानी नहीं मिलता है आदि। इस संकेतक से यह जानकारी प्राप्त होती है कि कितने लोगों को स्वास्थ्य सुविधा मिल रही है एवं कितनों को नहीं। इसमें आंकड़ों को भौगोलिक क्षेत्रों के अनुसार बांट कर देखा जाता है कि राजधानी, शहरों, कस्बों तथा गांवों में स्वास्थ्य सेवाओं की क्या स्थिति है। स्वास्थ्य संसाधनों में वित्त के वितरण की स्थिति, स्वास्थ्य के लिए श्रम शक्ति, सुविधाएं आदि संकेतक स्वास्थ्य उपलब्धियों के आंकलन में काम आते हैं। ऐसे कुछ संकेतक निम्नलिखित हैं:

- विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के बीच या राजधानी और देश के बाकी हिस्सों के बीच स्वास्थ्य पर प्रति व्यक्ति खर्च का वितरण।
- क्षेत्र या जिलेवार प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं के लिए कुल स्वास्थ्य संसाधनों के अनुपात का खर्च।
- देश के विभिन्न हिस्सों में जनसंख्या तथा अस्पताल में उपलब्ध बिस्तर, डॉक्टर और अन्य स्वास्थ्य कर्मियों का अनुपात जैसे एक चिकित्सक कितनी जनसंख्या के लिए नियुक्त है आदि।

3. सामुदायिक भागीदारी

राजनीतिक प्रतिबद्धता का एक सूचक स्वास्थ्य संबंधी निर्णय लेने में सामुदायिक भागीदारी है। इससे समुदायों की मांग एवं आवश्यकताओं का ज्ञान होता है। समुदायों को नीति का पूरा लाभ उठाने के लिए सक्रिय भागीदारी देनी चाहिए। समुदाय के नियंत्रण के भीतर और बाहर के सभी संसाधनों का प्रयोग परिवार एवं समुदाय के भीतर ऐसी प्रक्रियाओं के समर्थन में किया जाना चाहिए जो पोषण सुधारने में सहायक हों। ऐसी प्रक्रियाओं में संसाधनों के उपयोग के बारे में निर्णय लेना और उन निर्णयों के प्रभाव की निगरानी करना सम्मिलित है।

सामुदायिक भागीदारी एक संकेतक के रूप में निर्णय लेने के विकेन्द्रीकरण की मात्रा है। यह स्थानीय स्तर पर अधिक प्रभावी सुविधा प्रदान करता है तथा सुनिश्चित करता है कि इसको लागू करने से अच्छे परिणाम आएं। एकजुटता एवं समर्थन के बीच तालमेल से समुदाय और सरकार दोनों को सफल परिवर्तन प्राप्त होते हैं।

4. संगठनात्मक ढांचा और प्रबन्धकीय प्रक्रिया

अगर सरकार राजनीतिक रूप से प्रतिबद्ध है तो वह राष्ट्रीय स्वास्थ्य विकास के लिए एक उपयुक्त संगठनात्मक ढांचे और प्रबन्धकीय प्रक्रिया स्थापित करेगी। एक उपयुक्त संगठनात्मक ढांचा स्थापित किया गया है या नहीं इसका आंकलन कुछ प्रश्नों के उत्तर से किया जा सकता है। यह प्रश्न निम्नलिखित हैं:

- क्या स्वास्थ्य क्षेत्र का अन्य प्रासंगिक क्षेत्रों के साथ विभिन्न संगठनात्मक स्तर और विभागों के बीच प्रभावी संचार होता है?
- क्या ऐसा तन्त्र मौजूद है जो प्रभावी संचार करा सके तथा संयुक्त नीति योजना, नियोजन आदि को प्रभावी बना सके जैसे राष्ट्रीय या जिला स्वास्थ्य विकास कमेटी?

- क्या स्वास्थ्य मंत्रालय के सभी तकनीकी विभाग प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल कार्यक्रमों की सेवाओं का पूर्ण एकीकरण सुनिश्चित करने के लिए संयुक्त प्रबंधन में भाग लेते हैं?
- क्या पेशेवर समूह, मेडिकल एवं नर्सिंग कॉलेज एवं अन्य विश्वविद्यालय के विभाग पर्याप्त रूप से प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के विकास के लिए प्रासंगिक अनुसंधान और सेवा कार्यों में शामिल हैं?

निगरानी एवं मूल्यांकन और संबंधित संकेतक सहित राष्ट्रीय स्वास्थ्य के विकास के लिए उपयुक्त प्रबंधकीय प्रक्रिया का विकास एवं उपयोग अपने आप में राजनीतिक प्रतिबद्धता का सूचक है। सूचना समर्थन इस प्रबंधकीय प्रक्रिया के लिए आवश्यक है। यदि सूचना या जानकारी नहीं होगी तो समस्या को आसानी से छिपाया जा सकता है, फिर किसी निर्णय या कारवाई की भी आवश्यकता नहीं होती है। अत्यधिक सूचना संग्रह जो कि अप्रासंगिक हो और सार्थक रूप में प्रस्तुत न की जाये तो व्यर्थ तथा खतरनाक हो सकती है। इसलिए सभी के स्वास्थ्य के लिए प्रतिबद्धता के लिए स्वास्थ्य विभाग में हर चरण पर मजबूत संगठनात्मक ढांचा होना चाहिए जिसमें प्रबंधकीय प्रक्रिया पारदर्शी एवं सुलभ होनी चाहिए।

अभ्यास प्रश्न 2

1. स्वास्थ्य नीति में राजनीतिक प्रतिबद्धता का पता कैसे चलता है?

.....

2. समुदाय की भागीदारी से स्वास्थ्य नीति कैसे प्रभावित होती है?

.....

5.6 सामाजिक एवं आर्थिक संकेतक

यह संकेतक प्रत्यक्ष रूप से स्वास्थ्य के विकास के बारे में नहीं बताते हैं। सामाजिक और आर्थिक संकेतक स्वास्थ्य के क्षेत्र के बाहर प्रगति पर प्रभाव से संबंधित होते हैं। ये आम तौर पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य विकास रणनीतियों में शामिल विशिष्ट उद्देश्यों और लक्ष्यों के अनुरूप नहीं होते हैं। इसकी गणना या आंकड़ों को जानने के संदर्भ में माना जाता है कि इन संकेतकों से संबंधित आंकड़े राष्ट्रीय स्वास्थ्य अधिकारियों के बजाय अन्य राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों से प्राप्त करने चाहिए। इनका उपयोग एवं महत्व स्वास्थ्य की स्थिति की व्याख्या करने में तथा स्वास्थ्य देखभाल के प्रावधान को समझने में किया जाता है। दोनों संकेतक

इकाई के आगे के भागों में वर्णित किए जाएंगे। इसलिए इनके बारे में कुछ जानकारी एवं उनकी व्याख्या यहाँ आवश्यक है।

इस संकेतक श्रेणी में निम्नलिखित संकेतक आते हैं:

1. जनसंख्या वृद्धि दर
2. सकल घरेलू उत्पाद
3. आय का वितरण
4. कार्य का माहौल
5. वयस्क साक्षरता दर
6. आवासीय सुविधा
7. खाद्य पदार्थों की उपलब्धता

आइए प्रत्येक के विषय में विस्तारपूर्वक जानें।

1. जनसंख्या वृद्धि दर

जनसांख्यिकीय संकेतक जैसे जनसंख्या के आकार में परिवर्तन, जनसंख्या की आयु भिन्नता एवं लिंग संरचना आदि न केवल संकेतकों का संकलन करने के लिए एक आधार है बल्कि यह स्वास्थ्य तथा अन्य सभी क्षेत्रों में किसी भी प्रकार की योजना बनाने के लिए महत्वपूर्ण हैं। जनसंख्या वृद्धि दर जानने के लिए सांख्यिकीय आंकड़े जैसे जन्म, मृत्यु एवं प्राकृतिक वृद्धि दरों का उपयोग किया जाता है। अशोधित जन्म दर, अशोधित मृत्यु दर तथा अन्य मृत्यु दरें भी स्वास्थ्य की स्थिति जानने के लिए उपयोगी संकेतक हैं। इन संकेतकों के विषय में आप इसी इकाई के पिछले भाग में पढ़ चुके हैं।

जनसंख्या में वार्षिक वृद्धि, जन्म तथा मृत्यु दर पर निर्भर करती है। यदि जन्म दर अधिक है तो जनसंख्या में वृद्धि होती है। जनसंख्या वृद्धि, सामाजिक समृद्धि और उन्नति का सूचक होती है क्योंकि इससे संसाधन के आधार में भी वृद्धि होती है। किसी अर्थव्यवस्था में जनसंख्या वृद्धि का प्रति व्यक्ति आय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जनसंख्या बढ़ने के कारण एक सीमा तक आय बढ़ती है। परन्तु इसके पश्चात् आय कम होनी आरंभ हो जाती है। जब तक जनसंख्या वृद्धि दर राष्ट्रीय आय में होने वाली वृद्धि दर से कम होती है, प्रति व्यक्ति आय बढ़ती है। परन्तु जैसे ही जनसंख्या वृद्धि दर राष्ट्रीय आय की वृद्धि से अधिक हो जाती है, प्रति व्यक्ति आय कम होने लगती है। इसी प्रकार जनसंख्या की वृद्धि दर प्रति व्यक्ति आय का एक महत्वपूर्ण निर्धारक बन जाती है। जनसंख्या की वृद्धि के कारण अविकसित एवं विकासशील देशों द्वारा अपनाये गये विकास कार्यक्रम निर्धनता की समस्या का समाधान करने में असफल हो जाते

हैं। जनसंख्या वृद्धि दर का सीधा प्रभाव बेरोजगारी, खाद्य समस्या, निर्धनता आदि के रूप में दिखाई देता है। इसलिए इसे महत्वपूर्ण सामाजिक एवं आर्थिक संकेतक का घटक माना गया है।

2. सकल घरेलू उत्पाद

यह अर्थव्यवस्था के आर्थिक प्रदर्शन का एक बुनियादी माप है। यह एक वर्ष में एक राष्ट्र की सीमा के भीतर सभी अंतिम माल और सेवाओं का बाजार मूल्य है। सकल घरेलू उत्पाद के मापन और निर्धारण का सबसे आम तरीका व्यय विधि है।

सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product) = (उपभोग+सकल निवेश+सरकारी खर्च+निर्यात-आयात)

प्रति व्यक्ति जी.डी.पी. की गणना करने के लिए कुल जी.डी.पी. को कुल जनसंख्या से भाग दिया जाता है।

$$\text{प्रति व्यक्ति जी.डी.पी.} = \frac{\text{कुल जी.डी.पी.}}{\text{कुल जनसंख्या}}$$

इससे जनसंख्या वृद्धि पर भी विचार होता है। जी.डी.पी. में वृद्धि दर के आधार पर आर्थिक विकास की दर को मापा जा सकता है। प्रति व्यक्ति जी.डी.पी. को किसी भी देश के जीवन स्तर और अर्थव्यवस्था की समृद्धि का सूचक माना जाता है।

3. आय का वितरण

आय का समान वितरण देश के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक है। आय का वितरण जानने के लिए लोगों को उनकी आय के अनुसार पांच या दस वर्गों में बांट लिया जाता है। इसके पश्चात् यह अनुमान लगाया जाता है कि राष्ट्रीय आय का कितना भाग किस वर्ग को प्राप्त हो रहा है। विश्व के अधिकतर अल्पविकसित देशों में औसतन 80 प्रतिशत जनसंख्या को राष्ट्रीय आय का केवल 40-50 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। आय के असमान वितरण से अमीरों एवं गरीबों की आय में बड़ा अन्तर पाया जाता है। आय की असमानता आर्थिक विकास में बाधा डालती है। इससे जनसंख्या में बेरोजगारी तथा असुरक्षा की भावना उत्पन्न होती है। इसके लिए प्रति व्यक्ति आय को सांकेतिक रूप में प्रयोग किया जाता है। प्रति व्यक्ति आय का अनुमान राष्ट्रीय आय को जनसंख्या से भाग देने पर लगाया जा सकता है।

$$\text{प्रति व्यक्ति आय} = \frac{\text{राष्ट्रीय आय}}{\text{कुल जनसंख्या}}$$

सामाजिक सूचक

सामाजिक सूचकों को मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताओं के रूप में बताया गया है। मुख्य सामाजिक सूचकों में जीवन प्रत्याशा, ऊर्जा अंतर्ग्रहण, शिशु मृत्यु दर, विद्यालयों में प्राथमिक कक्षाओं में भर्ती बच्चों की संख्या, आवास, पोषण, स्वास्थ्य तथा ऐसी ही अन्य वे सब चीजें जो मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं से संबंध रखती हैं, सम्मिलित हैं।

प्रति व्यक्ति आय में होने वाली वृद्धि से यह आवश्यक नहीं है कि व्यक्ति का जीवन स्तर उच्च हो जाए क्योंकि हो सकता है कि राष्ट्रीय आय का बँटवारा उचित रूप से न हो। ऐसी स्थिति में धनी व्यक्ति अधिक धनी तथा निर्धन व्यक्ति अधिक निर्धन होते जाते हैं। यदि किसी देश में प्रति व्यक्ति आय अपेक्षाकृत तीव्र गति से बढ़ रही है तो यह माना जाता है कि उस देश आर्थिक विकास की दर भी अधिक है।

4. कार्य का माहौल (रोजगार से संबंधित)

इस संदर्भ में प्रयुक्त होने वाले संकेतक काम की उपलब्धता, बेरोजगारी का स्तर, अल्प रोजगार, श्रम शक्ति में महिलाओं का प्रतिशत तथा लाभकारी रोजगार रोकने वाली विकलांगता का प्रसार हैं। जिन देशों में बड़े प्रतिशत में जनसंख्या स्वरोजगार या अनौपचारिक गैर भुगतान क्षेत्र में कार्यरत है, वहां यह संकेतक उचित आंकड़े प्रदान नहीं करते हैं। इसी संदर्भ में कहीं-कहीं निर्भरता अनुपात का संकेतक भी उपयोगी रहता है। जनसंख्या की आयु संरचना तथा आश्रित व्यक्तियों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इसकी गणना करने के लिए प्रति 100 व्यक्तियों (आयु 15-64 वर्ष) पर आश्रित जनसंख्या की गिनती की जाती है। यदि जनसंख्या का बड़ा भाग निर्भरशील या आश्रित है तो इससे देश का सामाजिक-आर्थिक विकास नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है क्योंकि राष्ट्रीय आय का एक बड़ा भाग इसकी सुरक्षा एवं विकास में नियोजित हो जाता है। आश्रित जनसंख्या में 15 वर्ष से कम आयु के बच्चे तथा 64 वर्ष से अधिक के वृद्ध आते हैं। 15-64 आयु वर्ग के अंतर्गत आने वाली जनसंख्या आर्थिक रूप से उत्पादक होती है। इसे सक्रिय जनसंख्या कहते हैं।

5. व्यस्क साक्षरता दर

साक्षरता का अर्थ व्यक्ति के पढ़ने तथा लिखने की क्षमता से है। 15 वर्ष या इससे अधिक आयु वाले साक्षर व्यक्तियों का प्रतिशत साक्षरता दर कहलाता है।

$$\text{साक्षरता दर प्रतिशत} = \frac{\text{शिक्षित जनसंख्या}}{\text{कुल जनसंख्या}} \times 100$$

साक्षरता दर के आंकड़े जनगणना से प्राप्त होते हैं। यह सूचकांक सामाजिक-आर्थिक स्थिति का महत्वपूर्ण द्योतक होता है। महिलाओं का साक्षर होना अधिक आवश्यक तथा लाभकारी है क्योंकि महिलाएं ही घर में स्वास्थ्य की देखभाल करती हैं। ऐसी साक्षरता को स्वास्थ्य साक्षरता कहा जाता है। स्वास्थ्य साक्षरता का अर्थ स्वास्थ्य संबंधित तथ्यों को पढ़ना, समझना और उसका उपयोग करना है। इससे लोग अपनी बीमारियों के बारे में अच्छी तरह से जान सकेंगे और अपनी देखभाल स्वयं अच्छी प्रकार कर सकेंगे।

एक साक्षरता संकेतक का प्रयोग शिक्षण संस्थानों में नामांकित छात्रों की संख्या जानकर भी किया जा सकता है। इस संकेतक को 5-15 वर्ष की आयु की कुल जनसंख्या के अनुमान के प्रतिशत के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। परन्तु इस संकेतक से उपस्थिति का सही-सही पता नहीं चल पाता है। वास्तविक स्थिति से पता चलता है कि लड़कियाँ स्कूल नहीं जाती हैं। स्कूल से अनुपस्थित बच्चे में बीमारी एक अप्रत्यक्ष सूचकांक है। परन्तु कुछ देशों में जिसमें भारत भी सम्मिलित है, अनुपस्थिति का अर्थ बाल मजदूरी, गृह कार्यों में सहभागिता, छोटे भाई-बहनों का पालन-पोषण आदि हो सकता है। इस क्षेत्र में शिक्षा की गुणवत्ता जानने के लिए छात्र-शिक्षक अनुपात तथा प्रति छात्र व्यय जैसे संकेतकों का प्रयोग किया जाता है।

6. आवासीय सुविधा

उचित आवासीय सुविधा का संकेतक एक कमरे में व्यक्तियों की संख्या से जाना जाता है। आवासीय संकेतकों में आवास का प्रकार, आवास का आकार, मौसम से बचाव की क्षमता, जानवरों से बचाव तथा स्वच्छता संबंधी सुविधाओं की उपलब्धता को ध्यान में रखकर आंकड़े एकत्रित करने चाहिए।

7. खाद्य पदार्थों की उपलब्धता

आप इस तथ्य से भली-भाँति परिचित हैं कि खाद्य एवं पोषण का स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव पड़ता है। खाद्य पदार्थों की उपलब्धता जानने के लिए प्रति व्यक्ति कैलोरी उपलब्धता की गणना की जाती है। इस संकेतक की गणना खाद्य बैलेंस शीट से की जाती है। इसके अंतर्गत स्थानीय खाद्य उत्पादन, आयात-निर्यात, अपव्यय तथा गैर-मानव उपयोग आदि सभी आयामों का हिसाब रखा जाता है। यह खाद्य उपलब्धता जानने का सबसे अच्छा संकेतक है। खाद्य उपलब्धता सम्बंधी अन्य जानकारी आहार उपभोग सर्वेक्षण से प्राप्त की जा सकती है। प्रति व्यक्ति कैलोरी उपलब्धता से तात्पर्य उपभोग के लिए उपलब्ध भोजन की मात्रा है। इसे मापने के लिए कुल उपलब्ध खाद्य आपूर्ति को कुल जनसंख्या से विभाजित किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न 3

1. निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए।

a. सकल घरेलू उत्पाद

.....

b. प्रति व्यक्ति आय

.....

c. साक्षरता

.....

d. स्वास्थ्य साक्षरता

.....

e. प्रति व्यक्ति कैलोरी उपलब्धता

.....

5.7 स्वास्थ्य देखभाल के संकेतक

स्वास्थ्य की उचित देखभाल के लिए निम्नलिखित संकेतकों का प्रयोग किया जाता है:

1. उपलब्धता
2. पहुंच की सुलभता
3. सेवाओं का उपयोग
4. देखभाल की गुणवत्ता

1. उपलब्धता

इस भाग में हम स्वास्थ्य देखभाल के लिए उपलब्ध संसाधनों के विषय में बात करेंगे। उपलब्धता से तात्पर्य समयानुसार उचित स्वास्थ्य सुविधा मिलना है। इसके लिए निम्नलिखित संकेतक प्रयोग किए जा सकते हैं:

- एक प्रशासनिक इकाई की जनसंख्या एवं उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाओं के बीच अनुपात (जैसे एक जिले में कितने स्वास्थ्य केन्द्र हैं)।
- एक प्रशासनिक इकाई की जनसंख्या एवं उपलब्ध स्वास्थ्य सेवा कर्मियों के बीच अनुपात।

स्वास्थ्य सेवा उपलब्धता की समस्या ग्रामीण इलाकों में ज्यादा है। दूर-दराज के इलाकों में जहां जनसंख्या कम होती है, चार-पांच गांव के लिए एक स्वास्थ्य केन्द्र बनाया जाता है। वहां पर स्वास्थ्य कर्मियों की संख्या भी कम होती है। इसलिए स्वास्थ्य देखभाल संकेतक के रूप में उपलब्धता में दोनों ही घटकों, स्वास्थ्य केन्द्र तथा स्वास्थ्य कर्मियों की ही महत्ता है। स्वास्थ्य केन्द्र उपलब्ध होने पर भी यदि स्वास्थ्य कर्मियों वहां तैनात नहीं हैं तो उसे उपलब्धता में नहीं गिना जा सकता। स्वास्थ्य कर्मियों में भी चिकित्सक, सह-चिकित्सक, नर्स आदि की उपलब्धता आवश्यक है।

2. पहुंच की सुलभता

इस घटक से तात्पर्य स्वास्थ्य सेवा तक पहुंच की सुलभता है अर्थात् क्या स्वास्थ्य सेवा केन्द्र तक सुलभता से पहुंचा जा सकता है? सुलभता तय करने की हर देश की अपनी कसौटी है। जैसे एक घण्टे पैदल दूरी पर, या आधा घण्टा बैलगाड़ी में, या पांच किलोमीटर के दायरे में आदि। प्रसव की स्थिति में ये परिभाषाएं और हो सकती हैं क्योंकि प्रसव के लिए प्रसूति का घर अस्पताल के समीप होना चाहिए। इसके लिए निम्न संकेतक प्रयोग में लाये जा सकते हैं:

किसी सुविधा या सेवा (स्वास्थ्य) का प्रयोग करने वाली जनसंख्या का अनुपात (जब दूरी, समय की समस्या हो)।

पैसा, समय, दूरी आदि के कारण भी सुविधा का उचित उपयोग नहीं हो पाता है। कभी-कभी जाति भेदभाव एवं भाषा भेद-भाव के कारण भी सुविधा का उपयोग नहीं हो पाता है। इसलिए इस संकेतक के प्रयोग में उपरोक्त इन सब बातों का ध्यान रखना चाहिए।

3. सेवाओं का उपयोग

स्वास्थ्य देखभाल के इस घटक का अर्थ है कि उपलब्ध कराई गयी सेवाओं का उपयोग कैसे हुआ। इस घटक से किसी स्वास्थ्य सेवा की वास्तविक व्यापकता का पता चलता है। जैसे टीकाकरण की सुविधा सभी बच्चों को मुफ्त प्रदान की जाती है। यह सुविधा उपलब्ध एवं सुलभ होने के बावजूद बहुत से व्यक्ति, परिवार, समुदाय इसका प्रयोग नहीं करते। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र या प्रसूति अस्पताल निकट होने के बावजूद उनका प्रयोग उचित नहीं समझा जाता। वास्तविक व्यापकता का अनुमान लगाने के लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि किस स्तर की देखभाल को सम्मिलित किया जाएगा। कभी-कभी सुविधाएं उपलब्ध भी होती हैं तथा समुदाय के लोग उन्हें प्रयोग भी करना चाहते हैं परन्तु सुविधा की गुणवत्ता उचित न होने तथा दवाइयों की अनुपलब्धता के कारण लोग सुविधा का उपयोग नहीं करते हैं। सुविधा का उपयोग न करने का एक बड़ा कारण समय की कमी हो सकता है। जैसे एक्स-रे करने का

समय दिन में है और दिन में ही लोग अपने काम पर जाने के कारण व्यस्त होते हैं तथा उस सुविधा का प्रयोग नहीं कर पाते।

इसको जानने के लिए निम्नलिखित संकेतकों का प्रयोग किया जाता है:

प्रदत्त सुविधा (टीकाकरण, प्रसव पूर्ण जांच) का जनसंख्या द्वारा उपयोग का अनुपात: इसके लिए जनसंख्या के जिस भाग ने सुविधा का प्रयोग किया हो, उसे कुल जनसंख्या से तुलना कर जानकारी प्राप्त की जाती है। इससे जनसंख्या का वह भाग जो सुविधा का उपयोग नहीं करता, के बारे में जानकारी मिल जाती है। जो लोग सुविधा का उपयोग नहीं करते, उनकी सुविधा न उपयोग करने के कारणों की जानकारी सामुदायिक सर्वेक्षणों से प्राप्त करी जा सकती है।

4. देखभाल की गुणवत्ता

वैसे तो उपयोगिता का संकेतक गुणवत्ता के संकेतक के रूप में ही कार्य करता है। स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं के उपयोग में गुणवत्ता की समस्या परिलक्षित होती है। कुछ सेवाओं का कम, कुछ का ज्यादा एवं कुछ सेवाओं का दुरुपयोग किया जाता है। स्वास्थ्य देखभाल की गुणवत्ता में सुधार तथा चिकित्सा सुविधा की त्रुटियों को कम करना स्वास्थ्य देखभाल तन्त्र की प्राथमिकता होनी चाहिए। अच्छी स्वास्थ्य देखभाल के लिए तकनीकी रूप से प्रभावी संचार, साझा निर्णय एवं सांस्कृतिक संवेदनशीलता होनी चाहिए। स्वास्थ्य देखभाल में मुख्य गुणवत्ता मरीज की सुरक्षा एवं देखभाल की प्रभावशीलता के रूप में होती है। गुणवत्ता संबंधी समस्याएं वैसे तो हर जगह होती हैं परन्तु यह कम आय वाले देशों में अधिक प्रचलित होती हैं। गुणवत्ता की समस्या ज्यादातर पर्याप्त प्रबन्धन के अभाव, कार्मिकों की आपूर्ति तथा प्रशिक्षण में अपर्याप्तता, कमजोर निगरानी प्रणाली तथा रोगियों एवं परिवारों के पास उचित शक्ति न होने के कारण होती है।

गुणवत्ता मापने के लिए निम्नलिखित संकेतक प्रयोग किए जा सकते हैं:

1. संरचना: संरचना से तात्पर्य स्थापना की विशेषताओं से है जिसमें स्वास्थ्य देखभाल होती है। इसके अन्तर्गत भौतिक संसाधन (उपकरण सुविधा), मानव संसाधन (कार्मिकों की संख्या और उनकी योग्यता) एवं संगठनात्मक संरचना (चिकित्सा कर्मचारी संगठन) आदि तत्व आते हैं।

2. प्रक्रिया: प्रक्रिया से तात्पर्य है कि स्वास्थ्य देखभाल प्रक्रिया में वास्तव में क्या किया जाता है। इसके अन्तर्गत देखभाल के दौरान रोगी की गतिविधि, चिकित्सक की निदान एवं उपचार की गतिविधियां सम्मिलित हैं।

3. परिणाम: यह अन्तिम घटक है। यह रोगी एवं जनसंख्या पर स्वास्थ्य देखभाल के तरीकों का प्रभाव दिखाता है। इसके अन्तर्गत रोगी के स्वास्थ्य की स्थिति (मृत्यु, शारीरिक परेशानी, अन्य बीमारियाँ) आदि सम्मिलित हैं।

मोटे तौर पर यदि स्वास्थ्य देखभाल आवश्यकताओं के अनुसार ठीक है तथा किसी को कोई नुकसान नहीं पहुँच रहा है तो स्वास्थ्य देखभाल की गुणवत्ता अच्छी है। अच्छी गुणवत्ता के अंतर्गत समय से उपचार, अनावश्यक खर्च से बचाव (सिर्फ आवश्यक चिकित्सकीय परीक्षण एवं प्रक्रिया) एवं निष्पक्षता भी आते हैं।

अभ्यास प्रश्न 4

1. स्वास्थ्य देखभाल की गुणवत्ता मापने के लिए कौन से संकेतक प्रयोग किए जाते हैं?

.....

2. बहुविकल्पीय प्रश्न

a. स्वास्थ्य देखभाल के संकेतक हैं:

1. मातृ मृत्यु दर

2. उपलब्धता

3. जल एवं स्वच्छता

4. बाल मृत्यु दर

b. सेवा उपलब्धता में सम्मिलित नहीं है:

1. स्वास्थ्य केन्द्र

2. रेफरेल केन्द्र

3. चिकित्सक

4. खाद्य सुरक्षा

c. स्वास्थ्य देखभाल तक पहुँच की सुलभता के अवयव नहीं हैं:

1. अस्पताल की दूरी

2. अस्पताल तक पहुँच के साधन

3. चिकित्सक की नियुक्ति

4. उपरोक्त में से कोई नहीं

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर के पश्चात् आइए प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की व्यापकता के बारे में जानें।

5.8 प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की व्यापकता

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल का अन्तिम लक्ष्य सभी के लिए बेहतर स्वास्थ्य है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पांच प्रमुख तत्वों की पहचान की है जो निम्नलिखित हैं:

- स्वास्थ्य क्षेत्र में सामाजिक असमानताओं एवं बहिष्कार को कम करना (सार्वभौमिक व्यापकता सुधार)
- लोगों की आवश्यकताओं और अपेक्षाओं के अनुसार स्वास्थ्य सेवाओं का आयोजन (सेवा वितरण सुधार)
- स्वास्थ्य को अन्य सभी क्षेत्रों में एकीकृत करना (जन नीतिगत सुधार)
- सहयोगी मंडल को लक्षित कर नीति वार्ता (नेतृत्व सुधार)
- समुदाय की सहभागिता

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की व्यापकता वास्तव में सार्थक तब मानी जाती है, जब वह राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति से संबंधित सभी सेवाएं प्रदान करे। यहां हम 'अल्माअटा सम्मेलन' में तय किए गये प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के सभी घटकों से संबंधित संकेतकों के विषय में चर्चा करेंगे।

इस संदर्भ में निम्नलिखित संकेतक सम्मिलित हैं:

1. स्वास्थ्य से संबंधित जानकारी एवं शिक्षा
2. जल एवं स्वच्छता
3. मातृत्व एवं शिशु स्वास्थ्य
4. टीकाकरण
5. स्थानिक बीमारियों की रोकथाम एवं नियंत्रण
6. आम बीमारियों एवं चोटों का उपचार
7. जरूरी दवाओं का प्रबन्ध
8. रेफरल प्रणाली द्वारा कवरेज
9. जन बल (Man power)

आइए प्रत्येक संकेतक के बारे में चर्चा करें।

1. स्वास्थ्य से संबंधित जानकारी एवं शिक्षा

समुदाय के लोगों के स्वास्थ्य में सुधार के लिए स्वास्थ्य से संबंधित जानकारी एवं शिक्षा प्रदान करना अत्यन्त आवश्यक है। इससे लोगों के व्यवहार एवं अभिव्यक्ति में बदलाव आता है। इस क्षेत्र में सफलता के लिए जनसंख्या के ज्यादा से ज्यादा लोगों को तत्काल चल रही बीमारियों एवं उनके रोकथाम एवं उपचार की विधियों का सही ज्ञान होना चाहिए। स्वास्थ्य संबंधी इस ज्ञान को **स्वास्थ्य साक्षरता** कहा जाता है। इस विषय पर हम साक्षरता के उपशीर्षक में भी बात कर चुके हैं। स्वास्थ्य साक्षरता के संबंध में कोई संकेतक नहीं बनाया गया है, परन्तु इसके लिए जानकारी का प्रसार प्रभावशील तरीके से किया जाना चाहिए। इसके लिए जनसंपर्क माध्यमों (अखबार, रेडियो प्रोग्राम, टेलीविजन, चलचित्र आदि) द्वारा स्वास्थ्य संबंधी जानकारी प्रदान करनी चाहिए। इसके साथ यह देखना भी आवश्यक है कि इन माध्यमों से किस सीमा तक स्वास्थ्य जानकारी प्रचारित की जा रही है। इसके लिए इन माध्यमों से कार्यक्रम की अवधि के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इसके साथ-साथ यह भी जानना उचित रहता है कि जनसंख्या के कितने भाग या अनुपात के पास रेडियो, टेलीविजन या अखबार की सुविधा है। विकासशील देशों में रेडियो स्वास्थ्य ज्ञान को प्रसारित करने का अच्छा माध्यम है। स्वास्थ्य साक्षरता के विषय में जानने का सबसे अच्छा तरीका समुदाय सर्वेक्षण है। समुदाय सर्वेक्षणों से आसानी से ज्ञात हो सकता है कि समुदाय के लोगों को स्वास्थ्य संबंधी कितनी जानकारी है एवं क्या-क्या अभाव हैं जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

2. जल एवं स्वच्छता

इस संदर्भ के संकेतक वह हैं जो जल और स्वच्छता तक पहुंच की सुलभता को दर्शाते हैं। इसके अन्तर्गत विभिन्न संकेतक जैसे कितने प्रतिशत घरों में पीने का पानी एवं आसपास का वातावरण साफ सुथरा रखने के लिए पानी की उचित मात्रा उपलब्ध है, घरों में पानी के स्रोत की उपलब्धता जैसे पानी कहां से आता है, घर में सरकारी नल, हैन्डपम्प आदि है या नहीं, घरों में नालियों एवं पानी की निकासी का उचित प्रबन्ध भी इस संदर्भ में महत्वपूर्ण संकेतक हैं। जिन घरों में पानी का कोई साधन नहीं है, उन घरों में पानी का साधन घर से कितनी दूरी पर है, संकेतक उपयोगी रहता है। सामान्यतः पानी का साधन जैसे नल, हैन्डपम्प, कुंआ, नदी, तालाब आदि घर से 15 मिनट चल कर जाने की दूरी के अन्दर होना चाहिए।

स्वच्छता के लिए अपशिष्ट निपटान का तरीका भी एक अच्छा संकेतक है। इसे जानने के लिए जनसंख्या का वह अनुपात जो सुरक्षित अपशिष्ट निपटान का प्रयोग करता है, की गणना की

जाती है। इसके अंतर्गत मल त्याग, कूड़े-कचरे की व्यवस्था, जल निकासी, शहर में निकासी आदि तत्व आते हैं।

3. मातृत्व एवं शिशु स्वास्थ्य

जन्म दर एवं प्रजनन दर, जन्म अन्तराल, मां की आयु आदि प्रजनन स्वास्थ्य के संकेतक हैं। प्रजनन स्वास्थ्य से तात्पर्य न सिर्फ प्रजनन प्रणाली का रोग मुक्त होना है, बल्कि व्यक्ति के प्रजनन संबंधित शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक स्वास्थ्य का भी ध्यान रखना है। प्रजनन स्वास्थ्य कई बातों पर निर्भर करता है, जैसे प्रजनन स्वास्थ्य के विषय में चेतना, जीवन स्तर एवं जीवन शैली, लिंग समानता एवं आर्थिक विकास का स्तर इत्यादि। सामान्य स्वास्थ्य के स्तर को बेहतर बनाने के लिए भी उच्च प्रजनन स्वास्थ्य का होना आवश्यक है। मातृत्व एवं शिशु स्वास्थ्य से संबंधित आंकड़े प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित संकेतक प्रयोग किए जाते हैं:

1. मातृ मृत्युदर
2. प्रसव पूर्व देखभाल प्राप्त महिलाओं का प्रतिशत
3. प्रशिक्षित कर्मियों द्वारा प्रसव कराने का प्रतिशत
4. प्रसवोपरान्त देखभाल प्राप्त महिलाओं का प्रतिशत
5. परिवार नियोजन के लिए आवश्यक जानकारी, मार्गदर्शन एवं आपूर्ति प्राप्त परिवारों का प्रतिशत
6. परिवार नियोजन के तरीके अपनाने वाली जनसंख्या का प्रतिशत
7. शिशु मृत्यु दर
8. बाल मृत्यु दर
9. पांच साल से कम आयु के बच्चों में मृत्यु दर
10. बीमार बच्चों का प्रतिशत

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के अन्तर्गत मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य महत्वपूर्ण अवयव हैं। इसकी गुणवत्ता मातृ एवं शिशु मृत्यु दर के आंकड़ों से कुछ सीमा तक दिखाई देती है।

4. टीकाकरण

बच्चों के शरीर में रोग प्रतिरक्षण हेतु टीके लगाए जाते हैं जिससे बच्चों के शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है। टीकाकरण से बच्चों में कई संक्रामक बीमारियों की रोकथाम होती है तथा समुदाय के स्वास्थ्य स्तर में सुधार होता है। इसके लिए बचपन के प्रमुख

संक्रामक रोगों के खिलाफ प्रतिरक्षित बच्चों का प्रतिशत संकेतक के रूप में प्रयोग किया जाता है। जब प्रतिरक्षित बच्चों की संख्या कम होती है तो इस संकेतक का स्वरूप बदल कर गैर प्रतिरक्षित बच्चों का प्रतिशत कर दिया जाता है। प्रतिरक्षण गतिविधि का प्राथमिक उद्देश्य रुग्णता एवं मृत्यु दर में कमी लाना है। इसके लिए पूर्ण रूप से प्रतिरक्षित बच्चों का प्रतिशत सूचकांक भी अध्ययन किया जा सकता है।

5. स्थानिक बीमारियों की रोकथाम व नियंत्रण

उत्तम स्वास्थ्य के लिए स्थानिक बीमारियों एवं रोगों का नियंत्रण आवश्यक है। इसके लिए वह संकेतक अच्छा माना जाता है जो नियंत्रण की सीमा को ज्ञात कर सके। इसके लिए निम्नलिखित संकेतक प्रयोग किए जाते हैं:

1. समुदाय में कौन-कौन से स्थानिक रोग फैले हैं?
2. स्थानिक रोग का प्रसार क्या है?
3. स्थानिक रोग से पीड़ित जनसंख्या का प्रतिशत।
4. स्थानिक रोग से पीड़ित जनसंख्या में से उपचारित जनसंख्या का प्रतिशत।
5. नियंत्रण के लिए बनाये गये कार्यक्रमों की सूची।
6. नियंत्रण वाले कार्यक्रमों की सफलता का प्रतिशत।
7. स्थानिक रोग का प्रसार जनस्वास्थ्य समस्या है या नहीं।

स्थानिक रोगों के नियंत्रण में सामुदायिक भागीदारी को महत्वपूर्ण तत्व माना गया है।

6. आम बीमारियों व चोटों का उपचार

यह भी प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल का एक जरूरी घटक है। इस घटक के अन्तर्गत यह जानना जरूरी हो जाता है कि क्या आम बीमारियों एवं चोटों में भी व्यक्ति को भी उचित उपचार मिल जाता है? जैसे बच्चों में अतिसार का उपचार कैसे एवं कितनी गम्भीरता से किया जाता है, क्या उन्हें जीवन रक्षक घोल दिया जाता है आदि। इसके अंतर्गत चोटों के लिए संकेतक जैसे चोट लगने के एक घण्टे के भीतर अस्पताल आने वाले लोगों का प्रतिशत भी सम्मिलित है।

7. जरूरी दवाओं का प्रबन्ध

‘अल्माअटा’ घोषणा में प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के आठ आवश्यक घटकों को रेखांकित किया गया है और आवश्यक दवाओं का प्रावधान उनमें से एक है। दवाएं स्वास्थ्य देखभाल का अभिन्न हिस्सा हैं। आधुनिक स्वास्थ्य देखभाल आवश्यक दवाओं की उपलब्धता के

बिना असंभव है। दवाएं न सिर्फ जान बचाती हैं और स्वास्थ्य को बढ़ावा देती हैं अपितु बहुतासी महामारियों और रोगों की रोकथाम भी करती हैं। दवाएं निःसन्देह बीमारी और बीमारी से लड़ने के लिए आवश्यक मानव जाति के हथियारों में से एक हैं। दवाओं तक सुलभ पहुंच भी हर व्यक्ति का मौलिक अधिकार है।

जरूरी दवाओं के प्रबन्ध के लिए निम्नलिखित संकेतकों का प्रयोग किया जाता है:

1. जरूरी दवाओं की सूची
2. सूची के अनुसार दवाओं की उपलब्धता

आवश्यक दवाएं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर वर्ष भर उपलब्ध होनी चाहिए। समय-समय पर सर्वेक्षण से पता चल सकता है कि कौन सी जरूरी दवाएं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर उपलब्ध हैं और कौन सी नहीं। ऐसे सर्वेक्षणों के समय यह याद रखना चाहिए कि दवाओं की उपलब्धता काफी कम होती है। इसका मुख्य कारण बजट एवं प्रशासनिक तन्त्र की लापरवाही तथा अवहेलना है।

8. रेफरेल प्रणाली द्वारा कवरेज

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की सहायता के लिए रेफरेल प्रणाली की आवश्यकता होती है। रेफरेल अस्पताल की उपलब्धता एवं पहुंच की सुलभता भी उतनी ही आवश्यक है जितनी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की। किसी वाहन द्वारा आपातकालीन रेफरल अस्पताल तक पहुंचने में 1 से 2 घण्टे से ज्यादा का समय नहीं लगना चाहिए। इसके लिए रेफरेल अस्पताल की पहुंच में जनसंख्या का अनुपात एक महत्वपूर्ण संकेतक होता है। रेफरेल अस्पताल की देखभाल आर्थिक संसाधनों की पहुंच के अन्दर होनी चाहिए। समय-समय पर रेफरेल अस्पताल की जांच होनी चाहिए। जैसे वहां पर उचित सुविधाओं की उपलब्धता, साफ पानी, स्वच्छता आदि की सुविधा है या नहीं।

9. जन बल

स्वास्थ्य देखभाल की उचित कवरेज के लिए विभिन्न प्रकार के कार्य करने के लिए स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की उपलब्धता पूर्वपेक्षा है। इन विभिन्न कार्यकर्ताओं के भौगोलिक वितरण का अनुपात महत्वपूर्ण है। यह जानकारी अप्रत्यक्ष रूप से संसाधन आवंटन के संकेतक के रूप में कार्य करती है।

इस संदर्भ में निम्नलिखित संकेतक लाभकारी होते हैं:

- जनसंख्या एवं स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का अनुपात; स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं में चिकित्सक, दंत चिकित्सक, नर्स, औषधि विक्रेता आदि आते हैं।
- चिकित्सक एवं नर्स तथा अन्य स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का अनुपात।
- प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल में कार्यरत स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं एवं स्वास्थ्य देखभाल की अन्य श्रेणियों के स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का अनुपात।
- स्कूल जिनमें स्वास्थ्य शिक्षा हेतु पाठ्यक्रम में बदलाव किया गया है, की संख्या, जिसमें स्वास्थ्य कार्यकर्ता बनाने की नींव रखी जा सके।

अभ्यास प्रश्न 5

1. प्राथमिक स्वास्थ्य प्रबन्ध के अवयव बताइये।

.....

2. रेफरल प्रणाली से आप क्या समझते हैं?

.....

3. जल एवं स्वच्छता संबंधी आँकड़े किन संकेतकों से प्राप्त किए जा सकते हैं?

.....

4. मातृ स्वास्थ्य संबंधी संकेतक कौन-से हैं?

.....

5. स्वास्थ्य साक्षरता क्या है?

.....

अब हम स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतकों के बारे में जानेंगे।

5.9 स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतक

सभी के लिए उत्तम स्वास्थ्य की संकल्पना तभी साकार होगी जब समुदाय के सभी लोग हर स्तर पर अपनी भागीदारी समझें। स्वास्थ्य देखभाल प्रत्येक नागरिक की पहुँच के अन्दर होनी चाहिए। सभी नागरिकों को बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाएँ मुहैया कराना सरकार का अन्तिम लक्ष्य होना चाहिए।

स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतक निम्नलिखित अवयवों से प्राप्त किए जा सकते हैं:

8. पोषण स्तर एवं मनोसामाजिक विकास
9. शिशु मृत्यु दर
10. बाल मृत्यु दर
11. पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों में मृत्यु दर
12. जीवन प्रत्याशा
13. मातृ मृत्यु दर
14. रोग विशिष्ट मृत्यु दर

आइए प्रत्येक के विषय में चर्चा करें।

1. पोषण स्तर एवं मनोसामाजिक विकास

पोषण स्तर एक सकारात्मक स्वास्थ्य सूचक है। मानवमितीय मापों का प्रयोग शारीरिक वृद्धि एवं विकास के आंकलन में प्रयोग किया जाता है। यह माप पोषण स्तर के आंकलन में सर्वाधिक प्रचलित है। वयस्कों में वजन एवं लम्बाई का माप पोषण स्तर की तत्काल स्थिति तो बताता ही है, इससे बचपन के वृद्धि अवरोध का भी ज्ञान होता है। जन्म के समय का वजन सामुदायिक पोषण में एक महत्वपूर्ण संकेतक है। इस संकेतक को व्यक्त करने के लिए कुल बच्चों की संख्या जिनका जन्म के समय वजन 2500 ग्राम है तथा प्रति हजार जीवित जन्मे बच्चों का अनुपात लिया जाता है।

जन्म के समय

कम वजन = $\frac{\text{जन्म के समय 2500 ग्राम से कम वजन वाले बच्चों की कुल संख्या}}{\text{कुल जीवित जन्मे बच्चों की संख्या}} \times 1000$

कुल जीवित जन्मे बच्चों की संख्या

जन्म के समय कम वजन कई बीमारियों से संबंधित हो सकता है। जैसे मलेरिया, आयोडीन की कमी, माँ का कुपोषित होना। समुदाय में पोषण स्तर जानने के तरीके आप विस्तृत प्रकार

से इकाई 4 में पढ़ चुके हैं। समुदाय में पोषण स्तर मापने के लिए आयु के अनुरूप वजन, आयु के अनुरूप लम्बाई एवं लम्बाई के अनुरूप वजन जैसे संकेतक प्रयोग में लाये जाते हैं। तीनों विधियों के अपने लाभ एवं हानियाँ हैं। इसलिए तीनों को एक साथ प्रयोग किया जाता है। जैसे आयु के अनुरूप वजन से बौनेपन (Stunting) तथा दीर्घकालिक कुपोषण का ज्ञान होता है। इससे तत्काल पोषण की स्थिति का भी पता चलता है। इस विधि का प्रयोग समुदायों के पोषण स्तर को आसानी से ज्ञात करने के लिए किया जा सकता है। इस सूचक में समय की छोटी अवधि में भी परिवर्तन देखा जा सकता है। इस विधि की सबसे बड़ी समस्या यही है कि यदि बच्चों की सही आयु का पता न चले तो आंकड़े गलत हो सकते हैं। यही समस्या आयु के अनुरूप लम्बाई संकेतक के साथ आती है। आयु के अनुरूप लम्बाई दीर्घकालिक कुपोषण का संकेतक है।

उपरोक्त सभी संकेतकों में तुलना करने के लिए स्थानीय या अन्तर्राष्ट्रीय मानकों का उपयोग किया जाता है। मानकों से तुलना करते समय अनुवांशिक कारकों को ध्यान में रखना चाहिए।

समुदाय का पोषण स्तर जानने के लिए ऊपरी बाँह के मध्य भाग का घेरा भी एक अच्छा एवं सटीक संकेतक है। इससे समुदाय के पोषण स्तर का आंकलन तेजी से होता है। इस विधि के साथ कोई परेशानी या कमी जुड़ी हुई नहीं है। मनोसामाजिक विकास के संकेतक भी शारीरिक विकास के संकेतकों की तरह महत्वपूर्ण हैं। परन्तु यह संकेतक अलग-अलग समुदायों के लिए अलग-अलग बनाये जाते हैं।

2. शिशु मृत्यु दर

शिशु मृत्यु दर 1000 जीवित जन्मे शिशुओं में से एक वर्ष या इससे कम आयु में मृत शिशुओं की संख्या है। यह संकेतक न केवल शिशुओं की स्वास्थ्य स्थिति का संकेतक है बल्कि यह पूरी जनसंख्या के स्वास्थ्य का और उनके सामाजिक-आर्थिक स्थिति का भी द्योतक है। इसके साथ-साथ यह स्वास्थ्य देखभाल की उपलब्धता, पहुंच तथा उपयोगिता का भी संवेदनशील संकेतक है। यह प्रसवकालीन स्वास्थ्य देखभाल की स्थिति को दर्शाता है।

3. बाल मृत्यु दर

बाल मृत्यु दर एक वर्ष में प्रति हजार जीवित जन्मों पर 1-4 वर्ष की आयु के बीच के मृत बच्चों की संख्या है। बाल मृत्यु दर में शिशु मृत्यु दर सम्मिलित नहीं होता है। यह संकेतक शिशु मृत्यु दर से ज्यादा संवेदनशील संकेतक है। इससे मृत्यु के पर्यावरणीय कारण, बचपन के संचारी रोग, घर में हुई दुर्घटना आदि कारणों का पता चलता है। यह संकेतक निर्धनता एवं सामाजिक आर्थिक दशा का शिशु मृत्युदर से बेहतर संकेतक है। बाल मृत्युदर वास्तव में

बच्चों की सम्पूर्ण देखभाल, चाहे वह माता पिता की तरफ से हो या प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की तरफ से, को दर्शाती है।

4. पाँच वर्ष से कम आयु में मृत्यु दर

पाँच वर्ष के सभी बच्चों की मृत्यु दर को शिशु एवं बाल मृत्यु दर दोनों को प्रतिबिंबित करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। अकेले शिशु मृत्यु दर के आंकड़ों का उपयोग बड़े बच्चों के बीच उच्च मृत्यु दर पर ध्यान आकर्षित नहीं कर पाता है। बहुत से देशों में बच्चे अपने जीवन के दूसरे वर्ष में कुपोषण के लिए अधिक संवेदनशील होते हैं। यदि उचित ध्यान न दिया जाये तो यह कुपोषण मृत्यु का कारण बन जाता है। पाँच वर्ष तक की आयु में होने वाली कुल मौतों के अनुपात की गणना करना आसान है। इसे पाँच वर्ष तक की आयु की मृत्यु का अनुपात कहा जाता है। यह संकेतक उच्च जन्म दर को भी दर्शाता है, इसलिए यह संकेतक उच्च बाल मृत्यु दर, उच्च जन्मदर एवं कम जीवन प्रत्याशा को दर्शाता है।

5. जीवन प्रत्याशा

किसी भी जनसंख्या की जीवन प्रत्याशा किसी विशेष औसत आयु तक जनसंख्या के जीवित रहने की सम्भावना है। जन्म के समय जीवन प्रत्याशा शिशु के औसत वर्षों तक जीवित रहने की आशा है। यानि जीवन प्रत्याशा दर्शाती है कि जन्म के बाद बच्चा औसतन कितने साल तक जीवित रहेगा या कह सकते हैं कि व्यक्ति की औसत मृत्यु आयु उसकी जीवन प्रत्याशा है।

जीवन प्रत्याशा सामाजिक आर्थिक विकास का एक अच्छा संकेतक है। विकसित देशों में जन्म के समय जीवन प्रत्याशा अधिक होती है। जीवन प्रत्याशा में लिंग मतभेद महत्वपूर्ण हो सकता है तथा जन्म के समय जीवन प्रत्याशा उच्च शिशु मृत्यु दर से प्रभावित होती है। एक वर्ष की आयु में जीवन प्रत्याशा में शिशु मृत्यु दर के प्रभाव शामिल नहीं होते हैं। इसी तरह 5 वर्ष की आयु में बाल मृत्यु दर के प्रभाव को शामिल नहीं किया जाता है। किसी भी देश के विकास के आंकलन में जीवन प्रत्याशा एक महत्वपूर्ण संकेतक के रूप में देखा जाता है। परन्तु इस संकेतक की गणना आसान नहीं है क्योंकि यह जनसंख्या की आयु तथा संरचना के ज्ञान और प्रत्येक आयु वर्ग में हुई लोगों की मृत्यु के आंकड़ों पर निर्भर करती है। जीवन प्रत्याशा वास्तव में लम्बे समय तक जीवित रहने का एक संकेतक है। इस संबंध में यह एक सकारात्मक स्वास्थ्य सूचक के रूप में माना जाता है।

6. मातृ मृत्यु दर

यह संकेतक माताओं में गर्भावस्था एवं प्रसव के दौरान जोखिम को दर्शाता है। यह समुदाय की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, पोषण, स्वच्छता एवं मातृ स्वास्थ्य देखभाल जैसे कारकों से प्रभावित होता है। इसकी गणना के लिए शिशु जन्म के कारण होने वाली महिला मृत्यु की संख्या को कुल जीवित शिशु संख्या से भाग देकर 100,000 से गुणा किया जाता है। एक वर्ष में प्रति 100,000 जीवित जन्मों पर प्रति महिला मृत्यु वार्षिक मातृ मृत्यु दर कहलाती है। इस संदर्भ में कुछ तथ्य आप इकाई के पहले भाग में पढ़ चुके हैं। महिलाओं के स्वास्थ्य तथा उनके पोषण की स्थिति उनके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक कारकों पर निर्भर होती है। इसका प्रभाव मात्र उस महिला पर नहीं पड़ता अपितु उसके बच्चों के स्वास्थ्य, घरेलू साधारण क्रिया कलापों तथा विभिन्न साधनों के वितरण पर भी पड़ता है। मातृ जीवन की रक्षा के लिए शिक्षित एवं प्रशिक्षित दाइयों एवं स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की नियुक्ति अति आवश्यक है।

7. रोग विशिष्ट मृत्यु दर

बीमार या रोगग्रस्त होने की अवस्था को रुग्णता कहते हैं। विशिष्ट रोगों जैसे संचारी रोग के कारण हुई मृत्यु की गणना की जा सकती है। यह रोग विशेष से होने वाली मृत्यु की संख्या एवं कुल मृत्यु के अनुपात का प्रतिशत है। इससे रोगों के प्रसार एवं उनकी भयावहता का पता चलता है तथा नये अनुसंधानों एवं शोधों के लिए विचार प्राप्त होते हैं।

इन सब संकेतकों के अतिरिक्त रुग्णता दर, अतिपोषण दर आदि भी स्वास्थ्य संकेतकों के रूप में प्रयोग किए जा सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न 6

1. मातृ मृत्यु दर के मुख्य कारण क्या हैं?

.....
.....

2. जीवन प्रत्याशा को संकेतक के रूप में प्रयोग क्यों किया जाता है?

.....
.....

3. स्वास्थ्य के कुछ आधारभूत संकेतकों के नाम बताइये।

.....
.....

4. शिशु मृत्यु दर एवं बाल मृत्यु दर में क्या अन्तर है?

.....

 5. मातृ मृत्यु दर को कम करने के दो उपाय बताइये।

.....

 6. पांच साल तक की आयु की मृत्यु दर क्या दर्शाती है?

.....

 7. जन्म के समय कम वजन से क्या तात्पर्य है?

5.10 सारांश

जीवन संबंधी सांख्यिकी आंकड़ों के माध्यम से स्वास्थ्य लक्ष्यों को प्राप्त करने की प्रगति की जानकारी एवं निगरानी दोनों ही रखी जाती हैं। जीवन संबंधी सांख्यिकी के लिए विभिन्न संकेतक प्रयोग में लाये जाते हैं। जन्म दर प्रति हजार जीवित शिशुओं की जन्म संख्या है। मृत्यु दर प्रति वर्ष प्रति हजार मृतक संख्या है। प्रति 100,000 जीवित प्रजनन में गर्भधारण एवं प्रजनन के कारण मरने वाली माताओं की संख्या मातृ मृत्यु दर है। शिशु जन्मदर 1000 जीवित जन्मे शिशुओं में से एक वर्ष या इससे कम आयु में मृत शिशुओं की संख्या है। इसके अन्तर्गत नवजात शिशु मृत्युदर एवं जन्मोत्तर काल शिशु मृत्यु दर सम्मिलित होते हैं। कुल प्रजनन दर जानने के लिए प्रजनन योग्य महिलाओं को छोटे-छोटे आयु वर्गों में बांट कर उन आयु वर्गों की अलग-अलग प्रजनन दर निकाल कर जोड़ लेते हैं। इसके बाद प्राप्त योग को आयु वर्गान्तर से गुणा कर देते हैं। नवजात शिशु के जीवित रहने की प्रत्याशा जीवन प्रत्याशा कहलाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्वास्थ्य नीति के पांच संकेतक; राजनीतिक प्रतिबद्धता, संसाधन आवंटन, संसाधन वितरण, सामुदायिक भागीदारी एवं संगठनात्मक ढांचा और प्रबंधकीय प्रक्रिया बताये हैं। सामाजिक एवं आर्थिक संकेतक के अन्तर्गत जनसंख्या वृद्धि दर, सकल घरेलू उत्पाद, आय का वितरण, कार्य का माहौल, साक्षरता दर, आवासीय सुविधा, खाद्य पदार्थों की उपलब्धता आदि आते हैं। स्वास्थ्य देखभाल के संकेतकों में स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता, पहुंच की सुलभता, सेवाओं की उपयोगिता एवं देखभाल की गुणवत्ता सम्मिलित हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य कवरेज में स्वास्थ्य शिक्षा, जल एवं स्वच्छता, मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य, टीकाकरण, स्थानिक बीमारियों की रोकथाम एवं नियंत्रण, आम बीमारियों तथा चोटों का

उपचार, जरूरी दवाओं का प्रबन्ध, रेफरल प्रणाली द्वारा कवरेज एवं जन बल आते हैं। स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतकों में पोषण स्तर, शिशु मृत्यु दर, बाल मृत्यु दर, जीवन प्रत्याशा, मातृ मृत्यु दर एवं विशिष्ट रोग मृत्यु दर सम्मिलित हैं।

5.11 पारिभाषिक शब्दावली

- **संकेतक:** मापने का पैमाना।
- **जन सांख्यिकीय:** जीवन-मरण संबंधी।
- **संसाधन:** उपयोग में आने वाली वस्तुएं, मनुष्य।
- **रुग्णता:** बीमार या रोगग्रस्त होने की अवस्था।
- **जीवित जन्म:** एक जीवित जन्म उस अवस्था को कहते हैं जब एक भ्रूण मातृ शरीर से बाहर निकलता है (चाहे वह गर्भावस्था की अवधि के दौरान हो) एवं बाद में जीवन संकेत दिखता है। जैसे दिल की धड़कन या गर्भनाल में धड़कन आदि।
- **साक्षरता:** पढ़ने-लिखने की क्षमता से सम्पन्न होना।

5.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।
 - a. एक वर्ष में हुए जीवित जन्म
 - b. एक वर्ष में मृतकों की संख्या
 - c. नवजात मृत शिशुओं की संख्या (0-28 दिन के मध्य)
 - d. 1000
 - e. क्योंकि दोनों ही मान औसत हैं।
 - f. मातृ मृत्यु अनुपात में मातृ मृत्यु संख्या को जीवित शिशु संख्या से भाग देकर 100000 से गुणा किया जाता है। जबकि मातृ मृत्यु दर में मातृ मृत्यु संख्या को प्रजनन आयु की महिलाओं की कुल संख्या से भाग किया जाता है।
 - g. जनसंख्या में वृद्धि होती है।

अभ्यास प्रश्न 2

1. स्वास्थ्य नीति से, नेताओं के भाषण, सरकारी रिपोर्टों से।
2. अपनी समस्याएं सीधे बताकर।

अभ्यास प्रश्न 3

1. इकाई मूल का भाग देखें।

अभ्यास प्रश्न 4

1. इकाई का मूल भाग देखें।
2. बहु विकल्पीय प्रश्न
 - a. 3
 - b. 4
 - c. 3

अभ्यास प्रश्न 5

1. इकाई का मूल भाग देखें।
2. जब रोगी को उचित उपचार हेतु किसी दूसरे बड़े अधिक सुविधाओं से युक्त अस्पताल में भेजा जाता है।
3. पानी कहां से आता है, निकासी का प्रबन्ध, मल-मूत्र त्याग की व्यवस्था।
4. मातृ मृत्यु दर/शिशु मृत्यु दर
5. स्वास्थ्य को उचित रखने की जानकारी।

अभ्यास प्रश्न 6

1. मातृ कुपोषण, कम आयु, बीमारी, अपर्याप्त देखरेख
2. क्योंकि यह स्वास्थ्य वृद्धि को दर्शाता है।
3. बाल मृत्युदर, शिशु मृत्यु दर, पोषण स्तर
4. शिशु मृत्यु दर (एक वर्ष से पहले)
5. उचित देखरेख एवं पर्याप्त खुराक
6. उच्च जन्म दर एवं निम्न जीवन प्रत्याशा
7. शिशु 2.5 किलो से कम वजन का हो।

5.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- World Health Organization 1980. Development of Indicators for monitoring progress towards health for all by the year 2000. Geneva. 92p.
- wholibdoc.who.int/publications/9241800038.pdf
- Rao.K Visweswara. 2007. Biostatistics: A manual of statistical methods for use in health, nutrition and anthropology. Jaypee Brothers publishers. 725 p.

इंटरनेट स्रोत

- www.jsk.gov.in

5.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. जीवन संबंधी सांख्यिकीय आंकड़ों की उपयोगिता क्या है?
2. स्वास्थ्य नीति एवं स्वास्थ्य देखरेख के संकेतकों का वर्णन कीजिए।
3. सामाजिक आर्थिक संकेतक कौन-कौन से हैं? ये संकेतक स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर को कैसे प्रभावित करते हैं?
4. प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के अवयवों का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।
5. स्वास्थ्य के आधारभूत संकेतकों का वर्णन कीजिए एवं उनकी उपयोगिता समझाइये।

इकाई 6: भारत में पोषण सम्बन्धी समस्याएं

- 6.1 प्रस्तावना
- 6.2 उद्देश्य
- 6.3 पोषण सम्बन्धी समस्याओं की व्यापकता
 - 6.3.1 प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण
 - 6.3.2 एनीमिया/ रक्ताल्पता
 - 6.3.3 विटामिन 'ए' की कमी
 - 6.3.4 आयोडीन अल्पता विकार
 - 6.3.5 अतिपोषण एवं अन्य अपक्षयी विकार
- 6.4 कुपोषण को नियंत्रित करने के उपाय एवं योजना
- 6.5 सारांश
- 6.6 पारिभाषिक शब्दावली
- 6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 6.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
- 6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

अभी तक आप समुदाय से सम्बन्धित विभिन्न आयामों जैसे समुदाय का पोषण स्तर ज्ञात करना, समुदाय पोषण में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का योगदान तथा समुदाय पोषण को उत्तम बनाए रखने के लिये चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों के बारे में पढ़ चुके हैं। अब हम भारत में विभिन्न पोषण सम्बन्धी समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। विभिन्न कार्यक्रमों, योजनाओं एवं संगठनों द्वारा पोषण स्तर को ज्ञात करने का कार्य किया जाता है। उसके फलस्वरूप प्राप्त नतीजों से समुदाय में व्याप्त पोषण सम्बन्धी समस्याओं के बारे में पता चलता है। भारत में कुपोषण नयी समस्या नहीं है, न ही कुपोषण की कोई एक विशिष्ट किस्म है। इसके अनेक रूप हैं जो अक्सर एक दूसरे के साथ मिलकर प्रकट होते हैं। प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण, आयोडीन की कमी से उत्पन्न विकृतियां तथा लौह तत्व और विटामिन ए की कमी कुपोषण के अनेक रूपों के कुछ उदाहरण हैं। वैसे तो कुपोषण किसी भी उम्र में हो सकता है परन्तु बच्चे इससे सर्वाधिक प्रभावित होते हैं। विकाशशील देशों में पाँच वर्ष से छोटे लगभग

बीस करोड़ से अधिक बच्चे कुपोषण का शिकार हैं। आंकड़े बताते हैं कि पाँच साल से छोटे बच्चों की मृत्यु का मुख्य कारण कुपोषण है। क्षति की यह स्थिति मृत्यु तक ही सीमित नहीं है, कुपोषित बच्चों का मानसिक विकास उचित प्रकार से नहीं हो पाता है। वे बार-बार बीमार पड़ते हैं और उनका पोषण स्तर गिरता जाता है। ऐसे बच्चे बड़े होकर राष्ट्र के विकास में सहयोग नहीं दे पाते। इस तरह कुपोषण अप्रत्यक्ष रूप से जीवन स्तर एवं राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को प्रभावित करता है।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पाएंगे कि;

- कुपोषण के मुख्य कारण क्या हैं तथा भारत में कुपोषण की क्या स्थिति है;
- प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण, एनीमिया, विटामिन ए की कमी तथा आयोडीन अल्पता विकार के कारण तथा लक्षण क्या हैं;
- अतिपोषण तथा अन्य अपक्षयी स्थितियों से सम्बन्धित विभिन्न विकार कौन-से हैं; तथा
- कुपोषण से बचाव के लिए कौन-से उपाय अपनाने चाहिए।

आइए सर्वप्रथम इन समस्याओं की व्यापकता पर चर्चा करें।

6.3 पोषण सम्बन्धी समस्याओं की व्यापकता

पोषण सम्बन्धी समस्याएं जैसे कुपोषण, एनीमिया, विटामिन ए की कमी, आयोडीन अल्पता विकार आदि सभी विश्व में व्यापक रूप से प्रसारित हैं। ये सभी जनस्वास्थ्य समस्याएं बन गई हैं। आइये भारत में कुछ पोषण सम्बन्धी समस्याओं की व्यापकता एवं उनके प्रभावों पर दृष्टि डालें।

साल 2011 तक भारत में कुपोषण के कारण सामान्य से कम लम्बाई के बच्चों की संख्या लगभग 6.17 करोड़ थी। जो विश्व में कुल कुपोषित बच्चों की संख्या का 37.9 फिसदी हिस्सा है (स्रोत: यूनिसेफ, 2013)। भारत में 70 फीसदी से ज्यादा महिलाएं और बच्चे गम्भीर पोषणज कमियों से ग्रसित हैं जिनमें एनीमिया प्रमुख है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-3 के अनुसार भारत में औसत से कम लम्बाई के बच्चों (तीन साल तक की उम्र के) की संख्या कम हुई है। तीन साल तक की उम्र के 43 प्रतिशत बच्चे कम वजन वाले हैं, जबकि 38 प्रतिशत स्टन्टेड (बौने) और 19 प्रतिशत वेस्टेड (क्षीण) हैं। शिशु मृत्यु दर 50 है एवं लगभग 22 प्रतिशत नवजात शिशु कम जन्म भार (2.5 किलो से कम) के साथ पैदा होते हैं। बच्चों में

एनीमिया की व्यापकता भी ज्यादा पायी गयी। तीन साल तक के बच्चों में एनीमिया की व्यापकता 70 प्रतिशत पायी गयी। यह भी पाया गया कि 12-13 महीने के सिर्फ 44 प्रतिशत बच्चों को ही सम्पूर्ण टीकाकरण कराया गया। 5 प्रतिशत बच्चों को कभी कोई भी टीका नहीं लगवाया गया। सर्वेक्षण में पाया गया कि लगभग 36 प्रतिशत महिलाओं का आधारीय चयापचय सूचकांक 18.5 से कम था अर्थात वे कम वजन की थीं। उनमें से 44 प्रतिशत महिलाएं मध्यम या गम्भीर रूप से कुपोषित थीं। 15-49 वर्ष की विवाहित महिलाओं में अधिक वजन एवं मोटापे की दर राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-2 में 11 प्रतिशत थी जो राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-3 में बढ़कर 15 प्रतिशत हो गयी। यह भी देखा गया कि महिलाएं या तो अल्पपोषित हैं या अतिपोषित। महिलाओं में अल्पपोषण ग्रामीण क्षेत्रों में ज्यादा व्याप्त है। मोटापा एवं अतिभार शहरी इलाकों में ग्रामीण इलाकों से तीन गुना ज्यादा है। 15-19 वर्ष की लड़कियों में कुपोषण की दर 47 प्रतिशत है। उम्र के साथ-साथ अल्पपोषण की दर घटती जा रही है एवं अति पोषण बढ़ता जा रहा है।

महिलाओं में एनीमिया की व्यापकता राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-2 से अधिक पाई गई। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-3 से पता चलता है कि शहरों में 50 प्रतिशत से ज्यादा महिलाएं एनीमिया से ग्रसित हैं। गर्भवती महिलाओं में एनीमिया की दर 59 प्रतिशत है।

माइक्रोन्यूट्रिएन्ट इनिशिएटिव जो विश्व की सर्वाधिक संवेदनशील जनसंख्या में विटामिन एवं खनिज लवणों की कमी को खत्म करने के लिए कार्यरत एक प्रमुख अग्रणी संगठन है, ने भारत की स्थिति की रिपोर्ट में कहा है:

- भारत में 42 प्रतिशत बच्चे Stunted (बौने) हैं।
- भारत में सबसे ज्यादा विटामिन 'ए' की कमी से ग्रसित बच्चे हैं।
- लगभग 51 प्रतिशत शालापूर्व बच्चे विटामिन 'ए' की कमी से पीड़ित हैं। 5 प्रतिशत गर्भवती महिलाएं भी विटामिन 'ए' की कमी के प्रभाव के कारण रतौंधी से पीड़ित हैं।
- देश के 85 प्रतिशत जिलों में लोगों के आहार में आयोडीन की कमी है। कुपोषण के कारण बच्चों का संज्ञानात्मक विकास ठीक से नहीं हो पाता है। आंकलन के अनुसार बाल मृत्यु की 50 फीसदी घटनाओं की बड़ी वजह कुपोषण है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के क्रियान्वयन के पश्चात् 2005 से भारत की पोषण एवं स्वास्थ्य स्थिति में सकारात्मक बदलाव देखे गये हैं। इसके अनुसार:

- भारत में शिशु मृत्यु दर घट कर 30 प्रति 1 हजार जन्म लेने वाले बच्चों पर है।
- मातृ अनुपात घट कर 100 प्रति 1 लाख जन्म देने वाली माताओं में हुआ।

- कुल प्रजनन दर 2 प्रतिशत है।
- सभी पोषण सम्बन्धी बीमारियों जैसे घेंघा रोग, रतौंधी, एनीमिया की प्रसार दर कम हो रही है।
- भारत में मातृ मृत्यु दर 1990 से 2013 के बीच 65 प्रतिशत घटी है।

6.3.1 प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण विकासशील देशों की मुख्य जन स्वास्थ्य समस्या है। प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का मुख्य कारण बचपन में अपर्याप्त एवं असंतोषजनक आहार है। यह रोग मुख्यतः बच्चों को होता है। लगभग 70 प्रतिशत बच्चे जो माँ का दूध पीना जल्दी छोड़ देते हैं, प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण से ग्रसित हो जाते हैं। इस रोग के साथ अधिकतर संक्रमण भी हो जाते हैं। कुपोषण शरीर की मुख्य रोग प्रतिरोधी प्रतिक्रिया प्रणालियों को कमजोर करके शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता को क्षीण कर देता है। इसके कारण जल्दी-जल्दी, लम्बे समय तक गम्भीर बीमारियों से शरीर ग्रसित रहता है। बीमारियों के कारण कुपोषण और अधिक बढ़ जाता है। प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण उच्च बाल मृत्यु दर का महत्वपूर्ण कारण है। तीव्र कुपोषण में बच्चा यदि बच भी जाए तो उसका शारीरिक एवं मानसिक विकास अवरुद्ध होता है जिससे सामाजिक एवं आर्थिक विकास दोनों ही प्रभावित होते हैं। जब शरीर को प्रोटीन ऊर्जा या दोनों की आवश्यकता की पूर्ति नहीं होती है तब वह प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण से ग्रसित होता है। बच्चों में इसके कारण वृद्धि अवरोध होता है एवं वयस्कों में क्षीणता।

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का वर्गीकरण

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण को तीव्रता अवधि एवं मुख्य पोषक तत्व की कमी के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है।

तालिका 6.1: प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का वर्गीकरण

तीव्रता	अवधि	मुख्य पोषक तत्व
न्यून	अल्पकालिक	ऊर्जा
मध्यम	चिरकालिक	प्रोटीन
तीव्र	उपरोक्त दोनों	उपरोक्त दोनों

कुपोषण की तीव्रता को मानवमितीय मापों से नापा जाता है। जब तीव्र कुपोषण होता है तो उसे प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण कहते हैं। प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण निम्नलिखित तीन प्रकार से परिलक्षित होता है।

- (1) क्वाशियोरकर (Kwashiorkar)
- (2) मरास्मस या सूखा रोग (Marasmus)
- (3) मरास्मिक क्वाशियोरकर (Marasmic Kwashiorkar)

(1) क्वाशियोरकर: क्वाशियोरकर रोग 1-4 साल के बच्चों में होता है। 'क्वाशियोरकर' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम सन् 1935 में सिसली विलियम्स ने किया था। यह एक अफ्रीकन शब्द है जिसका अर्थ उस रोग से है जो पहले बच्चे को दूसरे बच्चे के जन्म के बाद होता है (Disease which the child gets when the next baby is born)। क्वाशियोरकर रोग आहार में ऊर्जा की अपेक्षा प्रोटीन की कमी के कारण होता है। यह मुख्यतः तब होता है जब छोटे बच्चे से माँ का दूध छुड़ा दिया जाता है एवं उसे पूरक आहार के रूप में स्टार्च युक्त (कार्बोहाइड्रेट) आहार (जिसमें प्रोटीन की मात्रा न के बराबर या कम होती है) दिया जाता है। आहार में प्रोटीन या तो कम मात्रा में होता है या उसकी गुणवत्ता अच्छी नहीं होती है। आहार में प्रोटीन की लम्बे समय तक कमी रहने के कारण बच्चे का वजन कम होने लगता है। वजन में यह कमी बहुत ज्यादा नहीं होती है क्योंकि बच्चे को ऊर्जा तो मिल ही रही होती है। क्वाशियोरकर से पीड़ित बच्चों में निम्नलिखित लक्षण दिखाई देते हैं:

1. वृद्धि में रुकावट: क्वाशियोरकर से पीड़ित बच्चे की वृद्धि एवं विकास दोनों ही अवरुद्ध हो जाते हैं। बच्चे का वजन आयु के अनुरूप कम होता है। इन बच्चों की ऊँचाई भी आयु के अनुरूप कम रह जाती है। इस स्थिति को 'Stunting' (बौनापन) कहते हैं।

2. सूजन (Oedema): शरीर में प्रोटीन की कमी से सूजन हो जाती है। शरीर की सभी कोशिकाओं एवं ऊतकों के बीच पानी भर जाता है। सूजन की मात्रा प्रोटीन की कमी, रक्त में एल्ब्यूमिन की कमी, नमक एवं जल की अधिकता आदि पर निर्भर करती है। सूजन सबसे पहले पंजों एवं पैरों पर आती है। तत्पश्चात् जाँघों, हाथों और मुँह तक फैल जाती हैं। सूजन के कारण बच्चा तन्दुरुस्त दिखता है और उसके हाथ-पैर तथा मुँह मोटे तथा फूले हुए दिखते हैं।

3. माँसपेशियों का क्षय: शरीर की माँसपेशियाँ नष्ट होने लगती हैं। इसका प्रभाव बाँहों, हाथों की माँसपेशियों एवं टाँगों पर अधिक पड़ता है। ऊपरी बाँह के मध्य भाग का घेरा कम हो जाता है।

4. मानसिक परिवर्तन: बच्चे के स्वभाव में उदासीनता एवं चिड़चिड़ापन आ जाता है। बच्चा बात-बात पर रोने लगता है। बच्चे को अपने आस-पास की किसी भी गतिविधि या खेल में रुचि नहीं होती है। बच्चा आलसी, सुस्त एवं थका-थका दिखाई देता है। अधिक तीव्रता की स्थिति में बच्चे बिस्तर पर सुस्त पड़े रहते हैं।

5. रक्ताल्पता: प्रोटीन की कमी के कारण हीमोग्लोबिन का निर्माण ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है जिसके कारण रक्ताल्पता या एनीमिया रोग हो जाता है।

6. बालों में परिवर्तन: इस रोग के होने पर बाल रूखे, कड़क एवं चमकहीन हो जाते हैं। बालों के रंग में परिवर्तन आ जाता है। बालों का रंग फीका पड़ जाता है और उनमें भूरापन, सुनहरापन या सफेदी आ जाती है। बालों की वृद्धि रुक जाती है। प्रोटीन की कमी के कारण बाल झड़ने लगते हैं। बाल कमजोर होकर आसानी से खींच कर टूट जाते हैं।

7. त्वचा पर प्रभाव: प्रोटीन की कमी के कारण त्वचा का रंग भी बदल जाता है। त्वचा शुष्क, खुरदुरी एवं कांतिहीन हो जाती है। त्वचा पर जगह-जगह गहरे भूरे रंग के काले चकत्ते पड़ जाते हैं। ऐसा वर्णकों की अधिकता के कारण होता है।

8. चन्द्राकार मुख: ऊतकों एवं कोशिकाओं में पानी भर जाने के कारण शरीर में सूजन आ जाती है। हाथ, पैर तथा टाँगों के अतिरिक्त मुँह पर भी सूजन आ जाती है। इस सूजन के कारण बच्चे का मुख चन्द्रमा के समान गोल हो जाता है।

9. भूख में कमी एवं अतिसार: प्रोटीन की कमी से पाचन सम्बन्धी अनेकों गड़बड़ियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। भोजन को पचाने के लिए पाचक रसों एवं विभिन्न एन्जाइमों की आवश्यकता होती है क्योंकि एन्जाइम का निर्माण प्रोटीन से ही होता है, इसलिए प्रोटीन के अभाव में पाचन में प्रयोग होने वाले एन्जाइमों का निर्माण उचित प्रकार नहीं हो पाता है, जिससे पाचन, अवशोषण एवं चयापचय की क्रिया बाधित होती है। फलस्वरूप पाचन शक्ति क्षीण होने लगती है। पाचन शक्ति क्षीण होने के कारण बच्चे को ठीक प्रकार से भूख नहीं लगती है तथा बच्चे को अतिसार हो जाता है। अतिसार होने पर शरीर से अधिक मात्रा में पोटेशियम एवं अन्य खनिज लवणों का निष्कासन होने लगता है जिससे बच्चे की स्थिति गम्भीर हो सकती है।

10. श्लैष्मिक झिल्लियों का प्रभाव: प्रोटीन की कमी के कारण श्लैष्मिक झिल्लियाँ प्रभावित होती हैं। होंठ फटने एवं कटने लगते हैं। जीभ की सतह चिकनी हो जाती है।

11. नाड़ी संस्थान पर प्रभाव: प्रोटीन की कमी से न केवल बच्चे का शारीरिक विकास ही अवरुद्ध होता है बल्कि मानसिक एवं बौद्धिक विकास भी बाधित होता है। ऐसे बच्चों की सीखने की क्षमता कम हो जाती है।

12. यकृत में वसा का जमाव: प्रोटीन की कमी से यकृत पर वसा का जमाव हो जाता है, जिसके कारण इसके आकार में वृद्धि हो जाती है। यकृत छूने पर कठोर महसूस होता है। अग्नाशय का आकार छोटा हो जाता है।

13. विटामिन की कमी: रोगग्रस्त बच्चे के शरीर में विटामिन की कमी भी दिखाई देने लगती है। बच्चे के शरीर में विटामिन 'बी' एवं विटामिन 'ए' की कमी के लक्षण दिखाई देते हैं।

14. संक्रमण का खतरा: क्वाशियोरकर से पीड़ित बच्चों में संक्रमण का खतरा हमेशा बना रहता है।

(2) मरास्मस: जब बालक के आहार में प्रोटीन एवं ऊर्जा दोनों की कमी हो जाती है तब उसे मरास्मस हो जाता है। यह रोग 6 माह से लेकर 18 माह तक के शिशु को होता है। यह रोग अधिकांशतः निर्धन वर्ग के बच्चों में होता है क्योंकि उनके आहार में प्रोटीन के साथ-साथ ऊर्जा की भी कमी होती है। इसका मुख्य कारण अपर्याप्त आहार है। स्त्री का जल्दी-जल्दी माँ बनना एवं बच्चे को कम उम्र में ही स्तनपान रोककर बोतल से दूध पिलाना शुरू करना भी इस रोग का महत्वपूर्ण कारण है। बोतल में दूध देने की प्रक्रिया में दूध में पानी मिलाना, बोतल को ठीक प्रकार से साफ न करना आदि क्रियाएं इस रोग को बढ़ावा देती हैं। बच्चे को पूरक आहार के नाम पर उचित पोषक भोजन न देना भी इसका मुख्य कारण है।

मरास्मस रोग क्वाशियोरकर से भी अधिक हानिकारक होता है। इस रोग के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं:

1. माँसपेशियों का क्षय अत्यधिक होता है। अतः हाथ, पैर पतले एवं कमजोर दिखते हैं। अति तीव्र अवस्था में त्वचा अस्थियों से चिपकी हुई दिखाई देती है।
2. रोगग्रस्त बच्चे का वजन एवं लम्बाई उसकी आयु के अनुरूप बहुत कम होता है।
3. ऐसे बच्चे का ऊपरी बाँह के मध्य भाग का घेरा 11.5 सेमी से कम हो जाता है।
4. बच्चे की त्वचा पर झुर्रियां पड़ जाती हैं और बच्चे का चेहरा बन्दर जैसा पिचका हुआ दिखाई देता है।
5. आंत्र मार्ग में संक्रमण के कारण बार-बार निर्जलीकरण हो जाता है।
6. बालक अधिक उम्र का दिखाई देता है।

7. बाल रूखे एवं मटमैले हो जाते हैं।

मरास्मस में काफी लक्षण क्वाशियोरकर की तरह ही दृष्टिगोचर होते हैं। क्वाशियोरकर एवं मरास्मस में मुख्य अन्तर निम्न तालिका में दिए जा रहे हैं।

तालिका 6.2: क्वाशियोरकर एवं मरास्मस के लक्षणों में अन्तर

क्रम सं०	लक्षण	क्वाशियोरकर	मरास्मस
1.	मुख्य कारण	आहार में कम प्रोटीन	आहार में कम ऊर्जा के साथ कम प्रोटीन
2.	रोग होने की अवधि	हफ्तों में	महीनों से वर्ष भर
3.	वृद्धि अवरोध	होता है	बहुत अधिक होता है
4.	क्षीणता (Wasting)	अधिक स्पष्ट नहीं	बहुत अधिक
5.	सूजन	टाँगों के निचले भाग, चेहरे या सारे शरीर पर	बिल्कुल नहीं
6.	बालों में परिवर्तन	रंग बदल जाता है	बाल रूखे हो जाते हैं
7.	मानसिक लक्षण	दिखाई देते हैं	नहीं दिखाई देते
8.	त्वचा में परिवर्तन	त्वचा का अंश बदल जाता है	नहीं होता
9.	भूख	नहीं लगती	बहुत लगती है
10.	एनीमिया	गम्भीर/तीव्र	न्यून
11.	त्वचा के नीचे वसा	उपस्थित (कम मात्रा में)	बिल्कुल नहीं
12.	हार्मोन प्रतिक्रिया	इंसुलिन की उच्च मात्रा कॉर्टिसोल की न्यून मात्रा	इंसुलिन की न्यून मात्रा कॉर्टिसोल की उच्च मात्रा

13.	मुख	चन्द्राकार मुख	त्वचा पर झुर्रियाँ, पिचका हुआ बन्दर जैसा
14.	यकृत में वसा	बहुधा	कोई नहीं

(3) मरास्मिक क्वाशियोरकर

अविकसित एवं विकासशील देशों में, जहाँ प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण अधिक है, वहाँ के बच्चों में मरास्मस एवं क्वाशियोरकर दोनों के लक्षण एक साथ दिखाई देते हैं। शिशु प्रारम्भ में क्वाशियोरकर से ग्रसित होता है। धीरे-धीरे जब उसके आहार में प्रोटीन के साथ-साथ कैलोरी भी कम हो जाती है तब उसे मरास्मस भी हो जाता है।

वयस्कों में प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण होने पर उनका वजन कम होने लगता है, वसा घट जाती है, रक्ताल्पता (एनीमिया) हो जाता है, व्यक्ति पर रोगाणुओं का प्रभाव आसानी से होने लगता है, उसे बार-बार अतिसार होता है। इन सब के कारण व्यक्ति जीवन के बाद के वर्षों में कठोर परिश्रम नहीं कर पाता तथा उचित धनोपार्जन नहीं कर पाता।

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की पहचान

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की पहचान या आंकलन करने के लिए पोषण स्तर के आंकलन में जो भी विधियाँ प्रयुक्त होती हैं उनका प्रयोग किया जाता है। इन विधियों के बारे में आप इकाई दो में भली प्रकार पढ़ चुके हैं। निम्नलिखित तालिका में बच्चों एवं वयस्कों में प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण को पहचानने की विधियाँ दी जा रही हैं। इनके विषय में अधिक जानकारी के लिए इकाई 2 का पुनः अध्ययन करें।

तालिका 6.3: प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की पहचान

शिशु एवं बालकों में	वयस्कों में
<ul style="list-style-type: none"> ● आयु के अनुरूप लम्बाई ● आयु के अनुरूप वजन ● लम्बाई के अनुरूप वजन ● ऊपरी बाँह के मध्य भाग का घेरा ● एडीमा/सूजन 	बी0 एम0 आई0 (बॉडी मास इन्डेक्स)

तालिका 6.4: बच्चों एवं वयस्कों में प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का प्रभाव

<p>शिशु एवं बालकों में</p> <ul style="list-style-type: none"> ● रोगों से लड़ने की क्षमता कम हो जाती है। ● संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है। ● वृद्धि अवरोध। ● थकान व उदासीनता बढ़ जाती है। ● शिशु एवं बाल मृत्यु की सम्भावना बढ़ जाती है। ● मानसिक एवं संज्ञानात्मक विकास अवरुद्ध हो जाता है। ● सीखने की प्रक्रिया में अवरोध।
<p>महिलाओं में</p> <ul style="list-style-type: none"> ● गर्भावस्था के दौरान जटिलताओं का खतरा बढ़ जाता है। ● सहज गर्भपात, मृत प्रसव एवं शिशु मृत्यु का खतरा बढ़ जाता है। ● भ्रूण के मस्तिष्क का विकास अवरुद्ध हो जाता है। ● मातृ मृत्यु का खतरा बढ़ जाता है। ● कम वजन के बच्चे पैदा होने का खतरा बढ़ जाता है। ● कार्यक्षमता कम होने से बच्चों की उचित देखभाल नहीं होती। ● बच्चों में कुपोषण का खतरा बढ़ जाता है।
<p>वयस्कों में</p> <ul style="list-style-type: none"> ● कार्यक्षमता कम हो जाती है। ● संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है। ● बीमारी के कारण ज्यादा छुट्टी जिससे उत्पादकता में कमी होती है।

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण के कारण

उपरोक्त सभी शीर्षकों से पता चलता है कि प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का मुख्य कारण अपर्याप्त एवं असंतुलित आहार है। इसके अलावा परिवार में ज्यादा बच्चे, निर्धनता, अज्ञानता, अंधविश्वास एवं प्रथाएं, बच्चों में संक्रमण, साफ-सफाई का अभाव, माता का कुपोषण आदि भी इसके कारण हैं। इन सभी कारणों की चर्चा हम इकाई 2 में कर चुके हैं।

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का उपचार

अब आप भली प्रकार से जान चुके हैं कि प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण एक बहुमुखी समस्या है। इसलिए इसकी उपचारात्मक योजना भी उसी प्रकार बनायी जाती है। उपचार प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य वजन कम होने के रोकना, शरीर के वर्तमान वजन को बनाए रखना एवं ऐसे पोषक तत्वों को आहार में देना जिससे वजन बढ़ सके। उपचार की योजना में पोषणात्मक प्रबन्ध एवं चिकित्सकीय प्रबन्ध सम्मिलित किए जाते हैं।

पोषणात्मक प्रबन्ध

पोषणात्मक प्रबन्ध के अन्तर्गत आहार सुधार, पोषण शिक्षा, मौखिक पूरक आहार देना, ट्यूब फीडिंग एवं अंतःशिरा पोषण आदि क्रियाएं सम्मिलित हैं। उपचार के लिए कौन-सा तरीका अपनाना है यह बात पूरी तरह से रोगी की अवस्था एवं लक्षणों पर निर्भर करती है। कभी-कभी एक से ज्यादा तरीकों को उपयोग में लाया जा सकता है।

आहार सुधार का मुख्य उद्देश्य संतुलित आहार प्रदान करना है। कुपोषण की पहचान के बाद शीघ्रातिशीघ्र बच्चे को उचित आहार प्रदान किया जाता है। आहार की योजना इस प्रकार बनायी जाती है कि कुपोषित रोगी को अधिकतम पोषण लाभ मिल सके। बच्चे को ऊर्जा एवं प्रोटीन उसकी आयु तथा दैनिक आवश्यकतानुसार देने चाहिए। ऐसी स्थिति में बहुत ज्यादा मात्रा में आहार देना कभी-कभी बच्चे को नुकसान दे सकता है। अधिक मात्रा में आहार अपच, अतिसार आदि समस्याएं उत्पन्न कर सकता है।

शिशुओं के लिए पूरक आहार बनाते समय खासतौर पर सावधानी बरतनी चाहिए। प्रोटीन की गुणवत्ता विशेषतः अच्छी एवं उच्च प्रकार की होनी चाहिए। ऊर्जा की मात्रा को धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए। आहार सुधार का मुख्य उद्देश्य आहार में पोषण सघनता को बढ़ाना होना चाहिए। अत्यधिक वसायुक्त भोज्य पदार्थों का उपयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि उनसे आहार की मात्रा एवं पोषक तत्वों की मात्रा कम हो जाती है। वसायुक्त भोज्य पदार्थ भूख को शान्त/कम कर देते हैं। बच्चे को दिन में दो या तीन बार अधिक मात्रा में भोजन देने के बजाय थोड़ी-थोड़ी मात्रा में पाँच या छः बार भोजन देना अधिक श्रेयस्कर रहता है। मुख्य भोजन के बीच कोई उच्च ऊर्जा-प्रोटीन पेय या नाश्ता दिया जा सकता है। जब बच्चे की हालत सुधरने लगे तो आहार में भोज्य पदार्थों की मात्रा को धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए। शिशुओं के लिए दूध एवं पूरक आहार बनाते समय साफ-सफाई का उचित ध्यान रखना चाहिए। इसके लिए भली प्रकार से उबला हुआ पानी प्रयोग करना चाहिए एवं दूध की बोतल को भी रोगाणु मुक्त रखना चाहिए।

पोषण शिक्षा का उद्देश्य भी आहार की मात्रा को बढ़ाना एवं संतुलित भोजन का प्रयोग है। देखभाल करने वाले व्यक्ति या बच्चों की माँ को पोषण शिक्षा के प्रति जागरूक किया जा

सकता है कि वह लोग कैसे कुपोषित बच्चे या व्यक्ति का उपचार कर सकते हैं। पोषण शिक्षा के अंतर्गत आहार विविधिकरण पर बल दिया जाता है।

पोषण शिक्षा में निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए:

1. माताओं एवं समुदाय के लोगों को स्तनपान का महत्व समझाना।
2. साफ-सफाई एवं स्वच्छता पर बल देना तथा लोगों को स्वच्छता की महत्ता समझाना।
3. टीकाकरण की आवश्यकता एवं लाभ समझाना।
4. बागवानी को प्रोत्साहित करना एवं घर के पीछे छोटे हिस्से में पोषक भोज्य पदार्थों को उगा कर ग्रहण करने की शिक्षा देना।
5. भोजन अंतर्ग्रहण से सम्बंधित भेदभाव दूर करने के लिए समाज को जागरूक करना।
6. बच्चों के लिए उचित पोषण का महत्व एवं देखरेख के अन्य उचित तरीके बताना।
7. पूरक आहार सम्बन्धी अंधविश्वास, मान्यताएं आदि के विषय में उचित जानकारी देकर उचित पोषण सम्बन्धी जानकारी देना।

मौखिक आहार सम्बन्धित उपचार निम्नलिखित तरीकों से करने चाहिए:

1. बच्चे को वसारहित दूध दिया जाना चाहिए क्योंकि वसायुक्त दूध कठिनता से पचता है।
2. वसारहित दूध में खिचड़ी, पके फल, दलिया आदि मिलाकर देने चाहिए।
3. तरल पेय पदार्थों जैसे सब्जियों का सूप, मूँग की घुटी दाल, फलों का रस, छाछ, दाल का पानी आदि पिलाना चाहिए। इस प्रकार का वसारहित भोजन बच्चे को कम से कम 3-4 सप्ताह तक दिया जाना चाहिए। जब ऐसा भोजन बच्चे को पचने लगे तब धीरे-धीरे भोज्य पदार्थों की मात्रा एवं गुणवत्ता बढ़ायी जानी चाहिए।
4. विटामिनों एवं खनिज लवणों की पूर्ति हेतु हरी पत्तेदार सब्जियों के रस, पीले फल, संतरा, मौसमी आदि फलों के रस का प्रयोग करना चाहिए।
5. मिश्रित भोज्य पदार्थों का उपयोग किया जाना चाहिए जैसे दाल-सब्जी एवं अनाज मिलाकर खिचड़ी, दूध-दलिया, खिचड़ी के साथ दूध या दही मिलाकर खिलाना चाहिए।
6. मरास्मस की स्थिति में बच्चों में ऊर्जा की भी कमी हो जाती है। अतः बच्चे के प्रति किलो ग्राम वजन के अनुसार उसे 140-150 किलो कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। अतः उसकी ऊर्जा की माँग की पूर्ति के लिए अधिक कैलोरीयुक्त भोज्य पदार्थ खिलाने चाहिए।
7. आसानी से पचने योग्य उत्तम किस्म का प्रोटीन देना चाहिए। इसके लिए दालों, फलियों, अण्डों, वसा रहित माँस का प्रयोग किया जाना चाहिए।

चिकित्सकीय प्रबन्धन

यदि कुपोषण की स्थिति गम्भीर है तो भोजन में सुधार के साथ-साथ चिकित्सकीय उपचार भी आवश्यक है। ऐसी अवस्था में बच्चे को अस्पताल ले जाना चाहिए जहाँ पर बीमारी, संक्रमण एवं चयापचय संबंधी इलाज किये जा सकें। सर्वप्रथम बच्चे की बीमारियों जैसे कम रक्त शर्करा, अत्यधिक टंड लगना, एनीमिया, अतिसार, वमन आदि का चिकित्सीय इलाज किया जाता है। प्रोटीन, ऊर्जा की कमी से उत्पन्न कुपोषण में रोगाणुओं का प्रकोप अधिक होता है। इसी कारण एंटीबायोटिक औषधियां देनी आवश्यक हैं। एक और सावधानी यह रखी जाती है कि ऐसे बच्चे को गर्म वस्त्र पहना कर गर्म स्थान पर रखना चाहिए।

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की रोकथाम

जैसा कि आप अध्ययन कर चुके हैं कि प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण एक गम्भीर समस्या है। इससे समुदाय, समाज एवं राष्ट्र के विकास में बाधाएं आती हैं। इसलिये समय रहते कुपोषण की रोकथाम के उपाय कर लेने चाहिए। जो संसाधन कुपोषण के उपचार में लगाये जा रहे हैं यदि उसी तरह से रोकथाम पर बल दिया जाए तो कुपोषण के दुष्परिणामों से बचा जा सकता है।

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की रोकथाम के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिए:

- प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की रोकथाम का सबसे उत्तम एवं सरल उपाय पोषण शिक्षा है। समुदायों में लोगों को आहार एवं पोषण संबंधी उचित जानकारी प्रदान करके जागरूक करना चाहिए।
- माताओं को उचित जानकारी होनी चाहिए कि शिशुओं को छः माह तक सिर्फ स्तनपान कराना चाहिए। छः महीने के पश्चात् पूरक आहार देना शुरू कर देना चाहिए। दूध पिलाने के लिए बोतल की अपेक्षा कप या कटोरी चम्मच का प्रयोग करना चाहिए।
- बच्चों को पूरक आहार धीरे-धीरे पहले तरल, फिर अर्द्ध ठोस, उसके पश्चात् ठोस एवं परिवार वाले आहार के रूप में देना चाहिए।
- परिवारों को व्यक्तिगत तथा पर्यावरणीय स्वच्छता के बारे में जागरूक करना एवं उसके लाभ समझाना।
- सभी माता-पिता को अपने पाँच साल से छोटे बच्चों को समय-समय पर स्वास्थ्य केन्द्र ले जाना चाहिए।
- सभी बच्चों का पूर्ण टीकाकरण होना चाहिए। समुदाय के लोगों को स्वयं भी इसके लिए जागरूक होना चाहिए।

- परिवार में भोजन का वितरण उचित प्रकार से होना चाहिए। महिलाओं के साथ भोजन संबंधी भेदभाव नहीं होना चाहिए।
- समय पर निदान एवं उपचार से गम्भीर कुपोषण की रोकथाम हो जाती है।
- आहार में प्रतिदिन फल, सब्जियाँ, प्रोटीन युक्त पदार्थ एवं साबुत अनाज होने चाहिए।
- रोगाणुओं से उत्पन्न रोगों एवं अतिसार का शीघ्र उपचार करना चाहिए।
- महामारी, अकाल, आपात आदि स्थितियों में बच्चों के पूरक आहार का प्रबन्ध होना चाहिए।
- बच्चों को समय-समय पर पेट के कीड़ों की दवाई देनी चाहिए।
- समुदाय में सभी को बागवानी करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

उपरोक्त सभी बातों से ज्ञात हो चुका है कि प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण से लड़ने के लिए एक साथ बहुत सी दिशाओं में कार्य करना चाहिए। इसके लिए मुख्य रूप से आहार को पोषक तत्वों से पुष्ट करना एवं पोषण संबंधी व्यवहारिक जानकारी का प्रसार बढ़ाना है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. बहुविकल्पीय प्रश्न

a. मरास्मस होता है:

- | | |
|---------------------------------------|--------------------------|
| (क) प्रोटीन एवं ऊर्जा दोनों की कमी से | (ख) खनिज लवणों की कमी से |
| (ग) प्रोटीन की कमी से | (घ) ऊर्जा की कमी से |

b. मरास्मस के मुख्य लक्षण हैं:

- | | |
|--------------------------------|-----------------------------|
| (क) वजन में कमी | (ख) माँसपेशियों में क्षीणता |
| (ग) रक्त में एल्ब्यूमिन की कमी | (घ) उपरोक्त सभी |

c. क्वाशियोरकर एवं मरास्मस अलग-अलग तरह के हैं:

- | | |
|--------------------|--------------------------|
| (क) खनिज कुपोषण | (ख) प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण |
| (ग) विटामिन कुपोषण | (घ) उपरोक्त सभी |

6.3.2 एनीमिया/ रक्ताल्पता

एनीमिया एक ग्रीक शब्द है जिसका अर्थ है “रक्तहीन”। एनीमिया नाम उन विकार रोगों के समूह को दिया गया है जिसमें शरीर में लाल कोशिकाओं की गुणात्मक या मात्रात्मक कमी हो जाती है। सामान्य से कम लाल रक्त कोशिका, हीमोग्लोबिन की मात्रा या रक्त में उपस्थित लाल कोशिकाओं की मात्रा को एनीमिया कहा जाता है। सामान्य भाषा में रक्ताल्पता का अर्थ रक्त की कमी से है। सटीक शब्दों में एनीमिया या रक्ताल्पता लाल रक्त कोशिकाओं में पाए जाने वाले पदार्थ हीमोग्लोबिन की कमी से होता है। हीमोग्लोबिन पूरे शरीर में ऑक्सीजन को प्रवाहित करता है। एनीमिया में शरीर में ऑक्सीजन की आपूर्ति में कमी आ जाती है।

लोहा हीमोग्लोबिन के निर्माण कि लिए अत्यन्त आवश्यक खनिज लवण है। हीमोग्लोबिन में हीम (लोहा) तथा ग्लोबिन (प्रोटीन) होता है।

हीमोग्लोबिन की मात्रा

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार विभिन्न आयु वर्गों के लोगों में हीमोग्लोबिन की ग्राम प्रति मि.ली. की मात्रा का सामान्य स्तर निश्चित है। उस स्तर से कम होने की स्थिति को एनीमिया कहा जाता है। विभिन्न आयु वर्गों के हीमोग्लोबिन का सामान्य स्तर नीचे दी गई तालिका में दिया गया है। निम्न तालिका के अनुसार महिलाओं में 12 ग्राम प्रति मि.ली. जबकि पुरुषों में 13 ग्राम प्रति मि.ली. हीमोग्लोबिन की मात्रा होनी चाहिए।

तालिका 6.5: सामान्य हीमोग्लोबिन स्तर

आयु वर्ग	हीमोग्लोबिन स्तर (ग्राम/मि.ली.)
बच्चे (5 माह से 5 वर्ष तक)	11.0
बच्चे (5 वर्ष से 12 वर्ष तक)	11.5
बच्चे (12 वर्ष से 15 वर्ष तक)	12.0
महिलाएं (15 वर्ष से अधिक)	12.0
पुरुष (15 वर्ष से अधिक)	13.0
गर्भवती महिलाएं	11.0

एनीमिया का वर्गीकरण हीमोग्लोबिन स्तर के अनुसार किया जाता है। सामान्य से कम हीमोग्लोबिन के आधार पर एनीमिया को तीन भागों में वर्गीकृत किया जाता है। (तालिका 6.6)

तालिका 6.6: एनीमिया का वर्गीकरण

स्तर	हीमोग्लोबिन स्तर (ग्राम/मि.ली.)
सामान्य	12 या उससे ज्यादा
न्यून	10-12
मध्यम	7-9.9
गंभीर	7 से कम

स्रोत: विश्व स्वास्थ्य संगठन

बढ़ते बच्चों, गर्भवती माताओं, किशोरियों एवं बीमार व्यक्तियों में एनीमिया का खतरा ज्यादा होता है।

एनीमिया के प्रकार

जैसा कि पूर्व में बताया गया है कि एक रोगों के समूह को एनीमिया नाम दिया गया है। एनीमिया के कई प्रकार हैं।

1. हाइपोक्रोमिक माइक्रोसीटिक एनीमिया (Hypochromic and Microcytic Anaemia): यदि शरीर में लाल रक्त कोशिकाओं का आकार सामान्य से छोटा हो जाता है तो उसे माइक्रोसीटिक एनीमिया कहते हैं। ऐसा तब होता है जब हीमोग्लोबिन का स्तर लौह तत्व की कमी के कारण गिर जाता है। ऐसी स्थिति में लाल रक्त कोशिकाएं पीली एवं छोटी दिखाई देती हैं।

2. मेगालोब्लास्टिक एनीमिया (Megaloblastic Anaemia): एनीमिया के इस प्रकार में लाल रक्त कोशिका सामान्य आकार से काफी बड़ी हो जाती हैं। यह फोलिक अम्ल एवं विटामिन बी-12 की कमी से होता है।

3. हाइपोक्रोमिक एवं मैक्रोसिटिक एनीमिया (Hypochromic and Macrocytic Anaemia): इस प्रकार के एनीमिया में लाल रक्त कोशिकाओं का आकार सामान्य से बढ़ जाता है एवं हीमोग्लोबिन का स्तर घट जाता है। इस प्रकार का एनीमिया लौह तत्व एवं फोलिक अम्ल या विटामिन बी-12 की कमी से होता है।

4. परनीसियस एनीमिया: इस प्रकार का एनीमिया तब होता है जब रक्त में लाल कोशिकाएं कम हो जाती हैं एवं जो कोशिकाएं पूर्व से ही विद्यमान हैं उनका आकार सामान्य से बड़ा हो जाता है। इस एनीमिया में हीमोग्लोबिन का स्तर सामान्य रहता है। परनीसियस एनीमिया का मुख्य कारण विटामिन बी-12 का अवशोषण उचित प्रकार से न हो पाना है।

5. रक्तस्राव के कारण एनीमिया: इस प्रकार का एनीमिया अत्यधिक रक्तस्राव के कारण होता है। रक्तस्राव सर्जरी के बाद, बार-बार रक्तदान करने से या पाचन तंत्र में कीड़ों की उपस्थिति एवं मासिक धर्म में अत्यधिक स्राव के कारण हो सकता है।

6. पोषणज एनीमिया: विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार किसी एक या अधिक पोषक तत्वों की कमी के कारण हीमोग्लोबिन की मात्रा में कमी आने वाली स्थिति को पोषणज एनीमिया कहते हैं। लौह तत्व, फोलिक अम्ल एवं विटामिन बी-12 की कमी से होने वाले एनीमिया, पोषणज एनीमिया की श्रेणी में आते हैं। इस इकाई में हम पोषणज एनीमिया के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

लौह तत्व की कमी से होने वाला एनीमिया

भारत में सबसे ज्यादा लौह तत्व की कमी से होने वाला एनीमिया व्याप्त है। गर्भवती महिलाओं और बच्चों में यह मुख्य रूप से पाया जाता है क्योंकि इस उम्र में शरीर में लौह तत्व की आवश्यकता अधिक होती है। लौह तत्व, हीमोग्लोबिन अणु का महत्वपूर्ण हिस्सा है। हीमोग्लोबिन के सामान्य संश्लेषण के लिए शरीर में लौह तत्व की समुचित आपूर्ति होनी आवश्यक है।

लाल रक्त कोशिकाओं की जीवन अवधि 120 दिन की होती है, उसके बाद वह परिसंचरण से हट जाते हैं। नष्ट लाल रक्त कोशिकाओं से लौह तत्व अस्थि मज्जा में वापस लाया जाता है। अस्थि मज्जा में निरन्तर लाल रक्त कोशिकाओं का निर्माण होता रहता है। यह लौह तत्व नवगठित लाल कोशिकाओं में पुनः शामिल कर लिया जाता है। शरीर को लौह तत्व की आवश्यकता चयापचयिक हानि, मासिक धर्म हानि एवं शारीरिक वृद्धि के लिए होती है। शरीर में लौह तत्व की कमी से एनीमिया आहार में लौह तत्व के अपर्याप्त सेवन से या लाल रक्त कोशिकाओं में उपस्थित लौह तत्व के अपर्याप्त पुनरुपयोग से होता है।

एक अनुमान के अनुसार विश्व की 20 प्रतिशत जनसंख्या में लौह तत्व की कमी है। लौह तत्व की कमी से होने वाला एनीमिया हाइपोक्रोमिक (लाल रक्त कोशिकाओं का कम रंग) एवं माइक्रोसिटिक (लाल रक्त कोशिकाओं का छोटा आकार) होता है। लाल रक्त कोशिकाओं का रंग फीका इसलिए पड़ जाता है क्योंकि उनमें सामान्य से कम मात्रा में हीमोग्लोबिन होता

है। कोशिकाओं का छोटा आकार हीमोग्लोबिन का स्तर कम होने कारण होता है। लौह तत्व की कमी से उत्पन्न एनीमिया की पहचान करने के लिए विभिन्न प्रयोगशाला परीक्षण किये जा सकते हैं। सबसे पहला परीक्षण रक्त में हीमोग्लोबिन की जाँच का होता है। हीमोग्लोबिन का स्तर जानने के बाद अन्य परीक्षण जैसे सीरम Ferritin, सीरम लौह तत्व एवं सीरम Iron binding capacity भी किये जा सकते हैं। सामुदायिक स्तर पर सिर्फ हीमोग्लोबिन का स्तर जाँच कर ही एनीमिया की पहचान की जाती है।

लौह तत्व की कमी से उत्पन्न एनीमिया के कारण

मानव शरीर में लौह तत्व की कमी कई कारणों से हो सकती है।

1. अपर्याप्त आहार: शरीर में लौह तत्व की कमी का मुख्य कारण अपर्याप्त आहार है। लम्बे समय तक आहार से लौह तत्व युक्त भोज्य पदार्थों का सेवन कम या न करना एनीमिया का प्रमुख कारण है। यदि आहार में लौह तत्व युक्त भोज्य पदार्थ उपस्थित भी हों परन्तु वह अवशोषित न होने वाले हों, ऐसी स्थिति में भी एनीमिया हो जाता है।

2. असंतुलित आहार: आहार में प्रोटीन की तुलना में अधिक कार्बोहाइड्रेट का समावेश आहार के माध्यम से अधिक फॉस्फेट, फाइब्रेट एवं रेशे प्रदान करता है। ये सभी तत्व लौह लवण के साथ मिलकर अघुलनशील लवण बनाते हैं जिससे लौह लवण का अवशोषण उचित प्रकार से नहीं हो पाता है। प्रतिदिन ज्यादा चाय, कॉफी पीने से भी लौह लवण के अवशोषण में बाधा पड़ती है। आहार में लौह लवण युक्त भोज्य पदार्थों जैसे हरी पत्तेदार सब्जियाँ, पोहा, अंकुरित दालें आदि को सम्मिलित न करना एवं आहार में लौह लवण के अवशोषण अवरोधक की उपस्थिति एनीमिया रोग का कारण बनती है।

3. लौह लवण की अधिक माँग: मानव शरीर में लौह लवण की माँग आयु की विभिन्न अवस्थाओं में बढ़ जाती है। शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, गर्भावस्था एवं धात्रीवस्था आदि में शरीर की लौह तत्व की माँग बढ़ जाती है। इन अवस्थाओं में यदि उचित मात्रा में लौह तत्व प्रतिदिन न लिया जाए तो एनीमिया हो जाता है।

4. अत्यधिक रक्तस्राव होने से: अत्यधिक रक्तस्राव भी एनीमिया का बड़ा कारण है। रक्तस्राव दुर्घटना के कारण, मासिक धर्म में अत्यधिक स्राव, बीमारी जैसे अल्सर, मलेरिया, पेट का कैंसर, प्रसव के समय, गर्भपात होने से, आंतों में परजीवियों की उपस्थिति से हो सकता है। इन सभी कारणों से भी एनीमिया हो जाता है।

5. जल्दी-जल्दी रक्तदान: साल भर में दो बार से अधिक रक्तदान एनीमिया का कारण बन सकता है।

6. दवाईयां: कुछ दवाईयों का निरन्तर प्रयोग एनीमिया का कारण बन सकता है। दर्द निवारक दवा, शराब एवं कीमोथेरेपी में प्रयोग होने वाली दवाएं एनीमिया की स्थिति पैदा कर सकती हैं।

7. अन्य कारण: अन्य कारण जैसे प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण, आहार में अवशोषण के सहायक तत्वों की कमी, आमाशय द्वारा जठर रस का पर्याप्त स्रावण नहीं होना, अतिसार दस्त आदि की स्थिति, अस्थियों का ट्यूमर आदि से भी एनीमिया हो सकता है।

एनीमिया के लक्षण

लौह तत्व की कमी से उत्पन्न एनीमिया से पीड़ित व्यक्ति में लक्षण साफ-साफ नहीं दिखाई देते हैं। जब एनीमिया गम्भीर रूप धारण कर लेता है तब इसके लक्षण दिखाई देते हैं। यह रोग धीरे-धीरे बढ़ता है। एनीमिया के सामान्य लक्षण निम्नलिखित हैं:

- शीघ्र थकावट महसूस करना
- त्वचा का रंग पीला पड़ जाना
- सांस लेने में कठिनाई
- चक्कर/सिर में दर्द
- हाथ-पैरों में दर्द
- भूख में कमी
- बच्चों में सुस्तता एवं उदासीनता
- जीभ चिकनी एवं चमकदार
- नाखून भंगुर एवं नाजूक हो जाते हैं। बाद में वे चपटे और पतले होने लगते हैं और अन्त में नाखून चम्मच जैसे आकार के हो जाते हैं, इसे कोइलोनाकिया/Koilonychia कहते हैं।

एनीमिया काम करने की क्षमता विशेषकर निरन्तर शारीरिक क्रियाकलाप के सामर्थ्य को कम कर देता है।

गर्भावस्था में लौह तत्व की कमी से उत्पन्न एनीमिया माता एवं भ्रूण दोनों के लिए खतरे उत्पन्न करता है। गर्भवती महिलाएं एनीमिया से ग्रस्त होकर बीमार रहती हैं, जिससे मातृ एवं शिशु मृत्यु की संभावना बढ़ जाती है। ऐसी महिलाएं कम भार वाले शिशु को जन्म देती हैं।

शैशव और बचपन के प्रारम्भिक दौर में लौह तत्व की कमी से उत्पन्न एनीमिया बच्चे के मनोवैज्ञानिक विकास में देरी कर सकता है और उनके संज्ञानात्मक विकास में बाधा डाल

सकता है। इससे उनकी बुद्धिलब्धि (आई. क्यू.) कम हो सकती है। स्कूल पूर्व आयु के बच्चे एनीमिया के कारण किसी चीज पर ध्यान लगाये रखने और विभिन्न दृश्यों को अलग-अलग ढंग से समझने में कठिनाई महसूस करते हैं। प्राथमिक स्कूल आयु एवं किशोरावस्था में स्कूल में सफलता की कमी को भी लौह तत्व की कमी से जोड़ कर ही देखा जाता है। लौह तत्व की कमी के कारण होने वाला एनीमिया संक्रमण का प्रतिरोध कम कर देता है। महिलाओं में लौह तत्व की कमी से बाल झड़ने लगते हैं। लौह तत्व की कमी में विशेषकर बर्फ, मिट्टी, नमक, स्टार्च आदि खाने की अत्यधिक इच्छा होती है।

फोलिक अम्ल की कमी से उत्पन्न एनीमिया

फोलिक अम्ल एक जल में घुलनशील विटामिन है। यह बहुत से पादप जन्य भोज्य पदार्थों एवं पशु जन्य भोज्य पदार्थों में पाया जाता है। जल में घुलनशील होने के कारण मानव शरीर में फोलिक अम्ल का अत्यधिक संग्रह नहीं हो सकता है। इसलिए यदि फोलिक अम्ल का दैनिक आवश्यकतानुसार सेवन नहीं किया जाता है तो इसकी कमी के लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

फोलिक अम्ल की कमी से मेगालोब्लास्टिक एनीमिया हो जाता है। फोलिक अम्ल की न्यूनता से अस्थिमज्जा में लाल रक्त कोशिकाओं के निर्माण पर असर पड़ता है। लाल रक्त कोशिकाओं का आकार बढ़ने लगता है एवं उनकी संख्या घटने लगती है।

मेगालोब्लास्टिक एनीमिया के कारण

यह एनीमिया विशेषकर गर्भवती माताओं तथा शिशुओं को होता है। यह निम्न कारणों से होता है:

- पौष्टिक तथा सन्तुलित आहार का सेवन न करने से।
- आहार में फोलिक अम्ल की कमी से।
- भोज्य पदार्थों का ठीक प्रकार से अवशोषण न होने पर।
- बार-बार (जल्दी) गर्भधारण से।
- कुछ विशिष्ट दवाओं के सेवन से।
- अत्यधिक शारीरिक माँग होने के बावजूद उसके अनुरूप पौष्टिक भोजन का सेवन न करने से।
- बार-बार अतिसार होने से।
- संक्रमण एवं बीमारी के कारण।

- शल्य चिकित्सा के कारण।
- अत्यधिक शराब के सेवन से।

लक्षण

मेगालोब्लास्टिक एनीमिया में भी लौह तत्व की कमी जैसे ही लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। इसके अलावा इसमें अतिसार तथा वजन में हानि भी हो सकती है।

विटामिन बी-12 की कमी से होने वाला एनीमिया

विटामिन बी-12 को साएनोकोबैलेमिन (Cyanocobalamin) कहते हैं। मनुष्य ऊतकों में विटामिन बी-12 का निर्माण नहीं होता है। इसलिये विटामिन बी-12 हमें आहारिय स्रोतों से लेना आवश्यक होता है। विटामिन बी-12 केवल पशुजन्य भोज्य पदार्थों में पाया जाता है। मांस, यकृत, मछली, अंडा आदि इसके उत्कृष्ट स्रोत हैं। विटामिन बी-12 की कमी से मेगालोब्लास्टिक एनीमिया होता है। विटामिन बी-12 अस्थि मज्जा में परिपक्व लाल रक्त कोशिकाओं के निर्माण के लिए आवश्यक है। अतः इसे रक्त वर्धक तत्व भी कहते हैं। यह शरीर में डीएनए के निर्माण के लिए आवश्यक है। यह तंत्रीय ऊतकों की रक्षा करने वाले वसीय पदार्थ माइलिन के निर्माण के लिए आवश्यक है।

कमी के कारण: आहार में विटामिन बी-12 की कमी अथवा विशुद्ध शाकाहारी होने से शरीर में विटामिन बी-12 की कमी हो जाती है।

रोग के लक्षण: लाल रक्त कोशिकाएं आकार में बड़ी होकर संख्या में घट जाती हैं। हीमोब्लोबिन का स्तर काफी नीचे गिर जाता है। मुंह में छाले हो जाते हैं तथा त्वचा का रंग पीला दिखने लगता है। भूख न लगना भी इसका महत्वपूर्ण लक्षण है।

परनीसियस एनीमिया

यह एनीमिया आमाशयिक रस में पर्याप्त मात्रा में अन्तः कारक (Intrinsic Factor) तत्व न उपस्थित होने से शरीर में विटामिन बी-12 के ठीक प्रकार से अवशोषित न होने के कारण होता है। इस रोग की व्यापकता अधिक नहीं है। यह विटामिन बी-12 की सामान्य कमी से भिन्न है।

पोषण संबंधी एनीमिया का उपचार

लौह तत्व की कमी से उत्पन्न एनीमिया दुनिया में पोषण संबंधी सबसे व्यापक समस्या है। भारत में आधी से अधिक महिलाएं एवं काफी बड़े अनुपात में छोटे बच्चे इसका शिकार हैं।

एनीमिया का उपचार आवश्यक है क्योंकि जनसंख्या का बड़ा हिस्सा इससे प्रभावित है। एनीमिया के उपचार में कारण को पहचानना एवं उसका उपचार, प्रभावित पोषक तत्व की कमी को दूर करना एवं लक्षणों को समाप्त करना सम्मिलित है।

लौह तत्व की कमी से उत्पन्न एनीमिया में सिर्फ हीमोग्लोबिन ही कम नहीं होता अपितु संग्रहित लौह तत्व भी समाप्त हो जाते हैं। एनीमिया के उपचार के लिए निम्नलिखित तरीके अपनाने चाहिए:

1. आहार में सुधार

लौह तत्व की कमी को ठीक करने के लिए आहार संशोधन प्रभावी उपाय है। आहार संशोधन का मुख्य उद्देश्य समुदाय के लोगों के रक्त में लौह तत्व का स्तर बढ़ाना एवं उसे उचित स्तर पर बनाये रखना है।

आहार में सुधार के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए:

- दैनिक आहार में ताजे फल, हरी पत्तेदार सब्जियां, खट्टे फल आदि अवश्य रूप से सम्मिलित करने चाहिए। सस्ते फल जैसे अमरूद, केला, तरबूज लौह तत्व के अच्छे स्रोत हैं।
- लौह तत्व के उचित अवशोषण के लिए विटामिन सी युक्त आहार लेना चाहिए।
- दूध एवं दूध से बने पदार्थों का उपयोग भोजन के साथ न करके दो आहारों के मध्य नाश्ते के रूप में करना चाहिए।
- चाय, कॉफी का सेवन भोजन के दो घंटे पहले एवं बाद में नहीं करना चाहिए।
- संभव हो तो भोजन को लोहे के बर्तन में पकाना चाहिए।
- भोजन से लौह तत्व की उपलब्धता बढ़ाने के लिए खमीरीकरण, अंकुरण आदि का उपयोग करके भोजन पकाया जा सकता है।

2. नियमित कृमिनाशक का प्रयोग

सुभेद्य समूहों को कृमिनाशक दवा देना जरूरी होता है। कृमिनाशक दवा से रक्त हानि एवं एनीमिया से तो बचाव होता ही है, साथ-साथ इसके प्रयोग से भूख भी ज्यादा लगती है और पेट एवं सिरदर्द जैसी समस्या समाप्त हो जाती हैं। साल में तीन बार एलबेन्डाजोल की गोली चिकित्सक की सलाह पर प्रदान की जा सकती है।

3. मलेरिया की रोकथाम एवं उपचार

जन समूहों में एनीमिया का महत्वपूर्ण कारण मलेरिया है। इसलिए समय रहते मलेरिया का उपचार आवश्यक है। इसके लिए दवा उपलब्ध कराना तथा समुदायों को मलेरिया से बचाव के लिए जागरूक करना आवश्यक है।

4. सम्पूर्ण टीकाकरण

बच्चों को संक्रमण से बचाने के लिए सभी प्रकार के टीके अवश्य लगवाने चाहिए।

5. स्वास्थ्य एवं पोषण शिक्षा

एनीमिया से बचाव एवं रोकथाम के लिये वृहत पोषण शिक्षा कार्यक्रम की आवश्यकता है। इसमें स्कूली शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

6. महिलाओं की उचित देखभाल

प्रजनन आयु में महिलाओं की उचित देखभाल अति आवश्यक है। प्रसव एवं प्रसवोपरान्त उचित देखभाल एवं लौह तत्व युक्त भोज्य पदार्थों के नियमित उपयोग को प्रोत्साहित करना चाहिए।

7. हीमोग्लोबिन का स्तर बढ़ाने के लिए दवा

200 मिली ग्राम फैरस सल्फेट वाली तीन गोलियाँ तीस दिन तक प्रतिदिन खाने से हीमोग्लोबिन का स्तर सामान्य होने के बाद भी दवा का प्रयोग करते रहना चाहिए जिससे शरीर का लौह भण्डार पुनः सामान्य हो सके।

लौह तत्व की कमी से उत्पन्न एनीमिया की रोकथाम

- एनीमिया से संबंधित जागरूकता पैदा करने के लिए समुदायों में पोषण शिक्षा प्रदान करना।
- समय-समय पर लौह तत्व एवं फोलिक अम्ल की गोलियां देना।
- छः महीने तक की आयु के शिशु को सिर्फ स्तनपान कराने के लिए प्रोत्साहित करना।
- बचपन से आहार एवं पोषण संबंधी अच्छी आदतों के निर्माण के लिए स्कूली शिक्षा।
- बच्चों को छः महीने पश्चात् पूरक आहार देने के लिए जागरूकता फैलाना।
- लौह तत्व युक्त भोज्य पदार्थों के उपयोग को प्रोत्साहित करना एवं उन्हें अपने रसोई उद्यान में उगाने के लिए जागरूक तथा प्रोत्साहित करना।

फोलिक अम्ल की कमी का उपचार

फोलिक अम्ल की कमी से उत्पन्न एनीमिया को दूर करने के लिए सबसे पहले जिस कारण से कमी उत्पन्न हो रही है उसे दूर करना आवश्यक है।

- इस प्रकार के एनीमिया के निवारण हेतु वयस्कों को 5-20 मिली ग्राम फोलिक अम्ल मुंह के द्वारा दिया जाता है। रोग की तीव्रता की स्थिति में 2-5 मिली ग्राम फोलिक अम्ल इंजेक्शन के माध्यम से रोगी की मांसपेशियों में दिया जा सकता है।
- एक अच्छा संतुलित आहार भी इस प्रकार के एनीमिया के निवारण में उपयोगी होता है।
- आहार में पर्याप्त मात्रा में विटामिन एवं खनिज लवण होने चाहिए। हरी पत्तेदार सब्जियां, मांस, अण्डे, साबुत अनाज एवं फलों को आहार में दैनिक रूप से सम्मिलित करना चाहिए।
- गर्भवती महिलाओं को कम से कम 400 माइक्रोग्राम फोलिक अम्ल प्रतिदिन लेना चाहिए।

विटामिन बी-12 की कमी का उपचार

उपचार में आहारिय संशोधन एवं विटामिन बी-12 का खुराक इंजेक्शन सम्मिलित है। आहार में पर्याप्त दूध, दही, अंडे आदि के सेवन से कमी को दूर किया जा सकता है। साधारणतया मैगालोब्लास्टिक एनीमिया के लिए मुख द्वारा प्रतिदिन 50 से 100 माइक्रोग्राम विटामिन बी-12 दिया जाता है। साथ ही खान-पान पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। पर्याप्त मात्रा में दूध, हरी पत्तेदार सब्जियां, फल, अंडे आदि का सेवन करना चाहिए ताकि विटामिन बी-12 के साथ फोलिक अम्ल भी प्राप्त हो सके। संतुलित भोजन करना चाहिए। यदि व्यक्ति मांसाहारी है तो यकृत का सेवन अधिकाधिक करना चाहिए। उच्च प्रोटीन युक्त आहार का सेवन करना चाहिए।

लौह लवण का अवशोषण

लौह लवण का अवशोषण छोटी आंत के पक्वाशय एवं जेजुनम वाले भाग में होता है। भोज्य पदार्थों में उपस्थित लौह तत्व पाचन के पश्चात् फेरस रूप में बदल जाता है। लौह लवण का अवशोषण आंत में फेरस रूप (Fe^{++} , Ferrous form) में ही होता है। आंत में लौह लवण का अवशोषण अनेक कारकों पर निर्भर करता है।

- लौह तत्व का प्रकार

भोजन में उपस्थित लौह लवण को मुख्य रूप से दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

- हीम लौह तत्व (Haem iron)
- नॉन हीम लौह तत्व (Non-haem iron)

हीम लौह तत्व रक्त में हीमोग्लोबिन में उपस्थित रहता है। यह यकृत, मांस, मछली, पेशीयुक्त मांस आदि में उपस्थित रहता है। इन भोज्य पदार्थों में उपस्थित लौह लवण का 60-70 प्रतिशत अवशोषित हो जाता है।

नॉन हीम लौह तत्व का अवशोषण शीघ्रता एवं पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है। इसके उचित अवशोषण के लिए अवशोषण को बढ़ावा देने वाले तत्वों (Enhancers) की आवश्यकता पड़ती है।

लौह लवण का अवशोषण उसकी प्रकृति पर भी निर्भर करता है। लौह लवण का अवशोषण फेरस रूप (Fe^{++} , Ferrous form) में सुगमता से होता है। फेरिक रूप (Fe^{3+} , Ferric form) में लौह तत्व का अवशोषण नहीं हो पाता है। जब फेरिक रूप, फेरस रूप में बदलता है तभी उसका समुचित अवशोषण हो पाता है। हीम लौह तत्व फेरस रूप में होता है एवं नॉन हीम लौह तत्व फेरिक रूप में होता है।

● लौह लवण के अवशोषण में अवरोधक (Inhibitors of Iron Absorption)

लौह लवण के अवशोषण में बहुत से खाद्य पदार्थों के तत्व अवरोधक या बाधक का कार्य करते हैं। यह तत्व कॉफी, चाय, दूध, दूध उत्पाद, अंडे, साबुत अनाज में ऑक्जलेट, फाइटेट, फॉस्फेट, टैनिन आदि के रूप में उपस्थित होते हैं। यह तत्व नॉन हीम लौह तत्व के अवशोषण को प्रभावित करते हैं।

लौह लवण के अवशोषण में सहायक तत्व

नॉन हीम लौह तत्व के अवशोषण में विटामिन सी, लैक्टिक एसिड, प्रोटीन, विटामिन ई सहायक तत्व हैं।

अभ्यास प्रश्न 2

1. बहुविकल्पीय प्रश्न

- a. पादप खाद्य पदार्थों में पाया जाने वाला नॉन हीम लौह तत्व विटामिन की उपस्थिति में बेहतर अवशोषित होता है:

(क) विटामिन ए (ख) विटामिन के

- (ग) विटामिन सी (घ) विटामिन ई
- b. लौह तत्व की आवश्यकता में वृद्धि होती है:
- (क) वयस्क पुरुष में (ख) धात्री माता में
(ग) एनीमिया से ग्रस्त बच्चों में (घ) 50 साल से अधिक उम्र की महिला में
- c. निम्नलिखित खाद्य पदार्थों में किस की उपस्थिति में लौह लवण की अवशोषण की संभावना कम होती है:
- (क) संतरे का रस (ख) मछली
(ग) दाल (घ) चाय
- d. लौह लवण की कमी से होने वाले एनीमिया का लक्षण है:
- (क) तेज धड़कन (ख) थकान
(ग) बुखार (घ) तेज यादाशत
- e. किस जनसंख्या समूह में विटामिन बी-12 की कमी का खतरा रहता है:
- (क) गर्भवती महिला (ख) शुद्ध शाकाहारी
(ग) शिशु (घ) किशोर
- f. निम्नलिखित में से किस बीमारी के कारण एनीमिया हो सकता है:
- (क) निमोनिया (ख) दिमागी बुखार
(ग) पेट के कीड़े (घ) कब्ज

आइए अब विटामिन ए की कमी से सम्बंधित समस्याओं के बारे में जानें।

6.3.3 विटामिन 'ए' की कमी

विटामिन 'ए' की कमी दूसरी बड़ी जन स्वास्थ्य समस्या है। विटामिन ए की कमी से दुनिया भर में करोड़ों छोटे बच्चे प्रभावित होते हैं। यह बच्चों में दृष्टिहीनता का एक बड़ा कारण है। शोधों से स्पष्ट हो चुका है कि विटामिन ए की कम मात्रा में कमी भी रोगप्रतिरोधी क्षमता को काफी कम कर देती है।

विटामिन ए की भूमिका

विटामिन ए सामान्यतः यकृत में संग्रहित होता है। आप यह जानते हैं कि विटामिन ए आँखों के उत्तम स्वास्थ्य के लिए बेहद जरूरी होता है। हल्की रोशनी में देखने की क्षमता विटामिन ए से ही मिलती है। यह आच्छादक ऊतकों के उत्तम स्वास्थ्य को बनाये रखने में अमूल्य भूमिका निभाता है। विटामिन ए त्वचा को कोमल, चमकदार एवं स्वस्थ बनाये रखने के लिए अत्यन्त

आवश्यक है। यह रोगरोधक प्रणाली के सुचारु संचालन में सहायक होता है। यह शारीरिक वृद्धि के लिए आवश्यक विटामिन है।

विटामिन ए की कमी के कारण

विटामिन ए माँ के दूध, कलेजी, अण्डों, मक्खन और गाय के दूध में मिलता है। वनस्पति खाद्य स्रोतों जैसे हरी पत्तेदार सब्जियों, संतरे, पीले फल एवं सब्जियों, गाजर और लाल खजूर के तेल में विटामिन ए बीटा-कैरोटीन रूप में उपस्थित होता है जो पेट की भीतरी दीवारों में रेटीनॉल में परिवर्तित हो जाता है। खाद्य पदार्थों में व्यापक रूप से विटामिन ए की उपलब्धता के बाद भी विटामिन ए की कमी जनसंख्या में उल्लेखनीय रूप से व्याप्त है। इसकी कमी के निम्नलिखित कारण हैं:

- इसका प्रबल और मुख्य कारण आहार में उचित मात्रा में विटामिन ए सम्मिलित न करना है।
- दूसरा महत्वपूर्ण कारण आहार में अत्यधिक कम मात्रा में वसा का उपयोग होना है। वसा के अभाव में विटामिन ए का सही प्रकार से अवशोषण नहीं हो पाता है।
- आहार में प्रोटीन की कमी से भी विटामिन ए की कमी उत्पन्न हो सकती है क्योंकि विटामिन ए के परिवहन में प्रोटीन की आवश्यकता पड़ती है।
- माँ के दूध में अच्छी मात्रा में विटामिन ए होता है। यदि शिशु को छः माह से पहले माँ का दूध देना बन्द कर दिया जाए तो बच्चे में विटामिन ए की कमी उत्पन्न हो सकती है। वहीं दूसरी ओर छः महीने के पश्चात भी यदि शिशु को सिर्फ माँ का ही दूध दिया जाता है तो भी विटामिन ए की कमी उत्पन्न हो सकती है। छः माह के बाद सिर्फ माँ के दूध से बच्चे की विटामिन ए की आवश्यकता की पूर्ति नहीं होती है। पूरक आहार में भी यदि विटामिन ए के स्रोत नहीं हैं तो भी कमी हो सकती है।
- बचपन का संक्रमण, विशेष तौर पर खसरा का संक्रमण शरीर से विटामिन ए के भंडार को कम कर देता है जिससे जिरोपथेलमिया होने की आशंका बढ़ जाती है।
- व्यक्तिगत एवं पर्यावरणीय स्वच्छता का अभाव, कृमि संक्रमण आदि शरीर में विटामिन ए के उचित अवशोषण में बाधा डालते हैं जिससे विटामिन ए की थोड़ी- सी कमी भी जल्द ही बढ़ कर विकराल रूप धारण कर लेती है।

- परिवार में खाद्य असुरक्षा, भोजन उपलब्धता का अभाव, निर्धनता, अशिक्षा, ज्ञान का अभाव, अंधविश्वास, मान्यताएँ एवं खाने-पीने संबंधी आदतें आदि अनेक अप्रत्यक्ष कारण हैं जिनसे विटामिन ए की कमी हो सकती है या विटामिन ए की कमी को बढ़ावा मिलता है।

विटामिन ए की कमी के लक्षण

विटामिन ए की कमी की पहचान निम्नलिखित लक्षणों से की जा सकती है:

1. विटामिन ए की कमी वाले बच्चों की रोग प्रतिरोधी क्षमता कम हो जाती है जिससे उन्हें संक्रमण होने की आशंका बढ़ जाती है। पहले से मौजूद संक्रमण और अधिक तीव्र हो जाते हैं। इस प्रकार बच्चा संक्रमण एवं विटामिन ए की कमी के कुचक्र में फंसा रह जाता है।

2. विटामिन ए की कमी विकासशील देशों में बच्चों में अन्धेपन का मुख्य कारण है। विटामिन ए की कमी की तीव्रता के अनुसार आँखों में तकलीफ होने लगती है। यदि आहार में निरंतर विटामिन ए की कमी बनी रहती है तो जिरोफथैलमिया रोग हो जाता है। इस रोग में आँखों की कॉर्निया की श्लैष्मिक झिल्ली सूख जाती है एवं कॉर्निया में सूजन आ जाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने नैदानिक लक्षणों के आधार पर जिरोफथैलमिया का निम्न वर्गीकरण किया है:

रतौंधी: यह जिरोफथैलमिया का प्रथम लक्षण है। रतौंधी की स्थिति में अंधेरे में या कम रोशनी में नहीं दिखाई देता है। इसके साथ-साथ रोशनी से अंधेरे में जाने पर कम या नहीं के बराबर दिखाई देता है। आप पहले भी पढ़ चुके हैं कि आँखों के रेटिना में रॉड्स होते हैं, जिनमें रोडोप्सिन नामक वर्णक होता है। यह रोडोप्सिन धुंधले प्रकाश में देखने की क्रिया को नियंत्रित करता है। रोडोप्सिन ऑप्सिन (प्रोटीन) एवं विटामिन ए (ऐल्डोहाइड रूप) से मिलकर बनता है। विटामिन ए के अभाव में रोडोप्सिन की क्रिया सम्पन्न नहीं हो पाती है। परिणामस्वरूप व्यक्ति को अंधेरे या कम प्रकाश में कुछ भी नहीं दिखाई देता है।

कन्जक्टाइवल जेरोसिस: विटामिन ए की कमी से कन्जक्टाइवा सूखकर मोटी हो जाती है। कन्जक्टाइवा पर झुर्रियां दिखाई देने लगती हैं। ऐसा आँखों की श्लैष्मिक झिल्लियों के ठीक प्रकार से काम न करने के कारण होता है। श्लैष्मिक झिल्लियों के सूखने से कन्जक्टाइवा में धुँए जैसी सफेदी छा जाती है।

बिटॉट स्पॉट: यह कन्जक्टाइवा पर त्रिकोणीय, चमकदार, भूरे/सफेद रंग के झागदार धब्बे होते हैं। अधिकतर यह धब्बे उठे हुए होते हैं। ये विटामिन ए की कमी के स्पष्ट संकेत देते हैं।

कॉर्नियल जेरोसिस: इस स्थिति में कॉर्निया धुंधला और शुष्क हो जाता है। यह नम या भीगा हुआ दिखाई नहीं देता और अन्ततः अपारदर्शी हो जाता है। यह एक गम्भीर अवस्था होती है। विटामिन ए की अत्यधिक कमी होने पर कॉर्निया में जखम बन जाता है।

केरेटोमलेशिया: इस स्थिति में कॉर्निया की स्लेष्मिक झिल्ली टूटने लगती है एवं कॉर्निया का द्रवीकरण होने लगता है, जिससे कॉर्निया अपारदर्शी हो जाता है। जब कॉर्निया का भीतरी हिस्सा गल जाता है तब इसमें घाव होने लगते हैं। इन घावों पर जीवाणुओं का संक्रमण होने लगता है जिससे कॉर्निया तथा नेत्रगोलक नष्ट होने लगते हैं। यह स्थिति दोनों आंखों में या सिर्फ एक आंख में भी हो सकती है।

कॉर्नियल स्कार: केरेटोमलेशिया के ठीक होने पर घाव का निशान रह जाता है। उसे कॉर्नियल स्कार कहते हैं। इसके कारण दृष्टि पूर्णतः या आंशिक रूप से कम हो जाती है।

विटामिन ए की कमी से उत्पन्न आंखों की बीमारियाँ भारत में अन्धेपन के सर्वाधिक सामान्य कारण हैं।

1. आंखों के अतिरिक्त विटामिन ए की कमी त्वचा पर भी दिखाई देती है। विटामिन ए के अभाव में त्वचा की स्वेद ग्रंथियाँ ठीक प्रकार से कार्य नहीं करती हैं, जिसके कारण पसीना नहीं निकलता है तथा त्वचा सूखी, खुरदरी, रूक्ष, कठोर एवं खूटीदार हो जाती है। त्वचा पर छोटे-छोटे दाने निकल आते हैं। त्वचा के इस रोग को 'टोड स्किन' कहते हैं।
2. विटामिन ए की कमी के कारण शारीरिक वृद्धि में अवरोध आ जाता है।
3. विटामिन ए के अभाव में शरीर के इपीथीलियल ऊतकों में परिवर्तन होने लगता है।
4. विटामिन ए की कमी नाक की स्लेष्मा झिल्ली, गले एवं श्वसन नली को खुरदरा और शुष्क बना देती है जिसके कारण संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है।

विटामिन ए की कमी को दूर करने के उपाय

आहार संशोधन: इस विधि के अंतर्गत विटामिन ए से भरपूर पदार्थ जैसे हरी पत्तेदार सब्जियाँ, नारंगी तथा पीले फल एवं सब्जियाँ आदि के उपयोग एवं उत्पादन पर बल दिया जाना चाहिए। लाल ताड़ का तेल एवं पशु जन्य भोज्य पदार्थ भी विटामिन ए के अच्छे स्रोत हैं इसलिए छः माह तक के बच्चों को सिर्फ माँ का दूध ही देना चाहिए। यह एक दूरदर्शी उपाय है। यदि जनसंख्या के ज्यादातर लोग विटामिन ए से युक्त भोज्य पदार्थों के बारे में जानकारी रखेंगे एवं अपने रसोई उद्यान में प्रतिदिन उपयोग हेतु भोज्य पदार्थ उगाएंगे तो विटामिन ए की कमी से आसानी से निजात पाया जा सकता है।

प्रबलीकरण (Fortification): अनेक देशों ने अपनी आबादी का विटामिन ए का स्तर सुधारने के लिए प्रतिदिन प्रयुक्त होने वाले भोज्य पदार्थों को विटामिन ए से पुष्ट कर कमी को पूर्ण करने में सफलता प्राप्त की है। दूध, घी, तेल, मक्खन आदि को विटामिन ए से प्रबल किया जाता है। आटे, नमक एवं चावल को विटामिन ए से प्रबल कर इस रोग की व्यापकता कम की जा सकती है।

प्रबलीकरण की प्रक्रिया की सफलता कई बातों पर निर्भर करती है:

- विटामिन ए की कमी हेतु संवेदनशील जनसंख्या नियमित रूप से प्रबल किये हुए आहार की इतनी मात्रा ग्रहण करे जिससे उसे लाभ हो।
- प्रबलीकरण से ग्राहकों के लिए उत्पाद के स्वाद या रंग-रूप में कोई बदलाव न हो।
- प्रबलीकृत खाद्य पदार्थ की कीमत अधिक न हो।

विटामिन ए की कमी का उपचार

प्रभावी उपचार समयपूर्ण निदान, विटामिन ए की पूरक खुराक एवं कारणों के उपचार पर निर्भर करता है। विटामिन ए शरीर में 6 से 9 माह तक संचित रह सकता है और धीरे-धीरे मुक्त होता है। बच्चों में विटामिन ए की कमी के निदान हेतु विटामिन ए की मौखिक खुराक तेल में (रेटिनाॅल पामीटेट 200,000 IU की एक अकेली खुराक मुख द्वारा हर 6 महीने बाद स्कूल पूर्व बच्चों में (1 वर्ष से 6 वर्ष) तथा इसकी आधी खुराक 100,000 IU 6 माह से 1 वर्ष की आयु के बच्चों में प्रदान की जाती है। इस प्रकार की मौखिक खुराक से जेरोफथैलिमिया और अन्धेपन की रोकथाम हो सकती है।

रतौंधी एवं कन्जक्टाइवल जिरोसिस में 300,000 IU विटामिन ए से युक्त एक कैप्सूल मुख द्वारा प्रतिदिन एक सप्ताह तक देनी चाहिए। यदि कॉर्निया क्षतिग्रस्त हो जाता है तो एक सप्ताह तक प्रतिदिन 200,000 IU विटामिन ए अन्तः पेशीय इन्जेक्शन द्वारा देना चाहिए और इसके पश्चात् विटामिन ए को मुख द्वारा दिया जा सकता है।

विटामिन ए की कमी को रोकने तथा उपचार के लिए भारत सरकार द्वारा एक वृहद कार्यक्रम चलाया जा रहा है। इसमें 6 माह से 6 वर्ष तक के बच्चों को 200,000 IU विटामिन ए की एक खुराक पिलायी जाती है। दूसरी खुराक 6 माह के बाद दी जाती है। कुल 5-6 खुराकें दी जाती हैं। विटामिन ए घोल के रूप में भी पिलाया जाता है।

अभ्यास प्रश्न 3

1. बहुविकल्पीय प्रश्न

- a. विटामिन की कमी से रतौंधी होती है:
 (क) विटामिन ए (ख) विटामिन बी
 (ग) विटामिन सी (घ) विटामिन डी
- b. विटामिन ए का उत्कृष्ट खाद्य स्रोत है:
 (क) आलू (ख) गाजर
 (ग) टमाटर (घ) सन्तरा
- c. कन्जक्टाइवा का सूखना, शुष्क और परतदार त्वचा एवं बाल झड़ने के लक्षण किस पोषक तत्व की कमी के कारण दिखाई देते हैं:
 (क) विटामिन सी (ख) प्रोटीन
 (ग) विटामिन ए (घ) उपरोक्त में कोई नहीं
- d. विटामिन ए शरीर के किस अंग में संगृहित होता है:
 (क) यकृत (ख) गुर्दे
 (ग) बाल (घ) आँत
- e. बच्चों के लिए विटामिन ए की खुराक की मात्रा है:
 (क) कुछ नहीं (ख) 1000 IU
 (ग) 30,000 IU (घ) 200,000 IU
- f. कन्जक्टाइवा पर सफेद भूरे झागदार धब्बे कहलाते हैं:
 (क) जिरोफथैलमिया (ख) क्निरेटोमलेशिया
 (ग) बिटॉट स्पॉट (घ) उपरोक्त सभी

अब हम आयोडीन अल्पता विकार पर चर्चा करें।

6.3.4 आयोडीन अल्पता विकार

स्वस्थ जीवन के लिए आयोडीन अत्यन्त ही आवश्यक खनिज लवण है। मानव शरीर की वृद्धि एवं विकास आयोडीन पर निर्भर है। थायरॉक्सिन हार्मोन का स्रावण थायरॉइड ग्रंथि से होता है। थायरॉइड ग्रंथि को उचित मात्रा में थायरॉक्सिन हार्मोन बनाने के लिए 60 माइक्रोग्राम आयोडीन की आवश्यकता होती है। भोजन में आयोडीन की कमी होने से थायरॉक्सिन हार्मोन का निर्माण नहीं हो पाता है। एक स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में सामान्यतः 15-20 मिलीग्राम आयोडीन होता है जिसमें से लगभग एक तिहाई हिस्सा थायरॉइड ग्रंथि में उपस्थित रहता है। शेष आयोडीन रक्त एवं अन्य ऊतकों में उपस्थित होता है।

दैनिक आवश्यकता

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा प्रस्तावित आयोडीन की दैनिक आवश्यकता की मात्रा तालिका 6.7 में दी जा रही है।

तालिका 6.7: प्रस्तावित आयोडीन आवश्यकता

	आयु	आयोडीन की मात्रा (माइक्रोग्राम में)
बच्चे	0-6 महीने	40
	6-12 महीने	50
	1-3 वर्ष	70
	4-6 वर्ष	90
	10-18 वर्ष	140
वयस्क	वयस्क पुरुष	150
	स्त्री	150
	गर्भवती स्त्री	175
	दूध पिलाने वाली स्त्री	200

स्रोत: विश्व स्वास्थ्य संगठन

वयस्कों के लिए आयोडीन की दैनिक आवश्यकता 150 माइक्रोग्राम है। बढ़ते हुए बच्चों, किशोरों, गर्भवती एवं दूध पिलाने वाली स्त्रियों और मानसिक दबाव में रहने वाले लोगों को प्रतिदिन अधिक आयोडीन की आवश्यकता होती है।

आयोडीन के कार्य

1. थाइरोग्लोब्यूलिन एवं थायरॉक्सिन हार्मोन के निर्माण में
2. आधारीय चयापचय को नियमित एवं नियंत्रित करना
3. शिशु के मानसिक विकास में
4. शरीर के ताप नियंत्रण में
5. शारीरिक वृद्धि एवं विकास में
6. कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को कम करने में

आयोडीन अल्पता विकार (Iodine Deficiency Disorder)

आयोडीन की कमी मस्तिष्क में होने वाली गड़बड़ी और मानसिक वृद्धि अवरोध का सबसे बड़ा कारण है और इसे रोका जा सकता है। आयोडीन की कमी के प्रमुख लक्षण गलगण्ड या घेंघा या गॉयटर तथा क्रेटिनिज्म हैं।

आयोडीन की कमी के यह लक्षण सिर्फ दिखाई देने वाले हैं जिनकी व्यापकता विस्तृत है। आयोडीन की कमी के शिकार लोग बौनेपन, गूँगे-बहरेपन, निचले अंगों के लकवे जैसे रोगों की चपेट में आ जाते हैं। वयस्कों और बच्चों में आयोडीन की कमी होने पर उनका बौद्धिक स्तर 10 से 15 प्रतिशत घट जाता है। आयोडीन की कमी से गर्भपात और मृत शिशु पैदा होने का खतरा बहुत बढ़ जाता है।

आयोडीन की कमी के कारण

आयोडीन अल्पता का मुख्य कारण आहार में आयोडीन की कमी है। शरीर में आयोडीन की कमी आयोडीन के दोषपूर्ण अवशोषण के कारण भी हो सकती है। आयोडीन की कमी इसलिये ज्यादा प्रचलित है क्योंकि भोज्य पदार्थों से उचित मात्रा में आयोडीन प्राप्त नहीं हो पाता है। यह इसलिये क्योंकि जिस मिट्टी में उन्हें उगाया जाता है उसमें ही आयोडीन की कमी होती है। वर्षा के पानी के साथ मिट्टी का आयोडीन बह कर समुद्र में चला जाता है तथा उस मिट्टी में उगाए जा रहे पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाता। जिन स्थानों पर मिट्टी तथा जल में आयोडीन कम होता है उन्हीं स्थानों पर आयोडीन की कमी के विकारों की व्यापकता ज्यादा पायी जाती है। आयोडीन की कमी का दूसरा बड़ा कारण आहार में गलगण्डजनक तत्वों की उपस्थिति है। ये तत्व गलगण्ड को उत्पन्न करने वाले रसायनिक पदार्थ होते हैं। ये तत्व थायरॉइड ग्रंथि के द्वारा आयोडीन के उपभोग में बाधा उत्पन्न करते हैं। यह गलगण्डजनक तत्व ग्लूकोसिनोलेट्स एवं थायोसायनेट्स के रूप में उपस्थित होते हैं। यह बन्दगोभी, पत्तागोभी, शलजम, मूँगफली आदि में पाये जाते हैं। गलगण्डजनक तत्व कठोर जल में भी पाये जाते हैं। जल में उपस्थित गन्दगी एवं सूक्ष्म जीवाणु भी आयोडीन की उपलब्धता पर प्रभाव डालते हैं।

आयोडीन की कमी के विकारों की पहचान

जनसंख्या में आयोडीन की कमी से उत्पन्न विकृतियों का आंकलन गलगण्ड को छूकर किया जा सकता है लेकिन इसके लिए काफी प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। गलगण्ड को छूकर तथा उसके आकार के आंकलन द्वारा आयोडीन की कमी के स्तर का पता चलता है। मूत्र में विसर्जित आयोडीन इसकी खपत का अच्छा संकेतक है, इसलिए मूत्र के नमूनों की जाँच करके आयोडीन की कमी से उत्पन्न विकारों की भरोसेमन्द पहचान की जा सकती है।

आयोडीन की कमी के विकारों के लक्षण

1. घेंघा या गलगण्ड (Goiter): जब भोजन द्वारा आयोडीन की पूर्ति नहीं होती है तो दैनिक क्रियाकलापों को सम्पन्न करने के लिए थायरॉइड ग्रंथि को थायरॉक्सिन हार्मोन के स्रावण हेतु

अधिक कार्य करना पड़ता है। फलस्वरूप थायरॉइड ग्रंथि की कोशिकाएं निरन्तर विभाजित होती रहती हैं जिससे ग्रंथि का आकार बढ़ जाता है। इसी गाँठ को घेंघा या गलगण्ड कहते हैं।

2. क्रेटिनिजम (Cretinism): जिन बच्चों की माताओं ने गर्भावस्था के दौरान पर्याप्त मात्रा में आयोडीन का सेवन न किया हो, उन बच्चों को क्रेटिनिजम नामक रोग हो जाता है। इस रोग में बच्चे का शारीरिक एवं मानसिक विकास रुक जाता है। बच्चे की लम्बाई काफी कम (बौनापन) रह जाती है। बच्चे की चयापचय दर अत्यन्त कम हो जाती है जिससे उसे भूख नहीं लगती है। इनमें से बहुत से बच्चे गूंगे या बहरे रह जाते हैं।

3. मिक्सीडीमा (Myxedema): यह रोग वयस्कों में होता है। यह क्रेटिनिजम से कम गम्भीर रोग है। यह रोग थायरॉइड ग्रंथि की कम क्रियाशीलता के कारण होता है। इस रोग में रोगी हमेशा थकावट एवं सुस्ती महसूस करता है।

4. गर्भावस्था में आयोडीन की कमी से गर्भपात का खतरा बढ़ जाता है तथा कभी-कभी गर्भाशय में ही भ्रूण की मृत्यु हो जाती है। शिशु समय से पहले भी जन्म ले सकता है एवं उसकी मानसिक तथा शारीरिक वृद्धि में बाधा पड़ती है।

उपचार

आयोडीन की कमी का उपचार आयोडीन युक्त नमक के प्रयोग से किया जाता है। आयोडीन युक्त नमक साधारण नमक है जिसमें बहुत शुद्ध मात्रा में पोटेशियम आयोडाइड मिलाकर उसे आयोडीन से प्रबल किया जाता है। भारत में सादे नमक को 30 पी.पी.एम. तक के स्तर तक आयोडीन से युक्त किया जाता है, जिसमें से 50 प्रतिशत आयोडीन आयात, भंडार एवं वितरण के समय नष्ट हो जाता है। गर्भवती माताओं को आयोडीन युक्त भोज्य पदार्थ अवश्य देने चाहिए। घेंघा रोग होने पर पोटेशियम आयोडेट (6 मिली ग्राम) की गोली प्रतिदिन प्रदान की जाती है। गम्भीर घेंघा रोग दवा से भी ठीक नहीं होता है, ऐसी स्थिति में सर्जरी का प्रयोग किया जाता है।

रोकथाम

भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय आयोडीन अल्पता रोग नियंत्रण कार्यक्रम 1962 में शुरू किया गया था। इसका उद्देश्य घेंघा रोग से प्रभावित इलाकों की खोज करना एवं आयोडीन को नमक में मिलाकर सकल जनसंख्या को देना है जिससे घेंघा रोग एवं इसके अन्य नुकसानों से बचा जा सके।

अभ्यास प्रश्न 4

1. बहुविकल्पीय प्रश्न

- a. के उत्पादन के लिए आयोडीन आवश्यक है:
- | | |
|--------------|---------------------|
| (क) इन्सुलिन | (ख) थायरॉइड हार्मोन |
| (ग) घेंघा | (घ) लौह तत्व |
- b. आयोडीन की कमी से रोग नहीं होता है।
- | | |
|----------------|----------------|
| (क) घेंघा रोग | (ख) एनीमिया |
| (ग) क्रेटिनिजम | (घ) मिक्सीडीमा |
- c. आयोडीन नमक में घरेलू स्तर पर आयोडीन की मात्रा होनी चाहिए।
- | | |
|------------|------------|
| (क) 15 ppm | (ख) 30 ppm |
| (ग) 60 ppm | (घ) 20 gm |

6.3.5 अतिपोषण एवं अन्य अपक्षयी विकार

अतिपोषण लम्बे समय तक अत्यधिक भोजन ग्रहण करने के कारण उत्पन्न रोग की दशा है। इससे मोटापे, मधुमेह, उच्च रक्तचाप एवं बड़ी धमनियों में 'एथेरोमा' बन जाता है। इकाई के पिछले भाग में आपने अल्प पोषण के विभिन्न रूपों के बारे में जानकारी प्राप्त की। इकाई के इस भाग में आप अति पोषण एवं अन्य अपक्षयी रोगों के बारे में जानकारी लेंगे। अतिपोषण के कारण होने वाली सबसे आम समस्या अधिक वजन एवं मोटापे की है। आवश्यकता से अधिक भोजन ग्रहण करने पर शरीर में वसा एकत्रित होने लगती है। शरीर में आवश्यकता से अधिक वसा को मोटापा कहा जाता है। तकनीकी तौर पर आदर्श शारीरिक वजन से 20 प्रतिशत से अधिक वजन मोटापा माना जाता है। अधिक भार में शरीर का वजन आदर्श शारीरिक वजन की तुलना में 10-20 प्रतिशत अधिक हो जाता है।

मोटापे का आंकलन

शरीर द्रव्यमान सूचकांक या बॉडी मास इंडेक्स (BMI) शरीर के आकार का आंकलन करने की सबसे उपयुक्त विधि मानी जाती है। बी.एम.आई. वजन (किलो ग्राम) को लम्बाई (वर्ग मीटर) से भाग देकर निर्धारित किया जाता है। 18.5 से 25 तक बी.एम.आई. के माप को स्वस्थ माना जाता है। लेकिन 25 से ऊपर बी.एम.आई. को सामान्य वजन से ज्यादा माना जाता है और यह माप अधिक मोटापे की निशानी होता है।

तालिका 6.8: शरीर द्रव्यमान सूचकांक

बी.एम.आई. भार (किग्रा)/लम्बाई (वर्ग मीटर)	वर्गीकरण
≤18.5	कम भार
18.5-24.9	सामान्य भार
25.0-29.9	सामान्य से अधिक भार
30.0-34.9	श्रेणी-1 मोटापा
35.0-39.9	श्रेणी-2 मोटापा
≥40.0	श्रेणी-3 मोटापा

मोटापे के कारण

मोटापा एक दीर्घकालीन अवस्था है जो बहुकारकीय एवं जटिल है। इसका मुख्य कारण अतिपोषण है। इसके अन्य कारण निम्नलिखित हैं:

- आनुवंशिकता
- खान-पान की गलत आदतें
- मानसिक अवसाद
- बढ़ती उम्र
- कम क्रियाशीलता
- हार्मोनल प्रभाव
- पारिवारिक प्रभाव
- गर्भावस्था
- पर्याप्त शारीरिक श्रम न करना
- दवाईयां
- उच्च आर्थिक स्तर
- रजोनिवृत्ति

मोटापे के लक्षण

मोटापा एक ऐसी स्थिति है जिसमें शरीर में अत्यधिक वसा का जमाव होने लगता है। यह वसा का जमाव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इसके निम्नलिखित लक्षण हैं:

- वजन बढ़ना
- उच्च सीरम ट्राइग्लिसराइड स्तर
- शरीर का बड़ा आकार

- नींद संबंधी विकार
- साँस लेने में तकलीफ
- गतिहीनता
- अन्य जटिलताएं जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, पित्त की पथरी, प्रजनन विकार, कैंसर।

उपचार

मोटापे का इलाज आसान है लेकिन लम्बे समय तक वजन घटाना एवं उसे बनाए रखना मुश्किल है। वजन कम करने से स्वास्थ्य लाभ होता है। इसलिए मोटे व्यक्तियों को वजन कम करना ही चाहिए।

मोटापे से ग्रस्त रोगियों के लिए आहारिय दिशानिर्देश (प्रतिदिन)

1. मोटापे से ग्रस्त व्यक्ति को कम से कम 50 ग्राम कार्बोहाइड्रेट का सेवन करना चाहिए।
2. न्यूनतम 25 से 30 ग्राम आहारिय रेशा (फाइबर) प्रतिदिन फल, सब्जी, साबुत अनाज से लेना चाहिए।
3. आहार में प्रोटीन की मात्रा एक ग्राम प्रति आदर्श शारीरिक वजन के अनुसार होनी चाहिए।
4. कुल वसा का सेवन, कुल ऊर्जा के सेवन का 30 प्रतिशत से कम होना चाहिए।
5. संतृप्त वसा का सेवन कुल ऊर्जा के सेवन का 10 प्रतिशत होना चाहिए।
6. बहुअसंतृप्त वसा का सेवन कुल ऊर्जा के सेवन का 10 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए।
7. एकल संतृप्त वसा का सेवन कुल ऊर्जा सेवन का 10-15 प्रतिशत होना चाहिए।
8. कोलेस्ट्रॉल की मात्रा 300 ग्राम प्रतिदिन से अधिक नहीं होनी चाहिए।
9. आहार में सोडियम की मात्रा तीन ग्राम प्रतिदिन से अधिक नहीं होनी चाहिए। यदि व्यक्ति उच्च रक्तचाप से भी ग्रस्त है तो सोडियम की मात्रा 2.4 ग्राम प्रतिदिन तक सीमित कर देनी चाहिए।

मोटापे के उपचार में आहारिय परिवर्तन

1. आहार में सभी परिवर्तन मोटापे से ग्रस्त रोगी की जरूरत एवं पसन्द को ध्यान में रखकर ही किए जाते हैं। भोजन के सेवन को कम करने के लिए लचीला दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

2. अनावश्यक रूप से प्रतिबंधित एवं असन्तुलित आहार का प्रयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि ये दीर्घकालिक समय के लिए प्रभावी नहीं होते हैं एवं उनके हानिकारक प्रभाव भी देखे गये हैं।
3. मोटापे के उपचार में आहारिय परिवर्तन को प्रोत्साहित करना चाहिए, चाहे मोटापा कम हो या न हो। आहारिय परिवर्तन से अन्य स्वास्थ्य लाभ जैसे रक्तचाप में कमी, कोलेस्ट्रॉल की मात्रा में कमी आदि प्राप्त किये जा सकते हैं।
4. प्रतिदिन कुल ऊर्जा का सेवन, कुल ऊर्जा के खर्च से कम होना चाहिए।
5. स्थायी वजन घटाने के लिए कम वसायुक्त आहार का प्रयोग करना चाहिए।
6. कम ऊर्जायुक्त आहार (1000-1500 किलो कैलोरी) वजन तो कम करते हैं परन्तु यह पोषण मापदण्डों के अनुसार उचित नहीं हैं। अत्यन्त कम ऊर्जायुक्त आहार का उपयोग कभी-कभी उपवास के लिए किया जा सकता है।
8. 600 किलो कैलोरी या उससे कम किसी भी आहार का प्रयोग चिकित्सक या आहारिय मार्गदर्शक की निगरानी में ही करना चाहिए।
9. आहार में छोटे-छोटे क्रमिक बदलाव फायदेमंद होते हैं।
10. बच्चों और किशोरों को आहार कम करने के साथ-साथ स्वस्थ खाने की आदतों के बारे में भी शिक्षित किया जाना चाहिए।
11. आहारिय परिवर्तन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रमुख खाद्य समूहों में से कोई समूह पूरी तरह से वर्जित नहीं हो रहा हो।

शारीरिक गतिविधि वजन को नियंत्रित करने के लिए अन्य महत्वपूर्ण विधि है। यह विधि वजन प्रबंधन और रखरखाव में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शारीरिक गतिविधियाँ बढ़ाने से ऊर्जा की खपत बढ़ जाती है, जिससे वजन कम होने लगता है। लगातार और नियमित शारीरिक व्यायाम प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ाता है, साथ-साथ हृदय रोग, रक्त वाहिका रोग, मधुमेह एवं मोटापा आदि रोगों को रोकने में मदद मिलती है।

मोटापे के इलाज में शारीरिक गतिविधि के सन्दर्भ में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए:

- सभी वयस्कों को प्रतिदिन 30 मिनट तक मध्यम तीव्रता की कोई शारीरिक गतिविधि अवश्य रूप से अपनानी चाहिए।
- वयस्कों में यदि शारीरिक गतिविधि बढ़ाने से भी वजन कम न हो रहा हो, तब भी शारीरिक गतिविधि की दिनचर्या नहीं छोड़नी चाहिए क्योंकि शारीरिक गतिविधि बढ़ाने से अन्य

सकारात्मक स्वास्थ्य लाभ जैसे हृदय रोग, उच्च रक्तचाप, मधुमेह आदि के जोखिम काफी कम हो जाते हैं।

- यदि कोई व्यक्ति लम्बे समय (30 मिनट) तक व्यायाम नहीं कर सकता तो उसे समय के छोटे-छोटे टुकड़ों में (10-10 मिनट) व्यायाम करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। जैसे यदि कोई व्यक्ति एक समय में 30 मिनट तक पैदल नहीं चल सकता तो उसे 10-10 मिनट तक दिन में तीन बार घूमना चाहिए। इस प्रक्रिया से भी लगभग वैसे ही लाभ प्राप्त होते हैं।
- सभी को अपनी जीवन शैली में बदलाव लाना चाहिए।

अन्य अपक्षयी रोग

आम तौर पर मान लिया जाता है कि कुपोषण की समस्या सिर्फ गरीब समुदाय तक सीमित है लेकिन इसका दूसरा पहलू यह है कि देश के महानगरों में रहने वाले आर्थिक रूप से सम्पन्न परिवारों में भी कुपोषण (अति कुपोषण) की समस्या गहराती जा रही है। महानगरों में वयस्क एवं प्रौढ़ों के साथ बच्चों के बीच भी मधुमेह, उच्च रक्तचाप, मोटापे या हृदय रोग जैसी घातक बीमारियों के मामले बढ़ रहे हैं।

आइए कुछ प्रमुख अपक्षयी रोगों के बारे में चर्चा करें।

1. मधुमेह

मधुमेह विश्व का एक मुख्य समस्यात्मक रोग है। इसे डायबिटीज मलाइटस (Diabetes Mellitus) भी कहते हैं। शरीर में इन्सुलिन हार्मोन के उत्पादन अथवा उपयोग की कमी से उत्पन्न रोग 'मधुमेह' कहलाता है। इन्सुलिन हार्मोन अग्नाशय के लैंगरहैन्स की द्वीपिकाओं के द्वारा स्रावित होता है। इन्सुलिन कार्बोहाइड्रेट के चयापचय को नियंत्रित करता है। भोजन करने के पश्चात् जैसे ही रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ती है, इन्सुलिन अधिक मात्रा में उत्पन्न होकर ग्लूकोज को यकृत तक पहुँचाने का कार्य करता है। जब अग्नाशय से इन्सुलिन स्रावण कम हो जाता है तो रक्त शर्करा चयापचय के लिए प्रयोग नहीं हो पाती है, इस स्थिति को मधुमेह कहते हैं।

मधुमेह के कारण

मधुमेह के अनेक कारण हो सकते हैं:

- वंशानुगत
- गर्भावस्था
- बढ़ती उम्र
- खान-पान की गलत आदतें

- मोटापा
- अतिपोषण
- मानसिक तनाव
- कम क्रियाशील जीवन

मधुमेह की पहचान

उपवासीय रक्त शर्करा अर्थात् रात को खाना खाने के बाद से 12 घंटे तक कुछ न खाने के पश्चात् सुबह ली गई रक्त शर्करा 80 से 110 मिलीग्राम प्रति 100 मिलीलीटर रक्त होती है। भोजनोत्तर रक्त शर्करा अर्थात् दोपहर का खाना खाने के दो से ढाई घंटे बाद की रक्त शर्करा 110 से 170 मिलीग्राम प्रति 100 मिलीलीटर रक्त होती है। रक्त शर्करा का इससे बढ़ा हुआ स्तर मधुमेह की स्थिति को दर्शाता है।

मधुमेह के लक्षण

मधुमेह की स्थिति में निम्न लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं:

- पॉलीयूरिया- अत्यधिक मूत्र
- पॉलीफेजिया- अत्यधिक भूख
- पॉलीडिप्सिया- अत्यधिक प्यास
- निर्जलीकरण- शरीर का जल संतुलन खराब हो जाता है।
- थकान
- रोग प्रतिरोधक क्षमता का अभाव
- घाव देर से भरना
- एडीमा/सूजन
- मांसपेशियों का क्षय
- रेटीनाइटिस (आँख सम्बन्धी विकार)
- हृदय रोग

उपचार

मधुमेह को नियंत्रित रखना ही इसका उपचार है। मोटापे से ग्रस्त व्यक्ति को यदि मधुमेह है तो वजन पर नियंत्रण करना अत्यन्त आवश्यक है। आहार में परिवर्तन एवं आवश्यक सुधार करके मधुमेह पर अंकुश लगाया जा सकता है। मधुमेह पर नियंत्रण के लिए जीवनशैली एवं आहार में निम्नलिखित बदलाव करने चाहिए:

- आहार से प्राप्त ऊर्जा रोगी व्यक्ति की कुल शारीरिक ऊर्जा माँग से 5 प्रतिशत कम होनी चाहिए।
- भोजन में कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा प्रोटीन का अनुपात (ऊर्जा प्राप्ति के लिए) 65:10-15:20-25 होना चाहिए।
- आहार में सुपाच्य एवं उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन युक्त भोज्य पदार्थ शामिल करने चाहिए।
- आहार में संतृप्त वसा की मात्रा कम से कम होनी चाहिए।
- खनिज लवण एवं विटामिनो की पूर्ति सब्जियों के प्रचुर प्रयोग से करनी चाहिए।
- पूरे दिन के आहार को छोटे-छोटे भागों में विभाजित कर छोटे-छोटे अंतराल में लेना चाहिए।
- नियमित रूप से व्यायाम करना चाहिए।
- चीनी, शहद, चॉकलेट, चीनी युक्त मिठाई का प्रयोग संयमित मात्रा में करना चाहिए।
- आलू, अरबी, चावल, मैदा आदि का प्रयोग संयमित मात्रा में करना चाहिए।
- आहार में रक्त शर्करा कम करने वाले पदार्थ जैसे मेथी दाना, अलसी बीज, रेशेयुक्त आहार का प्रयोग किया जा सकता है।

2. उच्च रक्तचाप

उच्च रक्तचाप वह रोग है जिसमें हृदय के संकुचन की अवस्था में रक्त वाहिकाओं में रक्त का दबाव पारे के 140 mm Hg से ज्यादा या हृदय के विस्तारण की अवस्था में 90 mm Hg से ज्यादा रहता है या दोनों अवस्थाओं में ज्यादा रहता है। मधुमेह और उच्च रक्तचाप दोनों ही रोगों में हृदय रोग, वृक्क रोग एवं अन्य घातक जटिलताओं का जोखिम रहता है। एक स्वस्थ व्यक्ति का रक्तचाप 120/80 mm Hg होता है। ऊपर की संख्या हृदय संकुचन चाप को बतलाती है तथा नीचे की संख्या हृदय विस्तारण चाप की द्योतक है। इससे अधिक रक्तचाप उच्च रक्तचाप को दर्शाता है। रक्तचाप रक्तदाबमापी (Sphygmomanometer) से नापा जाता है।

उच्च रक्तचाप के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं:

- आयु: 40 की उम्र के पश्चात् रक्तचाप बढ़ने लगता है।
- वंशानुक्रम
- धूम्रपान एवं मद्यपान
- आहार में वसा की अधिकता, अधिक शर्करायुक्त भोजन, घी, अंडा, मक्खन

- | | |
|---|---|
| ● मोटापा | आदि का अधिक प्रयोग |
| ● बुढ़ापा | ● गुर्दे में विकार एवं दोष हो जाने से |
| ● शारीरिक क्रियाशीलता में कमी | ● एंड्रीनल ग्रंथियों में ट्यूमर होने से |
| ● मानसिक तनाव, चिंता, उद्वेग, क्रोध, दुख एवं भय | ● मूत्रनली में संक्रमण से |
| ● धमनियों में वसा का जमाव | ● व्यायाम का अभाव |
| ● दीर्घकाल तक नमक का अधिक प्रयोग | ● भोजन संबंधी आदतें |

उच्च रक्तचाप के लक्षण

- सिर दर्द
- कमजोरी एवं चक्कर आना
- बेचैनी महसूस होना
- कब्ज
- आंखों के आगे धुंधलापन छा जाना
- हृदय की धड़कन अनियमित होते-होते रुक जाना
- हृदय की धड़कन बहुत अधिक बढ़ जाना

उपचार

उच्च रक्तचाप में सामान्य प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट के साथ कम ऊर्जा वाला, कम वसा तथा कम सोडियम वाले आहार को ग्रहण करने का परामर्श दिया जाता है।

- प्रतिकिलोग्राम शरीर के भार पर 20 किलो कैलोरी का प्रयोग सबसे उत्तम होता है।
- मोटे व्यक्तियों को आहार में और भी कम कैलोरी का प्रयोग करना चाहिए।
- प्रति किलोग्राम शरीर के भार पर एक ग्राम प्रोटीन लेने का परामर्श दिया जाता है।
- आहार में वसा का प्रयोग कम से कम होना चाहिए।
- नमक का प्रयोग 2-3 ग्राम या इससे कम प्रतिदिन होना चाहिए।
- धूम्रपान करना तथा तम्बाकू चबाना पूर्णतया छोड़ देना चाहिए।
- परिरक्षित खाद्य पदार्थों जैसे अचार, डिब्बा-बंद भोज्य वस्तुओं, चटनी, मसालों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

- रोगी को पर्याप्त शारीरिक एवं मानसिक विश्राम दिया जाना चाहिए।
- रक्तचाप कम करने की दवाईयों का प्रयोग किया जा सकता है।
- रोगी को गाढ़ी चाय, कॉफी आदि पीने को नहीं देनी चाहिए क्योंकि इन पेय पदार्थों में कैफीन होता है, जो रक्तचाप को बढ़ाता है।
- उच्च रक्तचाप पर नियंत्रण पाने हेतु रोगी को मानसिक तनाव, चिन्ता, भय, उद्वेग आदि से बचना चाहिए।
- व्यायाम नियमित रूप से करना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न 5

1. मोटापे के मुख्य कारण क्या हैं?

.....

2. मधुमेह के मुख्य लक्षण क्या हैं?

.....

3. एक स्वस्थ व्यक्ति का रक्तचाप होता है।

4. रक्तचाप किस उपकरण से नापा जाता है?

.....

6.4 कुपोषण को नियंत्रित करने के उपाय एवं योजना

वर्तमान में कुपोषण अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के लिए चिन्ता का विषय बन गया है। कुपोषण कई सामाजिक-राजनैतिक कारणों का परिणाम है। कुपोषण एक जटिल समस्या है। इसके लिए घरेलू खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना आवश्यक है। यह तभी सम्भव है जब ऐसी नीतियां बनायी जाएं जो कुपोषण और भूख को समाप्त करने के प्रति लक्ष्यबद्ध हों।

यह माना जा चुका है कि उपलब्ध नई तकनीकों के उपयोग, पर्याप्त पौष्टिक आहार तथा सुरक्षित पेयजल की व्यवस्था के द्वारा शिशु एवं बाल मृत्यु दरों में कमी लाई जा सकती है तथा बीमारियों एवं कुपोषण का मुकाबला किया जा सकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में परिवार की खाद्य सुरक्षा के लिए कृषि संसाधनों को मजबूत एवं सुलभ करना आवश्यक है। शहरी क्षेत्रों में खाने-पीने का सामान अधिकतर बाजार से खरीदा जाता है। इसलिए खाद्य सुरक्षा हेतु आवश्यक है कि विभिन्न प्रकार की खाद्य सामग्री उचित मूल्य पर उपलब्ध हो। परिवार में खाद्य सुरक्षा, खाद्य सामग्री की वित्तीय, भौतिक और सामाजिक सुलभता के आधार पर भिन्न होती है। यह खाद्य सामग्री की उपलब्धता से एकदम भिन्न है। उदाहरण के लिए बाजार में भले ही पर्याप्त मात्रा में खाद्य सामग्री उपलब्ध हो लेकिन अगर निर्धन परिवार उसे खरीद नहीं सकते तो उन्हें खाद्य सुरक्षा प्राप्त नहीं होगी।

परिवार की खाद्य सुरक्षा बनाए रखने में महिलाओं की विशेष भूमिका है। अधिकांश समुदायों में परिवार के लिए आहार तैयार करना, पकाना, उसे सुरक्षित और संग्रहित करना सिर्फ महिलाओं की जिम्मेदारी है। कई समाजों में तो खाद्य सामग्री के उत्पादन और खरीद की बुनियादी जिम्मेदारी भी उन्हीं पर होती है। परिवार की खाद्य सुरक्षा के लिए महिलाओं के स्वास्थ्य एवं पोषण का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए। अच्छे स्वास्थ्य के लिए एक बुनियादी आवश्यकता यह भी है कि परिवारों को अपने साधनों के भीतर रोगों के उपचार और रोकथाम के लिए अच्छी किस्म की स्वास्थ्य सेवाएं सुलभ हों।

नीचे दी गई तालिका में आप कुपोषण के लिए उत्तरदायी कुछ कारकों के नियंत्रण हेतु प्रस्तावित पहलुओं पर नजर डालें।

तालिका 6.9: कुपोषण नियंत्रण पर प्रस्तावित पहल

कुपोषण के कारण	प्रस्तावित पहल
पारिवारिक खाद्य संकट	<ul style="list-style-type: none"> • कृषि को अधिक उत्पादक बनाना ताकि बेहतर पोषण उपलब्ध हो सके। • खाद्यान्न दरों को नियंत्रित रखना। • खाद्य असुरक्षा की सतत निगरानी करना। • खाद्य सहायता/उपलब्धता सुनिश्चित रखना।
महिलाओं और बच्चों की देखरेख	<ul style="list-style-type: none"> • समाज और घर में महिलाओं की भूमिका को मजबूत करना। • महिलाओं के प्रति भेदभाव को समाप्त करना। • घरेलू हिंसा को रोकना।
शुद्ध जल और स्वच्छता	<ul style="list-style-type: none"> • स्वास्थ्य का विस्तार करना। • स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता बढ़ाना। • स्वास्थ्य सेवाओं के साथ पोषण को भी सम्मिलित करना।

	<ul style="list-style-type: none"> ● उचित मात्रा में गुणवत्तापूर्ण जल की पहुँच बढ़ाना। ● अच्छे स्तर की स्वच्छता सुनिश्चित करना।
आर्थिक विकास	<ul style="list-style-type: none"> ● आर्थिक वृद्धि के गरीबी कम करने वाले प्रभाव को बढ़ाना। ● लोकतंत्र को बढ़ावा देना और मानव अधिकारों की रक्षा करना।
वैश्वीकरण	<ul style="list-style-type: none"> ● वैश्वीकरण के खतरों से गरीबों की रक्षा करना और उन्हें अधिक अवसर और दक्षता प्रदान करना।

यूनिसेफ के अनुसार कुपोषण की समाप्ति से मानव समुदाय को अधिक रचनात्मकता, शक्ति, उत्पादकता, खुशहाली और सम्पन्नता की दृष्टि से जो लाभ होगा जिसे किसी पैमाने पर मापा नहीं जा सकता।

6.5 सारांश

भारत में पोषण संबंधी सभी समस्याएं व्यापक रूप से फैली हैं। एनीमिया सबसे ज्यादा महिलाओं और बच्चों को प्रभावित करता है। इससे उनके शारीरिक एवं संज्ञानात्मक विकास में अवरोध पैदा होता है। एनीमिया, विटामिन ए की कमी, आयोडीन अल्पता विकार आदि सभी समस्याएं जन स्वास्थ्य समस्या का रूप ले चुकी हैं। विकासशील देशों में कुपोषण ज्यादा पाया जाता है। प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण अधिकतर गर्भावस्था में शुरू हो जाता है। माँ कुपोषित हो तो शिशु भी कुपोषित हो सकता है। बुखार, दस्त, खाँसी से बच्चा क्षीण हो जाता है और उसकी भूख भी कम हो जाती है। इससे बच्चा कुपोषण और बीमारियों के दुश्क्र में फंस जाता है। कुपोषण क्वाशियोरकर एवं मरास्मस के रूप में परिलक्षित होता है।

विश्व में भारतीय महिलाओं एवं बच्चों में एनीमिया सर्वाधिक पाया जाता है। लौह तत्व की कमी से होने वाली खून की कमी विश्व में पोषण संबंधी सबसे आम विकृति है। इसके असर से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर पड़ जाती है तथा शारीरिक एवं मानसिक क्षमता भी कम हो जाती है। शिशुओं में पोषण की कमी बौद्धिक विकास को प्रभावित करती है। विटामिन ए की कमी विकासशील देशों में बच्चों के अन्धेपन का भी मुख्य कारण है। आयोडीन की कमी मस्तिष्क में होने वाली गड़बड़ी और मानसिक वृद्धि के अवरोध का सबसे बड़ा कारण है जिसे रोका जा सकता है। ज्यादातर हानि गर्भ में ही होने लगती है। आयोडीन की कमी से गर्भपात और मृत शिशु के पैदा होने का खतरा बढ़ जाता है। आयोडीन की कमी का प्रमुख लक्षण गलगण्ड है।

अति पोषण की समस्या भी दिनों दिन बढ़ रही है। यह आमतौर पर बहुत अधिक मात्रा में आहार लेने एवं शारीरिक गतिविधियों में कमी के कारण होता है।

6.6 पारिभाषिक शब्दावली

- **कुपोषण:** अल्प पोषण या अधिक पोषण।
- **स्टिल बर्थ (Still birth):** एक स्टिल बर्थ शिशु उसे कहते हैं जो गर्भावस्था के 24वें सप्ताह के बाद पैदा हुआ हो एवं पैदा होने के पश्चात उसमें जीवन के कोई लक्षण न दिखाई दिए हों।
- **रक्तदाबमापी (Sphygmomanometer):** रक्तचाप मापने का यंत्र।

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. बहुविकल्पीय प्रश्न
 - a. (क)
 - b. (ख)
 - c. (ख)

अभ्यास प्रश्न 2

1. बहुविकल्पीय प्रश्न
 - a. (ग)
 - b. (ग)
 - c. (घ)
 - d. (ख)
 - e. (ख)
 - f. (ग)

अभ्यास प्रश्न 3

1. बहुविकल्पीय प्रश्न
 - a. (क)

- b. (ख)
- c. (ग)
- d. (क)
- e. (घ)
- f. (ग)

अभ्यास प्रश्न 4

1. बहुविकल्पीय प्रश्न

- a. (ख)
- b. (ख)
- c. (क)

अभ्यास प्रश्न 5

1. मोटापे के मुख्य कारण:

- आनुवंशिकता
- खान-पान की गलत आदतें
- मानसिक अवसाद
- बढ़ती उम्र
- कम क्रियाशीलता
- हार्मोनल प्रभाव
- पारिवारिक प्रभाव
- गर्भावस्था
- पर्याप्त शारीरिक श्रम न करना
- दवाईयां
- उच्च आर्थिक स्तर
- रजोनिवृत्ति

2. मधुमेह के मुख्य लक्षण:

- पॉलीयूरिया- अत्यधिक मूत्र
- पॉलीफेजिया- अत्यधिक भूख
- पॉलीडिप्सिया- अत्यधिक प्यास
- निर्जलीकरण- शरीर का जल संतुलन खराब हो जाता है
- थकान
- रोग प्रतिरोधक क्षमता का अभाव
- घाव देर से भरना

- एडीमा/सूजन
- माँसपेशियों का क्षय
- रेटीनाइटिस (आँख सम्बन्धी विकार)

3. 120/80 mm Hg

4. रक्तदाबमापी (Sphygmomanometer)

6.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- Swaminathan.M.1996. Advanced Text book on Food and Nutrition. Volume I and II Bappco. Reprint
- Seghal S. and Raghuvanshi R.S. (Eds) 2007. Text book of Community Nutrition. ICAR. New Delhi 524.p
- Raghuvanshi R.S. and Mittal M. (2013). Food Nutrition and Diet Therapy. Westville Publishers New Delhi.362p.

इंटरनेट स्रोत

- www.unicef.org
- www.who.org

6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण समुदाय के अस्तित्व के लिए जोखिम कारक है। उदाहरण सहित समझाइये।
2. आयोडीन की कमी के विकारों एवं रोकथाम के तरीकों का विवरण दीजिए।
3. विटामिन ए की कमी से होने वाले आंखों के रोगों का क्रमवार वर्णन कीजिए।
4. लौह तत्व की कमी से उत्पन्न एनीमिया, परनीसियस एनीमिया एवं मैक्रोसिटिक एनीमिया में अन्तर बताइये।

खण्ड 3: राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सामुदायिक पोषण कार्यक्रम

इकाई 7: राष्ट्रीय पोषण कार्यक्रम

- 7.1 प्रस्तावना
- 7.2 उद्देश्य
- 7.3 समेकित बाल विकास सेवाएं (आई0 सी0 डी0 एस0)
- 7.4 मध्याह्न भोजन योजना (मिड डे मील स्कीम)
- 7.5 विशिष्ट पोषण योजना (स्पेशल न्यूट्रीशन प्रोग्राम/एस0 एन0 पी0)
- 7.6 बालवाड़ी पोषण कार्यक्रम
- 7.7 बालकों का टीकाकरण कार्यक्रम
- 7.8 साप्ताहिक लौह लवण एवं फोलिक अम्ल सम्पूरक कार्यक्रम
- 7.9 सारांश
- 7.10 पारिभाषिक शब्दावली
- 7.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 7.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
- 7.13 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

आज के बालक, कल का भविष्य हैं। किसी भी देश में बच्चों को सर्वोच्च एवं प्राथमिक संसाधन के रूप में देखा जाता है। ऐसा इसलिए क्योंकि राष्ट्र का भविष्य एवं प्रगति की दिशा का निर्धारण बालकों द्वारा ही तय किया जाता है। ऐसे में बालकों के स्वास्थ्य एवं पोषण पर ध्यान दिया जाना अति आवश्यक है। यह भविष्य में होने वाली कई समस्याओं के निराकरण में सहायक है। बालकों के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर का प्रत्यक्ष संबंध माता के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर से है। अतः माताओं का स्वस्थ होना भी उतना ही आवश्यक है। विकासशील देशों में अभी भी मातृ एवं शिशु मृत्यु दर को कम कर पाना एक बड़ी चुनौती है। सही समय पर उचित पोषण, देखभाल एवं बेहतर स्वास्थ्य सेवाओं के प्रबन्धन से इस समस्या का निवारण एक सीमा तक किया जा सकता है। भारत सरकार मातृ एवं शिशु कल्याण हेतु कटिबद्ध है तथा इस दिशा में समय-समय पर कई योजनाओं एवं कार्यक्रमों का क्रियान्वयन किया गया है जिसका प्रत्यक्ष एवं सकारात्मक लाभ बेहतर स्वास्थ्य आंकड़ों के रूप में दिखाई देता है। प्रस्तुत अध्याय में हम इन्हीं योजनाओं एवं कार्यक्रमों की चर्चा करेंगे।

7.2 उद्देश्य

राष्ट्रीय स्तर पर चलाई जा रही इन योजनाओं का विशिष्ट महत्व है। ये कार्यक्रम न केवल व्यक्तिगत स्तर पर लाभकारी हैं अपितु विगत कुछ वर्षों में बेहतर मानव संसाधन एवं मजबूत अर्थव्यवस्था के लिये आधार स्तम्भ के रूप में भी उभरे हैं। सामुदायिक पोषण विज्ञान के विद्यार्थियों के लिये इनका ज्ञान होना अति आवश्यक है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप;

- भारत में संचालित विभिन्न राष्ट्रीय पोषण कार्यक्रमों एवं क्रियान्वयन संस्थानों की मूल अवधारणा, उद्देश्य, कार्यपद्धति, आच्छादन क्षेत्र एवं संबन्धित लक्ष्य समूहों को समझ सकेंगे;
- समुदाय विशेष की स्वास्थ्य एवं पोषण समस्याएं एवं इनके निवारण को भली भाँति समझ कर समुदाय के पोषण संर्वधन में इनका महत्व समझ सकेंगे; तथा
- सतत् विकास हेतु महत्वपूर्ण घटक के रूप में पोषण एवं राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तर्सम्बन्ध समझ पाएंगे।

7.3 समेकित बाल विकास सेवाएं (आई0 सी0 डी0 एस0)

भारत में शिशु कल्याण कार्यक्रमों में आई0सी0डी0एस0 एक प्रमुख कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम की नींव 1975 में समाज कल्याण विभाग द्वारा डाली गयी। इस परियोजना को अक्टूबर 1975 में स्वीकृति दी गयी। प्रारम्भिक अवस्था में यह 33 परियोजनाओं (4 शहरी, 19 ग्रामीण तथा 10 जन जातीय क्षेत्रों) के रूप में संचालित किया गया। इसके पश्चात भारत सरकार द्वारा 1978-79 में इस कार्यक्रम का अतिरिक्त सौ क्षेत्रों में विस्तारीकरण किया गया। सन् 1978 तथा 1979 में दो प्रमुख मूल्यांकन किये गये। इन दोनों मूल्यांकनों के सकारात्मक परिणाम के आधार पर भारत सरकार द्वारा इस कार्यक्रम के विस्तारीकरण का निर्णय लिया गया। सन् 2005-2006 से पूर्व शिशुओं को सम्पूर्ण आहार प्रदान करना राज्यों का उत्तरदायित्व था तथा प्रशासनिक स्तर पर इसका मूल्य केन्द्रीय सरकार द्वारा दिया जाता था। अब इसमें संशोधन के बाद भारत सरकार द्वारा सहायता राशि मानकों को परिवर्तित कर 50 प्रतिशत वित्तीय सहायता राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों को दी जाती है तथा 50 प्रतिशत वित्तीय सहायता स्वयं राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों द्वारा वहन की जाती है।

आंगनबाड़ी केन्द्रों तथा लघु आंगनबाड़ी केन्द्रों के स्थापना मानकों में भी परिवर्तन किया गया, ताकि इसमें समस्त वर्गों अनुसूचित जाति, जनजाति तथा अल्पसंख्यकों को सम्मिलित किया जा सके। शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में आंगनबाड़ी की स्थापना हेतु परिवर्तित मानक निम्नवत् हैं-

- 400-800 जनसंख्या वाले समुदाय के मध्य एक आंगनबाड़ी केन्द्र।
- 800-1600 जनसंख्या वाले समुदाय हेतु 2 आंगनबाड़ी केन्द्र।
- 1600-2400 जनसंख्या समूह हेतु 3 आंगनबाड़ी केन्द्र।

इसके उपरान्त 800 के गुणक जनसंख्या समूह के लिये एक आंगनबाड़ी केन्द्र की स्थापना की जाती है। मानकानुसार प्रत्येक समूह जिनकी जनसंख्या 150-400 के मध्य है, पर एक लघु आंगनबाड़ी केन्द्र की स्थापना की जाती है।

जनजातीय, तटीय, मरूस्थल, पर्वतीय एवं दुर्गम स्थानों हेतु

- 300-800 जनसंख्या समूह के मध्य एक आंगनबाड़ी केन्द्र।
- प्रत्येक 150-300 जनसंख्या समूह हेतु लघु आंगनबाड़ी केन्द्र।

आई0सी0डी0एस0 का प्रमुख उद्देश्य भारत में पूर्व बाल्यावस्था संबंधी समस्त सेवाएं उपलब्ध कराकर राष्ट्र के मानव संसाधनों के समुचित विकास की नींव डालना है। इन सेवाओं में सम्मिलित हैं; पूरक आहार, टीकाकरण, महिलाओं हेतु पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा, चिकित्सकीय संप्रेक्षण सुविधाएं (रेफरल), गर्भवती एवं धात्री महिलाओं हेतु सुविधाएं, 6 वर्ष तक की आयु के बालकों हेतु अनौपचारिक शिक्षा विशेषकर ग्रामीण, शहरी बस्तियों तथा जनजातीय क्षेत्रों में रहने वाले बालक।

आई0सी0डी0एस0 सेवाओं के प्रमुख उद्देश्य:

1. 0-6 वर्ष तक की आयु के बालकों के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर में सुधार लाना।
2. बालक के सम्पूर्ण (मनोवैज्ञानिक, शारीरिक और सामाजिक विकास) की समुचित नींव डालना।
3. मृत्यु दर, कुपोषण तथा बालकों द्वारा विद्यालय छोड़ देने की दर में कमी लाना।
4. शिशु विकास हेतु समर्पित समस्त संस्थाओं के मध्य एक प्रभावी समन्वय स्थापित करना।
5. स्वास्थ्य एवं पोषण शिक्षा के माध्यम से मातृ कला एवं शिशु पालन पोषण योग्यताओं को बढ़ावा देना।

उपरोक्त सेवाओं के उद्देश्य एवं लक्षित समूह को आई0सी0डी0एस0 के परिप्रेक्ष्य में निम्नवत् समझा जा सकता है।

क्रमांक	लक्षित समूह	सेवाएं
1.	गर्भवती स्त्री	स्वास्थ्य परीक्षण, टिटैनस टीकाकरण, पूरक आहार, पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा
2.	धাত্রि महिलाएं	स्वास्थ्य परीक्षण, पूरक आहार, पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा
3.	15-45 वर्ष आयु की महिलाएं	पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा
4.	तीन वर्ष से कम आयु के बालक	पूरक आहार, टीकाकरण, स्वास्थ्य परीक्षण, चिकित्सकीय सुविधाएं
5.	3-6 वर्ष की आयु के बालक	पूरक आहार, टीकाकरण, स्वास्थ्य परीक्षण, चिकित्सकीय सुविधाएं, अनौपचारिक शिक्षा
6.	11-18 वर्ष की किशोरियां	पूरक आहार, पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा

शैशवावस्था संबंधी वृद्धि विकास आवश्यकताओं की सतत् पूर्ति करना आई0सी0डी0एस0 के मुख्य उद्देश्यों में से एक है। साथ ही सामाजिक रूप से भी इस कार्यक्रम का बृहद महत्व एवं क्षेत्र आँका गया है।

आई0सी0डी0एस0 सेवाएं

1. पूरक आहार

निम्न आयु वर्ग के एवं 6 वर्ष से कम बालकों, गर्भवती महिलाओं तथा दुग्धपान कराने वाली स्त्रियों को पूरक आहार प्रदान किया जाता है। पूरक आहार का प्रकार एवं वितरण, स्थानीय उपलब्धता, लाभार्थियों के प्रकार, परियोजना के स्थान इत्यादि पर निर्भर करता है। पूरक आहार, लाभार्थियों की पोषक आवश्यकता को सम्पूरित करने में सहायक होना आवश्यक है।

इस कार्यक्रम के प्रमुख बिन्दु हैं।

1. 6-72 माह/6 वर्ष की आयु तक के बालकों को प्रतिदिन 500 कैलोरी तथा 12-15 ग्राम प्रोटीन (4 रुपये प्रति बालक) बजट के अनुसार उपलब्ध कराना।

2. अति कुपोषित (Severely Malnourished) बालकों हेतु 800 कैलोरी प्रतिदिन के बजट अनुसार उपलब्ध कराना।
3. प्रत्येक गर्भवती तथा धात्री स्त्री को 600 कैलोरी तथा 18-20 ग्राम प्रोटीन उपलब्ध कराना (5 रूपये प्रति बालक) बजट के अनुसार।

नवीन एवं परिवर्तित मानकों के अनुसार समस्त राज्यों को उन सभी शिशुओं को एक या अधिक आहार उपलब्ध कराने आवश्यक होंगे। उदाहरण दूध, केला, अंडा, मौसमी फल के रूप में प्रातः कालीन आहार देना आवश्यक होगा (ताकि सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी पूरी हो सके)। दोपहर का सम्पूरित आहार पके हुए खाद्य के रूप में दिया जाना अनिवार्य होगा। तीन वर्ष से कम आयु तथा गर्भवती एवं धात्री स्त्रियों को राशन घर ले जाने की सुविधा प्रदान किये जाने का भी प्रावधान है। इस योजना का स्वरूप सार्वभौमिक है। योजना में पंजीकरण के लिये लाभार्थियों का गरीबी रेखा से नीचे होना बाध्यता नहीं है। सम्पूरक आहार वर्ष में 300 दिन दिया जाता है, इस हेतु वित्तीय सहायता राज्यों द्वारा न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (Minimum Need Programme) के अंतर्गत प्रदान की जाती है। वृद्धि अनुवीक्षण के अंतर्गत प्रत्येक बालक का भार प्रति माह लिया जाता है। लाभार्थियों को कुपोषण की श्रेणियों में बाँटा जाता है। ग्रेड प्रथम या प्रथम श्रेणी कुपोषण से ग्रस्त बालकों/स्त्रियों को स्वास्थ्य एवं पोषण शिक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत जागरूक किया जाता है। द्वितीय तथा तृतीय श्रेणी से कुपोषित बालकों/शिशुओं को सम्पूरक आहार प्रदान किया जाता है। अति कुपोषित बालकों को चिकित्सा केन्द्र में भर्ती कर तुरन्त उपचार किया जाता है।

2. पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा

आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं की विशेष भेंट के दौरान इस प्रकार की शिक्षा, विशेषकर लाभार्थी समूहों को ध्यान में रखकर प्रदान की जाती है। पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा 14-15 वर्ष की आयु की किशोरियों तथा गर्भवती एवं धात्री महिलाओं को विशेषतया प्रदान की जाती है।

3. टीकाकरण

गर्भवती स्त्रियों को टिटैनस संक्रमण के प्रति तथा अन्य 6 जानलेवा बीमारियों के प्रति टीकाकरण कर सुरक्षित किया जाता है।

4. स्वास्थ्य परीक्षण

इसमें निम्न सेवाएं सम्मिलित हैं:

- प्रसव पूर्व गर्भवती स्त्री की देखभाल एवं सुरक्षा।

- प्रसवोपरान्त माँ तथा शिशु की देखभाल एवं सुरक्षा।
- 6 वर्ष से कम आयु के शिशु की देखभाल एवं सुरक्षा।
- गर्भवती स्त्रियों को लौह लवण एवं फोलिक अम्ल तथा प्रोटीन सम्पूरक प्रदान करना।
- 6 माह तक अनिवार्य रूप से नियमित चिकित्सा परीक्षण (न्यूनतम तीन बार)।
- गंभीर रूप से अस्वस्थ महिलाओं एवं शिशुओं को चिकित्सालय में भर्ती किया जाना।

छः वर्ष की आयु से कम बालकों की सुरक्षा हेतु उपलब्ध विकल्प निम्नवत् है।

1. एक नियत समय पर शिशु का भार तथा ऊँचाई माप कर वृद्धि का अनुवीक्षण किया जाता है।
2. शिशु द्वारा अपेक्षित विकासात्मक कार्य समयानुसार प्राप्त किये गये हैं अथवा नहीं, पर दृष्टि रखना।

7.4 मध्याह्न भोजन योजना (मिड डे मील स्कीम)

मध्याह्न भोजन योजना अथवा मिड डे मील स्कीम, भारत सरकार तथा राज्य सरकार के समेकित प्रयासों से संचालित एक राष्ट्रव्यापी योजना है। यह योजना भारत सरकार द्वारा 15 अगस्त 1995 से लागू की गई जिसके अंतर्गत कक्षा 1 से 5 तक के सभी सरकारी/परिषदीय/राज्य सरकार द्वारा सहायता प्राप्त प्राथमिक स्कूलों में पढ़ने वाले सभी बच्चों को 80 प्रतिशत उपस्थिति पर प्रति माह 03 किलोग्राम गेहूँ अथवा चावल दिये जाने की व्यवस्था थी। इस व्यवस्था के अंतर्गत समस्या यह थी कि छात्रों को खाद्यान्न उनके परिवार के मध्य बँट जाता था जिससे छात्र को उसकी प्रस्तावित आहार मात्रा के अनुसार वांछित पोषक तत्व प्राप्त नहीं हो पाते थे।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 28 नवम्बर 2001 को दिये गये निर्देश के अनुपालन में राज्य सरकार द्वारा मध्याह्न भोजन के अंतर्गत लाभार्थियों को पके हुए खाद्यान्न/आहार (Cooked Meal) दिये जाने का प्रावधान आरम्भ किया गया। यह योजना अत्यधिक सफल योजनाओं में से एक है तथा लाभार्थियों के मध्य इसकी लोकप्रियता को देखते हुए इसे विस्तारित कर उच्च प्राथमिक विद्यालयों, समस्त ब्लॉकों एवं ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों को भी इसके अन्तर्गत आच्छादित किया गया।

मध्याह्न भोजन योजना के उद्देश्य

1. समस्त सरकारी, स्थानीय निकायों, सहायता प्राप्त विद्यालयों, मदरसा एवं अन्य समस्त संस्थाओं के कक्षा एक से आठ तक के समस्त विद्यार्थियों (पंजीकृत) को पौष्टिक आहार उपलब्ध कराना।
2. पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराकर बालकों की पोषण आवश्यकताओं को पूर्ण करना तथा बच्चों में शिक्षा ग्रहण करने की क्षमता को विकसित करना।
3. विद्यालयों में छात्रों की उपस्थिति एवं नामांकन (enrollment) बढ़ाना।
4. “स्कूल ड्रॉप आउट रेट” (बच्चों द्वारा अपनी प्राथमिक शिक्षा बीच में ही अधूरी छोड़ देने की दर) को कम करना। साथ ही विद्यालय के “शैक्षणिक माहौल तथा सीखने की लालसा” के प्रति बालकों की रुचि जागृत करना।
5. बच्चों में भाईचारे की भावना विकसित करना तथा विभिन्न जातियों एवं धर्मों के मध्य अंतर को दूर करने तथा एक दूसरे के धर्म के प्रति सम्मान उत्पन्न करने हेतु उन्हें एक साथ बिठाकर भोजन कराना।

योजनानर्तगत भोजन

मध्याह्न भोजन योजना के अंतर्गत बच्चों को मध्याह्न में (इन्टरवल में) पका हुआ आहार प्रदान किया जाता है। प्रत्येक छात्र को सप्ताह में 4 दिन चावल से बने भोज्य पदार्थ तथा 2 दिन गेहूं से बने भोज्य पदार्थ दिये जाने का प्रावधान है। इस योजना के अंतर्गत भारत सरकार द्वारा प्राथमिक स्तर पर 150 ग्राम प्रति छात्र प्रतिदिन की दर से खाद्यान्न (गेहूं/चावल) उपलब्ध कराया जाता है। प्राथमिक विद्यालयों में उपलब्ध कराये जा रहे भोजन में कम से कम 450 कैलोरी ऊर्जा व 12 ग्राम प्रोटीन एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कम से कम 700 कैलोरी ऊर्जा व 20 ग्राम प्रोटीन उपलब्ध होना अनिवार्य है। मेनू में स्थानीय खाद्य पदार्थों का समावेश किया जाना भी आवश्यक किया गया है। मध्याह्न भोजन स्वादिष्ट, पौष्टिक एवं आकर्षक होना चाहिये। इसके लिए मध्याह्न भोजन की विधिवता हेतु सप्ताह के प्रत्येक कार्य दिवस में भिन्न-भिन्न प्रकार का भोजन दिये जाने की व्यवस्था है। पौष्टिकता के साथ-साथ भोजन बालकों की रुचि के अनुरूप होना आवश्यक है।

मध्याह्न भोजन अनुवीक्षण पर्यवेक्षण

इस योजना के अनुवीक्षण हेतु नगर क्षेत्र पर वार्ड समिति एवं ग्राम पंचायत स्तर पर ग्राम पंचायत समिति का गठन किया जाता है। मंडल स्तर पर अनुवीक्षण कार्य का दायित्व “मंडलीय सहायक निदेशक (बेसिक शिक्षा)” को दिया जाता है। विकास खंड स्तर पर उप-

जिलाधिकारी की अध्यक्षता में टास्क फॉर्स गठित की जाती है जिसमें सहायक बेसिक शिक्षा अधिकारी प्रति उप विद्यालय निरीक्षक को सदस्य सचिव के रूप में नियुक्त किया जाता है। योजना के अंतर्गत रसोईघर कम स्टोर एवं किचन उपकरणों की व्यवस्था भी उपलब्ध कराई जाती है।

मध्याह्न भोजन योजना एवं समुदाय प्रतिभागिता

मध्याह्न भोजन योजना के अंतर्गत समुदाय प्रतिभागिता को प्रोत्साहित किया जाता है ताकि योजनान्तर्गत आच्छादित बालकों की माताएं “भोजन तैयार करने से लेकर बालकों को परोसने तक की प्रक्रिया का निरीक्षण” स्वयं कर सकें। इस हेतु माताओं को बारी-बारी से प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रकार योजना का “मातृ अवलोकन” योजना की पारदर्शिता को बढ़ाते हैं, साथ ही सरकार की प्रतिबद्धता के विषय में उनके स्वर को शक्ति देते हैं।

आंकड़ों एवं विभिन्न आख्याओं के द्वारा स्पष्ट हुआ है कि कई राज्यों में (उदाहरण के लिये छत्तीसगढ़) में माताओं के इस अंतर्क्षेप से योजना के कार्यान्वयन, भोजन गुणवत्ता, पौष्टिकता, छात्रों की उपस्थिति, नामांकन, अध्यापकों के दृष्टिकोण, शैक्षिक वातावरण पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस सफलता को देखकर अन्य राज्यों में भी इसका अनुसरण किया जाने लगा है। उत्तराखण्ड राज्य में छात्राओं की माताओं में से ही भोजन माता एवं सहायिका को नियुक्त किया जाता है, जिससे कार्यक्रम/योजना को वास्तविक अर्थों में प्रभावी बनाया जा सके। राज्य सरकार इस योजना के लिए माताओं की प्रतिभागिता को महत्व देकर गतिमान बनाने हेतु प्रतिबद्ध हैं।

नीति आयोग द्वारा मध्याह्न भोजन योजना का मूल्यांकन

पकाकर तैयार किये गये आहार (मध्याह्न भोजन योजना) का मूल्यांकन वर्ष 2010 में किया गया जिससे निम्न तथ्य सामने आए:

- प्रतिदर्श विद्यालयों में मध्याह्न भोजन योजना कक्षा में अध्ययनरत विद्यार्थियों की भूख को नियंत्रित करने में सहायक सिद्ध हुई।
- पके हुए आहार को मध्याह्न भोजन योजना में सम्मिलित करने से विद्यालयी बालकों के मध्य समान-समाज एवं सामाजिकरण की भावना को बल मिला है। मध्याह्न भोजन योजना के अंतर्गत सभी बच्चे चाहे वह किसी भी सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश के हों, समस्त भेदभाव भुलाकर एक मंच/स्थान में बैठकर आहार ग्रहण करते हैं।

- ऐसा भी देखा गया है कि इस कार्यक्रम में शैक्षिक गतिविधियों के अतिरिक्त अन्य गतिविधियों में छात्रों और शिक्षकों का ध्यान बंट जाने से छात्रों के अध्ययन एवं अध्यापन कार्य का हास हुआ है।
- सामान्य रूप में कार्यक्रम के सफल निष्पादन हेतु संरचनात्मक ढाँचे एवं मानव श्रम की भारी कमी देखी गयी।
- अधिकतर राज्यों में बालकों हेतु उपलब्ध खाद्यान्नों में चोरी की अपार संभावनाएं देखी गयी। इसमें पी0डी0एस0 डीलर (सार्वजनिक वितरण प्रणाली) के अंतर्गत नियुक्त अभिकर्ता द्वारा धांधली एवं लम्बी आपूर्ति श्रृंखला होने के कारण निम्न श्रेणी एवं निम्न मात्रा के खाद्यान्न अन्ततः छात्रों/लाभार्थियों को प्राप्त होते हुए पाये गये हैं।

सत्यापित प्रयोगशालाओं द्वारा भोजन का परीक्षण

सरकारी खाद्य अनुसंधान प्रयोगशालाएं अथवा विधि द्वारा सत्यापित या मान्यता प्राप्त कोई भी प्रयोगशाला बालकों को दिये जाने वाले पके हुए भोजन का मूल्यांकन कर इसे प्रमाणित करती हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि यह भोजन अधिनियम की अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट पोषक मानकों और गुणवत्ता के अनुरूप है। राज्य के खाद्य और औषधि प्रशासन विभाग भोजन का पोषक मूल्य और गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिये इसके नमूने लेते हैं।

मध्याह्न भोजन योजना द्वारा प्रदत्त पौष्टिक मान

प्रस्तुत तालिका 7.1 में मध्याह्न भोजन योजना के अंतर्गत उपलब्ध खाद्य पदार्थों एवं उनसे प्राप्त पोषक मान को दर्शाया गया है।

तालिका 7.1: मध्याह्न भोजन योजना के अंतर्गत खाद्य पदार्थों का पौष्टिक मान

क्रम संख्या	खाद्य पदार्थ	प्राइमरी मिड डे मील के अंतर्गत आवश्यकता	ऊर्जा (कैलोरी)	प्रोटीन (ग्राम)	अपर प्राइमरी मिड डे मील के अंतर्गत आवश्यकता	ऊर्जा (कैलोरी)	प्रोटीन (ग्राम)
1.	खाद्यान्न चावल/गेहूँ	100 ग्राम	340	8	150 ग्राम	510	14
2.	दालें	20 ग्राम	70	5	30	105	6.6

3.	सब्जियाँ	50 ग्राम	25	-	75	37	-
4.	तेल/वसा	आवश्यकतानुसार	-	-	-	-	-
5.	नमक एवं मसाले	आवश्यकतानुसार	-	-	-	-	-
		कुल	480	13		720	20.6

मध्याह्न भोजन योजना एवं रक्ताल्पता नियंत्रण

मध्याह्न भोजन योजना के अंतर्गत प्राइमरी एवं अपर प्राइमरी विद्यालयी मध्याह्न भोजन बालकों हेतु प्रस्तावित कैलोरी एवं प्रोटीन की मात्रा उनके दैनिक आहार का एक तिहाई भाग तो प्रदान करती ही है, साथ ही मध्याह्न भोजन योजना, रक्ताल्पता (खून की कमी) को दूर करने में भी सहायक है। मध्याह्न भोजन योजना में हरी सब्जियों/ताजी सब्जियों के भोजन में समावेश को प्राथमिकता दी जाती है, जो कि संतुलित आहार का एक अभिन्न भाग है। सब्जियाँ विभिन्न विटामिनों, खनिज लवणों, फाइटोकैमिकल्स एवं आहारिय रेशे का प्रमुख स्रोत हैं। ये सूक्ष्म पोषक तत्व हमें कई रोगों से बचाने में भी सहायक हैं। हम सभी जानते हैं कि सब्जियाँ जिनमें विटामिन 'सी' की उच्च मात्रा होती है, वे नॉन हीम-लौह लवण का अवशोषण बढ़ाने में सहायक सिद्ध होती हैं। पीली, लाल, नारंगी फल एवं सब्जियाँ तथा मौसम की स्थानीय रूप से उत्पादित फल एवं सब्जियाँ प्रोविटामिन ए (कैरोटीनॉयड्स)/ विटामिन 'ए' के प्री-करसर हैं जिनको हमारा शरीर विटामिन 'ए' (सक्रिय रूप में) परिवर्तित कर सकता है। मध्याह्न भोजन योजना के अन्तर्गत ताजी हरी पत्तेदार सब्जियों का समावेश बालकों के भोजन में किया जाना आवश्यक है जिससे बालकों के आहार में विभिन्न पोषक तत्वों (विटामिन 'ए', लौह लवण एवं अन्य खनिज लवणों की आपूर्ति हो सके) एवं रक्ताल्पता जैसी सूक्ष्म पोषक तत्व जनित व्याधियों को नियंत्रित किया जा सके।

मध्याह्न भोजन योजना का प्रस्तुतीकरण राज्यों के स्तर पर भिन्न पाया जाता है। तमिलनाडु में इसका प्रदर्शन अब तक सभी राज्यों में सर्वोत्तम देखा गया है।

7.5 विशिष्ट पोषण योजना (स्पेशल न्यूट्रीशन प्रोग्राम/एस0 एन0 पी0)

वर्ष 1968 में श्री तिरू गंगा चरन सिन्हा की अध्यक्षता में समाज कल्याण विभाग (भारत सरकार) द्वारा शिशुओं और बालकों की विभिन्न आवश्यकताओं एवं अल्प एवं दीर्घकालीन कार्यक्रमों (कुपोषण से लड़ने हेतु) के संबंध में एक विशेषज्ञ समिति का गठन किया गया।

समिति ने पाया कि भारत की तेजी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था में कुपोषण एक श्राप के समान है तथा सामाजिक आर्थिक रूप से पिछड़े बालकों के लिये तथा गर्भवती एवं स्तनपान कराने वाली महिलाओं के लिये कुछ विशेष पोषण कार्यक्रमों को लाए जाने की आवश्यकता है। कुपोषण का सर्वाधिक बुरा प्रभाव 0-6 वर्ष तक के बालकों पर पड़ता है। अतः इस आयु वर्ग के विशेषकर सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के बालकों को सम्पूर्ण पोषण यदि प्रदान किया जाये तो एक स्वस्थ पीढ़ी का निर्माण हो सकेगा।

इन सभी उद्देश्यों के दृष्टिगत विशिष्ट पोषण कार्यक्रम का आरम्भ वर्ष 1970-71 में किया गया। आरम्भ में जनजातीय समूह, मलिन बस्ती के 0-3 वर्ष के बालकों को इसमें सम्मिलित किया गया तथा लगभग 20 लाख बच्चे इससे लाभान्वित होने की अपेक्षा की गई। बाद के वर्षों में वित्तीय उपलब्धता के अनुसार इस संख्या में वृद्धि करने का प्रयास किया गया। इस कार्यक्रम को प्रारम्भ में केन्द्रीय कार्यक्रम के रूप में संचालित किया गया परन्तु बाद में पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में इसको राज्यों को हस्तांतरित कर दिया गया। छठी एवं सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान इस कार्यक्रम को “समेकित बाल विकास सेवाओं” के समान परिवर्तित कर दिया गया, साथ ही कार्यक्रम के सशक्तिकरण हेतु इसमें स्वास्थ्य एवं अन्य आवश्यक सेवाओं का भी समावेश किया गया। इस कार्यक्रम द्वारा कई लाख बच्चे लाभान्वित हुए हैं। यह कार्यक्रम में विद्यालय जाने वाले बालकों को अतिरिक्त 300 कैलोरी तथा 10 ग्राम प्रोटीन तथा गर्भवती एवं धात्री महिलाओं को लगभग 500 कैलोरी एवं 25 ग्राम प्रोटीन सप्ताह में 6 बार प्रदत्त कराया जाता है। इस कार्यक्रम का संचालन “न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम” के अंतर्गत किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में मुख्यतया निम्न सामाजिक आर्थिक समूहों, जनजातीय क्षेत्रों, मलिन एवं निर्धन बस्तियों के लोग इस के लक्षित लाभार्थी हैं। यह कार्यक्रम समेकित बाल विकास सेवाओं के पोषक घटक कार्यक्रमों के लिये बजट प्रदान करता है।

कार्यक्रम का उद्देश्य

इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य विद्यालय जाने वाले बालकों एवं गर्भवती तथा धात्री माताओं के पोषण एवं स्वास्थ्य स्तर में वृद्धि करना है। लाभार्थियों के चयन में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि लाभार्थी सामाजिक-आर्थिक स्तर से पिछड़े, जनजातीय समूहों एवं सूखा, बाढ़, दुर्गम क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हों।

कार्यक्रम के लाभार्थी

जैसा कि पहले कहा गया है कि इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य विद्यालय जाने वाले बालकों, गर्भवती तथा धात्री महिलाओं के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर में वृद्धि करना है। गर्भावस्था की अन्तिम तिमाही तथा शिशु जन्म के प्रथम चार माह में शिशु को दुग्ध पान कराने वाली

महिलाओं को इस कार्यक्रम में प्राथमिकता प्रदान की जाती है। कुपोषित एवं अति कुपोषित बालकों को इसमें प्राथमिकता दी जाती है।

कार्यक्रम की गतिविधियाँ

इस कार्यक्रम की प्रमुख गतिविधियों में सम्मिलित है सम्पूर्ण पोषण प्रदान करना तथा विटामिन 'ए' घोल, लौह लवण तथा फोलिक अम्ल की गोलियाँ लाभार्थी को उपलब्ध कराना। सम्पूर्ण पोषण 6 से 72 माह के शिशुओं हेतु 300 कैलोरी तथा 10 ग्राम प्रोटीन प्रति बालक प्रति दिवस उपलब्ध कराया जाता है। अति कुपोषित बालकों को 600 कैलोरी तथा 20 ग्राम प्रोटीन प्रति दिवस तथा लौह लवण एवं फोलिक अम्ल की गोलियाँ उपलब्ध कराई जाती हैं। इस कार्यक्रम की मूल्य लागत समेकित बाल विकास योजनाओं की भाँति ही है।

योजना के अंतर्गत लाभार्थियों हेतु प्रावधान

1. 6 माह से तीन वर्ष तक की आयु के बालकों हेतु 500 कैलोरी ऊर्जा, 12-15 ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन प्रति बालक टेक होम राशन (घर ले जाने वाले खाद्यान्न) के रूप में सूक्ष्म पोषक तत्व संवर्धित आटा एवं विभिन्न खाद्यान्न।
2. 3-6 वर्ष की आयु के बालक हेतु 500 कैलोरी ऊर्जा, 12-15 ग्राम प्रति बालक प्रति दिवस सम्पूर्ण खाद्यान्न चूँकि इस आयु का बालक एक समय में 500 कैलोरी ऊर्जा का उपभोग नहीं कर पाता है, अतः इस संबन्ध में प्रातः कालीन अल्पाहार के विभिन्न प्रावधान जैसे दूध, केला, मौसमी फल, ताजा पका हुआ आहार इत्यादि भी दिये जा सकते हैं।
3. अति कुपोषित बालक हेतु 800 कैलोरी ऊर्जा तथा 20-25 ग्राम प्रोटीन युक्त सम्पूर्ण खाद्य जो सूक्ष्म पोषक तत्व युक्त आटे एवं अन्य खाद्यान्न के रूप में प्रदान किया जाता है।
4. गर्भवती एवं धात्री महिलाओं को सम्पूर्ण आहार के रूप में 600 कैलोरी ऊर्जा तथा 18-20 ग्राम प्रोटीन सूक्ष्म पोषक तत्व युक्त आटे एवं अन्य खाद्यान्न के रूप में प्रदान किया जाता है।

संगठन

ग्राम एवं समुदाय स्तर पर स्थित बालवाड़ी के नेटवर्क के माध्यम से इस कार्यक्रम को कार्यान्वित किया जाता है। बालवाड़ी कार्यकर्ता एवं सहायक इस कार्यक्रम की धुरी हैं।

7.6 बालवाड़ी पोषण कार्यक्रम

बालवाड़ी पोषण कार्यक्रम, सम्पूरक पोषण कार्यक्रम का आधुनिक रूप है। यह कार्यक्रम सन् 1970-71 में केन्द्रीय समाज कल्याण विभाग तथा राष्ट्रीय स्तर के स्वैच्छिक संगठनों के तत्वाधान में अस्तित्व में आया। ये संगठन निम्न हैं:

- भारतीय बाल कल्याण परिषद्
- हरिजन सेवक संघ
- भारतीय आदम जाति सेवक संघ
- कस्तूरबा नेशनल मेमोरियल ट्रस्ट

यह कार्यक्रम प्रमुख रूप से गैर सरकारी संगठनों द्वारा संचालित है। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड, जो कि एक अर्द्ध-सरकारी संगठन है, जिसकी छत्रछाया में भारत में अनेकों समाज कल्याण कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं, के द्वारा कल्याणकारी कार्यक्रमों हेतु वित्तीय पोषण किया जाता है। इसी प्रकार से उपरोक्त सभी संगठनों द्वारा प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से आर्थिक एवं अन्य प्रकार की सहायता एवं परामर्श प्रदान किया जाता है। वर्तमान में पाँच हजार से अधिक बालवाड़ी केन्द्रों में पोषण कार्यक्रम सफलता पूर्वक चलाया जा रहा है। जिस प्रकार आंगनवाड़ी कार्यकर्ता आई० सी० डी० एस० कार्यक्रम के अंतर्गत मानदेय पर कार्य करते हैं, ठीक उसी प्रकार बालवाड़ी कार्यकर्ता भी मानदेय पर कार्य करते हैं।

उद्देश्य

इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य विद्यालय पूर्व (कक्षा 1 से पहले या औपचारिक शिक्षा से पूर्व) बालक-बालिकाओं के पोषण स्तर को सर्वर्धित करने के उद्देश्य से पोषण प्रदान करना है।

7.7 बालकों का टीकाकरण कार्यक्रम

टीकाकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य को कुछ बीमारियों के प्रति प्रतिरक्षा प्रदान की जाती है। टीकाकरण की प्रक्रिया मनुष्य के अतिरिक्त पशुओं में भी की जा सकती है। 'टीका/वैक्सीन' वैज्ञानिक विधि द्वारा तैयार किया गया उत्पाद है, जो बीमारियों के प्रति प्रतिरोधकता विकसित करता है। टीका शरीर में इंजेक्शन के माध्यम से अथवा मुख से ग्रहण किया जा सकता है। टीका शरीर के प्राकृतिक सुरक्षा तंत्र के साथ मिलकर बीमारियों के प्रति प्रतिरोधकता बढ़ाने के संदर्भ में कार्य करता है। सामान्यतः सभी टीके सुरक्षित होते हैं एवं उनसे किसी प्रकार की हानि या पुनः व्याधि नहीं होती है। बालकों को कई प्रकार की जानलेवा

बीमारियों से सुरक्षित करने का सर्वोत्तम, सरल उपाय टीकाकरण है। कई बार टीकाकरण के उपरान्त हल्का बुखार, त्वचा पर चकत्ते, लालिमा इत्यादि लक्षण हो सकते हैं।

टीकाकरण द्वारा प्रति वर्ष कई लाख जानें बचायी जा सकती हैं। वैक्सीन (टीकों) की खोज मानव समाज के लिये एक प्रकार से वरदान सिद्ध हुई है। इसका और अधिक लाभ उठाने के लिये यह आवश्यक है कि व्यक्ति को टीकों और इसकी समय-सारिणी (Schedule) के विषय में सही ज्ञान हो।

भारत में टीकाकरण कार्यक्रम

शिशुओं के टीकाकरण के संबन्ध में भारत सरकार द्वारा “यूनीवर्सल इम्यूनाइजेशन प्रोग्राम” चलाया गया है। प्रारम्भिक तौर पर इस कार्यक्रम के अंतर्गत पोलियो, डिप्थीरिया, परट्यूसिस, टिटेनस, मीसल्स, हेपेटाइटिस बी एवं बाल्यकालीन टी0बी0 जैसी बीमारियों के टीके सरकार द्वारा प्रदान किये जाते हैं। यह कार्यक्रम वर्ष 1985 में आरम्भ हुआ तथा उसके पश्चात् नियमित टीकाकरण कार्यक्रम के रूप में इसका विस्तारीकरण भारत के विभिन्न राज्यों में किया गया। अपना कार्यक्षेत्र बढ़ाने एवं टीकाकरण कार्यक्रम को और अधिक प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा प्रायः विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं यूनीसेफ के साथ समन्वयन किया जाता रहा है।

भारत में टीकाकरण समय-सारिणी

राष्ट्रीय टीकाकरण अनुसूची तथा यूनीवर्सल टीकाकरण कार्यक्रम और नियमित टीकाकरण (रूटीन टीकाकरण) तथा सम्पूरक टीकाकरण को समेकित करती है। यूनीवर्सल टीकाकरण कार्यक्रम के अंतर्गत सात प्रमुख टीके हैं।

1. बी0सी0जी0 (Bacillus Calmette-Guerin)

- ट्यूबरक्युलोसिस से बचाव
- जन्म के समय एक खुराक अथवा जन्म से एक वर्ष तक, यदि जन्म के समय खुराक नहीं दी गयी है।

2. डी0पी0टी0 (Diphtheria, Pertussis (whooping cough), Tetanus)

- डिप्थीरिया, परट्यूसिस, टिटेनस से बचाव/सुरक्षा
- कुल पाँच खुराक: प्राथमिक खुराक (3) 6 वें, 10 वें, 14 वें सप्ताह में, प्रथम बूस्टर 16-24 माह की आयु में तथा द्वितीय बूस्टर 5 से 6 वर्ष की आयु में।

3. ओपीवी (Oral Polio Vaccine)

- पोलियोमायलिटिस से सुरक्षा
- ओरल (मुख से ग्रहण कर सकने योग्य) वैक्सीन, 5 खुराक जन्म के समय, प्राथमिक खुराक (3) 6 वें, 10 वें तथा 14 वें सप्ताह में तथा एक बूस्टर खुराक 16 से 24 वें माह के बीच।

4. हेपेटाइटिस 'बी'

- हेपेटाइटिस 'बी' से सुरक्षा।
- चार खुराक (जन्म से 24 घंटों के भीतर एक खुराक, इसके पश्चात् 3 खुराक (6 वें, 10 वें, 14 वें सप्ताह में)

5. एमएमआर (Measles, Mumps (Parotitis) and Rubella)

- मीजल्स (खसरा), मम्प्स (गलसुआ) रुबेला से सुरक्षा
- दो खुराक (12 से 15 माह के मध्य पहली खुराक तथा दूसरी खुराक 4 से 6 वर्ष के मध्य)

6. टीटी (Tetanus toxoid)

- टिटेनस से सुरक्षा।
- दो खुराक (पहली खुराक 10 वर्ष की आयु में, दूसरी खुराक 16 वर्ष की आयु में)

गर्भवती महिलाओं को भी टीटी (टिटेनस टॉक्साइड) के टीके की आवश्यकता होती है। परन्तु महिला द्वारा विगत तीन वर्षों में यदि इस वैक्सीन को प्राप्त किया गया है तो गर्भवती महिला को इस वैक्सीन की आवश्यकता नहीं होती है।

7. जापानी एन्सेफलाइटिस (Japanese encephalitis)

- जापानी एन्सेफलाइटिस (दिमागी बुखार) से बचाव/सुरक्षा।
- दो खुराक; पहली खुराक 9 से 12 माह के मध्य तथा दूसरी खुराक 16 से 24 माह के मध्य।

वर्ष 2006 से 2010 के मध्य भारत सरकार द्वारा 112 जिलों में इसे महामारी के रूप में घोषित करते हुए भारत के कुछ राज्यों में जापानी एन्सेफलाइटिस को "यूनीवर्सल इम्यूनाइजेशन

प्रोग्राम” के एक प्रमुख भाग के रूप में शुरू किया गया। जापानी एन्सेफलाइटिस या दिमागी बुखार का विषाणु अभी भी एशिया के कई भागों में सक्रिय है। इस विषाणु का संक्रमण मुख्यतया मच्छरों के काटने से फैलता है। इसकी घटनाएं भारत में मुख्यतया असम, तमिलनाडु, बिहार, पश्चिम बंगाल एवं कर्नाटक में देखने को मिलती हैं। वर्ष 2013 से भारत में इस वैक्सीन का निर्माण स्थानीय रूप से किया जाने लगा है।

अन्य टीकाकरण

कुछ टीके यूनीवर्सल टीकाकरण कार्यक्रम के भाग नहीं हैं, परन्तु भारत सरकार द्वारा नियमित टीकाकरण के अंतर्गत कुछ टीकों का समावेश किया जाता है। इस प्रकार के प्रमुख टीकों में से एक है एच0आई0बी0 (हीमोफाइलस इन्फ्ल्यून्जा टाइप बी बैक्टीरियम) बीमारी से बचने का टीका। यह पाँच टीकों के एक संयुक्त रूप में सम्मिलित किया जाता है।

मिशन इन्द्रधनुष



मिशन इन्द्रधनुष भारत सरकार का स्वास्थ्य मिशन है। इस कार्यक्रम का शुभारम्भ केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री द्वारा 25 दिसम्बर 2014 को किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य 2 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों तथा गर्भवती महिलाओं का सात गम्भीर बीमारियों के प्रति संपूर्ण टीकाकरण कराना है। ये सात बीमारियाँ हैं; डिफ्थीरिया, काली खाँसी, टिटेनस, पोलियोमायलिटिस, ट्यूबक्युलोसिस, मीजल्स तथा हेपेटाइटिस बी। मिशन इन्द्रधनुष के अंतर्गत कम टीकाकरण कवरेज वाले जिलों को विशेष रूप से चिन्हित किया गया है ताकि वहाँ टीकाकरण कवरेज प्रतिशत बढ़ाया जा सके। यह सरकार की बच्चों एवं गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य की सुरक्षा की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण एवं महत्वाकांक्षी योजना है।

7.8 साप्ताहिक लौह लवण एवं फोलिक अम्ल सम्पूरक कार्यक्रम

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा किशोर बालक एवं बालिकाओं में रक्ताल्पता जैसे रोगों को दूर करने के उद्देश्य से साप्ताहिक लौह लवण एवं फोलिक अम्ल सम्पूरक कार्यक्रम का शुभारम्भ किया गया। इस कार्यक्रम के अंतर्गत सम्पूरित लौह लवण एवं फोलिक अम्ल

की मात्रा का अनुवीक्षण किया जाता है। इस कार्यक्रम का दीर्घकालीन उद्देश्य पीढ़ी दर पीढ़ी चले आ रहे रक्ताल्पता के दुश्क्र को तोड़ना है तथा लघु कालीन उद्देश्य के रूप में कार्यक्रम पोषण की दृष्टि से मानव संसाधन को बढ़ावा देता है। यह कार्यक्रम राष्ट्रभर में (ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों में) समान रूप से कार्यान्वित किया गया है।

कार्यक्रम के प्रमुख बिन्दु

उद्देश्य: किशोर जनसंख्या समूह, आयु वर्ग 10-19 वर्ष के मध्य रक्ताल्पता एवं इसके दुष्प्रभाव को रोकने हेतु लौह लवण एवं फोलिक अम्ल सम्पूरण साप्ताहिक आवृत्ति पर प्रदान करना।

लाभार्थी समूह: विद्यालय जाने वाले किशोर बालक एवं बालिकाएं तथा सरकारी, अर्द्ध सरकारी, सरकारी सहायता प्राप्त, नगर पालिका, महानगर पालिका के अंतर्गत कक्षा 6 से 12वीं तक तथा आयु 10-19 वर्ष के छात्र-छात्राएं तथा वे किशोर छात्राएं जो विद्यालय छोड़ चुकी हों तथा किसी भी विद्यालय में पंजीकृत नहीं हों।

कार्यक्रम: साप्ताहिक रूप से लौह लवण एवं फोलिक अम्ल सम्पूरण लाभार्थियों को प्रदान करना जिसमें 100 ग्राम मौलिक लौह तत्व तथा 500 माइक्रोग्राम फोलिक अम्ल सप्ताह के किसी नियत दिन प्रदान करना।

- लाभार्थियों को रक्ताल्पता की गंभीरता के आधार पर चिन्हित करना एवं तदानुसार उचित स्वास्थ्य सेवा केन्द्रों में भेजना।
- वर्ष में दो बार विकृमिकरण (de worming) एल्बैन्डाजॉल 400 मि0ग्रा0 के माध्यम से।
- संबन्धित मुख्य मंत्रालयों जैसे महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालयों की बैठक। बैठक के प्रमुख बिन्दु संयुक्त कार्यक्रम आयोजन, क्षमता निर्माण कार्यक्रम, क्षेत्रीय रूप में सेवाओं के प्रबंधन एवं उपलब्धता जिसमें चिकित्सकीय अधिकारी, आंगनबाड़ी कार्यकर्ता, स्टाफ नर्स, प्राथमिक विद्यालय शिक्षक तथा अनुवीक्षणीय एवं समेकित संप्रेक्षण घटक निहित हैं।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में साप्ताहिक लौह लवण एवं फोलिक अम्ल सम्पूरक कार्यक्रम

इस कार्यक्रम का विस्तारण राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों में किया जा चुका है। वर्तमान में 11.2 करोड़ लाभार्थी इस कार्यक्रम के अंतर्गत आच्छादित हैं जिसमें 8.4 करोड़ विद्यालयी तथा 2.8 करोड़ गैर-विद्यालयी लाभार्थी सम्मिलित हैं।

सामाहिक लौह लवण एवं फोलिक अम्ल की गोलियों के उपयोग संबंधी दिशा-निर्देश:

- किशोर/किशोरियों को यह सलाह दी जाती है कि वे भोजन ग्रहण करने के लगभग 1 घण्टे बाद लौह लवण- फोलिक अम्ल गोलियों का सेवन करें ताकि उल्टी, चक्कर आने जैसी समस्याओं से निजात पाया जा सके।
- वे किशोर एवं किशोरियां जिन्हें लौह लवण- फोलिक अम्ल गोलियों से दुष्प्रभाव जैसे उल्टी, चक्कर इत्यादि की समस्या हो रही हो, उन्हें खाना खाने के बाद रात्रि को सोने से पहले यह गोलियाँ लेनी चाहिये।
- विटामिन 'सी' युक्त खाद्य पदार्थों (आँवला, नींबू, खट्टे फल इत्यादि) का सेवन भारतीय शाकाहारी आहार से लौह तत्व का शरीर में अवशोषण बढ़ाता है। साथ ही लोहे के बर्तनों में खाना पकाना भी श्रेयस्कर होता है।
- लौह लवण- फोलिक अम्ल गोली लेने के एक घण्टे बाद तक चाय एवं कॉफी का सेवन नहीं किया जाना चाहिये।
- किशोर एवं किशोरियों को यह सलाह दी जाती है कि वे स्वच्छता एवं साफ-सफाई का विशेष रूप से पालन करें ताकि कृमि संक्रमण (Worm Infection) से बचा जा सके।

संशोधित डब्ल्यू0 आई0 एफ0 एस0 प्रारूप

(Modified Weekly Iron and Folic Acid Supplementation format)

वर्तमान प्रपत्र को सरलीकृत करने एवं कार्यक्रम संबंधी आख्या/तथ्यों को और सशक्त करने के उद्देश्य से कुछ संशोधन किये गये हैं जो निम्नवत हैं:

1. प्रपत्र का मूल रूप यथावत् रहेगा।
2. राज्यों की सलाह/सुझाव पर प्रपत्र 6 (एनम मासिक आख्या) तथा प्रपत्र 8 (एम0ओ0पी0एस0सी0 (Primary Health Care) मासिक आख्या) को समाप्त कर दिया गया है। इस प्रकार कुल प्रपत्रों की संख्या अब 7 (सात) हो गयी है।
3. प्रपत्र के अंतर्गत आने वाले सूचकों का विवरण निम्नवत है:

क्रमांक	सूचक विवरण सामान्य सूचना	परिवर्तन

1.	लौह लवण- फोलिक अम्ल उपभोग	कुल लाभार्थी किशोरों की संख्या वर्ष भर में नियत रहनी चाहिये, और यदि कियी माह इसमें परिवर्तन किया जाता है तो इसकी पूर्व सूचना एवं अनुमति संबधित राष्ट्रीय/राज्य/जिला स्तरीय अधिकारी से ली जानी चाहिये। इन आँकड़ों का सत्यापन संबधित शिक्षा विभाग एवं आई0सी0डी0एस0 विभाग द्वारा किया जाना चाहिये। चूंकि इन आँकड़ों में बहुत अधिक परिवर्तन की संभावना नहीं रहती। अतः लौह लवण-फोलिक अम्ल का प्रभाव लाभार्थियों पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। लिंग पृथक्कीकरण इसमें सम्मिलित किया गया है ताकि इसमें बालिकाओं की स्पष्ट जानकारी प्राप्त हो सके।
2.	एल्बैन्डाजॉल	लौह लवण-फोलिक अम्ल गोलियों के उपभोग की भाँति
3.	किशोर तथा किशोरियों में मध्यम एवं तीव्र रक्ताल्पता	ऐसे किशोर, किशोरियों का चिन्हीकरण भौतिक रूप से परीक्षण करने के उपरान्त किया जाना चाहिये। वर्ष में चार बार इनकी रिपोर्ट दी जानी चाहिये।
4.	पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा	विद्यालयों एवं आंगनबाड़ी केन्द्रों में पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा संबधी सत्र का आयोजन माह में एक बार अवश्य किया जाना चाहिये।
5.	भंडार विवरण	भंडार विवरण खंड स्तर पर विद्यालयों, आंगनबाड़ी केन्द्रों में प्रतिमाह तथा जिला एवं राज्य स्तर पर चार माह में एक बार प्राप्त किया जाना चाहिये।

“स्कूल के प्रकार” को शिक्षा विभाग के स्थान पर जोड़ा गया है ताकि कार्यक्रम का विस्तारण समस्त सरकारी, गैर-सरकारी, सहायता प्राप्त, आवासीय मदरसा, आश्रमशाला तथा नगर पालिका एवं महानगर पालिका के संबध में सभी शिक्षण संस्थानों तक पहुँच सके। जिलों के संबध में रिपोर्ट एवं आख्या देते समय ब्लॉक संख्या, जिले की महीनेवार आख्या देना आवश्यक है ताकि अनुवीक्षण एवं आख्या (प्रणाली) सशक्त हो सके।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं पोषण कार्यक्रम



7.9 सारांश

समुचित आहार एवं बेहतरिण स्वास्थ्य सेवाएं सक्रिय एवं स्वस्थ जीवन जीने का आधार हैं। उच्चतर स्वास्थ्य, विकास का एक अति महत्वपूर्ण एवं निर्धारक तत्व है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार अपर्याप्त एवं अनुचित पोषण विश्व स्वास्थ्य के लिये सबसे बड़ी खतरे की घंटी है। कुपोषित एवं अस्वस्थ व्यक्ति का संबध निम्न उत्पादकता, निम्न जीवन गुणवत्ता से है। इसके अतिरिक्त यह राष्ट्रीय स्तर पर सकल घरेलू उत्पाद हानि के लिये भी उत्तरदायी है। राष्ट्रीय विकास की दर जनसमूह के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर से प्रभावित होती है। इस अध्याय में आपने विभिन्न कार्यक्रम जो जनसमूहों के स्वास्थ्य संर्वधन हेतु समर्पित हैं, की अवधारणा, उद्देश्य, कार्य पद्धति तथा मानव ससांधन एवं सतत् विकास में इसके योगदान के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की।

अभ्यास प्रश्न 1

1. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।
 - a. मध्याह्न भोजन योजना
 - b. समेकित बाल विकास सेवाएं
 - c. बालवाड़ी पोषण कार्यक्रम
 - d. बालकों में टीकाकरण की आवश्यकता
2. लघु उत्तरीय प्रश्न
 - a. समेकित बाल विकास सेवाओं की चार प्रमुख विशेषताएं बताइये।
 - b. मध्याह्न भोजन योजना के अंतर्गत लाभार्थी वर्ग के विषय में बताइए।
 - c. इन्द्रधनुष कार्यक्रम को संक्षिप्त में समझाइये।
 - d. लौह लवन तथा फोलिक अम्ल सम्पूरण का महत्व बताइये।

7.10 पारिभाषिक शब्दावली

- **टीकाकरण:** टीकाकरण वह प्रक्रिया है जिसमें टीकों द्वारा शरीर के प्राकृतिक सुरक्षा तंत्र के माध्यम से शरीर की बीमारियों से लड़ने की क्षमता को बढ़ाया जा सकता है।

- **मध्याह्न भोजन योजना:** इस योजना के अंतर्गत बच्चों को दोपहर का पौष्टिक भोजन विद्यालय में ही उपलब्ध कराया जाता है। इस प्रकार का भोजन उनकी दैनिक कैलोरी एवं प्रोटीन आवश्यकता के एक तिहाई भाग की पूर्ति करता है।
- **बालवाड़ी:** यह भारत के ग्रामीण क्षेत्रों तथा सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के पूर्व विद्यालयी बालकों हेतु सरकारी अथवा गैर सरकारी संस्थानों द्वारा चलायी गयी योजना है। बालवाड़ी स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों के माध्यम से बालकों के शारीरिक और मानसिक विकास हेतु पर्याप्त अवसर प्रदान कर उन्हें विद्यालयी अथवा औपचारिक शिक्षा के लिये तैयार करती है।
- **आंगनबाड़ी:** यह ग्रामीण तथा सब शहरी क्षेत्रों में मातृ एवं शिशु सुरक्षा तथा कल्याण के अंतर्गत चलाया जाने वाला कार्यक्रम है जिसकी स्थापना 1975 में आई० सी० डी० एस० के अंतर्गत की गयी। इसे भूख, कुपोषण नियन्त्रण तथा स्वास्थ्य एवं पोषण संवर्धन कार्यक्रम के रूप में भी देखा जाता है।

7.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

इकाई का मूल भाग देखें।

7.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. The Integrated Child Development Services: A Flagship Adrift, By K.R. Venugopal, Konark Publishers, ISBN- 9789322008055.
2. E- Book of Ministry of Women and Child Development (india.gov.in) National Portal of India.
3. Child Nutrition and Primary Education, By Surendra Nath Misra, Manaranjan Behera, Anmol Publication 2004, Original from- The University of Michigan.
4. Role of ICDS Services on Maternal Health and Child Health in India, by Majumdar Nabanita, Lambert Academic Publishing (2013), ISBN-10 – 3659335002, ISBN- 13- 978-3659335006.

-
5. Public Health Nutrition in Developing Countries (Part 1) Edited by Shiela Chander Vir, Woodhead, Publishing India Pvt. Ltd.

इंटरनेट स्रोत

6. www.wcd.nic.in/icds.aspx
7. www.icds.gov.in
8. www.mpwcd.nic.in/sc-ic-icds
9. www.mdm.nic.in
10. Nutrition- health –education.blogspot.com (Special Nutrition Programme)
11. Universal Immunization Programme (mohfw.nic.in)
12. Weekly Iron and Folic Acid Supplementation Programme (nhm.gov.in/ nrhm)
13. www.missionindradhanush.in

7.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. बालकों के पोषण एवं स्वास्थ्य स्तर को सुधारने के संबन्ध में भारत में संचालित मुख्य योजनाओं /कार्यक्रमों का उल्लेख करते हुए इसके सामाजिक महत्व पर प्रकाश डालिये।
2. समेकित बाल विकास सेवाओं (आई0 सी0 डी0 एस0) के अंतर्गत प्रदत्त प्रमुख सेवाओं तथा इसके उद्देश्यों की विस्तार पूर्वक चर्चा कीजिये।
3. भारत में मध्याह्न भोजन योजना की विस्तृत व्याख्या कीजिये तथा बालकों के पोषण स्तर पर इसके प्रभाव को समझाइये।
4. भारत में टीकाकरण कार्यक्रमों की आवश्यकता एवं महत्व बताते हुए टीकाकरण सारिणी पर प्रकाश डालिये।

काई 8 : पोषण स्तर संवर्धन एवं आय उपार्जन

कार्यक्रम

-
- 8.1 प्रस्तावना
 - 8.2 उद्देश्य
 - 8.3 ग्रामीण विकास कार्यक्रम
 - 8.4 राष्ट्रीय ग्रामीण विकास कार्यक्रम
 - 8.5 राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम
 - 8.6 महात्मा गाँधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम
 - 8.7 समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम
 - 8.8 स्वरोजगार हेतु ग्रामीण युवा प्रशिक्षण कार्यक्रम
 - 8.9 सारांश
 - 8.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
 - 8.11 पारिभाषिक शब्दावली
 - 8.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची
 - 8.8 निबंधात्मक प्रश्न
-

8.1 प्रस्तावना

भारत की अधिकांश जनता ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के शब्दों में “भारत अपने गाँवों में बसता है”। यद्यपि भारत वर्ष को प्रगति की दृष्टि से विश्व की दस श्रेष्ठ औद्योगिक राष्ट्रों की सूची में रखा गया है परन्तु वास्तविक भारत गाँवों में ही बसता है। राजनीतिज्ञों एवं नीति विशेषज्ञों ने इस तथ्य को स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भली भाँति जान लिया था कि भारत के सम्पूर्ण विकास में ग्रामीण क्षेत्रों की विशेष भूमिका है। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास को मुख्य धारा से जोड़े बिना देश के सतत विकास की कल्पना करना व्यर्थ होगा। सरकार अपनी सभी विकास नीतियों में ग्रामीण विकास को प्राथमिकता प्रदान करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता के अतिरिक्त शिक्षा, पोषण, स्वास्थ्य, स्वच्छता, पेय जल एवं अन्य मूलभूत एवं ढाँचागत सुविधाओं का अभाव प्रमुख समस्याएं हैं। सरकार द्वारा चलायी गयी योजनाओं का उद्देश्य इन समस्याओं के निराकरण के अतिरिक्त महिला सशक्तीकरण, लैंगिक

भेदभाव उन्मूलन जैसे मुद्दों पर कार्य करके ग्रामीण जनता की जीवन गुणवत्ता को श्रेष्ठ बनाना है। प्रस्तुत इकाई में इन्हीं कार्यक्रमों की चर्चा की गयी है।

8.2 उद्देश्य

ग्रामीण विकास की संकल्पना न केवल विकासशील राष्ट्रों बल्कि वैश्विक स्तर पर भी महसूस की जा रही है। राष्ट्रीय विकास कार्यक्रमों की सफलता ने इनके सामाजिक एवं आर्थिक महत्व को और ऐसे कार्यक्रमों की आवश्यकता को और अधिक बढ़ा दिया है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात शिक्षार्थी;

- राष्ट्रीय पोषण स्तर संवर्धन एवं रोजगार कार्यक्रमों के विषय में समझ सकेंगे;
- विभिन्न खाद्य एवं आय अंतरण कार्यक्रमों के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे; तथा
- देश के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में इन कार्यक्रमों के महत्व से अवगत हो सकेंगे।

8.3 ग्रामीण विकास कार्यक्रम

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय से ही भारत एक प्रगतिवादी एवं कल्याणकारी राष्ट्र रहा है। सभी सरकारी प्रयासों का बुनियादी उद्देश्य भारत के लोगों का हित कल्याण करना रहा है। योजना स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही भारतीय नीति-निर्माण का एक मुख्य स्तम्भ रही है। भारत में ग्रामीण निर्धनता के उन्मूलन के उद्देश्य को लेकर ही नीतियाँ और कार्यक्रम बनाये जाते रहे हैं। गरीबी उन्मूलन की चिरस्थायी कार्यनीति तथा प्रगति की प्रक्रिया रोजगार के सार्थक अवसर बढ़ाने के सिद्धान्त पर आधारित होनी चाहिये। गरीबी, अज्ञानता, रोगों की व्यापकता तथा अवसरों की असमानता को दूर करना एवं देशवासियों को बेहतर तथा उच्च जीवन स्तर प्रदान करना ऐसी बुनियादी कार्यनीतियाँ हैं, जिन पर विकास की सभी योजनाओं का ताना-बाना बुना गया है।

ग्रामीण विकास का अभिप्राय एक ओर जहाँ लोगों का बेहतर आर्थिक विकास करना है वहीं दूसरी ओर बृहद सामाजिक कायाकल्प करना भी है। ग्रामीणों को आर्थिक विकास की बेहतर संभावनाएं मुहैया कराने के उद्देश्य से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में लोगों की उत्तरोत्तर भागीदारी सुनिश्चित करने, योजना का विकेन्द्रीकरण करने, भूमि सुधार को बेहतर ढंग से लागू करने और ऋण प्राप्ति का दायरा बढ़ाने का प्रावधान किया गया है।

ग्रामीण विकास मंत्रालय के दो प्रमुख विभाग हैं:

1. ग्रामीण विकास विभाग

2. भूमि संसाधन विभाग

अक्टूबर वर्ष 1974 के दौरान ग्रामीण विकास विभाग खाद्य एवं कृषि मंत्रालय के अंग के रूप में अस्तित्व में आया। 18 अगस्त, 1979 को ग्रामीण विकास विभाग का दर्जा बढ़ा कर उसे ग्रामीण पुनर्गठन मंत्रालय का नाम दिया गया। 23 जनवरी, 1982 को इस मंत्रालय का नाम “ग्रामीण विकास मंत्रालय” किया गया। मंत्रालय के अंतर्गत विभिन्न गतिविधियों का मुख्य उद्देश्य गरीबी उन्मूलन, रोजगार सृजन, अवसंरचना विकास तथा सामाजिक सुरक्षा है। समय के साथ-साथ कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में प्राप्त अनुभवों के आधार पर तथा गरीब लोगों की जरूरतों का ध्यान रखते हुये कई कार्यक्रमों में संशोधन किये गये एवं नये कार्यक्रम लागू किये गये। इस मंत्रालय का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण निर्धनता को दूर करना तथा ग्रामीण आबादी विशेष रूप से गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे लोगों को बेहतर जीवन स्तर मुहैया कराना है। इन उद्देश्यों की पूर्ति ग्रामीण जीवन और कार्यकलापों के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित कार्यक्रमों को तैयार करके उनका विकास करके तथा उनका कार्यान्वयन करके की जाती है।

आर्थिक सुधारों का लाभ समाज के सभी वर्गों को मिलने के उद्देश्य से ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन स्तर के लिये महत्वपूर्ण सामाजिक तथा आर्थिक अवसंरचना के पाँच कारकों की पहचान की गई। ये कारक निम्न प्रकार हैं:

1. स्वास्थ्य
2. शिक्षा
3. पेयजल
4. आवास
5. सड़कें

ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रहे निर्धन लोगों को उत्तरोत्तर लाभ पहुँचाने के लिये एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम, ग्रामीण दस्तकारों को बेहतर औजारों की आपूर्ति से संबंधित कार्यक्रम, स्वरोजगार के लिये ग्रामीण युवाओं के प्रशिक्षण से संबंधित कार्यक्रम इत्यादि आरम्भ किये गये हैं।

स्थानीय लोगों की जरूरत और उनकी आंकाक्षाओं को ध्यान में रखते हुए पंचायती राज संस्थाओं का सहयोग इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन के विकेन्द्रीकृत विकास का रूप है।

ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण ग्रामीण भारत के विकास के लिये महत्वपूर्ण है। महिलाओं को विकास की मुख्यधारा में लाना भारत सरकार का प्रमुख दायित्व रहा है।

इसलिये गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम में महिलाओं के योगदान का भी प्रावधान किया गया है ताकि समाज के इस वर्ग के लिये पर्याप्त निधियों की व्यवस्था की जा सके।

ग्रामीण विकास विभाग द्वारा स्वरोजगार सृजन योजना तथा मजदूरी रोजगार योजना, ग्रामीण गरीबों के लिये मकानों के प्रावधान एवं लघु सिंचाई साधन योजना, बेसहारा लोगों के लिये सामाजिक सहायता योजनाओं और ग्रामीण सड़क निर्माण योजना का क्रियान्वयन किया जाता है। ग्रामीण विकास विभाग द्वारा संचालित मुख्य कार्यक्रम निम्न प्रकार हैं:

1. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा)
2. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना
3. इंदिरा आवास योजना
4. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना
5. राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन
6. राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम

भूमि संसाधन विभाग द्वारा देश में बंजर भूमि का विकास करके बायोमास उत्पादन बढ़ाने से संबन्धित योजनाओं का कार्यान्वयन किया जाता है। इस विभाग द्वारा भूमि सुधार, राजस्व पद्धति की बेहतरी तथा भू अभिलेख, मृदा संवर्धन, नमी संरक्षण तथा उत्पादकता बढ़ाने जैसे कार्य भी किये जाते हैं। आइये कुछ प्रमुख योजनाओं एवं कार्यक्रमों को विस्तारपूर्वक समझें।

8.4 राष्ट्रीय ग्रामीण विकास कार्यक्रम

राष्ट्रीय ग्रामीण विकास कार्यक्रम वर्ष 1992 में ग्रामीण विकास के दृष्टिकोण से आरम्भ किया गया था। यह एक गैर सरकारी तथा गैर लाभकारी विकास कार्यक्रम है। राष्ट्रीय ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत गाँव में आंगनबाड़ी भवन निर्माण, पेयजल हेतु कुओं का निर्माण, सिंचाई जल हेतु निर्माण, कुओं, टंकी निर्माण इत्यादि कार्यों में ग्रामीणों को संलिप्त कर विकास कार्यों के साथ ग्रामीणों के लिये आय उर्पाजन के अवसर उत्पन्न किये जाते हैं।

8.5 राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (National Rural Employment Programme) अक्टूबर 1980 में आरम्भ हुआ। यह कार्यक्रम अप्रैल 1981 से सभी ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं योजनाओं का प्रमुख भाग बना। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में

अतिरिक्त एवं लाभकारी रोजगार अवसरों का सृजन कर, ग्रामीण समुदाय संसाधनों में वृद्धि एवं पोषण स्तर संवर्धन करना था।

वर्ष 1983-84 में एक प्रमुख निर्णय के अंतर्गत कार्यक्रम में प्रदान किए जाने वाले खाद्यान्नों को सब्सिडीकृत किया जाने लगा। खाद्यान्न जैसे गेहूं तथा चावल को 37-40 पैसा प्रति किग्रा की सब्सिडी प्रदान की गयी। कार्यक्रम के अंतर्गत दिये जाने वाले खाद्यान्नों की दर एक ₹0 प्रति किग्रा प्रति व्यक्ति रखा गया है। यह कार्यक्रम छठी पंचवर्षीय योजना में भारत सरकार द्वारा 1980 में आरम्भ किया गया। यह एक केन्द्र सरकार द्वारा चलायी गयी योजना है, जिसकी लागत का निर्वहन 50 प्रतिशत केन्द्र तथा 50 प्रतिशत राज्य सरकारों द्वारा किया जाता है। इस योजना को सातवीं पंचवर्षीय योजना में जारी रखा गया, कार्यक्रम के मूलभूत उद्देश्य निम्नवत हैं:

- ग्रामीण क्षेत्रों के पुरुष एवं महिलाओं हेतु अतिरिक्त सम्पूरित एवं लाभदायी रोजगार के अवसरों का सृजन।
- ग्रामीण अवसंरचना को मजबूत करने के लिये मजबूत एवं टिकाऊ संसाधनों का सृजन करना। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार लाने हेतु परिस्थितियों का निर्माण। निर्धनतम ग्रामीणों की आय एवं पोषण स्तर संवर्धन करना।

8.6 महात्मा गाँधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम

महात्मा गाँधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना अथवा मनरेगा विश्व की सबसे बड़ी रोजगार गारंटी योजना है जिसके अन्तर्गत भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों में वर्ष में 100 दिन की गारंटी रोजगार (बिना किसी विशेष कौशल) ग्रामीणों को प्रदान किया जाता है।

मनरेगा एक्ट

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005, देश के ग्रामीण क्षेत्रों में परिवारों की आजीविका की सुरक्षा हेतु प्रत्येक ऐसे परिवार जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिये स्वेच्छा से आगे आते हैं, प्रत्येक वित्तीय वर्ष में कम से कम 100 दिनों का गारंटीकृत मजदूरी नियोजन उपलब्ध कराने हेतु अधिनियम है। मनरेगा अधिनियम के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों के अंतर्गत आने वाले परिवारों को गारंटी रूप में रोजगार पाने का अधिकार निहित है। यह अवधि वर्ष में कम से कम 100 दिन की होती है एवं अधिनियम यह भी स्पष्ट करता है कि यह राज्यों का उत्तरदायित्व होगा कि योजना के अंतर्गत योग्य घर-परिवारों को वह गारंटी रूप में रोजगार प्रदान करे। राज्यों द्वारा इन परिवारों को गारंटी रोजगार न दे पाने की

दशा में ये नियमतः राज्य पर विधिवत कार्यवाही कर सकते हैं। ऐसा रोजगार प्रायः नहर, तालाब एवं कुवों का निर्माण इत्यादि में श्रमिक रूप में कार्य करने हेतु प्रदान किया जाता है। परन्तु इन निर्माण कार्यों में धन किस प्रकार व्यय किया जाये, इस संबंध में कई नियम हैं।

भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में देखा गया है कि प्रत्येक चौथा व्यक्ति निर्धनता सीमा से नीचे जीवन व्यतीत करता है। ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त इस निर्धनता को देखते हुये इस योजना का आरम्भ वर्ष 2006 में किया गया। इस योजना/अधिनियम के शुरु होने के पश्चात “ग्रामीण श्रम बाजार” के क्षेत्र में काफी सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिला है। योजना के द्वारा ग्रामीणों को गारंटी जॉब कार्ड के माध्यम से न्यूनतम आय उपार्जन करने का अवसर प्राप्त होता है। वर्तमान में लगभग 12 करोड़ जॉब कार्ड हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले निर्धन व्यक्ति एवं परिवार अपनी निर्धनता के स्तर से ऊपर उठने तथा ठीक आर्थिक स्थिति वाले व्यक्ति अपनी आय को और अधिक संवर्धित करने हेतु इस जॉब कार्ड का उपयोग कर रहे हैं। कृषि कार्य समाप्त हो जाने के बाद इस योजना की उपयोगिता और महत्व दोनों ही बढ़ जाते हैं।

इस योजना की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये समाज के सभी वर्गों (अनुसूचित जाति, जनजाति एवं महिलाओं) को सम्मिलित करता है। मनरेगा के 40 प्रतिशत लाभार्थी अनुसूचित जाति एवं जनजाति के व्यक्ति/परिवार हैं। महिलाओं के लिये यह योजना बिना किसी मध्यस्थता के आय उर्पाजन एवं सशक्तिकरण का अवसर है। इस योजना के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से ग्रामीणों को स्थानीय बिचौलियों, दलालों एवं उधार देने वालों के नियंत्रण से मुक्ति मिली है। इस योजना के अंतर्गत पारिश्रमिक का भुगतान सीधे लाभार्थियों के खाते में किया जाता है जिससे किसी भी प्रकार की चोरी, क्षति एवं धाँधली की आशंका कम या समाप्त हो जाती है। मनरेगा योजना के अंतर्गत लगभग दस करोड़ खाते पोस्ट ऑफिस एवं बैंक में खोले जा चुके हैं। मनरेगा योजना के माध्यम से खुले खातों में ऋण इत्यादि की सुविधा होने से ग्रामीणों का आर्थिक स्तर संवर्धित हुआ है तथा बच्चों एवं बालिकाओं को बेहतर एवं प्राथमिक शिक्षा के अवसर प्रदान हुये हैं। मनरेगा के अंतर्गत प्रदत्त कार्य (रोजगार) की धीमी गति इस योजना का प्रमुख नकारात्मक बिन्दु है। प्रशासनिक स्तर पर इस कार्यक्रम में काफी कुप्रबन्धन देखने को भी मिलते हैं। जैसे ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायती समिति की तय समय पर बैठक न हो पाने के कारण संस्वीकृत कार्य (रोजगार) ग्रामीणों को नहीं मिल पाता है। आँकड़े बताते हैं कि सत्र 2015-16 में केवल 10 प्रतिशत परिवार (कुल 4.8 करोड़) ग्रामीण परिवार मनरेगा के अंतर्गत लाभ पा सके, जबकि इसका कार्य क्षेत्र काफी विस्तृत हो सकता था। इन नकारात्मक बिन्दुओं पर लगातार कार्य करके इस योजना को और अधिक प्रभावशाली बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

ग्रामीण क्षेत्र में नियोजन की गारंटी

मनरेगा अधिनियम के अनुसार राज्य में ऐसे ग्रामीण क्षेत्र जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित हैं, में प्रत्येक गृहस्थी को जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिये स्वेच्छा से आगे आते हैं, राज्य सरकार इस अधिनियम के अधीन एक वित्तीय वर्ष में न्यूनतम सौ दिनों के लिये ऐसा कार्य उपलब्ध करायेगी।

प्रत्येक व्यक्ति जिसने योजना के अधीन दिया गया कार्य किया है, प्रत्येक कार्य दिवस के लिये मजदूरी प्राप्त करने का हकदार होगा। केन्द्रीय रोजगार गारंटी परिषद् जिसका मुख्यालय दिल्ली में है, का गठन किया गया है जिसके निम्न प्रमुख कर्तव्य हैं:

- केन्द्रीय मूल्यांकन और निगरानी प्रणाली स्थापित करना।
- इस अधिनियम के कार्यान्वयन से संबंधित सभी विषयों पर केन्द्रीय सरकार को सलाह देना।
- समय-समय पर निगरानी तंत्र का पुनर्विलोकन करना तथा अपेक्षित सुधारों की सिफारिश करना।
- इस अधिनियम के अधीन बनाई गई योजनाओं के संबंध में जानकारी के विस्तृत सभ्य प्रसार का संवर्धन करना।
- इस अधिनियम के कार्यान्वयन का अनुवीक्षण करना।
- इस अधिनियम के कार्यान्वयन पर केन्द्रीय सरकार द्वारा संसद के समक्ष रखने हेतु वार्षिक रिपोर्ट तैयार करना।
- कोई अन्य कर्तव्य एवं कृत्य जो केन्द्रीय सरकार द्वारा समनुदेशित किये जाएं।

राज्य रोजगार गारंटी परिषद्

इस अधिनियम के कार्यान्वयन का नियमित रूप से अनुवीक्षण और पुनर्विलोकन करने के प्रयोजन हेतु प्रत्येक राज्य सरकार राज्य रोजगार गारंटी परिषद् का गठन करती है जिसमें एक अध्यक्ष और राज्य सरकार द्वारा अवधारित गैर सरकारी सदस्य जो राज्य सरकार द्वारा पंचायती राज्य संस्थाओं, कर्मकार संगठनों और असुविधाग्रस्त समूहों से नाम निर्दिष्ट पन्द्रह से अनधिक गैर सरकारी सदस्य होते हैं।

राज्य परिषद् के कर्तव्य

- योजना और राज्य में उसके कार्यान्वयन से संबंधित सभी विषयों पर राज्य सरकार को सलाह देना।
- अधिमानित कार्यों का अवधारण करना।
- समय-समय पर अनुवीक्षण तंत्र का पुनर्विलोकन करना तथा अपेक्षित सुधारों की सिफारिश करना।
- इस अधिनियम और इसके अधीन योजनाओं के संबंध में जानकारी के विस्तृत संभव प्रसार का समर्थन करना।
- राज्य में इस अधिनियम और योजनाओं के कार्यान्वयन की निगरानी करना तथा ऐसे कार्यान्वयन का केन्द्रीय परिषद् के साथ समन्वयन करना।
- राज्य सरकार द्वारा राज्य विधान मंडल के समक्ष रखी जाने वाली वार्षिक रिपोर्ट तैयार करना।
- कोई अन्य कर्तव्य और कृत्य जो उसे केन्द्रीय परिषद् और राज्य सरकार द्वारा समनुदेशित किया जाये।

जिला कार्यक्रम समन्वयक

जिला पंचायत के मुख्य कार्यपालक अधिकारी या जिले के जिलाधिकारी या समुचित पंक्ति के किसी अन्य जिला स्तर के अधिकारी को, जिसका राज्य सरकार विनिश्चय करें, जिले में योजना के कार्यान्वयन के लिये जिला कार्यक्रम समन्वयक के रूप में पदनिहित किया जाता है। जिला कार्यक्रम समन्वयक, इस अधिनियम और उसके अधीन बनाये गये नियमों के उपबन्धों के अनुसार जिले में योजना के कार्यान्वयन के लिये उत्तरदायी होगा।

जिला कार्यक्रम समन्वयक के निम्नलिखित कार्य हैं:

- इस अधिनियम और उसके अधीन बनाई गई किसी भी योजना के अधीन उसके कृत्यों के निर्वहन में जिला पंचायत की सहायता करना।
- ब्लॉक द्वारा तैयार की गई योजनाओं और जिला स्तर पर पंचायत द्वारा अनुमोदित की जाने वाली परियोजनाओं में सम्मिलित करने के लिये अन्य कार्यान्वयन अभिकरणों से प्राप्त परियोजना प्रस्तावों का समेकन करना।
- जहाँ कहीं आवश्यक हो आवश्यक मंजूरी और प्रशासनिक सहायता प्रदान करना।

- यह सुनिश्चित करने के लिये कि आवेदकों को इस अधिनियम के अधीन उनकी हकदारी के अनुसार नियोजन उपलब्ध कराये जा रहे हैं, अपनी अधिकारिता के भीतर कृत्य कर रहे कार्यक्रम अधिकारियों और कार्यान्वयन अभिकरणों के साथ समन्वयन करना।
- कार्यक्रम अधिकारियों के कार्यपालन का पुनर्विलोकन, अनुवीक्षण एवं पर्यवेक्षण करना।
- वर्तमान में चल रहे कार्यों का नियतकालिक निरीक्षण करना।
- आवेदकों की शिकायतों को दूर करना।

ग्राम पंचायतों के उत्तरदायित्व

- ग्राम पंचायत, ग्राम सभा एवं वार्ड सभाओं की सिफारिशों के अनुसार किसी योजना के अधीन ग्राम पंचायत क्षेत्र के कार्यान्वयन के लिये ली जाने वाली परियोजना की पहचान और ऐसे कार्य के निष्पादन और पर्यवेक्षण के लिये उत्तरदायी होगी।
- कोई ग्राम पंचायत, ग्राम पंचायत के क्षेत्र के भीतर किसी योजना के अधीन किसी परियोजना को जिसे कार्यक्रम अधिकारी द्वारा मंजूर किया जाये, ले सकेगी।
- प्रत्येक ग्राम पंचायत और वार्ड सभाओं की सिफारिश पर विचार करने के पश्चात् एक विकास योजना तैयार करेगी एवं योजना के अधीन जब कभी कार्य की मांग उत्पन्न हो, किये जाने वाले संभव कार्यों का ब्यौरा रखेगी।

वित्तपोषण स्वरूप

ऐसे नियम जो केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त बनाये जाएं, उनके अधीन केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित की लागत को पूरा करती है:

- योजना के अधीन अकुशल शारीरिक कार्य के लिये मजदूरी के संदाय के लिये अपेक्षित रकम।
- योजना की सामग्री लागत की तीन चौथाई रकम जिसके अंतर्गत कुशल और अर्धकुशल कर्मकारों को मजदूरी का प्रावधान सम्मिलित है।
- योजना की कुल लागत का प्रतिशत, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रशासनिक खर्चों के प्रति अवधारित किया जाये जिसके अंतर्गत कार्यक्रम अधिकारियों और उनके सहायक कर्मचारियों के वेतन और भत्ते, केन्द्रीय परिषद् के प्रशासनिक खर्च, अन्य सुविधायें और ऐसी अन्य मदें जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिश्चित की जाएं।

राज्य सरकार निम्नलिखित की लागत को पूरा करती है:

- योजना के अंतर्गत संदेय बेकारी भत्ते की लागत
- योजना की सामग्री लागत का एक चौथाई, जिसके अंतर्गत कुशल एवं अर्धकुशल कर्मकारों की मजदूरी का प्रावधान भी है।
- राज्य परिषद् के प्रशासनिक खर्च।

ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की विशेषताएं

1. जल संरक्षण और जलाशय संचय
2. सूखारोधी कार्य जिसके अंतर्गत वनरोपण और वृक्षारोपण सम्मिलित हैं।
3. सिंचाई नहरों जिनके अंतर्गत सूक्ष्म और लघु सिंचाई संकर्म हैं।
4. अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की गृहस्थियों के स्वामित्वाधीन भूमि सुधार के हिताधिकारियों की भूमि के लिये या भारत सरकार की इन्दिरा आवास योजना के अधीन हिताधिकारियों की भूमि के लिये सिंचाई सुविधा का उपबंध।
5. पारंपरिक जल निकायों का नवीनीकरण जिसके अंतर्गत तालाबों का शुद्धिकरण शामिल है।
6. भूमि विकास
7. बाढ़ नियंत्रण संरक्षण संकर्म, जिनके अंतर्गत जलरुद्ध क्षेत्रों में जल निकास भी है।
8. कोई अन्य कार्य जिसे राज्य सरकार के परामर्श से केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित किया जाये।

योजना निम्नलिखित कार्यों पर संकेन्द्रित है:

प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन से संबन्धित लोक निर्माण

1. पेयजल स्रोत सहित परिष्कृत भूजल पर विशेष ध्यान के साथ भूमिगत बाँध, मिट्टी के बाँध, ठहराव बाँध जैसे भूजल की वृद्धि और सुधार के लिये जल संरक्षण।
2. सूक्ष्म एवं लघु सिंचाई कार्य एवं सिंचाई नहरों तथा नालियों का सृजन, पुनर्जीर्णकरण एवं अनुरक्षण।
3. सिंचाई कुंडों और अन्य जलाशयों की सिल्ट हटाना तथा पारंपरिक जलाशयों का पुनर्जीवन।
4. सामान्य भूमि में भूमि विकास कार्य।

कमजोर वर्गों के लिये सुधार कार्य

1. भूमि विकास के माध्यम से और खुदे हुये कुओं, कृषि तालाबों तथा अन्य जल संचयन संरचनाओं सहित सिंचाई के लिये उपयुक्त अवसंरचना उपलब्ध कराकर, विनिर्दिष्ट घरों की भूमि की उत्पादकता में सुधार करना।
2. उद्यान कृषि, रेशम कृषि, पौधा रोपण और कृषि वानिकी के माध्यम से आजीविका में सुधार करना।
3. इंदिरा आवास योजना या ऐसे अन्य राज्य या केन्द्रीय सरकार की योजना के अधीन स्वीकृत गृहों के निर्माण में अकुशल मजदूरी संघटका।
4. कुक्कुट आश्रय, बकरी आश्रय, पशु आश्रय तथा अन्य पशुओं के संवर्धन के लिये अवसंरचना का सृजन करना।
5. सार्वजनिक भूमि पर मौसमी जलाशयों में मत्स्य पालन और इस हेतु अवसंरचना सृजित करना।
6. कृषि उत्पादकता संवर्धन।
7. स्वयं सहायता समूह।
8. सड़क निर्माण।
9. खेल के मैदानों का निर्माण।
10. आपदा तैयारी में सुधार करना या सड़कों का जीर्णोद्धार।
11. ब्लॉक स्तर पर शवदाह गृह के भवनों का निर्माण।
12. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के अंतर्गत "खाद्यान्न भंडारण संरचनाओं का निर्माण"।

प्राथमिकता समूह

- अनुसूचित जाति
- अनुसूचित जनजाति
- घुमन्तु जनजाति
- अधिसूचना से निकाली गई जनजातियाँ
- गरीबी रेखा से नीचे के परिवार
- महिला प्रधान परिवार
- शारीरिक रूप से विकलांग प्रधान वाले परिवार

- इंदिरा आवास योजना के अधीन लाभार्थी
- अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पारंपरिक वनवासी (वन अधिकार मान्यता प्राप्त अधिनियम 2006 के अधीन लाभार्थी)

8.7 समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (Integrated Rural Development Programme) भारत सरकार द्वारा वर्ष 1978 में आरम्भ किया गया तथा वर्ष 1980 में इसको कार्यान्वित किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के निर्धन व्यक्तियों को रोजगार के अवसर प्रदान करने के साथ-साथ निर्धन व्यक्तियों के जीवन कौशल में वृद्धि करना है ताकि उनके रहन-सहन का स्तर में सकारात्मक परिवर्तन आ सके। समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को औपचारिक एवं आधिकारिक रूप में ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता उन्मूलन एवं आर्थिक स्थिति संवर्धित करने हेतु मुख्य प्रविधि के रूप में माना गया है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में चिन्हित परिवारों को स्व: रोजगार के अवसर सृजित कर गरीबी रेखा से ऊपर उठाना है। कार्यक्रम के अंतर्गत सरकार द्वारा सब्सिडी (अनुवृत्ति) तथा नियत अवधि ऋण (कर्मशियल बैंक, को-ऑपरेटिव तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के माध्यम से) चिन्हित ग्रामीण परिवार के व्यक्तियों को प्रदान किया जाता है।

यह कार्यक्रम देश के सभी खण्डों में केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना के रूप में कार्यान्वित की गई है। यह योजना केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा 50:50 के अनुपात में वित्त पोषित है, अर्थात् योजना का वित्त पोषण 50 प्रतिशत केन्द्र सरकार तथा 50 प्रतिशत राज्य सरकार द्वारा किया जाता है। जैसा कि आठवीं पंचवर्षीय योजना में निर्धारित है, वे ग्रामीण परिवार जिनकी वार्षिक आय 11,000 रुपये से कम है, “गरीबी रेखा से नीचे” की श्रेणी में आते हैं, को इस कार्यक्रम के मुख्य लाभार्थी के रूप में सम्मिलित किया जाना चाहिये। कार्यक्रम समाज के सर्वाधिक आर्थिक और सामाजिक रूप से वंचित समुदाय तक पहुंच सके, इसके लिये कार्यक्रम के अंतर्गत प्रावधान रखा गया है कि 50 प्रतिशत लाभार्थी अनुसूचित जाति एवं जनजाति के होने चाहिये। इसके अतिरिक्त 40 प्रतिशत कार्यक्रम आच्छादन महिला लाभार्थी तथा 3 प्रतिशत विकलांग व्यक्तियों तक होना आवश्यक है।

इस कार्यक्रम का कार्यान्वयन “जिला ग्रामीण विकास समिति/District Rural Development Agencies; DRDA” के माध्यम से होता है। सांसद, विधायक अध्यक्ष (जिला परिषद्), जिला विकास विभाग के प्रमुख अनुसूचित जाति एवं जनजाति तथा महिलाओं के प्रतिनिधि इस समिति के प्रमुख घटक हैं। जमीनी स्तर पर ब्लॉक स्तर के

कार्यकर्ता इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन हेतु उत्तरदायी हैं। राज्य स्तर पर “राज्य स्तरीय समन्वयन समिति” इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन हेतु उत्तरदायी है। ग्रामीण और रोजगार मंत्रालय वित्त पोषण, नीति निर्धारण, सम्पूर्ण निर्देशन, अनुवीक्षण एवं कार्यालय मूल्यांकन हेतु उत्तरदायी है।

छठी पंचवर्षीय योजना में गरीबी उन्मूलन हेतु इस कार्यक्रम को सबसे बड़े कार्यक्रम के रूप में मान्यता दी गयी। वर्ष 1985 में इस कार्यक्रम का अखिल भारतीय स्तर पर मूल्यांकन किया गया, जिसके परिणाम निम्नवत हैं:

1. ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा “जिला ग्रामीण विकास संस्थान” को आयोजन प्रोजेक्ट निर्माण एवं कार्यान्वयन हेतु अनुमोदित किया गया है। इस संबंध में राज्यों को दिशा निर्देश उक्त संबंध में जारी किए जाते हैं।
2. कई राज्य कार्यक्रम के अंतर्गत पचास प्रतिशत लागत वहन (संसाधनों की कमी के कारण) करने में असमर्थ पाये गये।
3. कई राज्यों में “राज्य स्तरीय समन्वयन समिति” गठित की गयी है परंतु कार्यक्रम के संबंध में राज्य एवं खण्ड स्तर पर कार्यक्रम संचालन हेतु समन्वयन की भारी कमी देखी गयी है।
4. कई जिलों में कार्यान्वयन हेतु ढाँचागत, आधारभूत संसाधनों, सुविधाओं एवं सेवाओं का अभाव देखा गया है।
5. दिशा-निर्देशों के अनुपालन में स्पष्ट रूप से ढलाई बरती गयी है। कार्यक्रम संबंधी पंचवर्षीय योजना जिलेवार बनाई जाती है, जिसका अनुपालन करने में कई राज्य असमर्थ रहे हैं।
6. इसी प्रकार देखा गया है कि कार्यक्रम में लाभार्थी चयन में प्राथमिकता का अनुपालन (अनुसूचित जाति, जनजाति, महिला, विकलांग के संदर्भ में) कई राज्यों द्वारा नहीं किया गया है।
7. लाभार्थी को संसाधन/साधन वितरित करने के संबंध में किसी जाँच संयंत्र का कोई प्रावधान नहीं रखा गया था।
8. वित्तीय सहायता, संसाधन, ऋण व्यवस्था इत्यादि मुद्रा स्फीति दर के अनुकूल होनी चाहिये।
9. संसाधनों का आवंटन निर्धनतम क्षेत्रों में सर्वाधिक होना चाहिये।

10. योजना का खंड, जिला एवं राज्य स्तर पर सशक्तिकरण अनुवीक्षणीय प्रबन्धन होना चाहिये।

8.8 स्वरोजगार हेतु ग्रामीण युवा प्रशिक्षण कार्यक्रम (TRYSEM, Training of Rural Youth for Self Employment)

ट्राइसेम कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में 18-35 वर्ष की आयु के व्यक्तियों के तकनीकी और व्यवसायिक/उद्यमिता कौशल संवर्धन कर उनके लिए रोजगार के अवसर सृजन कर उनकी आर्थिक स्थिति बेहतर करना है। यह कार्यक्रम इन्ट्रीग्रेटेड रूरल डेवलपमेंट प्रोग्राम का ही एक प्रमुख एवं आवश्यक घटक है। ट्राइसेम वर्ष 1979 में ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार हेतु एक पृथक राष्ट्रीय योजना के रूप में आरम्भ किया गया। ग्रामीण क्षेत्रों के युवाओं के मध्य दिन प्रति दिन बढ़ती बेरोजगारी एवं बदहाल अर्थ-व्यवस्था इस योजना को आरम्भ करने का कारण बना। योजना के प्रारम्भिक दौर में 40 ग्रामीण पुरुष तथा स्त्रियों को प्रत्येक खंड में से चुनकर उद्यमिता एवं कौशल विकास प्रशिक्षण दिया गया ताकि वे स्वरोजगार की दिशा में आगे बढ़ सकें। कार्यक्रम का एक प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में ही आय के अवसरों में वृद्धि करके ग्रामीण युवाओं का शहर में पलायन पर नियंत्रण करना तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था संवर्धन में ग्रामीण संसाधनों का कुशलतम प्रयोग करना है।

ट्राइसेम के उद्देश्य

- ग्रामीण युवाओं (18-35 आयु वर्ग) जो निर्धनता रेखा से नीचे हैं, को तकनीकी एवं उद्यमिता प्रशिक्षण देकर, कृषि उद्योग, सेवाओं तथा व्यवसायिक सेवाओं के क्षेत्र में रोजगारोन्मुख रूप से आत्मनिर्भर बनाना।
- ट्राइसेम के अंतर्गत प्रशिक्षण का तात्पर्य युवाओं को केवल भौतिक रूप से प्रशिक्षण प्रदान करना मात्र ही नहीं है अपितु युवाओं के दृष्टिकोण में परिवर्तन, प्रेरणा संवर्धन एवं मानवीय संबंधों एवं संसाधनों के रूप में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। इस प्रकार ट्राइसेम प्रशिक्षण के माध्यम से युवाओं में सम्पूर्ण परिवर्तन लाने का एक प्रयास है।

ट्राइसेम की विशेषताएं

- ट्राइसेम, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम का “युवाओं के लिये स्वरोजगार” घटक है। इस कार्यक्रम को राष्ट्र भर में पाँच हजार खंडों में एक साथ चलाया गया।

- एक कुशल विशेषज्ञ की देखरेख में चयनित ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण दिया जाता है। यह प्रशिक्षण एक विशेष अवधि तक के लिये होता है जो किसी प्रशिक्षण संस्थान अथवा ग्रामीण क्षेत्र में ही प्रदान किया जाता है।
- कार्यक्रम के अंतर्गत दिये गये प्रशिक्षण की अवधि भिन्न-भिन्न प्रशिक्षण प्रकार पर निर्भर करती है।
- समस्त प्रशिक्षुओं को अनुवृत्ति तथा टूल किट प्रदान किये जाते हैं।
- सफल प्रशिक्षुओं को “आई0आर0डी0पी0” कार्यक्रम के आय उपार्जन योजना के अंतर्गत सब्सिडी, ऋण अथवा आय उपार्जन संसाधन प्रदान किये जाते हैं।
- प्रशिक्षित नवयुवकों के पचास प्रतिशत भाग को द्वितीयक तथा तृतीयक सैक्टर गतिविधियों में सम्मिलित होना आवश्यक है।
- लाभार्थी समूह का चयन खण्ड विकास अधिकारी द्वारा किया जाता है।
- विभिन्न विभागों के जिला स्तरीय अधिकारियों द्वारा स्थान चयनित किये जाते हैं जहाँ पर लाभार्थियों को प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है।
- प्रशिक्षण सुविधाओं एवं कार्यान्वयन हेतु डी0आर0डी0ए0 द्वारा प्रबन्धन कार्य किया जाता है। यह प्रशिक्षण प्रमुखतया आई0टी0आई0, पॉलीटेकनीक, के0वी0के0 (कृषि विज्ञान केन्द्र), नेहरू युवा केन्द्र इत्यादि संस्थानों में संपन्न कराई जाती है।
- ट्राइसेम गतिविधियों के कार्यान्वयन हेतु डी0आर0डी0ए0 उत्तरदायी है।

ट्राइसेम लाभार्थी

- निर्धन परिवार के सदस्यों को प्राथमिकता प्रदान की जाती है।
- अनुसूचित जाति एवं जनजाति के सदस्यों को कार्यक्रम में अनिवार्य रूप से सम्मिलित किया जाता है।

राष्ट्रीय खाद्य एवं आय अंतरण कार्यक्रम

Governmental & Military
TRYSEM
means
Training of Rural Youth for Self-Employment
by acronymsandlang.com

Governmental & Military
NREP
means
National Rural Employment Programme
by acronymsandlang.com

100
NREGA
राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम

SUSTAINABLE RURAL DEVELOPMENT PROGRAM
NRDNP

महात्मा गांधी नरेगा
Mahatma Gandhi NREGA
ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार
Ministry of Rural Development, Govt. of India

अभ्यास प्रश्न 1

1. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

- मनरेगा
- आई0 आर0 डी0 पी0
- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना
- ट्राइसेम

2. लघु उत्तरीय प्रश्न

- a. ग्रामीण विकास से क्या तात्पर्य है? वर्तमान परिस्थितियों में ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य एवं पोषण संबंधी कौन-कौन सी समस्याएं देखने को मिलती हैं?
- b. खाद्य एवं आय अंतरण कार्यक्रमों के लाभ बताइए।
- c. रोजगार प्राप्त करने का अधिकार एवं खाद्य सुरक्षा के मध्य अंतर्सम्बंध की व्याख्या कीजिए।

8.9 सारांश

प्रस्तुत अध्याय में आपने समझा कि ग्रामीण क्षेत्रों में विकास हेतु ढाँचागत सुविधाओं का अभाव असंतुलित विकास के लिये उत्तरदायी है। शहरों में बढ़ता पलायन एवं जनसंख्या विस्फोट इसके परिणाम हैं। भारत सरकार द्वारा समय समय पर चलायी जा रही योजनाएं इस समस्या के समाधान में सफल सिद्ध हुई हैं। इन योजनाओं ने समेकित ग्रामीण विकास की अवधारणा को जन्म दिया है जिसके अंतर्गत ग्रामीण जनसमूहों की संपूर्ण वृद्धि एवं विकास हेतु प्राकृतिक, भौतिक एवं मानवीय संसाधनों के अनुकूलतम प्रयोग पर बल दिया गया है जिससे ग्रामीण जनजीवन में सुखद एवं अभूतपूर्व परिवर्तन देखे गये हैं।

8.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

इकाई का मूल भाग देखें।

8.11 पारिभाषिक शब्दावली

- **पोषण स्तर:** शरीर को ऊर्जा प्राप्ति एवं समस्त कार्य संचालन हेतु एक निर्धारित स्तर पर पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। चूँकि पोषण हमें भोजन से प्राप्त होता है, अतः पोषण स्तर का तात्पर्य शरीर की उस अवस्था से है जो ग्रहण किए गये आहार की मात्रा से प्रभावित होता है।
- **रोजगार गारंटी कार्यक्रम:** इस कार्यक्रम में किसी वित्तीय वर्ष में व्यक्ति को आजीविका सुरक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से अकुशल कार्य हेतु न्यूनतम 100 दिनों तक तयशुदा रोजगार प्राप्त करने का अधिकार है।
- **खाद्य आय अंतरण कार्यक्रम:** वे सभी रोजगार कार्यक्रम जिससे व्यक्ति अपने द्वारा किये गये श्रम के फलस्वरूप अर्जित आय, खाद्यान्न के रूप में प्राप्त कर सकता है, खाद्य आय अंतरण कहलाती है। इस व्यवस्था से वही लाभार्थी जुड़ते हैं जो इसके वास्तविक पात्र होते हैं।

8.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. महात्मा गाँधी नरेगा समीक्षा (ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार) महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005 पर शोध अध्ययनों का संकलन। 2006-2012, प्रकाशक- ओरियन्टल ब्लैक स्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
2. MGNREGA & Women Empowerment, by Anita Ranjan, Prabhat Prakashan, ISBN – 10: 8184303785, ISBN-13: 978-8184303780.
3. S & T for Rural India and Inclusive Growth, Rural Development: A Strategy for Poverty Alleviation in India, by D Gangopadhyay A.K. Mukhopadhyay & Pushpa Singh (India Science and Technology 2008).
4. Rural Development Scheme –Yojna (Krukshetra, A Journal on Rural Development Vol.62, No.4 , 2017, Publication Division (Ministry of Information and Broadcasting, GOI)

इंटरनेट स्रोत

1. www.nrega.nic.in
2. www.nrdp.org.pk
3. www.teindia.nic.in/mhrd
4. www.nrep.org
5. www.rural.nic.in(ministry of rural development)

8.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. देश के सतत् आर्थिक एवं सामाजिक विकास में ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देना क्यों आवश्यक है? ग्रामीण क्षेत्रों की प्रमुख समस्याओं के सन्दर्भ में लिखिये।
2. महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम को विस्तार पूर्वक समझाइये।
3. समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के मुख्य बिन्दुओं पर प्रकाश डालिये।
4. भारत सरकार द्वारा ग्रामीण एवं जरूरतमंद क्षेत्रों में रोजगार परक एवं खाद्य सुरक्षा को आश्वस्त करने के दृष्टिगत चलायी जा रही योजनाओं के विषय में संक्षिप्त में समझाइये।

इकाई 9: राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पोषण संस्थाएं एवं पोषण कार्यक्रम

- 9.1 प्रस्तावना
- 9.2 उद्देश्य
- 9.3 राष्ट्रीय पोषण संस्थान (National Institute of Nutrition/NIN)
- 9.4 केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान (Central Food Technology and Research Institute/CFTRI)
- 9.5 राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान (निपसिड, National Institute of Public Cooperation and Child Development)
- 9.6 विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organization)
- 9.7 खाद्य एवं कृषि संगठन (Food and Agriculture Organization)
- 9.8 संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (The United Nations Children's Fund)
- 9.9 कोऑपरेटिव फॉर असिस्टेंस एण्ड रिलीफ ऐवरीव्हेयर (केयर)
- 9.10 सारांश
- 9.11 पारिभाषिक शब्दावली
- 9.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 9.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची
- 9.9 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

मजबूत अर्थव्यवस्था एवं उन्नत तकनीकी विकास के बावजूद विश्व की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग आज भी पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्वों से युक्त आहार ले पाने में असमर्थ है। विकासशील देशों का गरीब एवं सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित जनसमूह भोजन के अतिरिक्त आधारभूत स्वास्थ्य सेवाओं, विकास के सरोकारों से भी दूर है। समाज के इस वर्ग को पोषण, स्वास्थ्य एवं विकास के परिप्रेक्ष्य में मुख्य धारा से जोड़ने का सदैव प्रयास किया जाता रहा है। शोध अध्ययनों के अनुसार सुव्यवस्थित, सुसंगठित एवं समुदाय विशेष की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर तैयार किये गये हस्तक्षेप कार्यक्रमों (Intervention

Programme) का समुदाय के पोषण, स्वास्थ्य तथा आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति पर सकारात्मक प्रभाव दिखाई पड़ता है। भारत में कुपोषण की भयावह स्थिति के दृष्टिगत यहाँ कई राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं समर्पण भाव से कार्य कर रही हैं। इन संस्थाओं ने अपने उल्लेखनीय कार्य एवं समुदाय में विशिष्ट योगदान के फलस्वरूप अपनी एक अलग पहचान बनायी है। प्रस्तुत इकाई में समुदाय के पोषण विकास हेतु समर्पित कार्यक्रमों एवं संबधित संस्थानों की चर्चा की गयी है।

9.2 उद्देश्य

स्वास्थ्य एवं पोषण विज्ञान के विभिन्न आयामों पर अपने उत्कृष्ट कार्यों के परिणामस्वरूप आज पोषण कार्यक्रमों एवं संबधित संस्थानों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। प्रस्तुत इकाई में भारत में सामुदायिक पोषण एवं जन स्वास्थ्य कल्याण के अंतर्गत कार्यरत राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों की मूल अवधारणा, कार्यपद्धति, उद्देश्यों एवं क्षेत्र पर प्रकाश डाला गया है। विद्यार्थी इस इकाई के अध्ययन के पश्चात शिक्षार्थी;

- भारत में संचालित विभिन्न राष्ट्रीय पोषण कार्यक्रमों एवं क्रियान्वयन संस्थानों की मूल अवधारणा, उद्देश्य, कार्यपद्धति, आच्छादन क्षेत्र एवं संबधित लक्ष्य समूहों को समझ सकेंगे;
- विभिन्न राष्ट्रीय पोषण एवं स्वास्थ्य कार्यक्रमों का समुदाय के पोषण संवर्धन में महत्व समझ सकेंगे;
- विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय पोषण कार्यक्रमों की मूल अवधारणा, उद्देश्य, कार्यपद्धति, आच्छादन क्षेत्र एवं संबधित लक्ष्य समूहों एवं इसके सामाजिक महत्व को समझ सकेंगे;
- समुदाय विशेष की स्वास्थ्य एवं पोषण समस्याएं एवं इनके निवारण को भली-भाँति समझ पायेंगे; तथा
- सामुदायिक पोषण में अपना भविष्य बनाने के इच्छुक विद्यार्थी संबधित संस्थानों से सम्पर्क स्थापित कर विशेषीकृत पाठ्यक्रमों हेतु आवेदन कर सकेंगे।

9.3 राष्ट्रीय पोषण संस्थान (National Institute of Nutrition/NIN)

सर रॉबर्ट मैककैरीसन द्वारा राष्ट्रीय पोषण संस्थान (NIN) की नींव सन् 1918 में बेरी-बेरी पूछताछ केन्द्र के रूप में रखी गयी। अपने प्रारम्भिक दौर में यह संस्थान 'पास्टर संस्थान कून्नूर

(तमिलनाडु) में स्थापित था। लगभग सात वर्ष की अवधि के भीतर ही यह संस्थान विकसित होकर “न्यूनता व्याधि केन्द्र” बनकर उभरा। वर्ष 1928 तक डा0 मैककैरीसन के निर्देशन में इस संस्थान ने अपनी पूर्णता प्राप्त कर “पोषण शोध प्रयोगशाला (National Research Laboratory)” का रूप ले लिया। वर्ष 1958 में इस संस्थान को तमिलनाडु से हैदराबाद स्थानान्तरित किया गया। अपनी स्वर्ण जयन्ती वर्ष (1969) में इसका नाम परिवर्तित कर “राष्ट्रीय पोषण संस्थान” रखा गया। इस संस्थान के तत्वाधान में वर्तमान में निम्न संस्थाएं भी कार्यरत हैं:

1. फूड एण्ड ड्रग टॉक्सिकोलॉजी रिसर्च सैन्टर (FDTRC) स्थापना वर्ष 1971।
2. राष्ट्रीय पोषण अनुवीक्षण ब्यूरो (National Nutrition Monitoring Bureau) स्थापना वर्ष 1972।
3. नेशनल सैन्टर फॉर लैबोरेटरी एनिमल साइन्सेज, स्थापना वर्ष 1976।

चिकित्सालय और समुदाय के मध्य अपनी शोध गतिविधियों के माध्यम से एक सामंजस्य बनाये रखना राष्ट्रीय पोषण संस्थान की विशिष्ट उपलब्धि है। राष्ट्रीय पोषण संस्थान की शोध गतिविधियां “समस्या निवारण” के सिद्धान्त पर केन्द्रित हैं। उपलब्ध स्थानीय संसाधनों से एवं समकालीन आर्थिक सामाजिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर पोषण समस्याओं का निवारण, राष्ट्रीय पोषण संस्थान की गतिविधियों की प्राथमिकता है। अपने 80 वर्ष के सुनहरे कार्यकाल में, भारत के नागरिकों तथा जनसमूह के पोषण स्तर संवर्धन और पोषण समस्याओं के निवारण में इस संस्थान द्वारा किया गया योगदान उल्लेखनीय है। राष्ट्रीय पोषण संस्थान में कार्यरत समर्पित वैज्ञानिकों का दल विभिन्न क्षेत्रों जैसे चिकित्सा, बाल रोग, स्त्री रोग विशेषज्ञ, पैथोलोजी, सामुदायिक स्वास्थ्य, सामाजिक विज्ञान, आहारिय विज्ञान, संचार-प्रसार शिक्षा, सांख्यिकी आदि क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करता है। विभिन्न क्षेत्रों (चिकित्सा, आहारिय विज्ञान, जैव रसायन, पैथोलॉजी इत्यादि) के वैज्ञानिक जो एक टीम की भांति कार्य करते हैं, इस संस्थान की शक्ति है। इतना ही नहीं अनेकों राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों द्वारा विशेषीकृत लघु कालीन शोध कार्यों के संचालन हेतु राष्ट्रीय पोषण संस्था को मान्यता प्रदान की गयी है। खाद्य एवं पोषण विज्ञान की विभिन्न विधाओं में पी0एच0डी0 पाठ्यक्रम संचालन हेतु भी राष्ट्रीय पोषण संस्थान मान्यता प्राप्त है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय पोषण संस्थान के अत्याधुनिक तकनीक एवं उपकरणों से सुसज्जित होने के कारण न केवल समुदाय पोषण शोध कार्यक्रमों का सफल संचालन किया जा रहा है, अपितु आऊट पेशेंट डिपार्टमेंट (OPD) तथा इन पेशेंट डिपार्टमेंट (IPD) न्यूट्रीशन बोर्ड की स्थापना भी गई है। संस्थान के पुस्तकालय में नवीनतम पुस्तकें एवं विश्वस्तरीय शोध जनरल तथा डेटा-विश्लेषण हेतु उपकरण उपलब्ध हैं, सर्वे शोध

कार्यों इत्यादि से प्राप्त आंकड़ों द्वारा सुसंगत सूचना प्राप्त की जा सकती है। इस संस्थान का एक प्रमुख आर्कषण “न्यूट्रीशन म्यूजियम” भी है, जिसमें खाद्य एवं पोषण विज्ञान के विभिन्न आयामों तथा अब तक के उत्कृष्ट शोध कार्यों पर प्रकाश डाला गया है।

राष्ट्रीय पोषण संस्थान के उद्देश्य

1. जनसमुदाय के विभिन्न भागों में व्याप्त आहारिय एवं पोषण समस्याओं का पता लगाकर उन्हें चिह्नित करना।
2. राष्ट्र की आहार एवं पोषण स्थिति का सतत् परीक्षण करना।
3. प्रभावशाली विधियों द्वारा आहार एवं पोषण समस्याओं का उचित प्रबन्धन करना।
4. राष्ट्रीय पोषण कार्यक्रमों के नियोजन एवं कार्यान्वयन के संबंध में परिचालन शोध (Operational Research) संचालित करना।
5. सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं का पोषण शोध कार्यों के साथ सामंजस्य बैठाना।
6. पोषण के दृष्टिकोण से मानवीय संसाधन तैयार करना।
7. पोषण ज्ञान एवं शिक्षा का प्रसार-प्रचार करना।
8. सरकारी गैर सरकारी संस्थाएं जो पोषण स्तर संवर्धन हेतु कटिबद्ध हैं, को पोषण परामर्श प्रदान करना।

राष्ट्रीय पोषण संस्थान (शोध विभाग)

संस्थान निम्न क्षेत्रों में अनुसंधान और पेटेंट विकास करता है:

- नैदानिक पोषण
- परिणाम अनुसंधान
- औषधि विज्ञान
- विकृति विज्ञान
- टॉक्सिकोलॉजी
- भोजन रसायन विज्ञान
- एंडोक्रिनोलॉजी
- आणविक जीव विज्ञान
- पुनर्योजी चिकित्सा

- सामुदायिक पोषण
- नेत्र विज्ञान
- खेल पोषण

विश्व स्वास्थ्य संगठन और खाद्य एवं कृषि संगठन जैसी एजेंसियों ने संस्थान को खाद्य गुणवत्ता, सुरक्षा और पोषण अनुसंधान में उत्कृष्टता के लिए केंद्र के रूप में मान्यता दी है।

9.4 केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान (Central Food Technology and Research Institute/CFTRI)

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् की एक घटक प्रयोगशाला के रूप में केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान की स्थापना वर्ष 1950 में खाद्य विज्ञान एवं अभियांत्रिकी के क्षेत्र में शोध एवं विकास को नये आयाम देने के उद्देश्य से मैसूर में की गई। वर्तमान में इस संस्थान में कई समर्पित वैज्ञानिकों एवं विशेषज्ञों की टीम कार्यरत है। यह संस्थान खाद्य प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत में ही नहीं अपितु एशिया एवं विश्व के अग्रणी संस्थानों में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाये हुए है। सी0एफ0टी0आर0आई0 में खाद्य क्षेत्र से संबंधित कई विभाग आपस में मिलकर एक दूसरे के सहयोग से कार्य करते हैं। संस्थान के प्रमुख विभाग एवं उनके कार्य एवं गतिविधियां निम्नवत हैं:

1. जैव रसायन विभाग

यह विभाग आधारभूत विज्ञान एवं समकालीन शोध पर बल देता है। कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खनिज तत्वों, फाइटोन्यूट्रीएन्ट्स, मसालों और पोषण की परिवर्तित मात्रा/या उतार चढ़ाव का जीवन शैली संबंधित रोगों जैसे मधुमेह, हृदय संबंधी रोगों, मोटापा इत्यादि पर प्रभाव जैसे मूल शोध विषयों पर विभाग प्रमुखता से कार्य कर रहा है। कैंसर, अल्सर जैसे रोगों से बचाव हेतु आहार में ऐसे तत्वों की खोज पर बल दिया जाता है जो प्राकृतिक रूप से इन रोगों से लड़ने में सक्षम हों। इस विभाग की प्रयोगशाला अत्याधुनिक यंत्रों उपकरणों से सुसज्जित है।

2. आटा मिलिंग, बैकिंग एवं कन्फैक्शनरी तकनीक विभाग

आटा मिलिंग, बैकिंग एवं कन्फैक्शनरी जैसे आधुनिक एवं प्रचलित विषय पर यह विभाग प्रशिक्षण देने के साथ-साथ शोध कार्य भी संचालित करता है। अपने उत्कृष्ट शोध गतिविधियों में संलिप्तता के कारण विभाग व्यवसायिक रूप से कई औद्योगिक कम्पनियों को परामर्श देने

का कार्य करता है तथा कई प्रायोजित परियोजनाओं में कार्य करता है। विभाग द्वारा नियमित रूप से “एक वर्षीय मिलिंग तकनीक, अंतर्राष्ट्रीय प्रमाण पत्र कार्यक्रम/पाठ्यक्रम” का संचालन किया जा रहा है। इस पाठ्यक्रम से भारत ही नहीं अपितु कई विकासशील राष्ट्र भी लाभान्वित हो रहे हैं।

3. खाद्य अभियांत्रिकी विभाग

यह सी0एफ0टी0आर0आई0 का एक अति महत्वपूर्ण विभाग है। यह रसायन, अभियांत्रिकी, यान्त्रिकी, खाद्य पर्यावरण वैज्ञानिकों की एक टीम है जो मुख्यतया खाद्य प्रौद्योगिकी मशीनरी के निर्माण एवं विकास हेतु प्रतिबद्ध है। खाद्य प्रसंस्करण (Food Processing) के क्षेत्र में इस विभाग द्वारा निर्मित मशीनरी का भारत में खाद्य उद्योगों के विकास में सराहनीय योगदान है।

4. फूड पैकेजिंग एवं तकनीकी विभाग

इस विभाग द्वारा संचालित शोध कार्यों के केन्द्र में पैकेजिंग एवं बायो नैनो इंटरफेस, सक्रिय पैकेजिंग संयंत्र, सूक्ष्मजीव रोधी पैकेजिंग, बुद्धिमत्ता पूर्ण पैकेजिंग, डिब्बाबंद/पैकड खाद्य पदार्थों की जीवन अवधि संबंधी जानकारी, थर्मल संवर्धन, कैनिंग (डिब्बाबंद तकनीक), फूड पैकेजिंग एवं खाद्य सुरक्षा के क्षेत्र में नैनो सामग्री का अनुप्रयोग निहित है।

5. खाद्य सुरक्षा एवं कीट नियंत्रण विभाग

खाद्यान्न, फलों एवं सब्जियों के पक कर तैयार हो जाने के पश्चात सबसे बड़ी समस्या उनके उचित संग्रहण की होती है। यदि संग्रहण उचित प्रकार से न किया जाये तो खाद्यान्न को सर्वाधिक अपूर्णनीय क्षति होती है। इसी बिन्दु के दृष्टिकोण यह विभाग पोस्ट हार्वेस्टिंग अवधि में संक्रमण से बचने एवं घरेलू स्तर पर खाद्य पदार्थों की सुरक्षा, संग्रहण की प्रतिकूल परिस्थितियों के तापमान, नमी इत्यादि से सुरक्षित रखने के क्षेत्र में बहुमुखी आयामों पर प्रमुखता से कार्य कर रहा है। अपने शोध क्षेत्रों में प्रवीणता प्राप्त करने हेतु यह अनुभाग विभिन्न संस्थाओं द्वारा प्रायोजित, वित्त पोषित परियोजनाओं अथवा परामर्शदाता समिति के रूप में कार्य कर रहा है। वे विद्यार्थी जो खाद्य अभियांत्रिकी, जैव तकनीकी, रसायन विज्ञान, जैव रसायन, खाद्य सूक्ष्म जैविकी को अपना व्यवसाय/आजीविका बनाना चाहते हैं, उन विद्यार्थियों हेतु संस्थान लघु शोध, परियोजना कार्य, शोध उपाधि निर्देशन उपलब्ध कराता है। इनमें से कई लघु कार्यक्रमों/पाठ्यक्रमों को सफलता पूर्वक पूर्ण करने पर व्यवसायिक रूप से लाइसेंस प्राप्त होता है, जो कई रोजगार परक कार्यक्रमों का हिस्सा है। इससे कई अभ्यर्थी लाभान्वित हो रहे हैं।

6. खाद्य सुरक्षा एवं विश्लेषणात्मक, गुणात्मक एवं नियंत्रण प्रयोगशाला

यह विभाग खाद्य सुरक्षा एवं खाद्य गुणवत्ता संबंधी उच्चिकृत विज्ञान खाद्य उद्योगों एवं शोध संस्थानों दोनों के लिये समान रूप से महत्वपूर्ण है। विभिन्न सरकारी संगठनों से समन्वयन तथा खाद्य उद्योग कम्पनियों की सक्रिय संलिप्तता एवं ज्ञान विस्तारीकरण विभाग की प्राथमिकता रही है। वर्तमान में विभाग द्वारा कस्टमर केयर सेवा प्रकोष्ठ (FSSAI, ब्यूरो ऑफ इंडियन स्टैन्डर्ड, एगमार्क एवं अन्य मानकों के अन्तर्गत एक आवश्यक प्रावधान) के माध्यम से खाद्य विश्लेषण, गुणवत्ता, मानकों संबंधी बृहद सेवायें प्रदान की जाती हैं। संस्थान द्वारा प्रदत्त प्रयोगशाला मान्यता, मानक अनुपालन एवं गुणवत्ता आश्वासन की कसौटी है। यह विभाग आई0एस0ओ0 17025:2005 प्रमाणित है एवं 300 से अधिक विश्लेषणात्मक मानकों एवं खाद्य पदार्थों के रासायनिक एवं जैविक परीक्षणों के लिये मान्यता प्राप्त है, जो इस संस्थान की एक विशिष्ट उपलब्धि है।

यह विभाग स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय (फूड सेफ्टी एवं स्टैन्डर्ड ऑथोरटी ऑफ इंडिया) के द्वारा संप्रेक्षण खाद्य प्रयोगशाला के रूप में नामित है तथा यह भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण के 2006 अधिनियम के अंतर्गत कार्यरत है। कई प्रमुख राष्ट्रीय समितियों (कोडेक्स, ब्यूरो ऑफ इंडियन स्टैन्डर्ड, एफ0एस0एस0ए0आई0) के सदस्य इस विभाग के विभिन्न संकायों में सक्रिय हैं। खाद्य पदार्थों को आम व्यक्ति के लिये सुरक्षित बनाने एवं स्वास्थ्य संवर्धन जैसे कार्यों के लिये संस्थान अन्य समानान्तर संस्थानों से सामंजस्य/समन्वयन स्थापित करने को भी सदैव तत्पर है ताकि स्वस्थ भारत जैसे उद्देश्य की पूर्ति हो सके एवं प्रत्येक भारतवासी सशक्त एवं समर्थ बन सके।

7. फल एवं सब्जी तकनीकी विभाग

भारत में उत्पादित फल एवं सब्जी पोस्ट हार्वेस्टिंग (खेत से तोड़ने के पश्चात्) भी सुरक्षित, पौष्टिक तथा ग्रहण करने योग्य बनी रहे एवं फल, सब्जी उत्पादों को न्यूनतम हानि पहुंचे, यही इस विभाग का उद्देश्य है। यह घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार प्रोत्साहन की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है। साथ ही फलों एवं सब्जियों के सुरक्षित रहने एवं न्यूनतम क्षति होने पर उन्हें भली-भांति संवर्धित कर समय की मांग के अनुसार उत्पादों में ढाला जा सकता है। विभाग का यह “फार्म टू फोक” अर्थात् खेत से उपभोक्ता तक का दृष्टिकोण अत्यन्त सफल रहा है और सकल घरेलू उत्पाद, ग्रामीण विकास, जन आत्मनिर्भरता के रूप में तेजी से बढ़ते हुये खाद्य उद्योग, न्यूट्रास्यूटीकल उद्योग इसके प्रमाण हैं। वर्तमान में यह विभाग राष्ट्रीय स्तर पर फल एवं सब्जी अनुभाग को विकसित करने हेतु प्रतिबद्ध है। विभाग द्वारा आवश्यकतानुसार/विशेषीकृत प्रशिक्षण दिये जाने एवं उद्यमियों के मध्य तकनीकी हस्तांतरण

जैसे कार्यक्रमों का सफल संचालन भी किया जाता है। खाद्य उद्योग कम्पनियों तथा सरकारी संस्थाओं द्वारा प्रायोजित, वित्त पोषित परियोजनाओं एवं परामर्श कार्यों का संचालन भी किया जाता है।

8. अनाज विज्ञान एवं तकनीकी विभाग

इस विभाग द्वारा मूल एवं व्यवहारिक (अनुप्रयोगिक) शोध, अनाज गुणवत्ता, अनाज तकनीकी, मोटे अनाज, दालें, अनाज/दालों के उत्पाद, अवशिष्ट/अवशेष उत्पाद, खाद्य संरक्षण हेतु तकनीकी विकास एवं अनुप्रयोग कार्य, मूल्य संवर्धीकरण, उत्पाद वैविध्य, मशीनरी एवं तकनीकी विकास जैसे क्षेत्रों में उल्लेखनीय कार्य किये जा रहे हैं। शोध अध्ययनों के आधार पर तकनीकी परामर्श काउन्सिलिंग, तकनीकी रिपोर्ट्स, अनाज गुणवत्ता विश्लेषण, गुणवत्ता नियंत्रण घटक, निर्देशन, शोध अनुबंध, लघु अवधि पाठ्यक्रम, आवश्यकता आधारित पाठ्यक्रम जैसे नवीन पद्धति के माध्यम पर भी कार्य किया जा रहा है।

9. वसा/लिपिड विज्ञान विभाग

जीवनशैली संबंधी रोगों के उपचार एवं चयापचयी सिन्ड्रोम जैसी व्याधियों को समझने के लिये वसा विज्ञान को भली-भांति समझना आवश्यक है। इसी कारण से यह विभाग लिपिड और इसके स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव से संबंधित शोध कार्यों पर विशेष बल देता है। खाद्य आधारित जैव-सक्रिय तत्व (Bioactive) तथा लिपिड आधारित न्यूट्रास्यूटिकल (Neutraceutical) जिनका उपयोग कार्यकारी खाद्य (Functional Food) के रूप में भी किया जा सकता है, का भी इस विभाग द्वारा निर्माण किया जा चुका है। वर्तमान में न्यूट्रास्यूटिकल, पूरक आहार के रूप में बहुत प्रचलित हो रहे हैं।

10. मांस एवं समुद्री विज्ञान विभाग

मानव स्वास्थ्य एवं पोषण की दृष्टि से समुद्री आहार अत्यधिक महत्वपूर्ण है। समुद्री आहार को नॉवेल्टी अथवा सक्षम आहार (Potential Diet) भी कहा जा सकता है। स्वास्थ्य एवं पोषण में इसकी सकारात्मक भूमिका को देखते हुये विगत कुछ दशकों में इसके महत्व एवं मूल्य दोनों में ही वृद्धि हुई है। यह विभाग समुद्री विज्ञान एवं मानव आहार में इसके महत्व एवं भूमिका संबंधी विषय पर शोध कार्य करने हेतु समर्पित है। आधुनिक जीवन शैली को देखते हुये समुद्री आहार, मांस, मछली, अण्डे, पोल्ट्री उत्पाद का पौष्टिक संवर्धन, मूल्य संवर्धन कर उन्हें अधिक सुविधाजनक खाद्य के रूप में प्रस्तुत करना इस विभाग द्वारा संचालित शोध का एक आयाम है।

11. सूक्ष्म जीव विज्ञान एवं किण्वन विभाग

जैव तकनीकी रूप से जिन खाद्य पदार्थों का राष्ट्र के लिये औद्योगिक महत्व है, ऐसे खाद्य पदार्थों के शोध कार्यों हेतु यह विभाग समर्पित है। किण्वित एवं सूक्ष्मजीव विज्ञान के अंतर्गत आने वाले खाद्य पदार्थों में राष्ट्र कुशल उत्पादन में सक्षम हो सके, यही इस विभाग का उद्देश्य है। इस विभाग के द्वारा जैव सक्रिय चयापचयी पदार्थ (Bio Active Metabolite) खाद्य प्रसंस्करण, प्री तथा प्रो बायोटिक, बैक्टीरियोसीन, पैप्टाइड, एन्टीबायोटिक, बायोपॉलीमर, माइक्रोबियल लिपिड एवं वर्णक के क्षेत्र में विभाग द्वारा दिया गया योगदान उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त विभाग, जैव अपघटकीय बहुलकों, जैव खाद्य संरक्षण (लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया द्वारा) जैसे नवीन एवं प्रचलित विषयों पर शोध कार्य करने हेतु सक्रिय है।

12. आण्विक पोषण विभाग

पारम्परिक पोषण जीव विज्ञान को आण्विक स्तर (Molecular level) तक समझने के उद्देश्य से इस विभाग की स्थापना वर्ष 2013 में की गई। पारम्परिक आधारभूत विज्ञान एवं समकालीन तकनीकी विकास का संयोग आण्विक पोषण विभाग की शक्ति है। पोषण को आण्विक स्तर पर समझने के लिये देशभर के विभिन्न विशेषज्ञों का दल विभाग में कार्यरत है। शोध कार्य कर रहे छात्रों के माध्यम से विभाग द्वारा “संसाधन-पूल” का निर्माण किया गया है। विभाग द्वारा संचालित “इंटीग्रेटेड पी0एच0डी0 प्रोग्राम इन न्यूट्रीशन बायोलॉजी” के द्वारा पोषण को विज्ञान की विभिन्न विधाओं से जोड़कर (जैसे जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, जैव-सूचना यांत्रिकी, मॉडलिंग, सांख्यिकी) और अधिक प्रायोगिक एवं व्यवहारिक बनाने का प्रयास किया जा रहा है। विभाग द्वारा समान रूप से उद्योग एवं अकादमिक क्षेत्र की आवश्यकताएं पूरी की जा रही हैं।

13. पादप कोशिका जैव तकनीकी विभाग

शैवाल जैव तकनीकी, पादप ऊतक कल्चर (Plant Tissue culture) कोशिका कल्चर उत्पादित खाद्य संरक्षकों संबंधी शोध कार्यों हेतु समर्पित है। विभाग द्वारा Spirulina, Dunaliella, Botryococcus इत्यादि सूक्ष्म शैवालों के उत्पादन हेतु अनेक जैव तकनीक प्रविधियाँ विकसित की गई हैं। यहां पर यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि शैवाल पौष्टिक रूप से बहुत उपयोगी है और नवीन खाद्य (Novelty Food) के रूप में विगत कुछ समय से इसका अत्यधिक प्रसार-प्रचार हुआ है। माइक्रो प्रोपोगेशन तकनीक द्वारा विलुप्त हो रही शैवाल प्रजातियों को भी सुरक्षित एवं संरक्षित किया जा रहा है। विभाग द्वारा विकसित तकनीकों में से अधिकतर तकनीक सफल निष्पादन के उपरान्त उद्योगों को हस्तान्तरित कर दी जाती हैं। विगत 20 वर्षों में विभाग द्वारा सफलता पूर्वक 40 राष्ट्रीय महत्व की परियोजनाओं

का सफल संचालन किया जा चुका है। विज्ञान एवं तकनीकी विभाग (Department of Science & Technology), जैव तकनीकी विभाग (Department of Biotechnology) तथा कई औद्योगिक कम्पनियों द्वारा विभाग को इसके उत्कृष्ट शोध कार्यों हेतु वित्तीय परिपोषण प्रदान किया जाता रहा है।

14. प्रोटीन रसायन एवं तकनीकी विभाग

प्रोटीन शरीर का एक महत्वपूर्ण घटक है। वनस्पति प्रोटीन एवं प्राणिज प्रोटीन दोनों की ही शरीर को उपलब्धता स्वास्थ्य स्तर निर्धारण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसी तथ्य के दृष्टिगत विभाग द्वारा प्रोटीन (आधारभूत एवं उन्नत) शोध पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया है। शरीर क्रिया में जिस प्रकार एन्जाइम (प्रोटीन के घटक) का महत्वपूर्ण कार्य है, उसी प्रकार खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में एन्जाइम का संरचनात्मक अध्ययन, एन्जाइम की जैविक भूमिका जैसे मुख्य बिन्दुओं पर विभाग द्वारा अत्याधुनिक शोध कार्य किया जा रहा है। प्रोटीन का खाद्य विज्ञान में महत्व, खाद्य तकनीक में भूमिका, बायोफिजिक्स (जैव भौतिक विज्ञान), जैव रसायन, आणविक जीव विज्ञान, न्यूट्राजीनोमिक्स, प्रोटीओमिक्स जैसे नवीन विषयों पर भी विभाग द्वारा सतत् रूप से कार्य किया जा रहा है।

15. मसाले एवं सुगन्ध विज्ञान

अपनी स्थापना वर्ष से अब तक लगभग 60 वर्षों में इस विभाग द्वारा सतत् रूप से सी0एफ0टी0आर0आई0 के प्रमुख अनुभाग के रूप में कार्य किया गया है। मसालों, जड़ी बूटियों, कॉफी, चाय, गन्ना, मसालों इत्यादि का वैविध्य उपयोग करना, मसाला, सुगन्ध, स्वाद इत्यादि को संरक्षित करना इस विभाग का मुख्य उद्देश्य है। अभिनव एवं उन्नत तकनीकों एवं सेवाओं को संबन्धित क्षेत्र में प्रोत्साहन प्रदान करना भी इस विभाग की प्रमुख गतिविधियों में से एक है। विभिन्न औद्योगिक कम्पनियों को उक्त (मसालों इत्यादि) के संबन्ध में गुणात्मक विश्लेषण संबंधी ज्ञान प्रदान करना, संबन्धित पदार्थों के गुण धर्मों इत्यादि कार्यों का प्रलेखन कार्य एवं तकनीकी परामर्श भी इस विभाग द्वारा प्रदान किया जाता है।

16. तकनीकी संवर्धन विभाग

विभिन्न खाद्य पदार्थों जैसे अनाज, दालें, तिलहन, फल, सब्जियां, मसालों इत्यादि का उपभोक्ता तक पहुंचने से पहले प्रसंस्करण आवश्यक है। सी0एफ0टी0आर0आई0 का यह अनुभाग उक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु उत्कृष्ट तकनीक युक्त अत्याधुनिक प्रयोगशाला उपकरण एवं संयंत्र प्रदान करता है।

वर्ष सन् 1962 में नीति आयोग द्वारा अनुमोदन प्राप्त हो जाने पर केन्द्रीय खाद्य एवं प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान द्वारा देश के विभिन्न क्षेत्रों में फलों एवं सब्जियों के प्रसंस्करण हेतु क्षेत्रीय शोध केन्द्रों की स्थापना करने का निर्णय लिया गया। वर्तमान में ये केन्द्र हैदराबाद, मुम्बई एवं लखनऊ में सफलता पूर्वक कार्य कर रहे हैं। सी0एस0आई0आर0 (Council of Scientific and Industrial Research)-सी0एफ0टी0आर0आई0 के तत्वाधान में प्रतिवर्ष लगभग 25 नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किये जाते हैं, साथ ही कुछ विशेष प्रयोजनों के लिये तैयार कार्यक्रम भी विद्यार्थियों एवं प्रशिक्षार्थियों के लिये तैयार किये जाते हैं। ये कार्यक्रम खाद्य एवं तकनीक विषय के समस्त आयामों को आच्छादित करते हैं।

9.5 राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान (निपसिड, National Institute of Public Cooperation and Child Development)

भारत में मानव संसाधन विकास मंत्रालय (Ministry of Human Resource Development) की छत्र-छाया में, महिला एवं बाल विकास द्वारा संचालित राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान/निपसिड की स्थापना वर्ष 1966 में की गई। निपसिड का मुख्यालय नई दिल्ली में स्थित है। भारत में निपसिड को स्वायत्तशासी (Autonomous) संस्थान का दर्जा प्राप्त है। निपसिड महिला एवं बाल विकास अनुक्षेत्र में स्वैच्छिक अनुयोजन, शोध कार्य, प्रशिक्षण एवं प्रलेखन हेतु समर्पित है। निपसिड महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के संरक्षण में कार्य करता है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में सफल संचालन एवं क्षेत्र विशेष की आवश्यकताएं पूर्ण किये जाने के उद्देश्य से वर्तमान में निपसिड के चार प्रमुख कार्यालय कार्य कर रहे हैं:

1. गुवाहाटी (स्थापना वर्ष 1978)
2. बेंगलोर (स्थापना वर्ष 1980)
3. लखनऊ (स्थापना वर्ष 1982)
4. इन्दौर (स्थापना वर्ष 2001)

समेकित बाल विकास सेवाओं (Integrated Child Development Services) के प्रशिक्षण कार्यवाहकों हेतु निपसिड एक सर्वोच्च संस्था के रूप में कार्य करती है।

- निपसिड की ख्याति राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर नोडल संसाधन संस्था के रूप में है, यही कारण है कि एक नवीन योजना “समेकित बाल सुरक्षा योजना (Integrated Child

Protection Scheme) के कार्यवाहकों के प्रशिक्षण एवं क्षमता निर्माण का उत्तरदायित्व निपसिड को प्रदान किया गया है।

- निपसिड महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा दो अति महत्वपूर्ण मुद्दों; बाल अधिकार तथा महिला एवं बाल तस्करी रोकने हेतु सार्क देशों में प्रशिक्षण प्रदान करने हेतु नोडल एजेन्सी के रूप में नामित है।

बाल विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान प्रदान करने के अपने अति महत्वपूर्ण कार्य के कारण यूनीसेफ (UNICEF) द्वारा निपसिड को मौरिस पाटे अवार्ड से सम्मानित किया जा चुका है। महिला एवं बाल विकास जैसे अति संवेदनशील एवं महत्वपूर्ण बिन्दु पर निपसिड सुझावों के लिये एक खुला मंच प्रदान करता है। निपसिड की वेबसाइट के माध्यम से कोई भी व्यक्ति जो इस विषय से सरोकार रखता हो, अपने सुझाव एवं प्रतिक्रिया निपसिड तक पहुंचा सकता है। निपसिड की परिकल्पना वैश्विक स्तर पर सम्मानित एक ऐसी संस्था के रूप में है, जो बाल सुरक्षा एवं बाल विकास के लिये कटिबद्ध है।

संस्था के उद्देश्य

- बाल अधिकारों, बाल सुरक्षा एवं बाल विकास कार्यक्रमों के लिये विचार मंच प्रस्तुत करना।
- उक्त मुद्दों के लिये उत्प्रेरण एवं एक खोजकर्ता की भांति कार्य करना।
- संबंधित कार्यवाहकों की क्षमता निर्माण कार्यक्रम के क्षेत्र में कार्य करना।
- बाल विकास संबंधी कार्यक्रमों हेतु शोध, मूल्यांकन, नैटवर्किंग इत्यादि में सहायता करना।
- सलाहकार समिति/परामर्शदायी संस्था की भूमिका निभाना।
- विभिन्न विभागीय टीमों के माध्यम से विशेषीकृत सेवाओं का प्रावधान उपलब्ध कराना।

संस्था का लक्ष्य

- सरकारी एवं गैर सरकारी कार्यवाहकों एवं कार्यकर्ताओं हेतु प्रशिक्षण एवं क्षमता निर्माण कार्यक्रमों के माध्यम से स्वैच्छिक क्रियाविधि/गतिविधियों को विकसित करना एवं समर्थन देना।

- शोध गतिविधियों एवं विकसित यंत्रों, उपकरणों एवं डिजाइनों में बाल विकास जैसे महत्वपूर्ण विषय को समेकित दृष्टिकोण से ग्रहण करना ताकि संबंधित सरकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों का सफल निष्पादन किया जा सके।
- महिला एवं बाल विकास जैसे संवेदनशील एवं महत्वपूर्ण विषय को अग्रेषित करने हेतु “महिला एवं बाल विकास मंत्रालय” एवं समस्त दायित्व धारियों के मध्य समन्वयन करना एवं कार्यक्रमों का मूल्यांकन एवं तत्संबंधी प्रतिक्रिया को समझना।

संस्था के कार्य

- समेकित बाल विकास योजना (I.C.D.S) कार्यक्रम एवं समेकित बाल सुरक्षा योजना (I.C.P.S) कार्यक्रम के कार्यवाहकों के प्रशिक्षण हेतु निपसिड एक सर्वोच्च संस्थान के रूप में समर्पित है।
- प्रशिक्षकों की प्रशिक्षण क्षमता संवर्धित करने हेतु प्रशिक्षण वातावरण उत्पन्न करना ताकि समस्त कार्यक्रम निष्पक्ष रूप से प्रभावी हो सकें तथा प्रशिक्षकों को समय-समय पर प्रशिक्षण प्रदान कर उनकी कार्यक्षमता को और बेहतर बनाना।
- “सबला” कार्यक्रम (राजीव गांधी स्कीम फॉर ऐम्पावरमैन्ट ऑफ एडोलसैन्ट गर्ल्स) में संलिप्त कार्यवाहकों/दायित्वधारियों को प्रशिक्षण प्रदान करना।
- इंदिरा गांधी मातृत्व सहयोग योजना के सफल निष्पादन हेतु प्रशिक्षण प्रदान करना।
- आई0सी0डी0एस एवं आई0सी0पी0एस0 कार्यक्रमों के संबन्ध में प्रशिक्षण सामग्री उपलब्ध करवाना।
- आई0सी0डी0एस0 कार्यक्रमों का अनुवीक्षण एवं पर्यवेक्षण।
- महिला विकास एवं कल्याणकारी संबंधी राष्ट्रीय कार्यक्रमों एवं नीतियों को प्रशिक्षण, शोध एवं प्रलेखन के माध्यम से पूर्णता प्रदान करना।
- केन्द्रीय एवं राज्य मंत्रालयों द्वारा प्रायोजित शोध कार्य एवं प्रशिक्षण का संचालन सरकार के मातृ एवं शिशु विकास/कल्याणकारी कार्यक्रमों हेतु तकनीकी समर्थन प्रदान करना।
- शिशु सुरक्षा केन्द्र, शिशु निर्देशन केन्द्र, किशोर निर्देशन सेवा केन्द्र के माध्यम से प्रशिक्षकों की क्षमता निर्माण कार्यक्रमों में प्रदर्शन सेवार्यें (Demonstration Services) प्रदान करना।

- विभिन्न केन्द्रीय एवं राज्य स्तरीय लैंगिक मुद्दों पर कार्य करने वाले विभागों के अधिकारियों की क्षमता निर्माण एवं पक्ष समर्थन (Advocacy) करना।
- महिलाओं एवं बच्चों की तस्करी रोकने जैसे क्षेत्र में कार्य करने वाली सभी गैर सरकारी संस्थाओं को इस विषय पर प्रशिक्षण देकर जागरूक एवं संवेदनशील बनाना।
- केन्द्र एवं राज्य सरकारों की विभिन्न नीतियों, योजनाओं और कार्यक्रमों का मूल्यांकन कर विधायी/विधि-ढांचे में सुधार हेतु कार्य करना ताकि वर्तमान स्थिति को बेहतर बनाया जा सके।
- महिला एवं बाल विकास मंत्रालय और दायित्व धारियों के मध्य बैठकों का समन्वयन और मूल्यांकन करना तथा कार्यक्रम संबंधी स्पष्ट एवं निष्पक्ष प्रतिक्रिया देना।

निपसिड का जनसहयोग विभाग निम्न पाँच प्रमुख इकाइयों में विभक्त है:

1. सामाजिक अनुयोजन एवं समुदाय प्रतिभाग
2. शिशु सुरक्षा
3. प्रबन्धन
4. समाज के कमजोर वर्ग सन्तान अनुभाग
5. समाज नीति विधायन

इस विभाग की मुख्य विशेषता यह है कि नागरिक समाज संगठनों के साथ मिलकर संयुक्त तत्वाधान में माता एवं शिशु के समेकित विकास कार्यक्रमों, योजनाओं में समुदाय जागरूकता, स्वैच्छिक अनुमोदन एवं जन प्रतिभागिता को प्रोत्साहित करता है। इसके अतिरिक्त निपसिड बाल विकास, महिला विकास, सह सेवा, प्रशिक्षण एवं अनुवीक्षण विभाग, सामाजिक विकास के क्षेत्र में सराहनीय कार्य कर रहा है।

9.6 विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organization)

विश्व स्वास्थ्य संगठन संयुक्त राष्ट्र संघ की एक गैर राजनीतिक, विशेषीकृत स्वास्थ्य संस्था है। इसका मुख्यालय जेनेवा में स्थित है। वर्ष 1946 में रेने सैण्ड की अध्यक्षता में “टैक्नीकल प्रिप्रेटरी कमेटी” द्वारा संगठन संबंधित ड्राफ्ट का निर्माण किया गया, जिसे उसी वर्ष न्यूयार्क (अमेरिका) में 51 राष्ट्रों की अंतर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य कान्फ्रेंस में स्वीकृति प्रदान की गयी। उक्त संविधान 7 अप्रैल 1948 से अपने अस्तित्व में आया। इसी कारण से प्रत्येक वर्ष 7 अप्रैल को

विश्व स्वास्थ्य दिवस मनाया जाता है। प्रत्येक वर्ष “स्वास्थ्य दिवस” की विषय वस्तु स्वास्थ्य संबंधी किसी प्रचलित विशेषीकृत एवं अति आवश्यक पहलू पर आधारित होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को उच्चतम स्वास्थ्य स्तर की प्राप्ति कराना है ताकि व्यक्ति सामाजिक एवं आर्थिक रूप से उत्पादक एवं गुणवत्ता पूर्ण जीवन जी सके। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार “स्वास्थ्य वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति संपूर्ण (शारीरिक, मानसिक और सामाजिक) रूप से स्वस्थ हो। बीमारियों और रोगों की शरीर में अनुपस्थिति मात्र को ही उत्तम स्वास्थ्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती, व्यक्ति का प्रत्येक क्षेत्र में स्वस्थ होना आवश्यक है”।

विश्व स्वास्थ्य संगठन समस्त विश्व में स्वास्थ्य संबंधी गतिविधियों का निर्देशन एवं समन्वयन कार्य करता है। इस प्रकार विश्व स्वास्थ्य संगठन के सदस्य राष्ट्र, विश्वभर में व्याप्त स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को चिन्हित कर उसके निवारण हेतु नीति निर्माण की दिशा में कार्य करता है, ताकि प्रभावित समूहों को इन नीतियों का लाभ मिल सके। विश्व स्वास्थ्य संगठन के पास स्वास्थ्य संबंधी मानकों का निर्माण एवं प्रोत्साहन करने का विशेष उत्तरदायित्व है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के उत्तरदायित्वों में विश्व स्वास्थ्य संगठन के कार्यों में विशिष्ट व्याधियों का बचाव एवं नियंत्रण, व्यापक स्वास्थ्य सेवाओं का विकास, पारिवारिक एवं पर्यावरणीय स्वास्थ्य संवर्धन, स्वास्थ्य सांख्यिकी, जैव चिकित्सा स्वास्थ्य, स्वास्थ्य साहित्य सूचनार्थ, अन्य स्वास्थ्य संगठनों के साथ समन्वयन सम्मिलित हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के सचिवालय में कार्यरत अनुभाग हैं; महामारी सर्वेक्षण एवं स्वास्थ्य, रूझान आंकलन, संप्रेषण (संचारी रोग), वेक्टर जीवन विज्ञान एवं नियन्त्रण, पर्यावरणीय स्वास्थ्य, जन सूचना एवं स्वास्थ्य शिक्षा, मानसिक स्वास्थ्य, नैदानिक, उपचारात्मक एवं पुनर्वास तकनीक, स्वास्थ्य सेवा सशक्तिकरण, पारिवारिक स्वास्थ्य, गैर संप्रेषण व्याधि, स्वास्थ्य श्रम शक्ति, सूचना समर्थन तंत्र, कार्मिक एवं सामान्य वित्त एवं बजट अनुभाग। क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा 6 क्षेत्रीय कार्यालय स्थापित किये गये हैं। इनमें से दक्षिण- पूर्व एशिया क्षेत्र का मुख्यालय नई दिल्ली (भारत) में है।

भारत में विश्व स्वास्थ्य संगठन

भारत विश्व स्वास्थ्य संगठन के संविधान से 12 जनवरी 1948 में संबधित हुआ। विश्व स्वास्थ्य संगठन की दक्षिण पूर्व एशिया समिति की प्रथम बैठक 4-5 अक्टूबर 1948 को भारत के स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा आहूत की गयी। इस बैठक का उद्घाटन तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू तथा अध्यक्षता डायरेक्टर जनरल डॉ० ब्रोक क्रिसहॉम के द्वारा की गई। भारत विश्व स्वास्थ्य संगठन दक्षिण पूर्व एशिया क्षेत्रीय दल का सदस्य है। डॉ० हैक बैकेहम इस समय भारत में विश्व स्वास्थ्य संगठन के प्रतिनिधि हैं। भारत में विश्व स्वास्थ्य संगठन का

कार्यालय नई दिल्ली में स्थित है, परन्तु अपनी गतिविधियों द्वारा इसकी उपस्थिति पूरे भारत में अनुभव की जा सकती है। भारत में विश्व स्वास्थ्य संगठन के कार्य क्षेत्र को एक नवीन रूप में “कन्ट्री कोऑपरेशन स्ट्रेटजी (सी0सी0एस0, 2012-17)” में निहित किया गया है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य भारत में स्वास्थ्य स्थिति को बेहतर बनाने में योगदान देना है। स्वास्थ्य मामलों में भारत की चुनौतियाँ और उनके दीर्घकालीन निवारण (स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं को सशक्त कर) पर यह विशेष बल देता है। सी0सी0एस0 दायित्वधारियों द्वारा अनुमोदित सुझावों पर विचार-विमर्श कर स्वास्थ्य संवर्धन की दिशा में कार्य करता है। यह विभिन्न विभागों (स्वास्थ्य स्तर, वित्तीय सुरक्षा, प्रतिक्रिया एवं कार्य प्रदर्शन) के मध्य कार्यों, नियमों, सुधारों जिनका स्वास्थ्य तंत्र पर प्रभाव पड़ता है, पर बल देता है।

9.7 खाद्य एवं कृषि संगठन (Food and Agriculture Organization)

खाद्य एवं कृषि संगठन, संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में वैश्विक स्तर पर “भूख उन्मूलन” हेतु कार्य करने वाली समर्पित अंतर्राष्ट्रीय संस्था है। खाद्य एवं कृषि संगठन की स्थापना 16 अक्टूबर, 1945 को हुई थी। इसका मुख्यालय रोम (इटली) में है।

खाद्य एवं कृषि संगठन के उद्देश्य

- भूख-खाद्य असुरक्षा एवं कुपोषण निवारण।
- कृषि, वानिकी एवं मत्स्य पालन को सतत् विकास हेतु और अधिक उपयोगी बनाना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता उन्मूलन।
- सक्षम कृषि एवं खाद्य तन्त्र के निर्माण में सहायता करना।
- समस्या एवं संकट के समय आजीविका को बनाये रखना।
- निर्धनता उन्मूलन एवं सभी के लिये सामाजिक एवं आर्थिक विकास।
- वर्तमान एवं भविष्य की पीढ़ियों हेतु प्राकृतिक संसाधनों का सतत् प्रबन्धन एवं समुचित उपयोग (यहाँ पर प्राकृतिक संसाधनों का तात्पर्य जीवन, जल, जलवायु एवं आनुवांशिक संसाधनों से है)।

यह एक अन्तर सरकारी संस्था है जिसके अन्तर्गत 194 सदस्य राष्ट्र हैं, दो सहायक सदस्य, एक सदस्य संगठन तथा यूरोपियन संघ है। एफ0ए0ओ0 में कार्यरत कर्मचारी एवं अधिकारी विविध विषयों के विशेषज्ञ होने के साथ-साथ अलग-अलग सांस्कृतिक परिवेश से आते हैं।

एफ0ए0ओ0 के कार्यालय 130 राष्ट्रों में हैं। वैश्विक जन सामग्री के माध्यम से एफ0ए0ओ0 खाद्य, कृषि एवं प्राकृतिक संसाधनों के विषय में अति महत्वपूर्ण सूचना सृजन एवं प्रसार कार्य करता है। एफ0ए0ओ0 द्वारा उन लोगों, समूहों एवं संसाधनों सूचनाओं को चिन्हित कर वहां तक पहुँचाया जाता है जहाँ इसकी आवश्यकता होती है। इस प्रकार एफ0ए0ओ0 एक संयोजक का कार्य करता है। सूचना एवं ज्ञान को व्यावहारिक अनुप्रयोग में ला सकने योग्य बना पाना ही एफ0ए0ओ0 का प्रमुख उद्देश्य है। खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, कृषि एवं ग्रामीण विकास हेतु सरकार एवं विभिन्न एजेंसियों के मध्य साझेदारी कर कार्य करना भी एफ0ए0 ओ0 की प्रमुख गतिविधियों में सम्मिलित है। खाद्य एवं कृषि संगठन के प्रमुख घटक निम्नवत हैं:

- सतत् कृषि विकास, परिवर्तन को समर्थन प्रदान करना एवं सूचना उपलब्धता (सभी के लिये) बनाये रखना।
- राजनीतिक इच्छाशक्ति को मजबूत करना एवं नीतिगत विशिष्टता को साझा करना।
- सार्वजनिक एवं निजी सहयोग (साक्षेदारी) हेतु आधार प्रदान कराना तथा छोटे कृषकों की स्थिति बेहतर करने की दिशा में कार्य करना।
- ज्ञान, सूचना इत्यादि को व्यावहारिकता में लाना।

भारत में खाद्य एवं कृषि संगठन

भारत और खाद्य एवं कृषि संगठन का संबंध सन् 1948 से है। इस संबंध का उद्भव भारत एवं विश्व की कृषि संबंधी जटिलताओं तथा कठिनाइयों से हुआ तथा विगत वर्षों में यह भारत के कृषि विकास का साझी बना। खाद्य एवं कृषि संगठन ने पिछले कुछ वर्षों में ग्रामीण आजीविका, सतत् पर्यावरणीय विकास, सतत् जल प्रबंधन एवं प्राकृतिक संसाधन जैसे मुद्दों/सरोकारों को केन्द्र बिन्दु माना है। इन सरोकारों के अतिरिक्त फसलों, पशुधन, खाद्य सुरक्षा, सूचना तंत्र, मत्स्य पालन को भी प्राथमिकता प्रदान की गई है। इसके अतिरिक्त निम्न क्षेत्रों में खाद्य एवं कृषि संगठन की प्रतिभागिता देखने को मिलती है:

- ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में सहभागिता।
- संवर्धित कृषि विपणन (बाजार) सूचनायें।
- खाद्य एवं कृषि संगठन की विशिष्टताओं का भारत सरकार की विकास प्राथमिकताओं से मिलान। सतत् कृषि विकास, खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, सीमाओं के पार सहयोग, भारत का वैश्विक स्तर पर योगदान, जलवायु परिवर्तन संबंधी मुद्दे।

- जलवायु परिवर्तन से पड़ने वाले प्रभावों को नियंत्रित करने हेतु समुदाय स्तर पर सक्षमता निर्माण, जलवायु प्रतिभागिता अनुवीक्षण, जलवायु परिवर्तन समायोजन समिति, कृषक जलवायु विद्यालय।
- पशु सखी (Women Animal health workers) समुदाय, पशु स्वास्थ्य सुविधायें।
- भारत में सतत् कृषि आजीविका निर्माण।

9.8 संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (The United Nations Children's Fund)

संयुक्त राष्ट्र बाल कोष को लघु रूप में यूनीसेफ के नाम से जाना जाता है। इसकी स्थापना द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान युद्ध की विभीषिका झेल रहे देशों के बच्चों को भोजन एवं स्वास्थ्य सेवायें प्रदान करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा 11 दिसम्बर 1946 को की गई थी। वर्ष 1953 में यूनीसेफ के संयुक्त राष्ट्र के स्थायी सदस्य बनने पर इसका नाम यूनाइटेड नेशन्स इन्टरनेशनल चिल्ड्रन्स फंड के स्थान पर यूनाइटेड नेशन्स चिल्ड्रन्स फंड रख दिया गया। इसका मुख्यालय न्यूयॉर्क में है। यूनीसेफ को वर्ष 1965 में अपने उत्कृष्ट कार्यों के लिये शांति के नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। सम्पूर्ण विश्व में इसके 120 से अधिक शहरों में कार्यालय हैं। यूनीसेफ की प्राथमिकताएं हैं; बच्चों का विकास, बुनियादी शिक्षा, लैंगिक समानता, बच्चों का हिंसा एवं शोषण से बचाव, बाल श्रम विरोध। यूनीसेफ एच0 आई0 वी0 एड्स पीड़ित बच्चों के अधिकारों के वैधानिक संघर्ष के लिये भी कार्य कर रहा है।

भारत में “यूनीसेफ” ने अपना कार्य वर्ष 1949 में तीन व्यक्तियों के स्टाफ से दिल्ली कार्यालय से आरम्भ किया। वर्तमान में भारत के 16 राज्यों में यूनीसेफ भारत में बाल अधिकारों की पैरवी कर रहा है। भारत में यूनीसेफ की यात्रा को निम्नवत समझा जा सकता है:

1. **1949, प्रथम भारतीय पेनिसिलिन संयंत्र:** पिम्परी गाँव में सर्वप्रथम भारत में पेनिसिलिन संयंत्र स्थापित किया गया। यह भारत का प्रथम सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम (दवा एवं औषध क्षेत्र) था। इस संयंत्र हेतु उपकरण एवं तकनीकी सहायता यूनीसेफ द्वारा प्रदान की गयी थी।
2. **1954, श्वेत क्रांति (आरम्भ):** 1940 के प्रारम्भ में कुरियन सहकारी समिति द्वारा जब दुध का अतिरिक्त उत्पादन किया गया एवं वह दूध बाजार में विक्रय नहीं हुआ तब अमूल के संस्थापक डॉ0 वार्गीज कुरियन द्वारा यूनीसेफ को सम्पर्क किया गया एवं यूनीसेफ के तकनीकी सहयोग के फलस्वरूप इस अतिरिक्त दूध को पाउडर रूप में

परिवर्तित किया गया। वर्ष 1954 में यूनीसेफ तथा भारत सरकार के मध्य आनन्द मिलक प्रोसेसिंग संयंत्र को वित्तीय सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से एक समझौता किया गया जिसके अंतर्गत यह निर्णय हुआ कि निःशुल्क एवं रियायती मूल्य पर दूध जरूरतमंद बच्चों को दिया जायेगा। इस प्रकार एक दशक के भीतर भारत में यूनीसेफ सहायता प्राप्त संयंत्रों की संख्या 13 हो गई। फलस्वरूप आज भारत विश्व में सर्वाधिक दुग्ध उत्पादन वाला राष्ट्र बन गया है।

3. **1954, भारत का प्रथम डी0डी0टी0 संयंत्र:** यूनीसेफ द्वारा उपलब्ध कराये गये उपकरणों की सहायता से भारत में “राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम” के अंतर्गत भारत सरकार द्वारा प्रथम डी0डी0टी0 संयंत्र स्थापित किया गया।
4. **1966, बिहार सूखा राहत:** वर्ष 1966 ग्रीष्मकाल में बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश में इतिहास का सबसे बड़ा सूखा पड़ा जिससे लगभग 6 करोड़ लोग बुरी तरह प्रभावित हुए तथा खाद्य पदार्थों एवं जल आपूर्ति की कमी होने लगी। उस समय तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के अनुरोध पर यूनीसेफ द्वारा पेय जल आपूर्ति के लिये ड्रिलिंग सुविधा उपलब्ध कराई गई। आपत्ति के समय का यह प्रयास बाद के जन आपूर्ति कार्यक्रमों के लिये प्रेरणा स्रोत सिद्ध हुआ एवं बाद में राष्ट्रीय ग्रामीण पेय जल आपूर्ति कार्यक्रमों में यूनीसेफ द्वारा सक्रिय भागीदारी निभाई गई।
5. **1960, विज्ञान अध्ययन:** भारतीय विद्यालयों में “विज्ञान अध्यापन” के पुनर्गठन एवं विस्तारण के उद्देश्य से भारत सरकार एवं यूनीसेफ के मध्य वर्ष 1960 के पूर्वार्ध में एक अनुबंध किया गया जिसका उद्देश्य परम्परागत “चॉक एण्ड टॉक” विधि को त्यागकर, प्रदर्शन एवं व्यवहारिक माध्यमों से विद्यालयों में विज्ञान अध्यापन को प्रोत्साहित करना था। यह गतिविधि एन0सी0ई0आर0टी0, यूनेस्को एवं यूनीसेफ के संयुक्त तत्वाधान में संपन्न की गई।
6. **1963, व्यवहारिक पोषण कार्यक्रम:** यूनीसेफ एवं इसकी संबन्धित शाखाओं, विश्व स्वास्थ्य संगठन और खाद्य एवं कृषि संगठन के सहयोग से संपूर्ण भारत में ग्रामीण स्तर पर व्यवहारिक पोषण कार्यक्रम का आरम्भ वर्ष 1963 में किया गया। यूनीसेफ एवं इसकी सहयोगी संस्थाओं द्वारा इस कार्यक्रम हेतु उपकरण एवं अन्य आवश्यकताओं की आपूर्ति प्रदान की गयी।

7. **1970, जल क्रान्ति:** वर्ष 1970 में भारत की महत्वाकांक्षी योजना “ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम” को फलीभूत करने में यूनीसेफ का विशेष योगदान रहा है। यूनीसेफ द्वारा भारत को ड्रिलिंग उपकरणों के रूप में तकनीकी सहायता प्रदान की गयी, जो कि कठोर चट्टानों को काटकर जमीन में गहरी खुदाई कर सकती थी। सुचारू जल आपूर्ति हेतु एक ऐसे हैण्डपम्प की आवश्यकता थी, जो पारिवारिक उपयोग के साथ 2,500 लोगों के समुदाय या इससे भी अधिक लोगों की जल आवश्यकता की पूर्ति कर सके। इस कार्य में यूनीसेफ द्वारा भारत के मैकेनिकल इंजीनियरिंग शोध एवं विकास संगठनों के सहयोग से उच्चतम गुणवत्ता का हैण्डपम्प विकसित किया गया, जो आज विश्वभर में लगभग 40 देशों में निर्यात किया जाता है।
8. **1975, समेकित बाल विकास सेवाएं:** वर्ष 1975 में शिशुओं और बालकों में पोषण एवं स्वास्थ्य स्तर बेहतर बनाने तथा गर्भवती एवं दुग्ध पान कराने वाली महिलाओं की समुचित देखभाल एवं जागरूकता फैलाने के उद्देश्य से “समेकित बाल विकास सेवाओं” का शुभारम्भ किया गया। आज यह विश्व की सबसे बड़ी बाल सेवाओं में से एक है और आज कई लाख शिशु इस योजना से लाभान्वित हो रहे हैं। यूनीसेफ की इस योजना में सक्रिय भागीदारी है।
9. **1983, गिनीया कृमि उन्मूलन कार्यक्रम:** गिनीया कृमि अनेक प्रकार के अति पीड़ादायी रोगों के लिये उत्तरदायी है। इस कृमि के भारत एवं विश्व स्तर पर उन्मूलन के लिये यूनीसेफ द्वारा भारत को पर्याप्त रूप से समर्थन प्रदान किया गया। इस संयुक्त प्रयास के फलस्वरूप 2000 में विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा भारत को गिनीया कृमि मुक्त घोषित किया गया है।
10. **1985, राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम:** तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी के महत्वाकांक्षी “राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम” को यूनीसेफ का पर्याप्त समर्थन प्राप्त हुआ। वर्ष 1990 के अन्त तक एक वर्ष की आयु तक के लगभग 80 प्रतिशत से अधिक बच्चों का टीकाकरण किया जा चुका था।
11. **1989, महिला समाख्या (महिला अधिकार एवं शिक्षा):** यह कार्यक्रम वर्ष 1989 में आरम्भ किया गया। महिला समाख्या का अर्थ है “महिलाओं की समानता हेतु शिक्षा”। वर्तमान में यह कार्यक्रम 9 राज्यों के 60 जिलों (12,000 गाँवों) में सक्रिय

रूप से अपनी गतिविधियाँ संचालित कर रहा है। बिहार राज्य में इस कार्यक्रम हेतु यूनीसेफ की लम्बी साझेदारी रही है।

12. **1991, आयोडीन न्यूनता विकारों से बचाव:** वर्ष 1990 के आरम्भ से ही आयोडीन न्यूनता जन्य विकारों के निराकरण हेतु यूनीसेफ, संयुक्त राष्ट्र, केन्द्र सरकार तथा स्थानीय स्तर पर संयुक्त रूप से आयोडीन युक्त नमक का खाने में प्रयोग पर बल दिया गया। इस संयुक्त प्रयास तथा विभिन्न जागरूकता अभियान के फलस्वरूप, आज भारत में जनसंख्या का एक बड़ा समूह आयोडीन न्यूनता रोगों के कुप्रभावों से बच सका है।
13. **1999, उड़ीसा चक्रवात:** वर्ष 1999 के उड़ीसा चक्रवात में लगभग 10,000 लोग मारे गये थे। इस विपदा में राहत कार्यों में अन्य संस्थाओं के साथ-साथ यूनीसेफ द्वारा 1.7 मिलियन बच्चों के पुनर्वास व राहत कार्यों में सराहनीय योगदान दिया गया।
14. **2001, दुलार परियोजना:** शिशु मृत्यु दर, निम्न स्तरीय मातृ स्वास्थ्य, कुपोषण जैसे गंभीर मुद्दों को नियंत्रण में लाने के लिये इस परियोजना का प्रारम्भ बिहार तथा झारखण्ड राज्यों में कुछ गिने-चुने जिलों में राज्य सरकार एवं यूनीसेफ के संयुक्त तत्वाधान में हुआ।
15. **2001, गुजरात भुकंप:** इस त्रासदी में लगभग 30 लाख बच्चे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हुए एवं लगभग 12,000 विद्यालयी इमारतें बुरी तरह ध्वस्त हो गईं। इस समय यूनीसेफ के सराहनीय प्रयासों द्वारा आधुनिक अधिगम यंत्रों एवं विधियों द्वारा शैक्षणिक माहौल को बहाल किया गया।
16. **2003, शिशु दुग्ध प्रतिस्थापन:** वर्ष 2003 में शिशुओं को दूध का प्रतिस्थापन उपलब्ध कराने एवं शिशु खाद्य एवं “फीडिंग बोटल संशोधन” अधिनियम पारित किया गया। यह यूनीसेफ द्वारा समर्थित एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम था जिसकी सर्वत्र सराहना की गई।
17. **2004, सुनामी आपदा राहत कार्य:** 2004 में आई सुनामी आपदा से भारत में मरने वाले कुल 12,400 लोगों में अधिकतर महिलाएं एवं बच्चे थे। अन्य आपदा राहत कार्यों के साथ-साथ शिशु केन्द्रित सेवाओं को उच्च स्तर पर पहुंचा कर यूनीसेफ ने पुनर्वास में अति महत्वपूर्ण योगदान दिया।

18. **2005, सुखद अधिगम:** सीखने की प्रक्रिया को और अधिक आनन्ददायक बनाने, तनाव मुक्त वातावरण एवं उच्च गुणवत्ता युक्त शिक्षा विद्यालयों एवं कक्षाओं में प्रदान करने के लिये उद्देश्य से वर्ष 1991 के समय से सुखद अधिगम पर बल दिया जाने लगा। आनन्द पूर्ण तरीके से सीखने की प्रक्रिया को यूनीसेफ द्वारा पूर्ण समर्थन प्रदान किया गया।
19. **2011, जनगणना समर्थन:** वर्ष 2011 की जनगणना के प्रशिक्षण एवं संचार रणनीति में लैंगिक मुद्दों को मुख्यधारा से जोड़ा गया। इस संबंध में लगभग 27 प्रगणकों एवं उनके पर्यवेक्षकों को उच्चस्तरीय पृथकीकृत आँकड़े प्राप्त करने में विशेष सहायता मिली।
20. **2012, पोलियो अभियान:** भारत को वर्ष 2014 में उन राष्ट्रों की सूची से हटा दिया गया है, जहाँ पोलियो एक महामारी के रूप में व्याप्त है। यह सफलता भारत सरकार, यूनीसेफ, विश्व स्वास्थ्य संगठन, बिल मिलिन्डा गेट्स फाउंडेशन, रोटरी इंटरनेशनल तथा “व्याधि नियन्त्रण एवं बचाव केन्द्र” के अथक प्रयासों जैसे जागरुकता अभियान, टीकाकरण, वैक्सीन प्रतिरक्षाकरण के फलस्वरूप संपन्न हो सका है।
21. **2013, माता एवं शिशु पोषण हेतु संचार/संप्रेषण कार्यक्रम:** नवम्बर 2012 में महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा राष्ट्रभर में इस कार्यक्रम को सफलतापूर्वक संचालित किया गया। यह कार्यक्रम अब तक का सबसे बड़ा एवं प्रभावशाली कार्यक्रम सिद्ध हुआ। इस कार्यक्रम को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से प्रसिद्ध फिल्म अभिनेता आमिर खान को यूनीसेफ का एम्बेसेडर नियुक्त किया गया। भारत की 18 क्षेत्रीय भाषाओं में इस कार्यक्रम का प्रचार-प्रसार किया गया।
22. **2014, नवजात शिशुओं हेतु कार्यक्रम:** भारत सरकार द्वारा नवजात शिशुओं के लिये चलायी गयी यह कार्य योजना स्वयं में अनूठी है। यह पूर्व निर्धारित, नवजात शिशुओं के प्रति जवाब देही तय करने जैसे विषयों पर आधारित है एवं इस संबंध में त्वरित अनुयोजन पर बल देती है। इस कार्यक्रम के प्रमुख घटक हैं; प्रजनन, मातृ स्वास्थ्य, नवजात स्वास्थ्य तथा किशोर स्वास्थ्य। नवजात शिशुओं की मृत्यु दर को रोकने (विशेषकर निमोनिया एवं अतिसार की स्थिति में) भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा की गई पहल की विशेष सराहना करनी होगी। इस योजना का उद्देश्य नवजात मृत्यु दर को कम करना है।

सहस्राब्दी विकास लक्ष्य (मिलेनियम डेवलपमेंट गोल्स)

वर्ष 2000, सितम्बर माह में 189 राष्ट्रों द्वारा “संयुक्त राष्ट्र सहस्राब्दी लक्ष्य घोषणा” पर हस्ताक्षर किये गए। ये लक्ष्य निर्धनता को दूर करने जो समस्त समस्याओं की जड़ है, का उन्मूलन करने हेतु प्रतिबद्ध थे। वर्ष 2015 तक इन सभी उद्देश्यों को एक समय सीमा के भीतर प्राप्त किया जा सके, इसके लिये इन्हें “मिलेनियम डेवलपमेंट गोल्स” कहा गया। संक्षिप्त रूप में यहाँ पर हम इसे एम0डी0जी0 (MDG) कह सकते हैं जिनका उद्देश्य निर्धनता एवं इससे जुड़े विभिन्न पहलू जैसे भूख, गरीबी उन्मूलन, प्राथमिक शिक्षा उपलब्धता, लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण, शिशु मृत्यु दर में कमी, मातृ स्वास्थ्य संवर्धन, बीमारियों पर नियन्त्रण, पर्यावरणीय स्थिरता एवं विकास के लिये वैश्विक साझेदारी सम्मिलित है।

9.9 कोऑपरेटिव फॉर असिस्टेंस एण्ड रिलीफ ऐवरीव्हेयर (केयर)

वर्ष 1945 में स्थापित कोऑपरेटिव फॉर असिस्टेंस एण्ड रिलीफ ऐवरीव्हेयर (केयर) पूर्व में कोऑपरेटिव फॉर अमेरिकन रेमिटेन्स टू यूरोप, दीर्घ कालीन समय तक मानव कल्याण एवं गरीबी उन्मूलन जैसे उद्देश्यों की पूर्ति करने वाली प्राचीनतम कार्यरत अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों में से एक है। विकासशील राष्ट्रों में केयर का कार्य क्षेत्र विस्तृत है। जिन मुद्दों पर केयर प्रमुखतया कार्य कर रही है वह हैं; आपातकालीन परिस्थितियां, खाद्य सुरक्षा, जन स्वच्छता, आर्थिक विकास, जलवायु परिवर्तन, कृषि, स्वास्थ्य एवं पोषण।

केयर, स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नीति परिवर्तन एवं जन मानस के अधिकारों की पैरवी करता है, विशेषकर महिलाओं एवं बालिकाओं के अधिकार, सामाजिक स्थिति एवं लैंगिक समानता के विषय में जागरूकता प्रसार करना केयर संस्था के प्रमुख उद्देश्यों में से एक है। वर्तमान में केयर महासंघ के अधीन 14 राष्ट्र हैं जिनमें भारत भी एक प्रमुख राष्ट्र है। केयर अंतर्राष्ट्रीय सचिवालय का कार्यालय जेनेवा (स्विटजरलैण्ड) में है एवं अन्य कार्यालय न्यूयॉर्क एवं ब्रशल (संयुक्त राष्ट्र के साथ समन्वयन हेतु) में है। प्रत्येक केयर राष्ट्र एक गैर सरकारी स्वायत्तशासी संगठन है। केयर राष्ट्र की प्रमुख गतिविधियों में कार्यक्रम संचालन, वित्त संचालन, वित्त संकलन/संग्रहण एवं संचार/संप्रेषण कार्य सम्मिलित हैं।

केयर के पांच प्रमुख कार्य क्षेत्र

1. खाद्य एवं पोषण सुरक्षा एवं जलवायु परिवर्तन जागरूकता।
2. मानवता।
3. अहिंसा मुक्त जीवन जीने का अधिकार।
4. लैंगिक, प्रजनन, मातृत्व स्वास्थ्य एवं अधिकार।

5. महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण।

उक्त संदर्भ में केयर संस्था द्वारा “विलेज सेविंग्स एवं लोन” के अन्तर्गत सभी महिलाओं द्वारा सामूहिक रूप से छोटी-छोटी बचत कर एक दूसरे को आवश्यकता पड़ने पर ऋण दिया जाता था जिससे महिलाएं आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के लिये छोटा रोजगार आरम्भ कर सकें। इस कार्यक्रम का यह प्रभाव पड़ा कि क्षेत्र विशेष में महिलाएं आत्मनिर्भर होने लगीं और बच्चों/परिवार को पौष्टिक एवं भरपेट भोजन प्रदान करने में समर्थ हो पायीं। इस प्रकार महिलाओं ने न केवल धनोपार्जन किया, अपितु अपने परिवार और समाज में एक सम्मानजनक स्थान भी प्राप्त किया।

सुरक्षित गर्भावस्था एवं प्रसव, प्रत्येक स्त्री का अधिकार है। यह अधिकार उन्हें प्राप्त हो इसके लिये आवश्यक है कि स्त्रियाँ स्वयं अपने स्वास्थ्य, शरीर और प्रजनन संबंधी अधिकारों और आवश्यकताओं के प्रति जागरूक हों। महिलाओं को अपनी प्रजनन क्षमता एवं प्रसव स्थिति को लेकर स्पष्ट, मुखर और जागरूक होना आवश्यक है, तभी मातृ मृत्यु दर में कमी आ पायेगी। संभवतः इसी कारणवश केयर की समस्त गतिविधियों में महिलाओं एवं बालिकाओं को विशेष स्थान दिया जाता है।

शिक्षित बालिका, शिक्षित महिला के रूप में विकसित होती है। वह स्वयं के अधिकारों के प्रति सचेत एवं जागरूक रहकर स्वस्थ शिशु और शिक्षित वातावरण को जन्म देती है। केयर का यह स्पष्ट विश्वास है कि महिलाओं के सशक्तिकरण के माध्यम से समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सकता है। महिला सशक्तिकरण, महिलाओं को ऋण प्रदान करने या उन्हें सिलाई-कढ़ाई बुनाई आदि कौशल सिखाने में निहित नहीं है। सशक्तिकरण बहुआयामी होता है। महिलाओं की समाज में स्थिति, अनेक समान अधिकार, स्वयं के प्रति जागरूकता, सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन इसके कुछ आयाम हैं जिनके माध्यम से महिलाओं की सामाजिक, पारिवारिक एवं आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाया जा सकता है। लैंगिक समानता (Gender Equality) को प्रोत्साहन देकर महिला सशक्तिकरण लाना केयर के 17 “सतत् विकास लक्ष्यों” में से एक है। केयर के अनुसार विश्व भर में निर्धनता उन्मूलन का यह सर्वोत्तम सूत्र है।

वैश्विक स्तर पर प्रत्येक छोटे व्यक्ति को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध नहीं हो पाता है। केवल जल संग्रह करने मात्र में ही महिलाओं का प्रतिदिन काफी बहुमूल्य समय व्यर्थ चला जाता है जबकि इस समय का अन्य उत्पादक कार्यों में प्रयोग किया जा सकता था। विकासशील राष्ट्रों में अब भी कई लड़कियों एवं महिलाओं के दिन का एक बड़ा भाग मात्र पानी की एक बाल्टी

को जमा करने में चला जाता है। यह शारीरिक और मानसिक रूप से थका देने वाला कार्य है, क्योंकि महिलाओं को पानी के लिए कई मीलों तक पैदल चलना पड़ता है। जो समय बालिकाओं को अपने विद्यालय में अध्ययन में व्यतीत करना चाहिए, वह समय अनावश्यक पानी लाने में व्यर्थ हो जाता है। इस प्रकार बालिकाएं पानी की अनुपलब्धता के कारण अपनी मूलभूत शिक्षा से वंचित रह जाती हैं। केयर संस्था स्थानीय समुदायों के साथ मिलकर कुएं, बोट, शौचालय आदि का गांवों में निर्माण कर रही है। यह एक संयुक्त और साझा प्रयास है। केयर निर्माण कार्यों के लिये आवश्यक प्रशिक्षण एवं निर्माण सामग्री प्रदान करती है, दूसरी ओर ग्रामीण श्रम एवं मानव शक्ति का प्रयोग कर निर्माण कार्य संपन्न करते हैं।

आपातकालीन परिस्थितियों में लोगों को तैयार करने, प्रतिक्रिया देने और राहत पहुंचाने के उद्देश्य से केयर सभी सहायता देने वाली संस्थाओं, सरकार, स्थानीय संगठनों के साथ समन्वयन कर तुरन्त प्रभावितों को राहत पहुंचाने का कार्य भी करता है। आपातकालीन परिस्थितियों में खाना बांट देने मात्र से ही राहत कार्य पहुंचाने वाली संस्थाओं का कार्य सम्पन्न नहीं हो जाता, अतः इस संबंध में केयर आपदाग्रस्त लोगों को साथ लेकर दीर्घकालीन निवारण पर बल देता है ताकि उनका मनोबल बढ़ाकर उन्हें जीवन के प्रति पुनरुत्साहित किया जा सके।



भारतीय खाद्य संगठन तालिका 2017

स्वास्थ्य एवं पोषण के मध्य घनिष्ठ अन्तर्सम्बंध है। शरीर को पोषक तत्वों की प्राप्ति खाद्य पदार्थों के माध्यम से होती है। अतः आधुनिक समय में न केवल खाद्य सुरक्षा अपितु पोषण सुरक्षा भी आवश्यक मानी जाती है। स्वास्थ्य एवं पोषक तत्वों के मध्य इस अंतर्सम्बंध ने खाद्य संगठन डेटाबेस की मांग को बल दिया है।

भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् (आई0सी0एम0आर0) तथा राष्ट्रीय पोषण संस्थान (एन0आई0एन) की विशेषज्ञ टीम द्वारा देश भर में खाद्य एवं पोषण गतिविधियों में अनुप्रयोग हेतु वर्तमान खाद्य संगठन डेटाबेस का संशोधन एवं अद्यतन कर एक नवीन रूप “इंडियन फूड कंपोजीशन टेबल- 2017” के रूप में प्रकाशित किया गया है। आर्थिक उदारीकरण, वैश्वीकरण एवं अर्थव्यवस्था में सकारात्मक उछाल के कारण हमारे देश की पोषण पृष्ठभूमि में परिवर्तन आना स्वाभाविक है। भारतीय खाद्य संगठन तालिका, 2017 में वे सभी खाद्य पदार्थ जो किसी समुदाय विशेष द्वारा ग्रहण किये जाने वाले पोषक तत्वों की मात्रा का 75 प्रतिशत तक योगदान करते हों, को “Key Food Approach” के माध्यम से प्राथमिकता प्रदान की गयी है। प्रमुख खाद्य पदार्थों का प्रतिदर्श निर्धारण स्कोरिंग प्रक्रिया तथा वैध सांख्यिकीय विधियों के माध्यम से किया गया है। भारत की पोषण विविधता एवं खाद्य उपलब्धता इस तालिका में स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है। इस नवीनतम संस्करण में लगभग 200 विशिष्ट खाद्य संघटक और उनके सह घटकों को विश्लेषण मूल्यांकन हेतु मानकीकृत किया गया है। खाद्य संगठन डेटाबेस एक साथ कई उद्देश्यों की पूर्ति करता है। पोषण महामारी विज्ञान (nutrition epidemiology) की दृष्टि से इसका विशेष महत्व है। राष्ट्रीय पोषण संस्थान तथा भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् के संयुक्त तत्वाधान में तैयार की गई भारतीय खाद्य संगठन तालिका-2017 अब तक की सबसे बृहद, तकनीकी रूप से समृद्ध खाद्य संगठन तालिका है, जो भारत में पोषण गतिविधियों एवं अनुसंधानों हेतु एक मार्गदर्शक का कार्य करेगी।

अभ्यास प्रश्न 1

1. निम्न का विस्तारण कीजिए तथा संबंधित संस्थानों के मुख्यालय का नाम बताइए।
 - a. एन0 आई0 एन0
 - b. एन0 आई0 पी0 सी0 डी0
 - c. आई0 सी0 डी0 एस0
 - d. सी0 एफ0 टी0 आर0 आई0
 - e. डब्ल्यू0 एच0 ओ0
 - f. यूनीसेफ
2. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
 - a. राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद।
 - b. विश्व स्वास्थ्य संगठन।
 - c. यूनीसेफ।

- d. राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान (निपसिड)।
- e. खाद्य एवं कृषि संगठन।
- f. सहस्राब्दी विकास लक्ष्य (मिलेनियम डेवलपमेंट गोल्स)।

3. लघु उत्तरीय प्रश्न

- a. राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद के उद्देश्यों की संक्षिप्त में व्याख्या कीजिए।
- b. भारतीय खाद्य संगठन तालिका- 2017 पर प्रकाश डालिए।
- c. केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान द्वारा संचालित पाठ्यक्रमों में से किन्हीं चार के विषय में लिखिए।
- d. विश्व स्वास्थ्य संगठन के उद्देश्यों को सूचीबद्ध कीजिए।
- e. विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वास्थ्य की परिभाषा दीजिए।
- f. यूनीसेफ द्वारा भारत में किये गए किन्हीं चार उल्लेखनीय कार्यों के विषय में बताइये।

9.10 सारांश

इस अध्याय में आपने समझा कि विशेषज्ञों की देखरेख में तैयार किये ऐसे कार्यक्रम जो समुदाय की आवश्यकता को ध्यान में रखकर डिजाईन किये जाते हैं, दीर्घ कालीन रूप में भी सफल होते हैं। पोषण संबंधी दिशा निर्देश, कार्यक्रम, प्रस्तावित मात्राएं, व्यवहार, विचार; सदियों से चली आ रहे मिथकों को तोड़कर जन समुदाय को नवीन ज्ञान को स्वीकार करने हेतु प्रेरणा स्रोत बन कर उभरे हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में कुपोषण को कम करने में ये संस्थान उत्कृष्टता एवं दक्षता का परिचय देते हैं।

राष्ट्रीय पोषण संस्थान में सामुदायिक पोषण अध्ययन, सूखा एवं प्राकृतिक आपदाओं से उत्पन्न परिस्थितियों का समुदाय के खाद्य एवं पोषण स्तर पर प्रभाव, संवेदनशील आयु वर्ग की भोजन एवं पोषण आवश्यकताएँ, दिशा निर्देश, भागीदारी कार्यक्रमों का मूल्यांकन सम्मिलित है। निपसिड अपने कार्य के लिये वैश्विक स्तर पर सम्मानित संस्था है जो बाल सुरक्षा एवं विकास के लिये नोडल स्तर पर संसाधन केन्द्र के रूप में विख्यात है। सार्क देशों में अति महत्वपूर्ण मुद्दों बाल अधिकार तथा महिला एवं बाल तस्करी से बचाव पर प्रशिक्षण हेतु निपसिड अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नामित है। निपसिड का कार्यक्षेत्र पूर्व बाल्यावस्था, महिला सशक्तिकरण से लेकर सामाजिक संगठनों की क्षमता संवर्धन तक विस्तृत है। वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषदों की घटक प्रयोगशाला के रूप में केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान में खाद्य क्षेत्र से संबंधित विभाग आपस में मिलकर उत्कृष्ट कार्य कर रहे हैं। यह

संस्थान अपने पाठ्यक्रमों के माध्यम से भावी पीढ़ी हेतु भी खाद्य तकनीकी विशेषज्ञ तैयार कर रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की बात करें तो मानव कल्याण, दीर्घकालीन सतत् विकास एवं गरीबी उन्मूलन के उद्देश्य से समर्पित “केयर” संस्थान का भारत में सराहनीय योगदान है। यह आपातकालीन परिस्थितियों, जल संसाधन विकास, आर्थिक विकास, स्वास्थ्य, पोषण एवं जलवायु जैसे बेहद संवेदनशील सरोकारों पर कार्य कर रही है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के सदस्य राष्ट्र विश्व भर में व्याप्त स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को पहचान कर उन्हें चिन्हित करने एवं उसके निवारण हेतु नीति निर्माण दिशा में समर्पित हैं। संगठन का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को उच्चतम स्वास्थ्य स्तर उपलब्ध कराना है। साथ ही विश्व स्वास्थ्य के पास स्वास्थ्य संबंधी मानकों का निर्माण एवं प्रोत्साहन का विशेष दायित्व भी है। संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में खाद्य एवं कृषि संगठन वैश्विक स्तर पर भूख उन्मूलन हेतु कार्य करने वाली समर्पित अंतर्राष्ट्रीय संस्था है। संगठन के तीन प्रमुख उद्देश्य हैं; खाद्य सुरक्षा, निर्धनता उन्मूलन एवं सतत् प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन। भारत में यूनीसेफ की यात्रा 1949 में पेनिसिलिन संयंत्र से आरम्भ होकर जनगणना समर्थन, पोलियो अभियान, मातृ एवं शिशु पोषण, संचार कार्यक्रम तथा नवजात शिशु सुरक्षा तक पहुँच चुकी है। यूनीसेफ का विश्वास है कि स्वास्थ्य, शिशु सुरक्षा एवं सामाजिक विकास; ये सभी सरोकार आपस में जुड़े हैं।

9.11 पारिभाषिक शब्दावली

- **जन स्वास्थ्य कार्यक्रम:** स्वास्थ्य एवं पोषण विज्ञान के सिद्धान्तों का लक्षित जनसमूह के स्वास्थ्य में सुधार या उच्चतम स्वास्थ्य प्राप्ति हेतु अनुप्रयोग, जन स्वास्थ्य कार्यक्रम कहलाता है। जैसे टीकाकरण कार्यक्रम, पोलियो उन्मूलन अभियान आदि।
- **सामुदायिक पोषण कार्यक्रम:** सामुदायिक पोषण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से किसी भौगोलिक क्षेत्र विशेष में निवास कर रहे व्यक्तियों को सुरक्षित, पर्याप्त, स्वस्थ आहार लेने तथा बीमारियों से बचने संबंधित आदतों का अनुसरण करने की शिक्षा प्रदान की जाती है।

9.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

इकाई का मूल भाग देखें।

9.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. समुदाय के लिए पोषण, (ANC -1), Gullybaba Publishing House (P) Ltd. New Delhi, 2014 (Jan). ISBN-10-9381690383, ISBN-13- 978-9381690383.
2. “Nutrition Programmes” In the Third World: Causes & Concepts, Austin, James E, Oelgeschlager, Gunn & Hain, Inc. U.S. 1980, ISBN-10-089.9460240, ISBN-13- 978-0899460246.
3. Nutrition in Public Health (A Handbook for Developing Programmes and Services), Sari Edelstein, Jones and Barnett Publishers, Inc. 2014, ISBN-10-1449692044, ISBN-13- 978-1449692049.
4. Community Nutrition in India, Prabha Bisht, Star Publication, First Ed. ISBN-10-9381246793, ISBN-13- 978-9381246795.

इंटरनेट स्रोत

- www.ninindia.org
- www.cftri.com
- www.nipccd.nic.in
- www.who.int
- [www.who.int> country> ind](http://www.who.int/country/ind)
- www.fao.org
- www.unicef.org
- www.careindia.org

9.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण संवर्धन के संदर्भ में भारत के अग्रणी संस्थानों के कार्यों की समीक्षा कीजिए।
2. भारतीय पोषण संस्थान, हैदराबाद द्वारा भारतीयों के पोषण एवं स्वास्थ्य कल्याण संबंधी प्रस्तावित निर्देशों, कार्यों तथा गतिविधियों की विस्तार पूर्वक व्याख्या कीजिए।

-
3. राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान (निपसिड) के उद्देश्यों एवं कार्यों के विषय में लिखिए।
 4. जन स्वास्थ्य एवं पोषण के परिप्रेक्ष्य में कार्यरत अग्रणी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं तथा भारत में इनके कार्यों पर प्रकाश डालिए।

खण्ड 4: सामुदायिक पोषण की अन्य अवधारणाएं

इकाई 10: पोषण शिक्षा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 पोषण शिक्षा

10.3.1 पोषण शिक्षा: परिभाषा

10.3.2 पोषण शिक्षा की अवधारणा

10.3.3 पोषण शिक्षा की भूमिका

10.3.4 पोषण शिक्षा कार्यक्रम- औचित्य, योजना बनाना, निष्पादन और मूल्यांकन

10.4 सामुदायिक पोषण शिक्षा

10.5 समुदाय में पोषण शिक्षा की आवश्यकता

10.6 पोषण शिक्षा हेतु लक्ष्य समूह का वर्गीकरण

10.7 पोषण शिक्षा प्रदान करने के तरीके

10.7.1 सम्पर्क विधि द्वारा पोषण शिक्षा का हस्तांतरण

10.7.2 दूरस्थ विधि द्वारा पोषण शिक्षा का हस्तांतरण

10.8 पोषण शिक्षा की विभिन्न विधियाँ

10.9 सारांश

10.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

10.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

समुदाय का पोषण स्तर सुधारने के लिए किसी भी कार्यक्रम को शुरू करने से पूर्व उस समुदाय का पोषण ज्ञान जानना जरूरी है। कुपोषण के सभी रूपों को रोकने के लिए समुदाय के लोगों को सिर्फ भोजन की उपलब्धता एवं उनकी आर्थिक स्थिति ही उचित नहीं होनी चाहिए अपितु उन्हें एक स्वस्थ आहार के सभी तत्वों के बारे में पूरी जानकारी भी होनी चाहिए। समुदायों को विशेष रूप से जानकारी होनी चाहिए कि पोषण से संबंधित ऐसे कौन-से स्वास्थ्य मुद्दे हैं जो उनके समुदायों को प्रभावित करते हैं एवं कैसे उनकी रोकथाम के लिए स्थानीय स्तर पर उपलब्ध खाद्य पदार्थों का उपयोग किया जा सकता है।

पोषण शिक्षा के माध्यम से व्यवहार में संशोधन, स्वास्थ्य संवर्धन एवं नीति में बदलाव लाये जा सकते हैं। इसके लिए ऐसे पोषण शिक्षा कार्यक्रमों का नियोजन करना होगा जो समुदाय के

सभी लोगों को संबोधित करते हों। समुदाय में पोषण शिक्षा प्रदान करने का अन्तिम उद्देश्य स्वस्थ भोजन की प्रथाओं को अपनाने के लिए व्यक्तिगत कौशल और प्रेरणा का विकास होना चाहिए। पोषण शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीय स्तर पर व्यवसायिक क्षमता का निर्माण करने की तत्काल आवश्यकता है। स्वास्थ्य में सुधार के लिए संयुक्त राष्ट्र के समग्र प्रयासों में पोषण शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसलिए पोषण शिक्षा को औपचारिक शिक्षा का आवश्यक अंग बनाये जाने पर बल दिया जाना चाहिए जिससे सामाजिक एवं आर्थिक विकास को भी बढ़ावा मिल सके।

10.2 उद्देश्य

- पोषण शिक्षा की परिभाषा जानेंगे;
- पोषण शिक्षा कार्यक्रमों के घटकों के बारे में जानेंगे;
- समुदाय में पोषण शिक्षा की आवश्यकता की जानकारी लेंगे;
- समुदाय में विभिन्न आयु वर्गों में पोषण शिक्षा प्रदान करने के माध्यमों को जानेंगे; तथा
- समुदाय में पोषण शिक्षा प्रदान करने के तरीकों का अध्ययन करेंगे।

10.3 पोषण शिक्षा

पोषण संबंधी समस्याओं को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है, पहला अल्प पोषण अर्थात् पोषण संबंधी जरूरतों के अनुसार अपर्याप्त सेवन एवं दूसरा अति पोषण अर्थात् वह समस्याएँ जो भोजन की अत्यधिक मात्रा या किसी विशेष आहार घटक के अधिक सेवन से उत्पन्न होती हैं। आँकड़े बताते हैं कि आबादी का बड़ा हिस्सा इन पोषण समस्याओं से ग्रसित है। सुपोषित आबादी का प्रतिशत कम होता जा रहा है। इसलिए समुदायों के लोगों को अपने स्वभाव और जीवन शैली को बदलने की प्रेरणा देने की आवश्यकता है। इसके लिए उन्हें ऐसी पोषण शिक्षा देनी चाहिए जिससे अज्ञानता, पूर्वाग्रह एवं गलत धारणाएँ दूर की जा सकें एवं लोगों के स्वभाव में सकारात्मक बदलाव लाया जा सके। पोषण शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य समुदाय के लोगों को उचित आहार खरीदने एवं उपभोग करने के लिए पर्याप्त जानकारी, कौशल एवं प्रेरणा प्रदान करना है। इस प्रकार की शिक्षा में पारिवारिक भोजन आपूर्ति में सुधार के उपाय, आर्थिक संसाधनों एवं उपलब्ध भोजन का अधिक कुशल उपयोग एवं संवेदनशील वर्गों की बेहतर देखभाल के तरीके आदि अवश्य रूप से सम्मिलित होने चाहिए। समुदायों के उन हिस्सों में जहाँ अतिपोषण की समस्या है, पोषण शिक्षा के माध्यम से उचित भोजन चयन, उपभोग एवं जीवन शैली के लिए समुदायों को निर्देशित करना चाहिए।

10.3.1 पोषण शिक्षा: परिभाषा

विभिन्न विशेषज्ञों द्वारा पोषण शिक्षा को अलग-अलग तरीके से परिभाषित किया गया है।

US Department of Agriculture, USDA 2012 के अनुसार

“पोषण शिक्षा व्यक्तियों, परिवारों और समुदायों को भोजन एवं जीवन शैली के बारे में सही विकल्प चुनने में मदद करती है। यह समुदाय के लोगों का शारीरिक, आर्थिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य उचित बनाये रखने में मदद करती है”।

Society for Nutrition Education and Behavior के अनुसार

“पोषण शिक्षा विभिन्न शैक्षिक रणनीतियों का संयोजन है जिसे स्वैच्छिक भोजन विकल्प अपनाने एवं उचित आहार एवं पोषण संबंधी व्यवहार स्वीकार करने के लिए परिकल्पित किया जाता है। पोषण शिक्षा समुदाय के उत्तम स्वास्थ्य एवं कल्याण में मदद करती है।”

उपरोक्त पोषण की परिभाषाएँ आज के समय में संकीर्ण समझी जाती हैं। इन परिभाषाओं में सिर्फ पोषण ज्ञान के प्रसार की बात कही जाती है। इन परिभाषाओं में उपलब्ध ज्ञान के प्रभाव के बारे में कई विचार सम्मिलित नहीं हैं। ‘पोषण शिक्षा’ शब्दावली की इसी कमी के कारण इसे ‘व्यवहार परिवर्तन संचार’ (Behavior Change Communication-BCC) कहा जाने लगा है।

‘व्यवहार परिवर्तन संचार’ स्वास्थ्य सम्बंधी सकारात्मक परिणामों को बढ़ावा देने के लिए संचार का सामरिक उपयोग है। यह व्यवहार में बदलाव के सिद्ध सिद्धान्तों एवं मॉडल पर आधारित होता है। व्यवहार परिवर्तन संचार में एक व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता है। इसमें शुरुआत अनुसंधान तथा व्यवहार विश्लेषण से होती है, उसके बाद संचार योजना, कार्यान्वयन, निगरानी एवं मूल्यांकन की क्रिया होती है। इस विधि में उत्तरदाताओं को ध्यानपूर्वक चुना एवं समूहों में बाँटा जाता है। संचार संदेशों एवं सामग्री का पूर्व परीक्षण किया जाता है। परिभाषित व्यवहार उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जन संचार एवं अन्य पारस्परिक विधियों का प्रयोग किया जाता है।

यूनिसेफ (2012) के अनुसार ‘व्यवहार परिवर्तन संचार’ सामान्यतः शोध के आधार पर परामर्शी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है। इस विधि में ज्ञान, दृष्टिकोण एवं व्यवहार (Knowledge, attitude and practice), जो वास्तविक रूप में कार्यक्रम के लक्ष्यों से जुड़े होते हैं, को संबोधित किया जाता है। इसमें प्रतिभागियों को परिभाषित रणनीतियों के माध्यम से उचित जानकारी एवं प्रेरणा प्रदान की जाती है। व्यवहार में बदलाव

के लिए प्रतिभागियों की सुविधानुसार संचार माध्यमों एवं उनकी भागीदारी का उपयोग किया जाता है। भारत में 'व्यवहार परिवर्तन संचार' के अंतर्गत बहुत से कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।

10.3.2 पोषण शिक्षा की अवधारणा

समुदायों में पोषण शिक्षा प्रदान करने का इतिहास काफी पुराना है। समय के साथ इसकी अवधारणा एवं प्रक्रिया में बदलाव आते गये। साठ के दशक में पोषण शिक्षा का स्वरूप उपदेशात्मक था एवं शिक्षा निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया नहीं थी। उस समय पोषण शिक्षा स्वास्थ्य केन्द्रों पर 'वार्ता' के रूप में दी जाती थी। सत्तर के दशक के दौरान दुनिया भर के पोषण विशेषज्ञों ने महसूस किया कि प्रचलित पोषण शिक्षा के तरीके पोषण स्तर में सुधार लाने में प्रभावहीन हैं। यह चिंता वैश्विक अशान्ति एवं अकाल के कारण और जटिल हो गई। विभिन्न पोषण विद्वानों ने कई शोध किये और उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि पोषण शिक्षा द्वारा इष्टतम प्रभाव उत्पन्न करने के लिए सम्पूर्ण शारीरिक, सामाजिक एवं राजनीतिक माहौल पर विचार करना चाहिए। इसके बाद पोषण शिक्षा की अवधारणाओं, रणनीतियों एवं तरीकों में एक बड़ा बदलाव देखा गया। संदेशों के संचार के लिए पहले पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रों का प्रयोग किया गया था। जब रेडियो संचार का प्रचलित माध्यम बना तो पोषण संचार संदेश रेडियो पर प्रसारित होने लगे। तकनीकी के विकास के साथ-साथ अन्य माध्यम जैसे टी0वी0, फिल्म, मोबाइल संदेश आदि का प्रयोग होने लगा।

पहले स्वास्थ्य कार्यकर्ता या प्रसार कार्यकर्ता पोषण शिक्षा प्रदान करने का कार्य करता था। समय में बदलाव एवं पोषण कार्यक्रमों की मांग के अनुसार अब यह कार्य प्रशिक्षित पोषण कार्यकर्ता द्वारा किया जाता है। इसी प्रकार पहले पोषण संदेश अस्पताल में दी जाने वाली दवाई की तरह होते थे। उनका कार्य सिर्फ रोग से बचाव होता था। आजकल पोषण के सभी विषयों पर पोषण शिक्षा प्रदान की जाती है। पूर्व में पोषण शिक्षा से संबंधित ज्यादातर कर्मियों को पोषण का ज्ञान नहीं होता था। पोषण शिक्षा गतिविधियों में प्रभावी रूप से भाग लेने के लिए, पेशेवर कर्मियों को पोषण शिक्षा के ज्ञान पर अब बल दिया जाने लगा है। बदलते समय के साथ-साथ पोषण शिक्षा जो पहले औपचारिक रूप से प्रदान की जाती थी, अब उसे अनौपचारिक विधियों जैसे फिल्म, टी0वी0 प्रोग्राम, चर्चा आदि द्वारा समुदाय के सदस्यों की भागीदारी को मिला कर प्रदान की जाती है। पोषण शिक्षा की अवधारणा कुछ भी रही हो, शुरुआत से वर्तमान तक इसका उद्देश्य समुदायों का उच्च स्वास्थ्य एवं कल्याण ही है।

10.3.3 पोषण शिक्षा की भूमिका

घरेलू खाद्य सुरक्षा के लिए पर्याप्त एवं सन्तुलित भोजन का सेवन आवश्यक है। हालांकि अच्छे स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर को बनाये रखने के लिए व्यक्ति को पर्याप्त ज्ञान एवं कौशल की

भी आवश्यकता होती है जिससे वह विविध प्रकार के भोज्य पदार्थ उगा, खरीद, संसाधित, तैयार एवं सही मात्रा में उपभोग और संयोजित कर सके। इसके लिए सभी व्यक्तियों को पौष्टिक सन्तुलित आहार के विषय में बुनियादी ज्ञान की आवश्यकता होती है। उन्हें यह भी पता होना चाहिए कि उपलब्ध संसाधनों के उपयोग से पोषण संबंधी आवश्यकताओं को कैसे पूर्ण किया जा सकता है। अक्सर अपर्याप्त ज्ञान, परंपराओं और वज्र्यों के कारण या आहार और स्वास्थ्य के संबंध को उचित प्रकार से न समझ पाने के कारण कई अवांछनीय खान-पान की आदतें एवं पोषण संबंधी प्रथाएं प्रचलित होती हैं जो पोषण स्तर पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं।

शोधों से ज्ञात होता है कि यदि व्यक्ति या समुदाय के लोगों को पर्याप्त प्रेरणा दी जाए एवं जागरूक किया जाए तो वह स्वस्थ आहार एवं आदतें अपना सकते हैं, जिससे उनके पोषण स्तर के साथ-साथ जीवन स्तर में भी सुधार आता है। पोषण शिक्षा का कार्य लोगों में पोषण से संबंधित विशिष्ट प्रथाओं एवं व्यवहारों में बदलाव लाकर उच्च स्वास्थ्य स्थिति को बनाये रखने में मदद करना है। लोगों को पोषण संबंधी नई जानकारी सीखने एवं अपनाने में पूर्ण मदद की जाती है, साथ-साथ व्यवहार, कौशल एवं आत्मविश्वास विकसित करने के लिए भी सहायता प्रदान की जाती है।

पोषण शिक्षा के माध्यम से खाद्य पदार्थों के पोषण मान, भोजन की गुणवत्ता और सुरक्षा, भोज्य पदार्थों की संरक्षण विधियाँ, प्रसंस्करण एवं देखभाल, भोजन तैयार करना तथा उपयोग करने के तरीके पर उचित जानकारी प्रदान की जा सकती है। यह व्यक्तियों को पर्याप्त सन्तुलित आहार के लिए उपलब्ध भोज्य पदार्थों में से उचित विकल्प चुनने में मदद करती है।

पोषण शिक्षा को तब तक सफल नहीं माना जाता जब तक उसका प्रभाव व्यवहार में बदलाव के रूप में न देखा जाए। वांछनीय पोषण प्रथाओं को अपनाने के लिए व्यवहार में परिवर्तन जैसे अपने खेतों, उद्यानों में हरी पत्तेदार सब्जियों को उगाना एवं उपभोग करना शामिल हो सकता है। छोटे-छोटे परिवर्तन जैसे सब्जियों को धोकर काटना, समय-समय पर हाथ धोना, आसपास साफ सफाई रखना आदि बड़े बदलाव की शुरुआत होते हैं। प्रभावी पोषण शिक्षा कार्यक्रमों की योजना एवं क्रियान्वयन इस प्रकार होना चाहिए ताकि लाभार्थियों को कौशल और आत्मविश्वास विकसित करने के लिए प्रेरित किया जा सके ताकि वह सकारात्मक एवं स्थायी प्रथाओं को अपने जीवन में अपना सकें।

पोषण शिक्षा की भूमिका

- ज्ञान का प्रसार
- जागरूकता
- समुदाय का विकास
- कौशल विकास

- प्रेरणा स्रोत
- आत्मविश्वास का विकास
- व्यवहार में बदलाव
- पोषण स्तर में सुधार
- स्वास्थ्य में सुधार

विभिन्न शोधों से पता चलता है कि जब समुदायों में पोषण शिक्षा प्रदान की गयी तब प्रतिभागियों एवं समुदायों, दोनों को लाभ प्राप्त हुए हैं। इसलिए वर्तमान में पोषण शिक्षा और संचार राष्ट्रीय खाद्य और पोषण कार्यक्रमों में सुधार लाने की प्राथमिक विधि माने जाते हैं।

10.3.4 पोषण शिक्षा कार्यक्रम- औचित्य, योजना बनाना, निष्पादन और मूल्यांकन

समुदाय में पोषण शिक्षा प्रदान करने के लिए पोषण शिक्षा कार्यक्रमों में निम्नलिखित तीन घटक होने चाहिए:

1. पोषण ज्ञान एवं जागरूकता को बढ़ाना।
2. वांछनीय भोजन व्यवहार एवं पोषण संबंधी प्रथाओं को बढ़ावा देना।
3. पारिवारिक भोजन की आपूर्ति एवं विविधता को बढ़ावा देना।

इनमें से प्रत्येक घटक सामुदायिक पोषण में सुधार हेतु एक विशेष योगदान देता है। तीनों घटक अतिमहत्वपूर्ण हैं, इसलिए किसी भी पोषण शिक्षा एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम में इन तीनों घटकों का होना अत्यंत आवश्यक है। सामुदायिक स्तर पर जो व्यक्ति पोषण संबंधी समस्याओं से प्रभावित है उन्हें ही घटकों की प्रमुखता निर्धारित करने में भाग लेना चाहिए जिससे स्थानीय खाद्य एवं पोषण स्थिति में सुधार प्राप्त किया जा सके। उचित योजना एक पोषण शिक्षा कार्यक्रम की सफलता के लिए महत्वपूर्ण है। पोषण शिक्षा कार्यक्रम नियोजन के लिए योजना एक सैद्धांतिक ढाँचे पर आधारित है जिसके क्रमबद्ध चार चरण होते हैं, जो निम्नलिखित हैं:

1. औचित्य
2. योजना बनाना
3. निष्पादन
4. मूल्यांकन

1. औचित्य

पोषण शिक्षा कार्यक्रम नियोजन में प्रथम चरण कार्यक्रम नियोजित करने का औचित्य है। इस चरण में यह विश्लेषण किया जाता है कि किसी भी समुदाय विशेष में पोषण शिक्षा कार्यक्रम की आवश्यकता क्यों है या वहाँ की पोषण सम्बंधी क्या समस्याएं हैं? समस्या की पहचान

करना इसलिए आवश्यक है क्योंकि यह उद्देश्यों के निर्धारण हेतु आवश्यक है। समस्या का पता लगाने के बाद उसके कारणों के बारे में पता लगाया जाता है। मूल समस्या एवं उसके कारणों को जानने के पश्चात् पोषण शिक्षा प्रदान करने का ढाँचा बनाया जाता है। कार्यक्रम नियोजन का औचित्य साबित करने के लिए प्रभावित जनसंख्या की जानकारी एवं उससे होने वाली हानियों का लेखा-जोखा बनाया जाता है। पोषण कार्यक्रम की योजना बनाने में औचित्य का विकास कार्यक्रम को लागू करने का मुख्य तत्व है। इसी के कारण नीति निर्माताओं एवं निर्णय लेने वालों को कार्यक्रम की शुरुआत के लिए प्रेरित किया जाता है। एक बार समस्या की पहचान, उसके कारकों, व्यवहार प्रतिमानों आदि पर जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् कार्य योजना एवं संचार रणनीति तैयार की जाती है।

2. योजना बनाना

पोषण कार्यक्रम की रणनीति बनाने के लिए कार्यक्रम नियोजन आवश्यक है। इस चरण में कार्यक्रम को चलाने की मूल योजना तैयार की जाती है। कार्यक्रम की रणनीति बनाने के लिए सबसे पहले उद्देश्यों को निर्धारित एवं स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाता है। उद्देश्यों को परिभाषित करना किसी भी कार्यक्रम के विकास में एक महत्वपूर्ण पहलू है। उद्देश्यों को कार्यक्रम के मार्गदर्शक के रूप में देखा जाता है। ये कार्यक्रम को दिशा प्रदान करते हैं एवं कार्यक्रम की गतिविधियों के चयन का आधार होते हैं। कार्यक्रम की शुरुआत में उद्देश्यों को सरल व कम महत्वकांक्षी होना चाहिए। जैसे-जैसे कार्यक्रम की प्रगति हो इनका विस्तार किया जा सकता है। इसलिए उद्देश्यों के निर्धारण में सदैव लचीलापन होना चाहिए। पोषण शिक्षा कार्यक्रम में उद्देश्य लक्षित समूह को ध्यान में रखकर ही निर्धारित करने चाहिए।

लक्षित समूहों का निर्धारण

उद्देश्यों के साथ-साथ लक्षित समूहों का निर्धारण भी उतना ही आवश्यक है। दोनों गतिविधियाँ एक दूसरे पर निर्भर करती हैं। पोषण शिक्षा प्राप्त करने वाली लक्षित आबादी में कई समूह होते हैं जिनमें दो समूह मुख्य होते हैं; संवेदनशील वर्ग एवं लक्षित समूह। पोषण शिक्षा के संबंध में इन दोनों में अन्तर समझना जरूरी है। बहुत से मामलों में संवेदनशील समूह ही लक्षित समूह होता है परन्तु कभी-कभी ये दोनों अलग भी हो सकते हैं। उदाहरण के लिए पाँच वर्ष से कम बच्चे जो प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण से ग्रस्त हैं, उन्हें संवेदनशील समूह कहा जाता है। परन्तु इस समूह को पोषण शिक्षा न देकर, पोषण शिक्षा उनकी देखभाल में शामिल लोगों को प्रदान की जाती है। इसलिए इस मामले में लक्षित समूह देखभाल करने वाले लोग जैसे माता-पिता, दादा- दादी आदि आते हैं।

लक्षित समूहों को तीन भागों में बाँटा जाता है।

प्राथमिक लक्षित समूह: यह वह समूह होता है जिसके व्यवहार में संशोधन किया जाना है। ऊपर दिए गए उदाहरण में इस समूह में बच्चे की माता सम्मिलित हो सकती है। इस उदाहरण में उद्देश्य बच्चों के लिए भोजन तैयार करने की विधि एवं देखभाल के तरीकों को संशोधित करना है। यह समूह भी ग्रामीण, शहरी, साक्षर, निरक्षर आदि के आधार पर भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। इनकी आवश्यकताएँ भी अलग होती हैं।

माध्यमिक लक्षित समूह: इस समूह में उन लोगों को शामिल किया जाता है जो प्राथमिक लक्षित समूह तक पोषण शिक्षा संदेशों को पहुँचाने में मध्यस्थ का कार्य करते हैं। यह स्वास्थ्य कार्यकर्ता, शिक्षक, पत्रकार आदि हो सकते हैं।

तृतीयक लक्षित समूह: यह समूह उन लोगों से बनता है जो संचार प्रक्रिया एवं व्यवहार संशोधन प्रक्रिया को सुविधाजनक बना सकते हैं। इसमें नेता, अभिनेता, धर्म गुरु, शिक्षक एवं वह लोग जो लक्षित समूह के करीबी हैं, सम्मिलित किये जाते हैं।

उदाहरण: प्रोटीन उर्जा कुपोषण की रोकथाम के लिए लक्षित समूह इस प्रकार हो सकते हैं।

- संवेदनशील समूह: पाँच वर्ष से कम उम्र के बच्चे
- लक्षित आबादी: इन बच्चों की देखभाल से जुड़े व्यक्ति
- प्राथमिक लक्षित समूह: बच्चों की माता
- माध्यमिक लक्षित समूह: स्वास्थ्य कार्यकर्ता, समाज सेवक, शिक्षक
- तृतीयक लक्षित समूह: नेता, प्रशासनिक अधिकारी, बच्चे का पिता

इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि पोषण शिक्षा के अन्तर्गत लक्षित समूहों को सामाजिक संचार की प्रक्रिया में प्रतिभागी होना चाहिए, न कि सिर्फ जानकारी प्राप्त करने वाला श्रोता। पोषण शिक्षा में एकपक्षीय संचार उपयोगी नहीं रहता है। लक्षित समूहों के निर्धारण के पश्चात् निर्धारित उद्देश्यों को लक्षित समूह के अनुकूल परिभाषित किया जाता है। उद्देश्य को पोषण उद्देश्य, शैक्षिक उद्देश्य एवं संचार उद्देश्यों में विभाजित करके परिभाषित किया जाता है।

पोषण उद्देश्य: एक पोषण शिक्षा कार्यक्रम का मूल उद्देश्य लक्षित समूह की पोषण स्थिति में सुधार लाना है। पोषण स्तर, शिक्षा के अलावा भी बहुत सारे कारकों से प्रभावित होता है। इसलिए पोषण उद्देश्यों को सदैव अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक उद्देश्यों के साथ परिभाषित करना चाहिए।

शैक्षिक उद्देश्य: एक पोषण शिक्षा कार्यक्रम के विशिष्ट उद्देश्य पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले व्यवहार में स्थायी परिवर्तन को प्राप्त करना है। इसमें प्रेरणा, ज्ञान, कौशल, वरीयता आदि तत्वों को सम्मिलित किया जाता है। शैक्षिक उद्देश्य पोषण उद्देश्यों के अनुरूप होने चाहिए एवं उनसे पोषण उद्देश्यों की पूर्ति को बल मिलना चाहिए।

शैक्षिक उद्देश्यों में निम्न घटकों में स्पष्टता होनी चाहिए:

- उद्देश्य प्राप्त करने के पश्चात व्यवहार में क्या वांछनीय परिवर्तन के संकेत मिलेंगे?
- विभिन्न व्यवहार कौन दिखाएगा?
- नए या संशोधित व्यवहार से क्या परिणाम प्राप्त होगा?
- संशोधित व्यवहार किन परिस्थितियों में देखा जाएगा?
- किस मापदंड से ज्ञात होगा कि वांछित परिणाम प्राप्त हुए हैं या नहीं?

संचार उद्देश्य: संचार कार्यक्रम को प्रभावी बनाने और लक्षित समूहों में स्थायी परिवर्तन लाने एवं पोषण तथा शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संचार उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। इस चरण के अन्तर्गत यह निश्चित किया जाता है कि लक्षित समूह के लिए कौन-सा संचार माध्यम प्रयोग किया जायेगा एवं उन्हें क्या सन्देश देना है। संचार उद्देश्यों के अन्तर्गत संचार माध्यमों से संदेशों की अवधारणा पर बल दिया जाता है।

संदेशों हेतु मीडिया एवं अन्य साधनों को विकसित करना

कार्य योजना बनाने के अगले चरण में संदेशों को विकसित करने का कार्य किया जाता है। संदेशों को विकसित करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए:

- किन शब्दों का, किस क्रम में प्रयोग करना है?
- सन्देश किसके लिए है?
- सन्देश किस भाषा में होगा?

इसी प्रकार मीडिया के चुनाव में किस प्रकार का मीडिया प्रयोग होगा, किसी परिस्थिति विशेष या कार्यक्रम की परिस्थिति के अनुसार कौन-सा मीडिया या संचार माध्यम उचित रहेगा, इसका निर्धारण करना भी आवश्यक है। यदि कार्यक्रम की आवश्यकतानुसार किसी समर्थन सामग्री जैसे चार्ट, पोस्टर, पुस्तक, विवरणिका आदि की आवश्यकता है तो कौन-सी सामग्री का उपयोग किया जायेगा, उसमें कौन-सी छवियां, संदेश आदि उपयोग किए जाएंगे, उनमें

कौन-से रंगों का उपयोग होगा आदि, सभी प्रश्न आपस में जुड़े हुए हैं। संदेशों की विषय-सामग्री, संचार-साधनों एवं माध्यमों के चुनाव को प्रभावित करती हैं।

संदेशों की विकसित करते समय ध्यान रखने योग्य बातें:

1. संदेश लघु एवं सरल होने चाहिए। इसमें सिर्फ प्रमुख विचार ही शामिल होने चाहिए।
2. संदेशों के माध्यम से विश्वसनीय एवं पूरी जानकारी देनी चाहिए।
3. संदेशों के माध्यम से पोषाहार समस्या एवं संशोधित व्यवहार के बीच संबंध पता चलना चाहिए।
4. संदेशों में सदैव सकारात्मक कथनों का उपयोग करना चाहिए।
5. संदेशों को चित्रों से और आकर्षक एवं प्रभावी बनाया जा सकता है।
6. संदेश समुदाय की स्थानीय भाषा में ही होने चाहिए।

संदेश विकसित करने के पश्चात् मीडिया के चुनाव की बारी आती है। मीडिया, संचार के वे माध्यम हैं जिनसे संदेश प्रेषित होते हैं। यह संचार के माध्यम आमने-सामने बैठकर पारस्परिक बातचीत के तरीके या जनसंचार माध्यम जैसे रेडियो, टीवी, समाचार पत्र, चार्ट, पोस्टर आदि हो सकते हैं।

मीडिया का चुनाव समुदाय के अनुरूप होता है। यदि समुदाय पढ़ा लिखा है तो चार्ट, पोस्टर आदि का प्रयोग किया जा सकता है। मीडिया का चुनाव उसके खर्च, समुदाय द्वारा उपयोग की सीमा, समुदाय की भागीदारी एवं उद्देश्यों पर निर्भर करता है। कई बार एक से अधिक मीडिया विधियों का सम्मिलित रूप से प्रयोग किया जाता है। संदेशों, मीडिया एवं विधियों के निर्धारण के बाद, कार्य योजना की रूपरेखा तैयार की जाती है। इसके अर्न्तगत कार्यक्रम के विविध पक्ष, जैसे कौन-कौन से कार्य निष्पादित होने हैं, कार्य निष्पादन के माध्यम क्या होंगे, किन-किन संसाधनों का प्रयोग किया जायेगा, किन लोगों की संलग्नता होगी, कार्यक्रम कब प्रारम्भ किया जायेगा, कार्यक्रम कितने चरणों में सम्पन्न होगा तथा प्रत्येक चरण के सम्पन्न होने की निर्धारित अवधि क्या होगी जैसी बातों का स्पष्ट सविस्तार विवरण लिखित रूप से तैयार किया जाता है। इसी प्रकार कार्यक्रम में कितना व्यय होगा, इसका भी अनुमानित लेखा रहना आवश्यक है।

कार्य योजना बनाने के लाभ

1. मार्गदर्शन- नियोजित कार्यक्रम के सभी पहलू लिखित होते हैं। शब्दबद्ध होने के कारण कब क्या करना है, किसे करना है जैसी बातें पहले से तय रहती हैं। नियोजित कार्यक्रम का लिपिबद्ध प्रारूप कार्यक्रम के प्रत्येक चरण में लोगों का मार्गदर्शन करता है।

2. उपलब्ध संसाधनों का सही उपयोग- कार्यक्रम नियोजन स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाता है तथा स्थानीय संसाधनों का अधिकतम एवं प्रभावी उपयोग करने का प्रयास किया जाता है। इससे संसाधनों का अपव्यय नहीं होता है।

3. क्रिया कलापों का क्रमबद्ध निष्पादन- कार्यक्रम नियोजन से एक बहुत बड़ा लाभ यह होता है कि सभी कार्य क्रमबद्ध ढंग से नियोजित एवं निष्पादित होते हैं। इससे कार्यक्रम निर्विघ्न एवं निर्बाध भाव से चलता रहता है।

4. निरन्तरता- नियोजन द्वारा किसी भी कार्यक्रम को एक आकार प्राप्त होता है। इससे कार्यक्रम को निरन्तरता मिलती है। कार्यक्रम में कार्यरत कार्यकर्ता, नेता या व्यक्ति किसी कारणवश यदि उपलब्ध न हों या बदल जायें, तब भी पूर्व निर्धारित कार्यक्रम चलते रहते हैं।

5. नेतृत्व विकास- कार्यक्रम नियोजन नेतृत्व विकास को बढ़ावा देता है। कार्यक्रम के विभिन्न आयामों से जुड़े व्यक्ति अपनी जिम्मेदारी को समझते हैं।

6. सही एवं विश्वसनीय सूचनाएँ प्रदत्त करना- नियोजित कार्यक्रम से सम्बद्ध सभी बातें या पक्ष स्पष्ट रूप से लिपिबद्ध रहते हैं। अतः सूचनाएँ या जानकारियाँ सही एवं विश्वसनीय होती हैं।

7. भविष्योपयोगी- कार्यक्रम नियोजन भविष्य में होने वाले पोषण शिक्षा कार्यक्रमों के सन्दर्भ में भी उपयोगी सिद्ध होते हैं।

8. मूल्यांकन- नियोजित कार्यक्रम का लिखित स्वरूप सबके समक्ष रहता है। सम्पूर्ण कार्यक्रम का ब्यौरा, उसके लक्ष्य, आय-व्यय विवरण, संसाधनों की उपलब्धता जैसी बातें सभी के सामने स्पष्ट रहती हैं। अतः कार्यक्रम के अन्त में या किसी भी समय पर कार्यकलापों की समीक्षा की जा सकती है और प्रगति का मूल्यांकन किया जा सकता है।

3. निष्पादन

नियोजन प्रक्रिया के पश्चात् कार्यक्रम के निष्पादन की बारी आती है। यह नियोजन का व्यवहारिक पक्ष है, अतः नियोजन के विविध पहलुओं का पालन सही ढंग से होना चाहिए। इस चरण में, कार्यक्रम का जो भी क्रम योजना बनाते हुए तय किया गया हो, उसका पालन करना चाहिए। यदि कोई परिवर्तन अनिवार्य हो तो उसे कार्यक्रम की टीम के साथ विचार-

विमर्श के पश्चात ही परिवर्तित करना चाहिए। कार्यक्रम कितने ही अच्छे ढंग से नियोजित क्यों न किया गया हो यदि उसका संचालन या क्रियान्वयन सही प्रकार से नहीं होता है, तो सारा नियोजन विफल हो जाता है। कार्यक्रम के सभी चरणों का निष्पादन क्रमवार ढंग से और निर्धारित समय के अनुसार होना चाहिए। इससे सभी कार्य सही गति से चलते हैं तथा कार्यक्रम की गति दृष्टिगोचर होती है।

कार्यान्वयन चरण की शुरुआत संचार सामग्री के उत्पादन से शुरू होती है। कई बार संचार सामग्री को पहले ही उपयोग करके जाँचा (pre-test) जाता है। इसके पश्चात् क्षेत्रीय कर्मी, स्वास्थ्य कार्यकर्ता, शिक्षक आदि जो भी कार्यक्रम में विभिन्न संचार गतिविधियों में शामिल होने वाले हैं, उनका प्रशिक्षण सुनिश्चित किया जाता है जिससे कार्यक्रम में वो अपनी निश्चित भूमिका को भली-भाँति निभा सकें। उन्हें प्रभावी ढंग से संदेश संवाद करने में सक्षम होने के लिए संचार गतिविधियों के साथ बहुत अच्छी तरह से परिचित होना चाहिए। सामग्री एवं प्रशिक्षण की प्रक्रिया पूरी करने के पश्चात् लोगों के साथ संचार शुरू किया जा सकता है। इस चरण में समूहों को पोषण ज्ञान देने की प्रक्रिया शुरू कर दी जाती है। यह क्रिया निश्चित अवधि तक चलती रहती है।

4. मूल्यांकन

सामान्य रूप से किसी भी कार्य का मूल्यांकन कार्य समाप्ति पर होता है, किन्तु नियोजित कार्यक्रम का मूल्यांकन समय-समय पर किया जाता है। मूल्यांकन का लक्ष्य सम्मिलित लोगों को स्पष्ट होना चाहिए। किसी कार्यक्रम का मूल्यांकन दो दृष्टिकोण से होता है, पहला यह देखने के लिए कि उद्देश्यों की प्राप्ति हुई है या नहीं, दूसरा यह निर्धारित करने के लिए कि कार्यक्रम के सभी चरण एवं प्रक्रियाएं सही ढंग से निष्पादित की गई हैं या नहीं। एक पोषण शिक्षा कार्यक्रम का मूल्यांकन महत्वपूर्ण है। मूल्यांकन प्रतिभागी आबादी की भागीदारी से होना चाहिए। पोषण शिक्षा कार्यक्रमों के मूल्यांकन में मुख्य कमजोरी यह है कि इनके मूल्यांकन में मात्रात्मक परिवर्तन नहीं देखा जाता है।

कार्यक्रम की समाप्ति के पश्चात मूल्यांकन द्वारा यह स्पष्ट होता है कि किस चरण में कौन-कौन सी कमियाँ रहीं या कौन-सा काम सही ढंग से नहीं हो पाया। इस प्रकार मूल्यांकन द्वारा यह भी पता चलता है कि बजट की स्थिति क्या रही। मूल्यांकन प्रक्रिया के द्वारा ही किसी भी कार्यक्रम को विश्लेषित किया जा सकता है तथा निर्णयात्मक समीक्षा की जा सकती है। सतत मूल्यांकन कार्यक्रम की आवश्यकता को दर्शाता है और त्रुटियों और व्यवधानों को दूर करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. पोषण शिक्षा को परिभाषित कीजिए।

.....

2. पोषण शिक्षा कार्यक्रम का नियोजन करते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?

.....

3. पोषण शिक्षा हेतु लक्षित समूहों का निर्धारण किस प्रकार किया जाता है?

.....

10.4 सामुदायिक पोषण शिक्षा

लक्ष्य

- समुदाय, जिला, प्रान्त तथा राष्ट्रीय स्तर पर संस्थागत क्षमता के विकास तथा एकीकृत समुदाय आधारित कार्यक्रमों के माध्यम से घरेलू खाद्य शिक्षा के स्थायी तरीकों में सुधार, खाद्य असुरक्षित तथा कमजोर समूहों में खाद्य पोषण तथा उचित आजीविका साधन की उपलब्धता।
- समुदायों तथा परिवारों के भोजन, पोषण तथा स्वास्थ्य पर आधारित ज्ञान को बढ़ाना।
- बच्चों तथा मातृ पोषण के आधार की गुणवत्ता में सुधार, पर्याप्त पोषक तत्वों के सेवन तथा बेहतर पथ्य उपयोग हेतु सकारात्मक दृष्टिकोण तथा व्यवहारिक बदलाव को बढ़ावा देना।
- सामुदायिक पोषण के प्रवेश स्तर पर खाद्य एवं पोषण परामर्शदाता कई प्रकार के कार्य करते हैं जैसे,
- ग्राहकउपभोक्ता को सलाह/
- समुदाय को शिक्षित करना
- एजेंसी के भीतर पोषण सेवाओं को निर्देशित करना

उद्देश्य

- पोषण शिक्षा को परिभाषित करना तथा ऐसे कार्यक्रमों के आयोजन के कारणों को बताना।
- समुदाय में पोषण शिक्षा प्रदान करने हेतु विभिन्न तरीकों तथा सहायता सामग्री की सूची का निर्माण तथा वर्णना।
- महिलाओं तथा बच्चों के स्वास्थ्य में सुधार लाना तथा पर्याप्त वृद्धि आश्चस्त करने हेतु स्वास्थ्य तथा पोषण शिक्षा गतिविधियों में सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देना।
- सार्वजनिक नीतियों के प्रभाव से पौष्टिक खाद्य पदार्थों के उपयोग को बढ़ावा देना।
- खाद्य पदार्थों के पोषण मूल्य में वृद्धि करना।
- स्वस्थ भोज्य पदार्थों के इस्तेमाल हेतु व्यक्तिगत कौशल विकसित करना।

10.5 समुदाय में पोषण शिक्षा की आवश्यकता

पोषण शिक्षा का क्षेत्र भोजन लेने की पुरानी मानव गतिविधि को एक नए विज्ञान से जोड़ता है। प्रत्येक समाज में भोजन लेने के विभिन्न तरीके हैं तथा इन्हीं तरीकों का पालन उस समाज की आने वाली पीढ़ी भी करती है। हमारी पारंपरिक भोजन प्रणाली तकनीकी सम्यता के विकास के साथ संशोधित हो रही है। तकनीकी विकास से भोजन के संवेदी गुणों में बदलाव आया है पर इससे भोजन के संबंधित पोषण मूल्य के बारे में उपभोक्ता को कोई जानकारी नहीं है।

पोषण शिक्षा की आवश्यकता इसलिए उत्पन्न हुई है क्योंकि दुनिया के अधिकांश देशों में बच्चों तथा वयस्कों की एक बड़ी आबादी ऐसे खाद्य पदार्थों की ओर आकर्षित है जो न तो सांस्कृतिक या जैविक रूप से परिचित है और न ही मानवीय पोषण के संदर्भ में उचित है। पोषक तत्वों की पथ्य आवश्यकताओं और विभिन्न खाद्य पदार्थों के पोषक मूल्य के बारे में समुदाय की अज्ञानता देश में कुपोषण की व्यापक घटना का मुख्य कारण है। ऐसी स्थिति में पोषक शिक्षा खाद्य पदार्थों के खरीदने, तैयार करने, उपयोग करने तथा पोषण मूल्य को जानने का एक अच्छा माध्यम है।

एफ0ए0ओ0/डब्लू0एच0ओ0 (FAO/WHO) की रिपोर्ट समिति की संयुक्त रिपोर्ट ने सर्वप्रथम स्वास्थ्य कार्यक्रमों में पोषण शिक्षा के महत्व पर जोर दिया तथा बाद में मानव पोषण में सुधार हेतु शिक्षा को व्यवहारिक कार्यक्रमों का आवश्यक हिस्सा बनाने पर विचार किया।

अमेरिकी सार्वजनिक स्वास्थ्य संघ (American public health association) ने कम लागत वाली 180 स्वास्थ्य वितरण प्रणालियों के एक सर्वेक्षण में पाया कि उनमें से 88

प्रतिशत के पास कुछ प्रकार की पोषण शिक्षा की जानकारी थी। हार्वर्ड संस्थान ने अन्तर्राष्ट्रीय विकास की अध्ययन रिपोर्ट में पाया कि 20 विकासशील देशों के पोषण कार्यक्रमों में 91 प्रतिशत में पोषण शिक्षा शामिल है।

10.6 पोषण शिक्षा हेतु लक्ष्य समूह का वर्गीकरण

पोषण शिक्षा हेतु लक्ष्य समूहों का निम्न प्रकार वर्गीकरण किया गया है:

1. शिशु तथा शाला पूर्व बच्चे

बच्चों की पोषण संबंधी शिक्षा अनौपचारिक रूप से घर से ही शुरू हो जाती है। बच्चों में कुपोषण विकासशील देशों में एक महत्वपूर्ण स्वास्थ्य समस्या तथा शिशु और बाल मृत्यु दर व रोगों के मुख्य कारणों में से एक है। विकासहीनता सामान्य रूप से उम्र के लगभग छह महीनों से शुरू होती है जब माता के दूध के साथ आहार में पूरक खाद्य पदार्थ भी सम्मिलित किए जाते हैं, जिसका उचित वितरण न होने से बाल विकास पर प्रभाव पड़ता है। भोजन की कमी ही कुपोषण का एकमात्र कारण नहीं है। जागरूकता का अभाव, खिलाई मात्रा, आवृत्ति, भोजन के प्रकार आदि की जानकारी न होना भी बच्चों की पोषण स्थिति को प्रभावित करता है।

बच्चों में उचित खाने की आदतों तथा पोषण के प्रति वांछनीय रवैये के विकास के लिए परिवार के सदस्य, विशेष रूप से माता उत्तरदायी है। इन उत्तरदायित्व के निर्वाह हेतु माताओं को पोषण शिक्षा की आवश्यकता होती है जो वे चिकित्सकों, स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं तथा पोषण विशेषज्ञों आदि से प्राप्त कर सकती हैं। पोषण शिक्षा संदेश बच्चों के स्वास्थ्य सुधार तथा वृद्धि में कई रूप में प्रभावशाली हो सकते हैं जैसे स्तनपान की अवधि में वृद्धि, ऊर्जा खपत में वृद्धि तथा अतिसारीय रोगों की संख्या में कमी।

प्रारंभिक पोषण शिक्षा की कमी के मुख्य कारण शिक्षकों का अनुचित रवैया, अपर्याप्त पोषण प्रशिक्षण तथा व्यवहारिक बदलाव लाने में कठिनाई है। बच्चों को भोजन और स्वास्थ्य के लिए पोषण से संबंधित गतिविधियों द्वारा पोषण शिक्षा सफलतापूर्वक दी जा सकती है।

2. स्कूली बच्चों हेतु पोषण शिक्षा

पोषण ज्ञान को स्कूल के पाठ्यक्रम में शामिल करने की आवश्यकता है क्योंकि यह जानकारी बच्चों को उनके स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहने में मदद करती है। स्कूली शिक्षा में पोषण एक अलग विज्ञान के रूप में सिखाया जा सकता है, परन्तु यह अन्य विषयों के साथ एकीकृत भी

किया जा सकता है। पोषण शिक्षा कार्यक्रमों में हमेशा एक सक्रिय तथा व्यवहारिक दृष्टिकोण प्रयोग किया जाना चाहिए।

सेवाकालीन प्रशिक्षण को पोषण अनुदेश में शामिल कर निम्नलिखित पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए:

- सीखने की सक्रिय रणनीतियों का प्रयोग।
- पोषण शिक्षा को अन्य विषयों में एकीकृत करने के तरीके।
- पोषण शिक्षा में परिवारों को शामिल करने के तरीके।

बच्चों में स्वास्थ्य तथा उचित खाना प्रथाओं की दिशा में एक सकारात्मक रवैया प्रारम्भ से ही विकसित करना चाहिए। शाला पूर्व से लेकर हाईस्कूल किशोरों तक सभी विद्यार्थियों के लिए पोषण का ज्ञान होना अति आवश्यक है जो उनके स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। बच्चों में पोषण के प्रति जागरूकता तथा पोषण संबंधी वर्तमान मुद्दों पर जानकारी उनके स्वास्थ्य के सुधार में सहायक होगी जिसके द्वारा भविष्य में उनमें एक बुद्धिमान उपभोक्ता का विकास होगा। पोषण संबंधी ज्ञान बच्चों को आहार तथा रोगों में संबंध, विभिन्न पोषण संबंधी विकारों के लिए निवारक उपाय तथा नए खाद्य उत्पादों और स्वस्थ खाद्य पदार्थों के पोषणीय महत्व को जानने में मदद करेगा।

स्कूलों में पोषण शिक्षा के सामान्य उद्देश्य

- स्कूली बच्चों में अच्छे स्वास्थ्य तथा विकास को बढ़ावा देना। जिसके लिए ये जरूरी है कि पोषण शिक्षा को स्कूली शिक्षा में एकीकृत किया जाए।
- संस्कृति तथा परिस्थितियों के आधार पर अच्छी भोजन प्रथाओं की स्थापना। इसके लिए यह अति आवश्यक है कि भोजन तथा खाने की प्रथाओं के मौजूदा ज्ञान का अध्ययन किया जाए।
- बच्चों में भोजन के लिए एक स्वस्थ रवैये का विकास करना।
- बच्चों को अच्छे पोषण के सिद्धांत तथा दैनिक जीवन में उनके अनुप्रयोगों की जानकारी देना। भोजन तथा स्वास्थ्य के मध्य संबंध जानने से पहले, बच्चों को भोजन पर आधारित वैज्ञानिक अवधारणाएँ ज्ञात होनी चाहिए।
- बच्चों को भोजन के उत्पादन, भंडारण, चयन, संरक्षण तथा तैयारी से सम्बंधित कौशल को सिखाने में मदद करना जो उन्हें एक अच्छा आहार प्राप्त करने में सहायता करेगा।

3. वयस्कों के लिए पोषण शिक्षा

पारंपरिक रूप से परिवार में व्यस्क ही पारिवारिक आय में सहयोग देते हैं। लोगों के बदलते हुए परिवेश तथा विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए पोषण शिक्षा देने के कार्यक्रम तैयार करने चाहिए। आजकल महिलाएँ कामकाजी हो गई हैं। सर्वेक्षण अध्ययनों से पता चलता है कि एक चौथाई से अधिक पुरुष तथा एक तिहाई से अधिक महिलाओं को यह जानने की जिज्ञासा रहती है कि स्वस्थ रहने के लिए क्या खाना चाहिए। भारत में अधिकांश लोग क्या खाना है और कितना खाना है, के बारे में अनजान हैं। लोगों को भोजन के पोषण के महत्व पर शिक्षा की जरूरत है ताकि वे अपने बजट के भीतर ही उचित खाद्य पदार्थों का चयन कर सकें तथा बाजार में उपलब्ध कई प्रकार के खाद्य उत्पादों की पोषण संबंधी जानकारी ले सकें।

कम आय समुचित भोजन विकल्प के रास्ते में बाधा उत्पन्न करती है। इसलिए गरीब समुदाय पर अधिक ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है तथा उन्हें जीविकार्जन के लिए उपयुक्त कौशल प्रदान करने की भी आवश्यकता है। बेहतर प्रभाव के लिए कम आय वाले लोगों के लिए भागीदारी (Participatory) प्रकार के कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। समुदाय में पोषण शिक्षा हेतु जन संचार (Mass Media) की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि वर्तमान में टी0वी0 तथा रेडियो ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में जीवन की अभिन्न आवश्यकताएँ बन गए हैं।

वयस्कों को पोषण शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य

- अच्छे स्वास्थ्य तथा समुचित पोषण के संबंध पर जोर देना, विशेषकर गर्भवती, प्रसवोत्तर तथा स्तनपान कराने वाली महिलाओं, शिशुओं तथा पाँच वर्ष से कम उम्र के बच्चों की पोषण संबंधी आवश्यकताएँ।
- समुदाय के लोगों की भोजन की आदतों में सकारात्मक बदलाव लाना।
- पूरक आहार तथा अन्य पौष्टिक खाद्य पदार्थों की मदद से पोषण संबंधी समस्याओं की रोकथाम करना।
- पौष्टिक आहार के लिए व्यवहारिक बदलाव लाने तथा कम आय वाले परिवारों तथा युवाओं में ज्ञान, कौशल तथा दृष्टिकोण प्राप्त करने हेतु सहायता करना। उनके पोषण तथा कुल पारिवारिक आहार में सुधार तथा व्यक्तिगत विकास में योगदान।

4. बुजुर्गों के लिए पोषण शिक्षा

सभी उम्र के लोगों के लिए उत्तम स्वास्थ्य तथा बीमारियों की रोकथाम हमारी सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली का प्रमुख लक्ष्य है। बुजुर्ग लोगों की आहार की जरूरतों की पहचान हेतु प्रमुख कदम उठाए जा रहे हैं क्योंकि बुजुर्गों की पोषण संबंधी आवश्यकताएँ वयस्कों से भिन्न हैं। पोषण शिक्षा कार्यक्रम उन आहार की आवश्यकताओं को बढ़ावा देने में पीछे हैं। आहार की आवश्यकताओं, वर्तमान पोषण नीतियों तथा जनसांख्यिकीय जानकारी समीक्षाओं के आधार पर बुजुर्गों के लिए पोषण शिक्षा कार्यक्रम शुरू करने चाहिए। वर्तमान जनगणना के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका में रहने वाले लोगों के 13 प्रतिशत और भारत में 4 प्रतिशत लोग 65 वर्ष की आयु के ऊपर हैं। विकसित तथा विकासशील दोनों ही तरह के देशों में बुजुर्गों की संख्या के बढ़ने की उम्मीद है जिसके कई कारण हैं जैसे- जीवन प्रत्याशा में वृद्धि, जन्म दर पर नियंत्रण, बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं तथा पुरुषों और महिलाओं के जीवन अवधि में वृद्धि।

बेहतर पोषण शिक्षा बुजुर्गों के लिए अति आवश्यक है क्योंकि इस उम्र में पोषण सम्बन्धी जरूरतें अन्य उम्र के लोगों से भिन्न होती हैं। साथ ही साथ बुजुर्गों की बढ़ती आबादी अपने स्वयं के भोजन के लिए उत्तरदायी है। चिकित्सकीय सुविधाओं की बढ़ती हुई जरूरतों के साथ पोषण शिक्षा बुजुर्गों के लिए अति आवश्यक है। बुजुर्गों द्वारा अनुभव किये जाने वाले आम पोषण सम्बन्धी विकार जैसे, लौह तत्व की कमी द्वारा रक्ताल्पता, फोलिक एसिड व विटामिन बी2 की कमी द्वारा रक्ताल्पता, प्रोटीन की कमी, वजन का कम या ज्यादा होना, विशिष्ट विटामिनों की कमी आदि हैं। मधुमेह, ऑसटिओपोरोसिस, उच्च रक्तचाप तथा हृदय रोग बुजुर्गों में पाई जाने वाली आम बीमारियां हैं। पोषण शिक्षा कार्यक्रम जो इन समस्याओं के निदान करने में सहायक हों, बीमारियों के विकास को कम कर सकें तथा खाने की आदतों को विकसित कर सकें, वांछित है। बुजुर्गों को सम्पूर्ण संतुलित पौष्टिक आहार की जानकारी भी देनी चाहिए तथा उनका महत्व भी समझाना चाहिए।

10.7 पोषण शिक्षा प्रदान करने के तरीके

समुदाय में पोषण शिक्षा प्रदान करने के कई तरीके हैं।

पोषण शिक्षा के तरीके

सम्पर्क विधि द्वारा	दूरस्थ विधि द्वारा
व्यक्तिगत बैठक	टीवी, वीडियो, फिल्म
छोटे समूहों में बैठक	रेडियो तथा कम्प्यूटर द्वारा

10.7.1 सम्पर्क विधि द्वारा पोषण शिक्षा का हस्तांतरण

इस पद्धति की मुख्य विशेषता यह है कि स्रोत रिसीवर से अकेले या छोटे समूहों में मिलता है। यह उन्हें आपसी घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित करने में मदद करता है। जो प्रभावी अध्यापन तथा सीखने में मदद करता है। वे लगातार एक दूसरे से बात कर सकते हैं, सवाल पूछ सकते हैं तथा उनका स्पष्टीकरण कर सकते हैं। सम्पर्क विधि की मदद से स्रोत रिसीवर की जरूरतों के हिसाब से सन्देश को संशोधित कर प्रभावी बना सकता है।

- **व्यक्तिगत बैठक:** व्यक्तिगत बैठक में सीखने के कई फायदे हैं। सवाल पूछने वाला उत्तर देने वाले से स्पष्टीकरण प्राप्त कर सकता है। स्रोत भी स्वयं के संदेशों को सुदृढ़ कर सवाल पूछने वाले को सीखने के लिए उत्साहित कर सकते हैं। इस विधि का नुकसान यह है कि इसमें समय अधिक लगता है। इस तरह की बैठकें अनौपचारिक होती हैं तथा घर पर ही आयोजित की जाती हैं।
- **छोटे समूहों द्वारा:** व्यक्तिगत बैठकों की अपेक्षा छोटे समूहों में बैठक एक अच्छा विकल्प है तथा दोनों के लाभ समान हैं। इस विधि में अपेक्षाकृत कम समय लगता है। इस विधि का दूसरा लाभ यह है कि जब समूह के सदस्य अपने अनुभवों को बांटते हैं तो अन्य सदस्यों पर सकारात्मक प्रभाव होता है तथा सवाल पूछने वाला संदेश आसानी से ग्रहण कर लेता है। इस विधि का नुकसान यह कि यदि कोई शिक्षार्थी शर्मीला या चुप है तब बहुत ज्यादा बात करने वाले शिक्षार्थी की उपस्थिति में वह अपने संदेश स्पष्ट नहीं कर सकता। इस विधि द्वारा शिक्षा प्रदान करने में उचित तथा अच्छे परिणामों के लिए यह जरूरी है कि समूह में तीस से ज्यादा सदस्य न हो। बड़े समूहों में स्रोत तथा श्रोता के मध्य सम्पर्क कम हो पाता है फलस्वरूप यह कम प्रभावी हो पाता है।

छोटे समूह या व्यक्तिगत रूप में शिक्षण के लिए निम्न में किसी भी विधि का प्रयोग किया जा सकता है।

- व्याख्यान (lecture)
- नाटक (drama)
- विचार-विमर्श (discussion)
- भूमिका
- अनुभव बांटना

- बहस (debate)
- रेडियो
- टीवी, वीडियो
- ग्राफिक्स
- फिल्म
- मॉडलवस्तुओं/
- कम्प्यूटर प्रिन्ट

10.7.2 दूरस्थ विधि द्वारा पोषण शिक्षा का हस्तांतरण

दूरस्थ तरीकों द्वारा रेडियो, टीवी, मुद्रित सामग्री, फिल्म आदि के माध्यम से संदेश किसी दूरी पर लोगों तक पहुंचाया जा सकता है। इस तरह एक ही समय में अलग अलग स्थानों पर कई व्यक्तियों के साथ संचार सम्भव है।

पोषण शिक्षा की यह पद्धति कम लागत होने के कारण अधिक प्रभावशाली है। इसमें कम समय में लोगों की बड़ी संख्या के साथ सम्पर्क किया जा सकता है। परन्तु यह पद्धति लोगों के सीधे सम्पर्क में न होने के कारण सम्पर्क विधियों से कम प्रभावी है। लोगों को नया संदेश देने तथा उनकी विचारधारा बदलने के लिए संदेश को कई बार दोहराना पड़ता है।

समुदाय में पोषण शिक्षा के माध्यम

पोषण शिक्षा को कई माध्यमों से प्रदान किया जा सकता है।

स्वास्थ्य केन्द्रों द्वारा	महिला संगठनों के द्वारा	स्कूल/कालेजों द्वारा
व्यक्तिगत परामर्श	महिला मण्डल	आंगनबाड़ी केन्द्र
व्याख्यान एवं प्रदर्शन	महिला क्लब	प्राइमरी स्कूल
पूरक आहार कार्यक्रम		

10.8 पोषण शिक्षा की विभिन्न विधियाँ

पोषण शिक्षा की महत्वपूर्ण प्रणालियाँ निम्न प्रकार हैं:

व्याख्यान और प्रदर्शन

समुदाय में दिए जाने वाले व्याख्यान तथा प्रदर्शन सरल तथा व्यावहारिक होने चाहिए जिससे वह समुदाय द्वारा अपनाए जा सकें। व्याख्यान देना प्रदर्शन से सरल होता है क्योंकि इसमें अतिरिक्त व्यक्ति की आवश्यकता नहीं होती। प्रदर्शनी में सीखने वाले समूह के सदस्यों को शामिल करना समुदाय की आहार व्यवस्था को बदलने तथा उन्नत करने में अधिक प्रभावशाली होता है।

पोस्टर चार्ट और प्रदर्शनी

पोस्टर सरल, स्पष्ट तथा रंगों तथा क्षेत्रीय भाषा व्यवस्था में, सुन्दर होना चाहिए। पोस्टर द्वारा लोगों की रुचि को प्रोत्साहन मिलना चाहिए। चार्ट में बड़े अक्षरों का प्रयोग करना चाहिए जिससे वह दूर से ही नजर आ सकें। चार्ट और पोस्टर प्रदर्शनी समुदाय को शिक्षित करने हेतु एक स्थायी तरीका है। सामुदायिक स्थानों, विद्यालयों, चिकित्सालयों, पंचायत आदि में पोषण प्रदर्शनी सामुदायिक स्वास्थ्य हेतु लाभकारी है।

कार्यशालाएँ

कार्यशालाओं में किसी भी सामुदायिक क्षेत्र की पोषण समस्याओं पर विचार विमर्श किया जा सकता है तथा पोषण स्तर में सुधार के लिए समाधान निकाले जा सकते हैं।

फिल्म, स्लाइड शो

यह समुदाय को शिक्षित करने हेतु अत्यंत प्रभावशाली प्रणाली है। यह प्रणाली व्यावहारिक, उदाहरणयुक्त तथा इस प्रकार होनी चाहिए जिसे लोग आसानी से समझ सकें। गर्भवती तथा धात्री मात्राओं के स्वयं के तथा बच्चों के पोषण स्तर को सुधारने में यह प्रणाली बहुत प्रभावी है तथा यह लोगों के व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन भी लाती है।

पुस्तकें, बुलेटिन और समाचार पत्र

पोषण तथा पथ्य संबंधी मुद्रित सार, छात्रों, शिक्षकों तथा विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत लोगों को शिक्षित करने हेतु उपयुक्त है। यह क्षेत्रीय भाषाओं में कम लागत मूल्य पर उपलब्ध कराया जाना चाहिए। पोषण क्षेत्र में लोकप्रिय लेख समाचार पत्रों में प्रकाशित किए जा सकते हैं।

रेडियो, टेलीविजन और मोबाइल फोन

समुदाय में बड़ी संख्या में लोगों को एक ही निर्धारित समय में रेडियो और टेलीविजन के माध्यम से शिक्षित किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में पोषण शिक्षा हेतु रेडियो एक अच्छा संचार माध्यम है। लोकप्रिय वार्ता, विचार विमर्श, साक्षात्कार, परामर्श आदि के प्रसारण से

रेडियो द्वारा लोगों को शिक्षित किया जा सकता है। वर्तमान समय में मोबाइल फोन पोषण सम्बंधी जानकारी प्रदान करने का एक बेहतरीन माध्यम है जो एक निश्चित आयु वर्ग तक सीमित नहीं है। पोषण ज्ञान से सम्बंधित चित्रों, वीडियो, फिल्म, लेखों, डिजिटल खेलों इत्यादि द्वारा समुदाय के एक विस्तृत भाग को शिक्षित किया जा सकता है। इस माध्यम की समुदाय में पहुँच भी बहुत विस्तृत है।

सामुदायिक घटनाएँ तथा अभियान

समुदाय में एक बड़े पैमाने पर शिक्षा, मेलों, प्रदर्शनियों सामुदायिक त्यौहारों, अभियान आदि द्वारा संभव है। इस की सफलता के लिए उचित तथा पर्याप्त धनराशि की आवश्यकता होती है। व्यापक रूप से ज्ञात वक्ताओं द्वारा व्याख्यान और प्रदर्शनी जनसमूह को आकर्षित करने में मदद करती है। इस तरह के सामुदायिक कार्यों में पोषण से संबंधित शैक्षिक सामग्री मुफ्त में वितरित की जा सकती है ताकि यह सामग्री लोगों को लाभान्वित कर सके। इन सम्मेलनों में व्यक्ति द्वारा बूथ पर पोषण शिक्षकों द्वारा संपर्क किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न 2

1. स्कूलों में पोषण शिक्षा प्रदान करने के सामान्य उद्देश्य क्या हैं?

.....
.....

2. छोटे समूह या व्यक्तिगत रूप में शिक्षण के लिए प्रयोग की जानी वाली विधियों को सूचीबद्ध कीजिए।

.....
.....

3. समुदाय में पोषण शिक्षा के माध्यमों को सूचीबद्ध कीजिए।

.....
.....

10.9 सारांश

समुदायों को स्वस्थ रखने एवं उनमें भोजन संबंधी अच्छी आदतों के विकास के लिए कई बार बाहरी हस्तक्षेप की आवश्यकता पड़ती है। पोषण ज्ञान वास्तव में पोषक तत्वों के विषय ज्ञान से संबंध रखता है। इसके अंतर्गत आहार एवं स्वास्थ्य संबंध, पोषक आहार, मिश्रित आहार

की भूमिका, अलग-अलग आयु वर्ग की पोषक आवश्यकताएं, वृद्धि निगरानी, पोषण-संक्रमण संबंध, व्यक्तिगत स्वच्छता, अतिसार से बचाव, उपचारात्मक आहार, पोषण कार्यक्रम आदि के विषय में शिक्षा एवं व्यवहार संशोधन पर बल दिया जाता है। पोषण शिक्षा को क्रमबद्ध रूप से पोषण संबंधित ज्ञान प्रदान करने की विधि के रूप में परिभाषित किया गया है। इसका मुख्य उद्देश्य समस्त समुदाय के आहार एवं पोषण संबंधी व्यवहारों में संशोधन से उच्च स्वास्थ्य की प्राप्ति एवं कल्याण है। पोषण शिक्षा प्रदान करने के लिए विभिन्न कार्यक्रम चलाये जाते हैं। इन कार्यक्रमों को सफलता पूर्वक चलाने एवं उनसे सकारात्मक प्रभाव प्राप्त करने के लिए, कार्यक्रमों को क्रमबद्ध रूप से नियोजित, क्रियान्वित एवं समय-समय पर मूल्यांकित करते रहना चाहिए। समुदाय में पोषण शिक्षा का संचार द्वारा प्रभावी प्रसार कई दिशाओं में महत्वपूर्ण है तथा इसे कई तरीकों से प्रदान किया जा सकता है। समुदाय में पोषण शिक्षा संपर्क विधि तथा दूरस्थ विधि दोनों ही द्वारा हस्तांतरित की जा सकती है। इस दिशा में सामुदायिक केन्द्र जैसे स्वास्थ्य केन्द्र, महिला संगठन, स्कूल/कालेज, महिला मंडल आदि महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उचित शिक्षा प्रदान करने हेतु उचित संचार प्रणाली का चयन इस प्रक्रिया को और अधिक प्रभावी बनाता है तथा समुदाय के पोषण स्तर के उत्थान में सहायता करता है।

10.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

इकाई का मूल भाग देखें।

10.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Andrien M. 1994. Social Communication in nutrition: A methodology for intervention. FAO. Rome
- McNulty J. 2013. Challenges and issues in nutrition education. Rome. Nutrition Education and consumer Awareness group, Food Agriculture organization of the United Nations. 56p. available at www.fao-org/ag/human nutrition
- Macias Y. F. & Glasauer P. 2014. KAP Manual. Guidelines for assessing nutrition related knowledge, Attitudes and Practices. FAO. Rome. 180p.

- शॉ गीता पुष्प, शॉ जॉयस, शॉ शीला, रॉबिन शॉ, त्यागी श्वेता, 2013 प्रसार शिक्षा एवं संचार व्यवस्था, अग्रवाल पब्लिशिंग, आगरा.

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पोषण शिक्षा को परिभाषित कीजिए। समुदाय में पोषण शिक्षा प्रदान करने के महत्व तथा उद्देश्यों की चर्चा कीजिए।
2. समुदाय में पोषण शिक्षा प्रदान करने के लिए पोषण शिक्षा कार्यक्रमों के घटकों की व्याख्या कीजिए।
3. पोषण शिक्षा हेतु लक्ष्य समूह का वर्गीकरण किस प्रकार किया जाता है?
4. समुदाय में पोषण शिक्षा प्रदान करने की विभिन्न विधियाँ कौनसी हैं-? विस्तृत उल्लेख कीजिए।

इकाई 11: सार्वजनिक वितरण प्रणाली

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली

11.4 भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की आवश्यकता

11.5 भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का महत्व

11.6 समुदाय के पोषण स्तर संवर्धन में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की भूमिका

11.7 सारांश

11.8 पारिभाषिक शब्दावली

11.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

11.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

11.11 निबंधात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

भोजन मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता है। मनुष्य की भोजन आवश्यकता गर्भाधान से आरम्भ होकर जीवन पर्यन्त बनी रहती है। भोजन, पोषण एवं स्वास्थ्य के मध्य एक घनिष्ठ अंतर्सम्बंध है। जीवित प्राणियों की वृद्धि, विकास, उत्पादकता एवं दैनिक कार्यों हेतु ऊर्जा आपूर्ति उनके द्वारा ग्रहण किये गये भोजन पर निर्भर करती है। अतः भोजन हमारे जीवन जीने का आधार है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013, देश की समस्त जनता विशेषकर निर्धन जन समूह को सतत एवं दीर्घ कालीन रूप में विश्वसनीय, पौष्टिक एवं संपूर्ण आहार प्राप्ति हेतु सशक्त बनाता है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम “सार्वजनिक वितरण प्रणाली” को संवैधानिक एवं आधारभूत ढांचा प्रदान करता है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली भारत में खाद्य सुरक्षा तंत्र का एक अभिन्न भाग है। यह भारत के खाद्य एवं कृषि मंत्रालय प्रशासित, एक प्रमुख सब्सडीकृत खाद्य तथा आय अंतरण कार्यक्रम है। आर्थिक रूप से निर्बल आय वर्ग की खाद्य एवं पोषक आवश्यकताओं हेतु “सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान/Fair Price Shops” के नेटवर्क के माध्यम से पूर्ण करने के दृष्टिगत इसकी स्थापना की गई। भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली स्वयं में अनूठी और विश्व की सबसे बृहद वितरण प्रणाली है। प्रस्तुत इकाई में हम भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली, इसके महत्व, आवश्यकता एवं सामुदायिक पोषण कार्यक्रमों में इसके योगदान की चर्चा करेंगे।

11.2 उद्देश्य

सार्वजनिक वितरण प्रणाली भारत में खाद्य सुरक्षा अवधारणा का मूर्त रूप है। सामुदायिक पोषण स्तर सर्वधन के सन्दर्भ में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का विशेष महत्व है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात शिक्षार्थी;

- भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली की कार्य पद्धति को समझ सकेंगे;
- सामुदायिक पोषण एवं सामाजिक एवं आर्थिक रूप से निर्बल जनसमूहों के परिप्रेक्ष्य में भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली की आवश्यकता से अवगत होंगे;

- भारत में कुपोषण एवं भुखमरी नियंत्रण के सन्दर्भ में भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली के महत्व के विषय में सूचना प्राप्त कर सकेंगे; तथा
- भारत जैसे विकासशील देश में समुदाय के पोषण स्तर संवर्धन में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की भूमिका के विषय में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे।

11.3 भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली

1960 के दशक में भारत में खाद्यान्नों की कमी को दूर करने, विशेषकर निम्न आय वर्ग के व्यक्तियों को रियायती मूल्य पर खाद्यान्न एवं अखाद्य पदार्थ (कैरोसीन इत्यादि) उपलब्ध कराने की आवश्यकता को केन्द्र बिन्दु मानकर सार्वजनिक वितरण प्रणाली का आरम्भ किया गया। इस कार्यक्रम के माध्यम से आवश्यक खाद्यान्न जैसे चावल, गेहूँ, चीनी, खाद्य तेल, कैरोसीन इत्यादि को सब्सिडीकृत मूल्यों में लक्षित जन समूहों को आवंटित किया जाता है। यह इस कार्यक्रम की सफलता ही मानी जाती है कि उपरोक्त के अतिरिक्त यह खाद्यान्न मूल्य स्थायीकरण, कालाबाजारी रोकने और जनता के मध्य खाद्य सुरक्षा निश्चित करने में अति महत्वपूर्ण सहायक सिद्ध हुआ है। 1980 के मध्य में सार्वजनिक वितरण प्रणाली को कुछ राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तारित किया गया तथा इस कार्यक्रम को कल्याणकारी कार्यक्रम का स्थान दिया गया। इस विस्तारण के कारण सन् 1985 तक जनजातीय समूहों में सब्सिडीकृत मूल्यों में खाद्यान्न वितरित करने के उद्देश्य को मुख्य आधार मानकर, लाभार्थियों की कुल संख्या लगभग पाँच करोड़ सत्तर लाख पहुंच गयी थी। वर्तमान में भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत लगभग 4.62 लाख सरकारी सस्ते गल्ले की दुकानें हैं तथा लाभान्वितों की संख्या 16 करोड़ पहुंच चुकी है। इस प्रकार भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली को विश्व की सबसे बड़ी वितरण प्रणाली होने का गौरव प्राप्त है।

भारत में अनेक आय उपार्जन सम्बंधी कल्याणकारी कार्यक्रमों को भी सार्वजनिक वितरण प्रणाली से जोड़ा गया है और लाभान्वित व्यक्ति अपनी आय के रूप में भी सब्सिडीकृत खाद्यान्न प्राप्त करते आ रहे हैं। उदाहरण के लिये ये कार्यक्रम हैं; मनरेगा (रोजगार गारंटी योजना)। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत विभिन्न खाद्यान्नों की हिस्सेदारी इस प्रकार है; चावल, गेहूँ, चीनी, खाद्य तेल और कैरोसीन इस योजना के अन्तर्गत वितरित की जाने वाली सर्वाधिक प्रचलित वस्तुएं हैं। चावल, गेहूँ, चीनी और कैरोसीन कुल वितरण का 86 प्रतिशत हैं। इसमें चीनी 35 प्रतिशत, गेहूँ 10 प्रतिशत, चावल 27 प्रतिशत और कैरोसीन 15 प्रतिशत सम्मिलित हैं।

इसके अतिरिक्त मोटे अनाज जैसे बाजरा, ज्वार तथा अन्य मोटे अनाज जो समाज में आर्थिक रूप से निर्बल व्यक्तियों या जन समूहों द्वारा उपभोग में लाये जा रहे हैं। ये खाद्यान्न सार्वजनिक वितरण प्रणाली में एक प्रतिशत से कम हिस्सेदारी निभा रहे हैं। दालें जो प्रोटीन का उत्तम शाकाहारी स्रोत हैं, विशेषकर निर्धन वर्ग के लिये, का सार्वजनिक वितरण प्रणाली में प्रतिशत 0.2 प्रतिशत से भी कम है।

लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली

वर्ष 1970 तक सार्वजनिक वितरण प्रणाली सब्सिडीकृत मूल्यों पर खाद्यान्न वितरित करने वाली सार्वभौमिक योजना के रूप में विकसित हो चुकी थी। वर्ष 1990 तक इस योजना के स्वरूप में सुधार कर इसे पर्वतीय राज्य के लोगों एवं दूरस्थ एवं भौगोलिक रूप से विषम क्षेत्रों में निवास करने वाले निर्धन व्यक्तियों को लक्ष्य में रखकर संचालित किया जाने लगा। इसी अनुक्रम में सरकार द्वारा वर्ष 1997 में इस योजना को संशोधित कर “लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली/Targeted Public Distribution System” का नाम दिया गया जिसे संक्षिप्त में टी0पी0डी0एस0 भी कहा जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य सब्सिडीकृत दामों में राशन एवं ईंधन तथा गरीब जन समूहों को राशन की सस्ती सरकारी दुकानों के नेटवर्क के माध्यम से आवश्यक खाद्यान्न उपलब्ध कराना है। इस योजना में आवंटित खाद्यान्न जैसे चावल एवं गेहूँ किसानों से क्रय किये जाते हैं और राज्यों में बांटकर, राशन की सस्ती सरकारी दुकानों के माध्यम से जरूरतमंदों को उपलब्ध कराये जाते हैं। इस प्रकार यह केन्द्र और राज्य सरकारों का संयुक्त उत्तरदायित्व है कि वो सही अर्थों में निर्धनों को चिह्नित कर किसानों से उचित मूल्य में खाद्यान्न क्रय करके सही व्यक्ति/परिवारों तक पहुंचाये। भारतीय संसद द्वारा 2013 में पारित राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम एक विशिष्ट सीमा तक टी0पी0डी0एस0 योजना पर निर्भर करता है जिसके अन्तर्गत सरकार निर्धन व्यक्तियों को खाद्य प्रदान करने के लिये कटिबद्ध है।

लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत देश भर में निम्न योजनाओं का सफलता पूर्वक क्रियान्वयन किया जा रहा है:

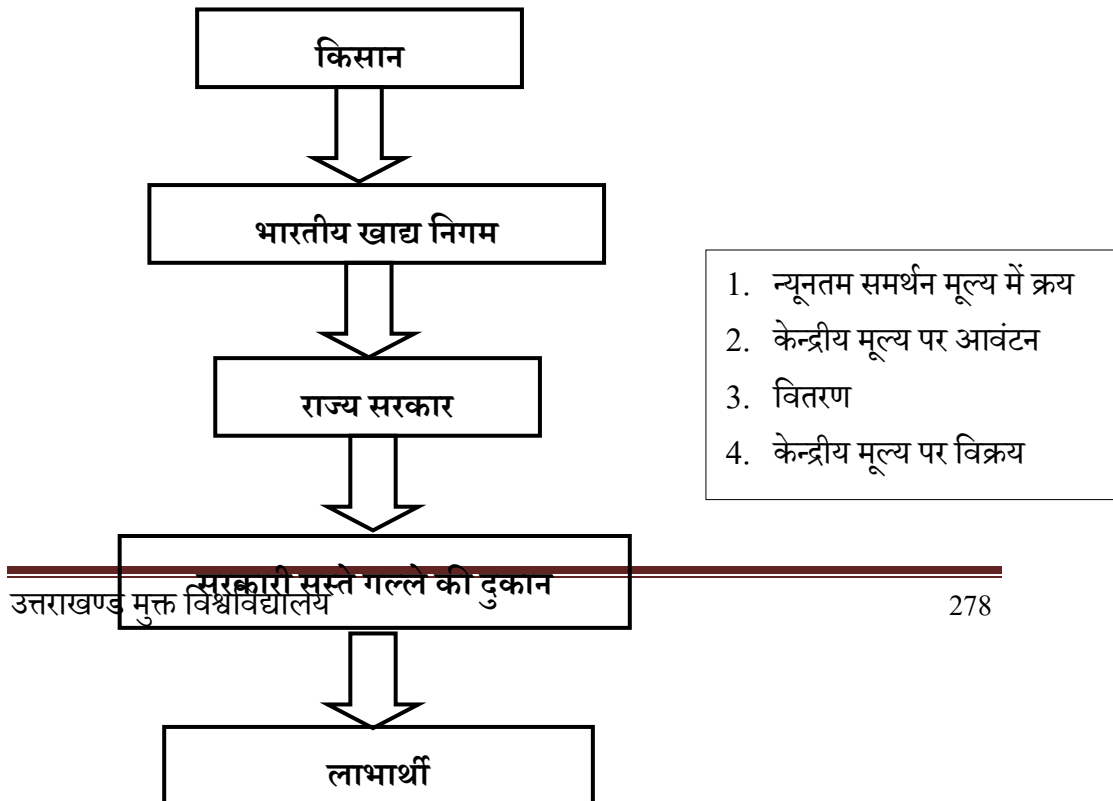
1. मुख्यमंत्री अन्नपूर्णा योजना।
2. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013 का क्रियान्वयन।
3. अनुसूचित जाति एवं जनजाति के परिवारों को योजनान्तर्गत प्राथमिकता प्रदान करना।
4. लाभार्थी परिवारों के आंकड़ों का डिजिटलीकरण।
5. शक्कर का वितरण।
6. आयोडीन युक्त नमक का वितरण।
7. नीले कैरोसीन का वितरण।

8. अनुसूचित जाति एवं जनजाति छात्रावासों को रियायती दर पर खाद्यान्न।
9. राज्य स्तर से दुकानवार खाद्यान्न, शक्कर एवं कैरोसीन का आवंटन।
10. राज्य खाद्य आयोग का गठन।
11. भण्डारण क्षमता का विस्तार।
12. भण्डारण में कृषकों को दी जा रही सुविधाएं।
13. संयुक्त भागीदारी योजना।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली की कार्य प्रणाली

विभिन्न राज्यों में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली का स्वरूप भिन्न-भिन्न हो सकता है। राज्य सरकारों द्वारा इसका अनुपालन किये जाने में विविधता देखी जा सकती है। भारत में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा तथा सामान्य रूप में टी0पी0डी0एस0 कार्य प्रणाली को निम्नवत समझा जा सकता है:

खाद्य आपूर्ति कड़ी (किसान से लाभार्थी तक)



लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत आने वाले परिवारों की पहचान

भारत सरकार की लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली निर्धन परिवारों को प्रतिमाह खाद्यान्न उपलब्ध कराने हेतु समर्पित है। अतः इस हेतु आवश्यक है कि वास्तविक लाभार्थियों की पहचान की जाए। इसी अनुक्रम में वर्गीकृत लाभार्थियों को निम्नवत चिह्नित किया गया है:

● ए०पी०एल० तथा बी०पी०एल०

1. जो परिवार गरीबी रेखा से नीचे जीवन व्यापन कर रहे हो उन्हें Below Poverty Line या बी०पी०एल० की श्रेणी में रखा गया है।
2. जो परिवार गरीबी रेखा से ऊपर जीवन व्यापन कर रहे हो, उन्हें Above Poverty Line या ए०पी०एल० की श्रेणी में रखा गया है।

गरीबी रेखा से नीचे आने वाले परिवारों को “लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली” द्वारा आच्छादित किया गया है। नीति आयोग द्वारा राज्यवार लाभार्थी परिवारों का आकलन किया गया है। परिवारों को गरीबी रेखा के ऊपर या नीचे सम्मिलित करने सम्बन्धी “ग्रामीण विकास मंत्रालय” के मानदंडों का अनुपालन कर लाभार्थियों की पहचान करना, राज्य सरकार का उत्तरदायित्व है। ऐसे परिवारों का बी०पी०एल० राशन कार्ड बनवाया जाता है। गरीबी रेखा से ऊपर रह रहे परिवारों को ए०पी०एल० राशन कार्ड प्रदान किये जाते हैं।

● अन्त्योदय अन्न योजना

गरीबी रेखा से नीचे रह रहे परिवारों के मध्य भी निर्धनतम परिवारों को लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से इस योजना को वर्ष 2000 में आरम्भ किया गया। इस योजना के अन्तर्गत आने वाले लाभार्थियों को “अन्त्योदय अन्न योजना” कार्ड उपलब्ध कराया जाता है। अन्त्योदय योजना के अन्तर्गत आने वाले संभावित परिवार निम्न हैं:

1. भूमिहीन खेतीहर मजदूर।
2. गरीब किसान।

3. ग्रामीण शिल्पकार, कारीगर जैसे कुम्हार, चमड़े का कार्य करने वाले परम्परागत कारीगर।
4. मलिन बस्ती में निवास करने वाले व्यक्ति।
5. रिक्शा चालक, मोची इत्यादि।
6. वह व्यक्ति जिनके परिवार में कोई न हो अथवा जिन्हें परिवार ने त्याग दिया हो।
7. ऐसे निर्धन परिवार जिनके मुखिया की मृत्यु हो चुकी हो तथा किसी महिला (विधवा) के द्वारा परिवार को चलाया जा रहा हो।
8. विकलांग व्यक्ति, 60 वर्ष से ऊपर के व्यक्ति।

टी0पी0डी0एस0 के अन्तर्गत मिलने वाले लाभ

1. सब्सिडीकृत खाद्यान्न (गेहूँ और चावल)।
2. राज्य सरकारों द्वारा खाद्य एवं अखाद्य पदार्थ जैसे चीनी, कैरोसीन एवं फॉर्टीफाइड (पोषक तत्व संवर्धित) आटा इत्यादि उपलब्ध कराया जा सकता है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली में वर्ष 1930 से अब तक कई परिवर्तनों एवं विकास गतिविधियों को देखा गया है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली की अब तक की यात्रा को निम्न रूप में देखा जा सकता है:

तालिका 11.1: सार्वजनिक वितरण प्रणाली (1930 से अब तक समय यात्रा)

	सार्वजनिक वितरण प्रणाली	वर्ष	विवरण
1.	सार्वजनिक वितरण प्रणाली	1940	सामान्य खाद्य सम्बंधी अधिकार दिलाने वाली संस्था के रूप में उद्भव हुआ।
2.	लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली	1997	सार्वजनिक वितरण प्रणाली को निर्धन परिवारों को लक्षित कर परिवर्तित किया गया।
3.	अन्त्योदय अन्न योजना	2000	निर्धनतम निर्धनों को समर्पित योजना।
4.	सार्वजनिक वितरण प्रणाली नियन्त्रण आदेश	2001	लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अमल में लाने हेतु सरकार द्वारा आदेश जारी।
5.	पीपुल्स यूनिन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम भारत संघ	2001	भोजन का अधिकार मूल अधिकार घोषित करने हेतु सुप्रीम कोर्ट में जारी केस।
6.	राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम	2013	निर्धन व्यक्ति को भोजन प्राप्ति का वैधानिक

		अधिकार प्राप्त करने संबंधित अधिनियम पारिता
--	--	--

तालिका 11.2 में लाभार्थियों को चिह्नित करने हेतु विशिष्ट प्रक्रिया प्रदर्शित की गयी है।

तालिका 11.2: लाभार्थी परिवारों को चिह्नित करने हेतु प्रक्रिया

प्राधिकरण	भूमिका	विवरण
1. राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन	उपभोक्ता द्वारा व्यय किये गये मदों का प्रत्येक पाँच वर्ष में अनुमान लगाना।	उपभोक्ता द्वारा एक परिवार पर कुछ मूलभूत वस्तुओं एवं सेवाओं पर किया गया व्यय का अनुमान लगाया जाता है। उपभोक्ता द्वारा वस्तुओं एवं सेवाओं पर किया गया कुल व्यय गरीबी रेखा को निर्धारित करता है।
2. नीति आयोग	राज्यवार निर्धनता स्थिति को व्यक्त करता है, जिससे गरीबी रेखा से नीचे रह रहे व्यक्तियों की संख्या का स्पष्ट अनुमान लगाया जा सकता है।	नीति आयोग भी राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन द्वारा सृजित आँकड़ों का उपयोग करता है।
3. केन्द्र सरकार	राज्यवार निर्धनता आँकड़ों के अनुसार खाद्यान्नों को राज्यों को आवंटित किया जाता है।	नीति आयोग द्वारा 1993-94 के निर्धनता अनुमान आँकड़ों का उपयोग कर गरीबी रेखा से नीचे रह रहे परिवारों की गणना की जा चुकी है। तथापि इस संख्या को (2004-2005) तथा (2011-2012) निर्धनता आँकड़ों के आधार पर अद्यतन किया जाना शेष है।
4. ग्रामीण विकास	बी0पी0एल0 जनगणना एवं	बी0पी0एल0 जनगणना

मंत्रालय	बी0पी0एल0 में समावेश एवं अपर्वजन सम्बंधी मानदण्ड तय करना।	2000 के आधार पर बी0पी0एल0 वर्गीकरण के मानदण्ड एवं कुछ मानकों जैसे-भूमि स्वामित्व, वस्त्र, भोजन, सुरक्षा एवं आजीविका साधन को सम्मिलित करना।
5. राज्य सरकारें	वास्तविक लाभार्थियों को चिह्नित करना	उपरोक्त मानदण्डों के आधार पर।

यहाँ पर यह ध्यान देने योग्य बात है कि सरकार केवल निर्धन एवं निर्धनतम् परिवारों को ही चिह्नित करती है, ना कि गरीबी रेखा से ऊपर जीवन यापन कर रहे व्यक्तियों को। अतः व्यक्ति अपने वर्गीकरण के आधार पर ए0पी0एल0 अथवा बी0पी0एल0 राशन कार्ड बना सकता है। केन्द्र सरकार द्वारा नियमतः ए0पी0एल0 एवं बी0पी0एल परिवारों हेतु खाद्यान्न आवंटन किया जाता है। हालांकि आवंटन खाद्यान्नों की उपलब्धता एवं राज्य सरकारों द्वारा केन्द्रीय सरकार से क्रय किये गये राशन पर निर्भर करती है।

● **लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली एवं खाद्य प्रबन्धन**

चिह्नित किये गये लाभार्थियों को खाद्यान्न उपलब्ध कराना केन्द्र और राज्य सरकारों का साझा उत्तरदायित्व है। केन्द्र किसानों द्वारा न्यूनतम समर्थन मूल्य में खाद्यान्न क्रय करता है और उसे केन्द्रीय निर्गमन मूल्य पर राज्य सरकारों को उक्त योजना के अंतर्गत आवंटित करने हेतु विक्रय करता है। खाद्यान्नों के राज्यों तक परिवहन का कार्य भी केन्द्र सरकार का ही है। प्रत्येक राज्य में स्थित गोदामों में सुरक्षित खाद्यान्नों को पहुंचाने का उत्तरदायित्व केन्द्र सरकार का तथा गोदामों से खाद्यान्न सुरक्षित एवं उचित स्थिति में सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान तक पहुंचाने का कार्य भार राज्य सरकार का है। इस प्रकार प्राप्त खाद्यान्नों को कई राज्य सरकार पुनः एक बार और सब्सिडीकृत करके और भी कम दामों में लाभार्थियों तक पहुंचाया जाता है। राज्य सरकार इस प्रकार के परिवर्तन करने के लिये स्वतंत्र होती है।

भारतीय खाद्य निगम की भूमिका

केन्द्र में भारतीय खाद्य निगम एक नोडल संस्था है, जो खाद्यान्नों को सुरक्षित गोदामों तक (राज्य स्तर पर) पहुँचाने के लिये उत्तरदायी है। इस संदर्भ में भारतीय खाद्य निगम की निम्न भूमिका है:

1. किसानों से न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खाद्यान्न क्रय करना।
2. खाद्य सुरक्षा आश्वस्त करने हेतु वर्तमान एवं भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर खाद्यान्न संग्रहण करना।
3. केन्द्र द्वारा क्रय खाद्यान्नों को राज्य सरकारों तक आवंटित करना।
4. राज्य डिपो तक खाद्यान्न वितरण एवं परिवहन कार्य करना।
5. राज्य सरकारों को खाद्यान्न बिक्री करना।

आइये उपरोक्त सभी चरणों को बृहद रूप में समझने का प्रयास करें।

किसानों से खाद्यान्न क्रय करना

इस योजना के अन्तर्गत लाभार्थियों को प्राप्त कराए जाने वाला खाद्यान्न किसानों से न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीदा जाता है। न्यूनतम समर्थन मूल्य वह मूल्य जिस पर भारतीय खाद्य निगम से प्रत्यक्ष रूप से क्रय करती है। सामान्यतया यह न्यूनतम समर्थन मूल्य, बाजार के मूल्य से अधिक होता है। यह कृषकों को मूल्य समर्थन देने एवं उत्पादन एवं देश में कृषि उत्पादन को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से किया जाता है। वर्तमान में सरकार द्वारा क्रय दो प्रकार से किया जा रहा है:

- केन्द्रीकृत क्रय (Centralized Procurement)
- विकेन्द्रीकृत क्रय (Decentralized Procurement)

केन्द्रीकृत क्रय भारतीय खाद्य निगम द्वारा किया जाता है जहां पर भारतीय खाद्य निगम कृषकों से प्रत्यक्ष रूप से खाद्यान्न क्रय करता है। जबकि विकेन्द्रीकृत क्रय का तात्पर्य उस योजना से है जहाँ पर भारतीय खाद्य निगम की ओर से केन्द्रीय योजना के अन्तर्गत दस राज्य एवं संघीय/केन्द्र शासित प्रदेश खाद्यान्न (न्यूनतम समर्थन मूल्य) पर क्रय करते हैं। स्थानीय रूप से उत्पादित खाद्यान्न की बिक्री को बढ़ावा देना एवं परिवहन के दौरान एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र तक अन्न पहुँचाने के दौरान होने वाले क्षय को न्यूनतम करना इस योजना का उद्देश्य है। आवंटन के सापेक्ष यदि राज्य खाद्यान्न बिक्री कर पाने में असमर्थ है तो इस स्थिति में केन्द्रीय स्रोत से भारतीय खाद्य निगम (Food Corporation India) के माध्यम से अतिरिक्त खाद्यान्न क्रय किया जाता है।

केन्द्र द्वारा खाद्यान्न क्रय और संग्रहण निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये किया जाता है:

- खाद्य सुरक्षा के अन्तर्गत आने वाली न्यूनतम खाद्यान्न मात्रा को निहित करने सम्बंधी।
- लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत निर्गत खाद्यान्न की आपूर्ति के संबध में।
- आपात कालीन स्थितियों जैसे फसल खराब होने, प्राकृतिक आपदा के समय खाद्यान्नों की आपूर्ति करने सम्बंधी।
- ओपन मारकेट सेल स्कीम/खुला बाजार बिक्री योजना के माध्यम से खाद्यान्न की बिक्री करने सम्बंधी।

खुला बाजार बिक्री योजना सरकार द्वारा 1993 में आरम्भ की गयी योजना है जिसके माध्यम से बाजार में खाद्य आपूर्ति को सहूलियत दिलाने और मूल्यों को स्थायीकृत करने में सहायता मिल सकती है।

• खाद्यान्न संग्रहण

टी0पी0डी0एस0 के अन्तर्गत लाभार्थियों को त्वरित खाद्यान्न आपूर्ति करने के अतिरिक्त आपदा परिस्थितियों में न्यूनतम खाद्य मात्रा को बनाये रखने हेतु भी खाद्यान्न संग्रहण आवश्यक है। टी0पी0डी0एस0 एवं अन्य कार्यक्रमों और योजनाओं हेतु खाद्यान्न “सैन्ट्रल पूल स्टॉक” में संग्रहित किया जाता है। सैन्ट्रल पूल स्टॉक के निर्माण में एवं खाद्यान्न संग्रहण में भारतीय खाद्य निगम एक सरकारी संस्था के रूप में प्रमुख एवं विश्वसनीय संस्था है।

भारतीय खाद्य निगम की संग्रहण निर्देशों के अनुसार खाद्यान्नों का बंद एवं ढके स्थान/गोदामों में संग्रहण करना आवश्यक है। खाद्यान्नों का समुचित भंडारण एक गंभीर समस्या है। भारतीय खाद्य निगम में स्वयं भंडारण क्षमता एवं संग्रहण स्थान पर्याप्त न होने के कारण निगम अन्य स्रोत से भंडारण स्थान को किराये पर लेता है। केन्द्रीय एवं राज्य स्तरीय वेयर हाऊस कॉर्पोरेशन, राज्य सरकार एवं निजी संस्थाएं इसके स्रोत हो सकते हैं।

इस उद्देश्य हेतु विशेष रूप से पॉलीथीन भी तैयार की गई है। भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक (Comptroller and Auditor General of India; CAG) निरीक्षण में यह पाया गया है कि भारतीय खाद्य निगम एवं राज्य सरकारों द्वारा खाद्यान्न संग्रहण के संबध में अपनी क्षमताओं का समुचित उपयोग नहीं किया जा रहा है। अतः गोदामों में भंडारण के दौरान खाद्यान्नों की गुणवत्ता, पौष्टिक मान, स्वच्छता एवं उपयोग स्थिति बने रहे, यह तथ्य विचारणीय है। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये एक विशेष प्रकार की पॉलीथीन भी तैयार की गयी है जो खाद्यान्न संरक्षण के दृष्टिकोण से अति महत्वपूर्ण है।

● राज्यों को खाद्यान्न आवंटन

विभिन्न सरकारी योजनाओं और कार्यक्रमों जैसे बी0पी0एल0 राशन, अन्त्योदय अन्न योजना एवं ए0पी0एल0 राशन, मनरेगा, फूड फॉर वर्क जैसे कई कार्यक्रम जहाँ पर खाद्यान्न वितरण एक प्रमुख घटक है, वहाँ राज्य सरकारों द्वारा खाद्यान्न केन्द्र सरकार के “सैन्ट्रल पूल” से प्राप्त किया जाता है। लाभार्थियों को यह आवंटन चिह्नित बी0पी0एल0 एवं ए0पी0एल0 परिवारों के आधार पर किया जाता है। वही दूसरी ओर गरीबी रेखा के ऊपर के व्यक्तियों अर्थात् ए0पी0एल0 परिवारों को राशन वितरण/आवंटन निम्न बिन्दुओं के आधार पर किया जाता है:

1. केन्द्रीय पूल में खाद्यान्नों की उपलब्धता।
2. उस राज्य विशेष के द्वारा पूर्व में केन्द्रीय पूल से कितना खाद्यान्न इस प्रकार आवंटित किया गया।

केन्द्रीय पूल में खाद्यान्न की उपलब्धता के आधार पर यह केन्द्र सरकार का अधिकार क्षेत्र है कि वह किस प्रकार आवश्यकता के आधार को प्रावधान बनाकर खाद्यान्न वितरण करे। यह आवश्यकता आकस्मिकता, आपदा, प्राकृतिक आपदा, सूखा, बाढ़ एवं त्यौहार, सामाजिक उत्सवों द्वारा निर्धारित होती है।

● लक्षित समूह को खाद्यान्न वितरण

जरूरतमंदों तक खाद्यान्न पहुँचाना राज्य एवं केन्द्र सरकार की साझा जिम्मेदारी है। खाद्यान्न क्रय किये जाने से लाभार्थियों तक पहुँचाना, केन्द्रीय पूल से राज्य के गोदामों तक सुरक्षित खाद्यान्न पहुँचाना भी भारतीय खाद्य निगम का ही उत्तरदायित्व है।

इस प्रकार प्राप्त खाद्यान्नो को राज्य, जिलेवार तथा पुनः सरकारी सस्ते गल्ले की दुकानों में प्रत्येक माह के प्रथम सप्ताह तक पहुँचाया जाता है। गोदामों से सरकारी सस्ते गल्ले की दुकानों तक खाद्यान्न पहुँचाना राज्य सरकार का कर्तव्य है। वर्तमान में देश भर में लगभग 5.13 लाख सरकारी सस्ते गल्ले की दुकानें हैं जो टी0पी0डी0एस0 कार्यक्रम के संचालन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सरकारी सस्ते गल्ले की दुकानों में राशन तथा अखाद्य लक्षित समूह को सब्सिडीकृत मूल्य पर प्राप्त होते हैं।

● सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान (लाइसेंस एवं फेयर प्राइस शॉप)

सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान, टी0पी0डी0एस0 योजना की अंतिम कड़ी है। राशन की दुकान का स्वामित्व सरकारी समितियों के माध्यम से निजी या सरकारी भी हो सकता है। सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान के स्वामी को पी0डी0एस0 नियन्त्रण, 2001 आदेश के

अनुसार लाइसेंसधारी होना आवश्यक है। लाइसेंस प्राप्त होने की स्थिति में ही वे आवश्यक/मूलभूत खाद्य एवं अखाद्य सामग्री विक्रय कर सकते हैं। उपरोक्त के अतिरिक्त सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान के स्वामी के निम्न उत्तरदायित्व भी होते हैं:

1. खाद्य एवं अखाद्य सामग्री को राशन कार्ड (ए0पी0एल0 या बी0पी0एल0) के आधार पर अधिकृत मांग एवं सब्सिडीकृत दामों पर लाभार्थियों को उपलब्ध कराना।
2. अभिलेखों के रखरखाव और संबधित सूचना का प्रदर्शन जैसे बी0पी0एल0 एवं ए0पी0एल0 कार्ड धारकों की सूची तैयार करना, आवश्यक खाद्य एवं अखाद्य सामग्रियों का प्रदर्शन, आरम्भिक एवं अन्तिम भंडार सामग्री, लेखा रखरखाव (Account Maintenance), अवशेष सामग्री एवं ग्राम पंचायत के अवलोकन एवं भविष्य के अभिलेख हेतु सुरक्षित रखना।

● **खाद्य सामग्री मूल्य निर्धारण, न्यूनतम समर्थन मूल्य, केन्द्रीय निर्गम मूल्य एवं खाद्य सब्सिडी**

यद्यपि किसानों से खाद्यान्न सरकार द्वारा न्यूनतम समर्थन मूल्य (Minimum Support Price) पर खरीदा जाता है, परन्तु टी0पी0डी0एस0 योजना के अन्तर्गत लाभार्थियों को आवंटित राशन (खाद्य एवं अखाद्य सामग्री) का मूल्य बहुत कम रखा जाता है, ताकि निर्धनतम व्यक्ति को भी इसका लाभ मिल सके। केन्द्र राज्य सरकारों को जिस मूल्य पर खाद्यान्न विक्रय करती है उसे “केन्द्रीय निर्गम मूल्य” (Central issue price) कहा जाता है। दूसरे शब्दों में केन्द्रीय निर्गम मूल्य खाद्य सब्सिडी के न्यूनतम समर्थन मूल्य एवं केन्द्रीय निर्गमन मूल्य के मध्य का अन्तर है। आइये अब इन सभी को अलग-अलग रूप में समझें।

न्यूनतम समर्थन मूल्य

किसानों द्वारा उत्पादित फसलों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से सरकार द्वारा क्रय किये गये खाद्यान्न का न्यूनतम समर्थन मूल्य बाजार मूल्य से अधिक रखा जाता है। सरकार “कृषि लागत एवं मूल्य आयोग” (Commission For Agriculture Cost & Price) के अनुमोदन पर विभिन्न कृषि उत्पादों का मूल्य (न्यूनतम समर्थन मूल्य) तय करती है। यह कृषि लागत एवं मूल्य आयोग के अनुमोदन, उत्पादन लागत एवं पारिश्रमिक मूल्य जैसे बिन्दुओं पर आधारित होता है। इस प्रकार अनुमोदित मूल्य को अन्तिम रूप में आर्थिक मामलों के कैबिनेट समिति द्वारा निर्धारित किया जाता है।

केन्द्रीय निर्गम मूल्य

गेहूँ एवं चावल जो भारतीय खान-पान का एक प्रमुख भाग है, एक समान केन्द्रीय निर्गम मूल्य पर राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों को विक्रय किये जाते हैं। आँकड़े बताते हैं कि विगत कुछ वर्षों में अन्त्योदय अन्न योजना, बी0पी0एल0 कार्ड धारकों हेतु केन्द्रीय निर्गम मूल्य स्थिर रखा गया है, जबकि किसानों से जिस मूल्य पर अनाज खरीदा जाता है (न्यूनतम समर्थन मूल्य), इस पर लगातार वृद्धि होती रही है।

खाद्य सब्सिडी

न्यूनतम समर्थन मूल्य, जिसमें परिवहन एवं संचालन मूल्य सम्मिलित है तथा केन्द्रीय निर्गम मूल्य के मध्य का अन्तर ही खाद्य सब्सिडी है। सरकार द्वारा प्रदत्त खाद्य सब्सिडी का उद्देश्य लाभार्थियों एवं जनता को लाभ पहुंचाना एवं किसानों को कृषि कार्यों हेतु प्रोत्साहित करना है। चूँकि भारतीय खाद्य निगम एवं राज्य सरकारें क्रमशः किसानों से अनाज क्रय करके, केन्द्रीय निर्गम मूल्य पर विक्रय करने हेतु उत्तरदायी है, अतः सरकार द्वारा निगम एवं राज्य सरकारों को खाद्य सब्सिडी के रूप में प्रतिपूर्ति की जाती है। एक समय सीमा से अधिक हो जाने पर यदि खाद्यान्नों का रख-रखाव किया जाना है, तो इस संबंध में भी “बफर सब्सिडी” खाद्य सब्सिडी के साथ सम्मिलित की जाती है। तय समय से अधिक समय सीमा बीत जाने पर खाद्य एवं अखाद्य सामग्री के रख-रखाव पर धन व्यय होता है, जिसका वहन भारतीय खाद्य निगम द्वारा किया जाता है, अतः इस व्यय का भुगतान एवं प्रतिपूर्ति हेतु सरकार द्वारा बफर सब्सिडी का प्रावधान भी खाद्य सब्सिडी में सम्मिलित कर दिया जाता है।

11.4 भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की आवश्यकता

सार्वजनिक वितरण प्रणाली, भारतीय खाद्य सुरक्षा तंत्र का सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक है। भारत की बढ़ती अर्थव्यवस्था एवं प्रभावशाली आर्थिक विकास का सकारात्मक प्रभाव कुपोषण एवं भुखमरी पर नहीं हो पाया है। विख्यात अर्थशास्त्री एवं पूर्व प्रधानमंत्री डॉ० मनमोहन सिंह ने कुपोषण को राष्ट्रीय शर्म बताया था। विश्व की अग्रणी संस्थाओं के आकड़ों के अनुसार कुपोषण की घटनाओं में भारत सोमालिया, अफ्रीका, बांग्लादेश से आगे है, जो कि गम्भीर चिन्ता का विषय है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही निर्धन एवं संवेदनशील जनसंख्या हेतु खाद्य सुरक्षा (अब पोषण सुरक्षा) आश्वासन कर पाना भारत के नीति निर्धारकों के लिये एक बड़ी चुनौती रही है। गहन विश्लेषणों से प्रतीत होता है कि भारत में समस्या खाद्य उत्पादन की नहीं है, वरन् निरन्तर बढ़ती बेरोजगार जनसंख्या, अज्ञानता, अनुचित खाद्य प्रबन्धन, भष्टाचार प्रेरित असमान वितरण मूल समस्याएं हैं। भारत कृषि उत्पादन में आत्म निर्भर है। वर्ष 1951 के बाद से ही भारत की

छवि अपनी जनता के लिये अन्नोत्पादन में सक्षम राष्ट्र के रूप में उभरी है। आंकड़ों के अनुसार भारतीय खाद्य निगम के भंडार में आवश्यकतानुसार उपस्थित “बफर स्टॉक” इस बात का द्योतक है कि भारत सामान्य एवं आपातकालीन परिस्थितियों में अपनी जनता की खाद्य आवश्यकता को पूर्ण कर सकने में समर्थ है।

भष्टाचार, कालाबाजारी, जमाखोरी, गरीबी, अनुचित भंडारण व्यवस्था इत्यादि के चलते विगत कुछ वर्षों में खाद्य सुरक्षा भारत में ही नहीं अपितु वैश्विक स्तर पर भी एक महत्वपूर्ण एवं विचारणीय विषय बन चुका है। ऐसे में खाद्य सुरक्षा क्रियान्वयन के परिप्रेक्ष्य में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की आवश्यकता और अधिक बढ़ जाती है। कतिपय कमियों के कारण भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली कई बार आलोचना का विषय रही है, परन्तु तकनीकी विकास जैसे डिजिटलीकरण, आधार कार्ड अनिवार्यता, डायरेक्ट केश ट्रांसफर, बायोमैट्रिक इत्यादि के साथ इन कमियों पर एक सीमा तक नियन्त्रण पाया जा सका है। इस प्रणाली को और अधिक सशक्त बनाकर इसके अन्तर्गत अधिकाधिक पात्र लाभार्थियों को जोड़ने हेतु सरकार कटिबद्ध है।

11.5 भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का महत्व

सार्वजनिक वितरण प्रणाली भारत में खाद्य अर्थव्यवस्था, सस्ते एवं वहनीय मूल्यों पर निर्धनतम एवं जरूरतमन्द लोगों को आवश्यक खाद्य एवं अखाद्य सामग्री पहुँचाने का पर्याय है। सब्सिडीकृत दामों में आवश्यक खाद्य एवं अखाद्य सामग्री पहुँचाने का उद्देश्य महंगाई दर एवं खाद्य पदार्थों की बढ़ती कीमतों के प्रभाव से जरूरतमन्द लोगों को सुरक्षा प्रदान करना है। इन तथ्यों के अतिरिक्त भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली निम्नलिखित बिन्दुओं के दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है:

- आपदा, आकस्मिक परिस्थितियों में बफर स्टॉक के माध्यम से विषम परिस्थितियों में भी निरन्तर खाद्य आपूर्ति बनाये रखना।
- किसानों को दलालों एवं कालाबाजारी जैसी असामाजिक तत्वों एवं कुप्रथाओं से सुरक्षित कर उनकी उपज का बाजार भाव के अनुसार श्रेष्ठतम मूल्य प्रदान करना।
- जिन राज्यों में अधिशेष खाद्यान्न उत्पादन होता है सरकार वहाँ से खाद्यान्न न्यूनतम समर्थन मूल्य पर क्रय करके उन राज्यों को उपलब्ध कराती है जहाँ पर खाद्यान्न उत्पादन आवश्यकता से कम है। खाद्य संतुलन बनाये रखने के दृष्टिकोण से भी सार्वजनिक वितरण प्रणाली का विशेष महत्व है।

- खाद्यान्न को आय अंतरण/रोजगार परक कार्यक्रमों से जोड़ने में भी सार्वजनिक वितरण प्रणाली का विशेष योगदान है। खाद्यान्न आवंटन को आय अंतरण कार्यक्रम से जोड़ने का मुख्य लाभ यह है कि इनमें केवल वही व्यक्ति प्रतिभाग कर सकेंगे जो वास्तविक रूप से इसके पात्र हों। वहीं दूसरी ओर खाद्य कूपन तथा डायरेक्ट कैश ट्रांसफर (प्रत्यक्ष नगद स्थानांतरण) के द्वारा लाभार्थियों को पक्षपात, भ्रष्टाचार, कालाबाजारी जैसी स्थितियों से बचाया जा सकता है।
- मध्याह्न भोजन योजना, बालवाड़ी पोषण कार्यक्रम, विशिष्ट पोषण कार्यक्रम तथा किशोरियों, गर्भवती तथा धात्री महिलाओं हेतु सभी पोषण सम्बंधी कार्यक्रम जिनके अन्तर्गत भोजन की व्यवस्था की जानी है, का प्रबन्धन भी सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से संभव हो सका है।

11.6 समुदाय के पोषण स्तर संवर्धन में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की भूमिका

जैसा कि पूर्व में बताया गया है भोजन - पोषण - स्वास्थ्य के मध्य एक घनिष्ठ अन्तर्सम्बंध है। खाद्य पदार्थों में उपस्थित पोषक तत्व जैसे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन, खनिज लवण एवं जल भोजन के पौष्टिक मान हेतु उत्तरदायी हैं। चूँकि शरीर को पोषक तत्वों की प्राप्ति खाद्य पदार्थों के माध्यम से ही होती है, अतः भोजन एवं पोषण को अंतः परिवर्तनीय रूप में प्रयोग किया जाता है। इसी कारणवश आज केवल खाद्य सुरक्षा ही नहीं बल्कि पोषण सुरक्षा भी आवश्यक मानी जा रही है। यद्यपि भारत में भोजन प्राप्त करना प्रत्येक नागरिक का मूलभूत अधिकार है तथापि भारतीय जनसंख्या का एक बड़ा भाग दुर्भाग्यवश आज भी खाद्य एवं पोषण सुरक्षा प्राप्त करने से वंचित है। भारत की गणना विश्व में सर्वाधिक कुपोषण व्याप्त देशों में से एक के रूप में होती है। खाद्य सुरक्षा वंचित समूहों में ग्रामीण क्षेत्रों के अन्तर्गत भूमिहीन किसान, कारीगर, पारम्परिक सेवायें प्रदान करने वाले सेवक, भिखारी, शहरी क्षेत्रों के वह व्यक्ति जिनकी आय उनके परिवार का भरण पोषण कर पाने में असमर्थ है, सम्मिलित हैं। इन्हें सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लक्षित समूहों के अन्तर्गत रखा गया है। खाद्यान्न उत्पादन एवं आवंटन दोनों ही खाद्य सुरक्षा के मार्ग में आने वाले अवरोधक हैं। किसी भी राष्ट्र के सतत् विकास, मानव संसाधन निर्माण, संवर्धन एवं उत्पादकता का मूल आधार खाद्य सुरक्षा है। विशेषज्ञों के अनुसार भारतीय संदर्भ में असमान आवंटन अथवा वितरण एक विचारणीय समस्या है, ना कि खाद्यान्न उत्पादन। सार्वजनिक वितरण प्रणाली इस समस्या का निदान कर

पाने में एक सीमा तक सफल हुई है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली भारतीयों की खाद्य सुरक्षा एवं समुदायिक पोषण स्तर संवर्धन में मुख्य संसाधन के रूप में निरन्तर उल्लेखनीय कार्य कर रही है। आवश्यकतानुसार सामान्य एवं विशिष्ट परिस्थितियों में आवश्यक खाद्य एवं अखाद्य पदार्थ आवंटन, सब्सिडीकृत मूल्य, खाद्यान्न संतुलन, बफर स्टॉक, लक्षित समूह चिन्हिकरण, आय अंतरण योजनाएं इत्यादि सार्वजनिक वितरण प्रणाली के महत्वपूर्ण घटक हैं जिनके माध्यम से समुदाय में खाद्य सुरक्षा आश्वस्त हो सकी है।

अभ्यास प्रश्न 1

- निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
 - खाद्य एवं पोषण सुरक्षा
 - सार्वजनिक वितरण प्रणाली
 - लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली
- ए0पी0एल0 तथा बी0पी0एल0 परिवार से आप क्या समझते हैं?
- शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता परीक्षण के क्या मानक हैं?
- सब्सिडीकृत खाद्यान्न से आप क्या समझते हैं?
- किन्ही दो प्रमुख आय अन्तरण योजनाओं के नाम बताइये जिनको सार्वजनिक वितरण प्रणाली से सम्बन्धित किया गया है?
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली के सफल निष्पादन में भारतीय खाद्य निगम की भूमिका की चर्चा कीजिए।
- समुदाय के पोषण स्तर संवर्धन में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के योगदान पर प्रकाश डालिए।

11.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने सार्वजनिक वितरण प्रणाली की कार्य पद्धति, आवश्यकता, महत्व एवं समुदाय के पोषण स्तर संवर्धन में इसकी भूमिका को समझा। आपने जाना कि किस प्रकार सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा जहाँ एक ओर किसानों की उपज को सही मूल्य प्रदान कर उनके हितों का ध्यान रखा जा रहा है, वहीं दूसरी ओर इससे खाद्यान्न मूल्य स्थायीकरण, कालाबाजारी, जमाखोरी एवं बढ़ती कुपोषण, भुखमरी दर पर अंकुश लगा पाने जैसे उद्देश्यों की पूर्ति भी संभव हो सकी है। प्राकृतिक आपदा, बाढ़, सूखा, अकाल जैसी परिस्थितियों से

बचने हेतु पूर्वोपचार के रूप में बफर स्टॉक के माध्यम से आकस्मिकता के समय में भी खाद्य सुरक्षा को आश्वस्त किया जा सका है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली, भारतीय खाद्य सुरक्षा तंत्र का एक अभिन्न भाग है। यह भारत सरकार के अधीन उपभोक्ता, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय द्वारा स्थापित है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली का प्रबन्धन संयुक्त रूप से राज्य तथा केन्द्र सरकारों द्वारा किया जाता है। भारत में इसका आरम्भ वर्ष 1940 में युद्ध परिस्थितियों के दौरान एक पूर्वोपचार सुरक्षा मानक के रूप में किया गया। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से समाज के निर्धनतम, आर्थिक सामाजिक रूप से पिछड़े तथा वंचित समुदायों, निःशक्त जनों, अनुसूचित जाति-जनजाति समूहों इत्यादि को राशन की दुकानों के माध्यम से मानकानुसार खाद्यान्न वितरण किया जाता है। समुदाय की आवश्यकता को ध्यान में रखकर समय समय पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली के वाह्य स्वरूप में परिवर्तन किया गया; प्रारम्भिक सार्वजनिक वितरण प्रणाली, पुनरक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली तथा लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली, परन्तु इसकी मूल भावना सदैव ही खाद्य सुरक्षा रही है। सरकार के अथक प्रयासों के उपरान्त भी भारत में पर्याप्त संसाधनों का अभाव, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार जैसी कई समस्याएं अभी भी व्याप्त हैं जिनसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली भी अछूती नहीं है। संभवतः इन्हीं कारणों से सार्वजनिक वितरण प्रणाली कई बार आलोचना का केन्द्र रही है। कतिपय बिन्दुओं का विश्लेषण कर इसे और अधिक विस्तृत, प्रभावशाली एवं सशक्त बनाया जा सकता है। भारत सरकार इसे और अधिक बृहद एवं सशक्त बनाने की दिशा में निरन्तर प्रयासरत है।

11.8 पारिभाषिक शब्दावली

- **खाद्य सुरक्षा:** खाद्य सुरक्षा का अर्थ जन समूह को किसी भी समय खाद्य उपलब्धता, खाद्य प्राप्ति एवं खाद्यान्न क्रय कर सकने हेतु सशक्त बनाना है।
- **गरीबी रेखा:** गरीबी रेखा एक निश्चित एवं निर्धारित मानक आय को परिभाषित करती है। यदि किसी परिवार / व्यक्ति की आय इस निश्चित आय से कम है तो इसका अर्थ है कि वह परिवार गरीबी रेखा के नीचे प्रवास कर रहा है। विश्व में भिन्न-भिन्न देशों में गरीबी/निर्धनता रेखा निर्धारित करने हेतु भिन्न-भिन्न मानक हैं।
- **सब्सिडी:** यह सरकार द्वारा दिये जाने वाले आर्थिक लाभ का एक रूप है। खाद्यान्न सब्सिडी का तात्पर्य बाजार भाव से कम दाम पर जरूरतमन्दों को सस्ते खाद्यान्न तथा अखाद्य पदार्थ उपलब्ध कराना है ताकि समाज के निर्धनतम वर्ग तक भोजन पहुँच सके।

- **सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान:** सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत स्थापित वे केन्द्र जहाँ पर खाद्य एवं अखाद्य सामग्री सस्ते एवं सब्सिडीकृत दामों में लक्षित जनसमूहों तक पहुँचायी जाती है।
- **भारतीय खाद्य निगम:** भारत सरकार का उपक्रम जिसे खाद्य निगमन अधिनियम 1964 के अन्तर्गत पारित किया गया। इसका प्रमुख उद्देश्य किसानों के हितों हेतु प्रभावशाली मूल्य समर्थन तंत्र स्थापित करना तथा सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से सम्पूर्ण भारत में खाद्यान्न वितरण करना है।

11.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

इकाई का मूल भाग देखें।

11.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Functioning of Public Distribution System, *An Analytical Report* by Sakshi Balani, December, 2013, PRS Legislative Research.
2. <https://epds.nic.in>
3. dfpd.nic.in/public-distribution.htm (Department of Food & Public Distribution, Ministry of Consumer Affairs, Food and Public Distribution, Government of India).
4. <https://pdsportal.nic.in/>
3. Public Distribution System in India- Evolution, Efficacy and Need for Reforms, FAO Corporate Documentary Repository (Title: Indian Experience on Household Food and Nutrition Security..., Produced by: Regional Office for Asia and the Pacific.
4. सार्वजनिक वितरण प्रणाली एवं ग्रामीण निर्धनता, आभा मित्तल एवं यू0 सी0 गुप्ता, प्रगुन पब्लिकेशन ISBN- 9788183304900

11.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. खाद्य सुरक्षा अधिनियम क्या है? भारतीय परिप्रेक्ष्य में इसकी विस्तार पूर्वक व्याख्या कीजिए।
2. भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की कार्य पद्धति पर प्रकाश डालिये।
3. उन प्रमुख बिन्दुओं की चर्चा कीजिए जिनके कारण भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली आलोचना का केन्द्र रही है।
4. भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सुधार एवं इसे और अधिक उपयोगी बनाने हेतु उपायों के विषय में लिखिए।
5. लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली एवं अन्य संबंधित योजनाओं के सफल निष्पादन, संचालन एवं निष्पादन में भारतीय खाद्य निगम की भूमिका की चर्चा कीजिए।

इकाई 12: खाद्य भ्रांतियाँ एवं मिथक

- 12.1 प्रस्तावना
- 12.2 उद्देश्य
- 12.3 खाद्य भ्रांतियाँ (Food Fads)
 - 12.3.1 परिभाषा
- 12.4 भ्रामक आहार के स्वास्थ्य दावों का मूल्यांकन
- 12.5 भ्रामक आहार के प्रकार
- 12.6 खाद्य मिथक (Food Fallacies)
- 12.7 सारांश
- 12.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 12.9 निबंधात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में हम खाद्य सम्बंधी भ्रांतियों एवं मिथकों के बारे में जानेंगे। किसी विशिष्ट समय में समुदाय में प्रचलित विशेष प्रकार के आहार को हम भ्रामक आहार कहते हैं। आमतौर पर इस तरीके के आहार मानक आहार नहीं होते तथा अनुचित रूप से तेजी से वजन घटाने या निरर्थक स्वास्थ्य सुधार का दावा करते हैं। इस तरह के आहार को प्रचलित करने हेतु निरर्थक दावों एवं मशहूर लोगों द्वारा विज्ञापन की सहायता ली जाती है और इस प्रकार उपभोक्ताओं को संपूर्ण आहार एवं स्थायी स्वास्थ्य लाभ के लिए सम्पूर्ण जीवन शैली में आवश्यक बदलाव के बारे में जानकारी का अभाव हो सकता है। ये आहार कई प्रकार के होते हैं जिनका विवरण आपको इस इकाई में प्राप्त होगा। खाद्य मिथक से तात्पर्य भोजन सम्बन्धी भ्रांतियों, अंधविश्वासों व धार्मिक परम्पराओं से है, जो किसी खाद्य पदार्थ को भोजन में प्रतिबंधित करती हैं। इन मिथकों के कारण व्यक्ति खाद्य पदार्थ द्वारा प्रदान किये जाने वाले पोषक तत्वों से वंचित रह जाता है। ऐसे ही कुछ खाद्य मिथकों का वर्णन इस इकाई में किया गया है।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी;

- खाद्य भ्रांति को परिभाषित कर पाएंगे;
- विभिन्न प्रकार के भ्रामक आहारों के विषय में जानेंगे;
- खाद्य मिथकों को परिभाषित कर पाएंगे; तथा
- गर्भावस्था, धात्रीवस्था एवं अन्य स्थितियों से सम्बन्धित कुछ प्रचलित खाद्य मिथकों को जानेंगे।

12.3 खाद्य भ्रांतियाँ (Food Fads)

खाद्य भ्रांतियों को किसी विशिष्ट समय काल में जन समुदाय में प्रचलित खाद्य रुझानों के रूप में भी जाना जाता है। खाद्य भ्रांतियाँ आहार ग्रहण करने की एक अस्थायी शैली या प्रथाएं हैं जिसमें लोग कुछ समय काल के लिए संलग्न होते हैं।

भ्रामक आहार (Fad Diet) एक प्रकार का आहार होता है जो एक समय के लिए एक मानक आहार की सिफारिश के बिना लोकप्रिय होता है, और अक्सर अनुचित रूप से तेजी से वजन घटाने या निरर्थक स्वास्थ्य सुधार का दावा करता है। अलग-अलग दृष्टिकोणों और साक्ष्यों के

आधार पर कई तरह के आहारों को शामिल करने वाली खाद्य भ्रांति की कोई एक निश्चित परिभाषा नहीं है। इस प्रकार के आहार के अलग-अलग परिणाम, फायदे और नुकसान हैं और यह हमेशा बदलते रहते हैं।

आम तौर पर, खाद्य भ्रांतियाँ कम प्रयासों में अल्पकालिक परिवर्तनों का वादा करती हैं और इस प्रकार उपभोक्ताओं को संपूर्ण आहार एवं स्थायी स्वास्थ्य लाभ के लिए सम्पूर्ण जीवन शैली में आवश्यक बदलाव के बारे में जानकारी का अभाव हो सकता है। खाद्य भ्रांतियों को अक्सर अतिरंजित दावों के साथ बढ़ावा दिया जाता है, जैसे 1 किलो प्रति सप्ताह से अधिक तेजी से वजन कम होना या “विषहरण अथवा डिटॉक्सिफिकेशन” (detoxification) द्वारा स्वास्थ्य में सुधार, या यहां तक कि खतरनाक दावे, जैसे अत्यधिक प्रतिबंधात्मक और पोषण असंतुलित भोजन विकल्प जो व्यक्ति को कुपोषित कर सकते हैं या अखाद्य पदार्थ जैसे रूई के सेवन के लिए बाध्य करते हैं।

अत्यधिक प्रतिबंधात्मक भ्रामक आहार से बचना चाहिए। इस तरह के खाद्य कैलोरी की मात्रा को कम करने के लिए आहार को नए और आकर्षक तरीके पेश कर सकते हैं, लेकिन सबसे खराब रूप में ये आहार व्यक्ति के लिए चिकित्सकीय रूप से अनुपयुक्त, अस्थिर या खतरनाक भी हो सकते हैं। किसी भी आहार का प्रयास करने से पहले आहार विशेषज्ञ की सलाह को प्राथमिकता देनी चाहिए।

इस तरह की खाद्य भ्रांतियों को बढ़ावा देने के लिए अक्सर प्रसिद्ध व्यक्तियों द्वारा विज्ञापन किया जाता है, जो कि संबंधित उत्पादों की बिक्री के माध्यम से ऐसे आहार के निर्माताओं के लिए महत्वपूर्ण राजस्व उत्पन्न कर सकता है। भले ही उनके साक्ष्य आधार कम हों या नहीं हों, इस प्रकार के भ्रामक आहार बेहद लोकप्रिय होते हैं।

यद्यपि खाद्य भ्रांतियों के सम्बंध में स्वास्थ्य पेशेवरों की धारणा नकारात्मक हो सकती है, कुछ मामलों में इस प्रकार के आहार के वैज्ञानिक सबूत और चिकित्सीय अनुप्रयोग भी हैं, जैसे मिर्गी के लिए कीटोजेनिक आहार, मोटापे हेतु कैलोरिक प्रतिबंध और मधुमेह के लिए मेडिटरेनियन आहार आदि।

12.3.1 परिभाषा

अलग-अलग दृष्टिकोणों और प्रमाणिक आधारों के साथ विभिन्न प्रकार के आहारों को शामिल करने वाली एक आहार भ्रांति की कोई एक परिभाषा नहीं है, और इस प्रकार इसके विभिन्न परिणाम, फायदे और नुकसान हैं। खाद्य भ्रांतियाँ हमेशा सामाजिक, सांस्कृतिक, सामयिक और विषयगत रूप से बदलती रहती हैं। हालांकि, एक आम परिभाषा आजीवन

परिवर्तनों के बजाय अल्पकालिक परिवर्तनों को बढ़ावा देने वाले आहार की लोकप्रियता में निहित है, और उस लोकप्रियता का आहार की प्रभावशीलता, पोषण संबंधी दृढ़ता या सुरक्षा के साथ कोई संबंध नहीं होता है। संघीय व्यापार आयोग, संयुक्त राज्य अमेरिका भ्रामक आहार को इस प्रकार परिभाषित करता है; भ्रामक खाद्य अत्यधिक प्रतिबंधक और ऊर्जा सघन खाद्य पदार्थों को बढ़ावा देने वाले होते हैं जो अक्सर पोषक तत्वों में निम्न होते हैं।

12.4 भ्रामक आहार के स्वास्थ्य दावों का मूल्यांकन

भ्रामक आहार के परिणाम परिवर्तनशील होते हैं क्योंकि इनमें विभिन्न आहार शामिल होते हैं। ऐसे आहार अल्पकाल में तेजी से वजन घटाने जैसे परिणाम देते हैं, परंतु यह घटा हुआ वजन अक्सर वापस बढ़ जाता है। भ्रामक आहार प्रतिबंधात्मक दृष्टिकोण के कारण, चाहे आहार में उच्च मात्रा में रेशेयुक्त सब्जियां हों अथवा अनाज या अन्य कोई ठोस खाद्य पदार्थ न हों, अक्सर पोषण की दृष्टि से बहुत अल्प होते हैं और यदि उनका सेवन अधिक समय तक किया जाए तो व्यक्ति को गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं।

भ्रामक आहारों का एक नुकसान यह है कि वे जीवनकाल में स्थायी परिवर्तन के बजाय एक अल्पकालिक व्यवहार के रूप में आहार की धारणा को प्रोत्साहित करते हैं। वास्तव में भ्रामक आहार व्यक्ति को स्वस्थ पोषण, अंश भाग और शारीरिक गतिविधियों के बारे में भ्रमित करते हैं ताकि वे अपने वांछित वजन के लंबे समय तक रखरखाव के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान प्राप्त न कर सकें। लंबी अवधि में ये आहार अस्थिर होते हैं और इस प्रकार कुछ खाद्य पदार्थों से वंचित होने के कारण व्यक्ति आहार की अपनी पुरानी आदतों पर लौट आते हैं, जिस कारण वे और अधिक आहार ग्रहण करने लगते हैं। भ्रामक आहार आमतौर पर खराब पोषण की आदतों के कारणों को संबोधित करने में विफल रहते हैं, और इस प्रकार ऐसे आहार अंतर्ग्रहण द्वारा अंतर्निहित व्यवहार और दीर्घकालिक परिणामों को बदलने की संभावना नहीं होती है।

कुछ भ्रामक आहार हृदय रोगों और मानसिक विकारों जैसे आहार सम्बंधित विकार, अवसाद और दाँतों से सम्बंधित विकारों के जोखिमों से जुड़े हैं। उदाहरण के लिए लंबे समय तक कम कार्बोहाइड्रेट उच्च वसा वाले आहार हृदय और गैर-हृदय रोगों की मृत्यु दर से जुड़े होते हैं। भ्रामक आहार के अभ्यस्त किशोरों में वृद्धि स्थायी रूप से रुक जाती है।

हालांकि कुछ भ्रामक आहार मोटापे या मिर्गी जैसी विशिष्ट बीमारियों वाले व्यक्तियों के लिए अल्पकालिक और दीर्घकालिक परिणाम प्रदान करते हैं। कम तथा बहुत कम कैलोरी आहार, जिसे क्रैश डाइट के रूप में भी जाना जाता है, बैरिएट्रिक सर्जरी (bariatric surgery; वजन

घटाने के लिए पेट और छोटी आंतों के हिस्सों को शल्य क्रिया द्वारा हटाना) से पूर्व यकृत वसा और वजन घटाने के लिए उपयुक्त होते हैं। कम-कैलोरी और बहुत कम-कैलोरी आहार अन्य आहारों की तुलना में शुरूआत के 1-2 सप्ताह के भीतर तेजी से वजन घटाते हैं, परन्तु वजन में यह सतही रूप से तेज हानि, निर्बल शारीरिक भार (lean body mass) में ग्लाइकोजन और पानी की कमी के कारण होता है और शीघ्रता से पुनः प्राप्त हो जाता है।

इस प्रकार के आहार की सफलता का अनुमान आहार के प्रकार की परवाह किए बिना उसके वजन घटाने और स्वास्थ्य लाभों में पालन और नकारात्मक ऊर्जा संतुलन से लगाया जाता है। हालांकि भ्रामक आहार अपनी लोकप्रियता और विविधता के कारण, पोषण विशेषज्ञों की देखरेख में मोटे व्यक्तियों हेतु उनकी भोजन वरीयताओं और जीवन शैली में बदलाव के आधार पर आहार नियोजन करने के लिए उपयोगी हो सकता है। उचित मार्गदर्शन के बिना खाद्य पदार्थों से परहेज की तुलना में व्यापक आहार कार्यक्रम अधिक प्रभावी होते हैं।

12.5 भ्रामक आहार के प्रकार

हालांकि भ्रामक आहार समयानुसार निरंतर बदलते रहते हैं, इन्हें निम्न सामान्य समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

- औषधीय आहार या अन्य पूरक।
- शारीरिक परीक्षण, जैसे कनीसियोलॉजी (Kinesiology, शरीर की गतिविधियों की यांत्रिकी का अध्ययन) और रक्त समूह विश्लेषण।
- बहुत कम कैलोरी आहार:
 - भोजन-विशिष्ट आहार जिसके अंतर्गत एक ही खाद्य को बड़ी मात्रा में खाने हेतु प्रोत्साहित किया जाता है, जैसे गोभी का सूप आहार,
 - □ उच्च प्रोटीन, कम कार्बोहाइड्रेट आहार, जैसे एटकिन्स आहार, जो पहली बार 1970 के दशक में लोकप्रिय हुआ,
 - उच्च फाइबर, कम कैलोरी आहार, जो अक्सर आहारिय रेशे की सामान्य मात्रा से दोगुनी मात्रा अनुशंसित करते हैं,
 - तरल आहार, जैसे स्लिमफ्रास्ट आहार प्रतिस्थापन पेय।
- उपवास।

भ्रामक आहार आम तौर पर प्रतिबंधात्मक होते हैं और निराधार दावे जैसे तेजी से वजन घटाना या उत्तम शारीरिक स्वास्थ्य (उल्लेखनीय रूप से विषहरण (detoxification) द्वारा) इसकी विशेषताएं हैं जिनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं होता है। कुछ भ्रामक आहार, जैसे वैकल्पिक कैन्सर उपचार के लिए लिए जाने वाले आहार, वजन घटाने के अलावा अन्य स्वास्थ्य लाभ का वादा भी करते हैं। कई कारक किसी व्यक्ति को भ्रामक आहार शुरू करने हेतु बाध्य कर सकते हैं, जैसे शरीर की छवि और आत्मसम्मान पर सामाजिक-सांस्कृतिक दबाव, जिसमें मीडिया का प्रभाव और व्यापक कार्यक्रमों की किफायती लागत शामिल है।

यद्यपि सभी भ्रामक आहार स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं होते हैं, निम्न आहार संबंधी सलाहों/दावों की पहचान कर आहार के भ्रामक होने का पता लगाया जा सकता है:

- तेजी से वजन घटाने का वादा करना जैसे कि 1 किलो प्रति सप्ताह या इस प्रकार के अन्य असाधारण दावे।
- आहार का असंतुलित पोषण या अत्यधिक प्रतिबंधात्मक होना, सम्पूर्ण खाद्य समूहों को प्रतिबंधित करना या केवल एक भोजन या भोजन के प्रकार की अनुमति देना। जैसे भ्रामक आहार इस प्रकार के दावे कर सकते हैं कि मनुष्य आहार के बिना या केवल तरल खाद्य पदार्थ के सेवन अथवा गैर-खाद्य पदार्थों जैसे कपास के सेवन पर जीवित रह सकते हैं।
- एक विशिष्ट क्रम या संयोजन में आहार लेने की सिफारिश करना जो कभी-कभी शारीरिक गुणों जैसे कि आनुवंशिकी या रक्त प्रकार पर आधारित होता है।
- शरीर को “डिटॉक्स” करने अथवा वसा को कम करने हेतु विशिष्ट खाद्य पदार्थों की सिफारिश करना।
- व्यक्ति की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप शारीरिक व्यायाम एवं आहारिय परिवर्तनों को बढ़ावा न देकर केवल यह दावा करना कि अमुक भ्रामक आहार सभी की आवश्यकताओं के अनुरूप निर्मित है।
- यादृच्छिक नियंत्रित परीक्षणों (randomized controlled trials) द्वारा चिकित्सीय साक्ष्य के बजाय व्यक्तिगत सफलता की कहानियों जैसे उपाख्यानो पर आधारित होना।
- विशिष्ट उत्पादों, पूरक या संसाधनों की खरीद की आवश्यकता पर आधारित।
- पहले से मौजूद बीमारियों वाले लोगों के लिए भ्रामक आहार कोई स्वास्थ्य चेतावनी नहीं देता है।

- स्वास्थ्य लाभ के बजाय उपस्थिति बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित करना।

आइए इन पर विस्तारपूर्वक चर्चा करें।

चूंकि भ्रामक आहार समयानुसार सामाजिक, सांस्कृतिक और व्यक्तिपरक दृष्टिकोण में भिन्न होते हैं, इसलिए यह सूची व्यापक है। कुछ आहार जो पूर्व में भ्रामक माने जाते थे, अब लाभकारी समझे जाते हैं जैसे मैडिटरेनियन आहार। ऐसे कुछ आहार के उपचारात्मक गुण भी हैं जैसे मिर्गी या मोटापे हेतु बनाए गए विशिष्ट आहार। आहार विशेषज्ञ अस्वास्थ्यकर आहार तथा पौष्टिक आहार में भेद कर सकते हैं।

खाद्य विशिष्ट आहार (Food-specific diets)

1. क्षारीय आहार (Alkaline diet): इसे क्षारीय राख आहार, क्षारीय अम्ल आहार, अम्ल राख आहार और अम्ल क्षारीय आहार के रूप में भी जाना जाता है। क्षारीय आहार खाद्य पदार्थों का समूह है जो इस धारणा पर आधारित है कि विभिन्न प्रकार के भोजन का शरीर के पीएच संतुलन पर प्रभाव पड़ सकता है। इसकी उत्पत्ति आम्लिक राख परिकल्पना (acid ash hypothesis) से हुई, जो मुख्य रूप से ऑस्टियोपोरोसिस अनुसंधान से संबंधित है। इस आहार के समर्थकों का मानना है कि कुछ खाद्य पदार्थ शरीर की अम्लता (पीएच) को प्रभावित कर सकते हैं और पीएच में इस परिवर्तन का उपयोग बीमारी के इलाज या रोकथाम के लिए किया जा सकता है। एक क्षारीय आहार अधिकांश फलों और सब्जियों के सेवन को प्रोत्साहित करता है और ऐसे आहार में अधिकांश अनाज और मांस, पनीर और अंडे जैसे खाद्य पदार्थ वर्जित होते हैं।

2. शिशु आहार (Baby Food Diet): शिशु आहार माता के दूध अथवा फॉर्मूला मिल्क के अतिरिक्त कोई भी कोमल, आसानी से खाए जाने वाले खाद्य पदार्थ हैं जो विशेष रूप से चार से छह महीने और दो साल की आयु के मानव शिशुओं के लिए बनाए जाते हैं। यह आहार कई किस्मों और स्वादों में आता है जिन्हें उत्पादकों द्वारा तैयार किया जाता है। यह परिवार के भोजन का भाग भी हो सकता है जिसे शिशु के लिए मसला अथवा पकाया गया हो।

3. गोभी का सूप आहार (Cabbage soup diet): गोभी का सूप आहार विशिष्ट रूप से एक वजन घटाने वाला आहार है जिसमें सात दिनों के लिए कम-कैलोरी युक्त गोभी के सूप का सेवन किया जाता है। यह आमतौर पर एक भ्रामक आहार माना जाता है जिसे अल्पकाल में तेजी से वजन घटाने के लिए डिज़ाइन किया गया है जिसकी कोई दीर्घकालिक प्रतिबद्धता नहीं है।

इस भ्रामक आहार का यह विशिष्ट दावा है कि इसके सेवन से एक सप्ताह में 10 पाउंड (4.5 किलोग्राम) वजन कम होता है, हालांकि पोषण विशेषज्ञों के अनुसार एक सप्ताह के भीतर इतनी मात्रा में वसा का घटना लगभग असंभव है क्योंकि घटे हुए वजन का अधिकांश हिस्सा पानी होगा।

कई व्यक्ति और चिकित्सा पेशेवर इस आहार की आलोचना करते हैं। चूंकि घटा हुआ अधिकांश वजन पानी होता है, वसा नहीं, इसलिए यह आहार मोटापे का स्थायी समाधान नहीं है। आहार की प्रति दिन कैलोरी की मात्रा लंबे समय तक उपभोग के लिए सुरक्षित अनुशंसित मात्रा से अत्यंत कम होती है। इसके अलावा आमतौर पर स्वादिष्ट बनाने के लिए, दिए जाने वाले सूप में सोडियम की मात्रा उच्च होती है और यह आहार व्यवहारिक रूप से शरीर को लम्बे समय तक शून्य प्रोटीन प्रदान करता है। बहुत से लोग आहार के सेवन के दौरान कमजोरी महसूस करते हैं। पेट फूलना इस आहार का एक सामान्य दुष्प्रभाव है।

4. स्वच्छ भोजन (Clean eating): स्वच्छ भोजन इस विश्वास पर आधारित एक भ्रामक आहार है कि सम्पूर्ण खाद्य पदार्थों को उनकी प्राकृतिक अवस्था में खाने और प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ जैसे परिष्कृत चीनी आदि से बचने से विशिष्ट स्वास्थ्य लाभ मिलते हैं। इस आहार में विविधताओं के अंतर्गत डेयरी उत्पादों और परिष्कृत अनाजों को वर्जित किया जा सकता है और कच्चे भोजन के सेवन को प्रोत्साहित किया जाता है।

5. कुकी आहार (Cookie diet): कुकी आहार एक कैलोरी प्रतिबंधित भ्रामक आहार है जो कुकी के रूप में भोजन प्रतिस्थापन पर आधारित है तथा इसे विशेष रूप से वजन घटाने के लिए बनाया गया है।

6. खाद्य संयोजन आहार (Food combining diet): यह एक पोषण दृष्टिकोण है जहां कुछ खाद्य प्रकार जानबूझकर एक साथ या अलग-अलग सेवन किए जाते हैं। उदाहरण के लिए, कुछ वजन नियंत्रण आहार सुझाव देते हैं कि एक ही भोजन में प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट का सेवन नहीं किया जाना चाहिए।

7. फ्रूटेरियनिज़्म (Fruitarianism): यह आहार सम्बंधी शाकाहारीता का एक उप-समूचय है जिसमें पूर्ण या मुख्य रूप से फल शामिल होते हैं। इस प्रकार का आहार वैज्ञानिक प्रमाणों द्वारा समर्थित नहीं है और इस आहार के सेवन से शरीर में विटामिन बी 12, कैल्शियम, लोहा, जस्ता और प्रोटीन जैसे पोषक तत्वों की कमियों का खतरा बढ़ जाता है।

8. ग्लूटेन मुक्त आहार (Gluten free diet): यह आहार सीलिएक रोग या ग्लूटेन संवेदनशीलता वाले लोगों के लिए आवश्यक है, जो अब एक भ्रामक आहार बन गया है। ग्लूटेन-मुक्त आहार एक ऐसा आहार है जो ग्लूटेन (गेहूं में पाए जाने वाले प्रोटीन का मिश्रण) को आहार में वर्जित करता है।

9. मैक्रोबायोटिक्स (Macrobiotics): यह आहार स्थानीय रूप से उगाए गए सम्पूर्ण अनाज, दालें (फलियां), सब्जियां, समुद्री खाद्य, किण्वित सोया उत्पाद और फलों को भोजन में संयुक्त करने पर जोर देता है। इसमें साबुत अनाज और साबुत अनाज उत्पाद, विभिन्न प्रकार की पकी और कच्ची सब्जियां, बीन्स, हल्के प्राकृतिक मसाले, मछली, मेवे और फल भी अनुशंसित हैं।

10. रेवतचीनी आहार (Rhubarb diet): यह आहार उबले हुए रेवतचीनी फल और डेयरी उत्पादों (आमतौर पर दूध) को दिन के दो भोजनों में प्रतिस्थापित करता है। इस फल का रेचक प्रभाव वजन घटाने में सहायता करता है।

11. होल30 आहार (Whole30 diet): यह एक 30-दिन का भ्रामक आहार है जो संपूर्ण खाद्य पदार्थों के सेवन पर जोर देता है और आहार से चीनी, मादक पेयों, अनाज, फलियां, सोया और डेयरी उत्पादों को खत्म करने पर जोर देता है।

कम कार्बोहाइड्रेट / उच्च वसा वाले आहार

1. एटकिन्स आहार (Atkins diet): यह कम कार्बोहाइड्रेट वाला भ्रामक आहार है। सभी श्रेणियों में मुख्य खाद्य पदार्थ सम्पूर्ण, असंसाधित खाद्य पदार्थ होते हैं जिनका ग्लाइसेमिक सूचकांक कम होता है।

2. पैलियोलिथिक आहार (Paleolithic diet): पैलियो आहार, केवमैन आहार, या पाषाण-युगीन आहार एक आधुनिक भ्रामक आहार है, जिसमें पुरापाषाण युग के दौरान मनुष्यों के लिए उपलब्ध खाद्य पदार्थों के सेवन की सिफारिश की जाती है। इन खाद्य पदार्थों में शामिल हैं; सब्जियां (जड़ वाली सब्जियां), फल (फलों के तेल सहित, जैसे जैतून का तेल, नारियल का तेल और ताड़ का तेल), मेवे, मछली, मांस और अंडे। इस आहार में डेयरी, अनाज आधारित खाद्य पदार्थ, फलियां, अतिरिक्त चीनी और पोषण संबंधी औद्योगिक उत्पाद (परिष्कृत वसा और परिष्कृत कार्बोहाइड्रेट सहित) शामिल नहीं होते हैं।

उच्च कार्बोहाइड्रेट / कम वसा वाले आहार

1. प्रिटिकिन आहार (Pritikin diet): प्रिटिकिन आहार कम वसा और उच्च रेशे युक्त आहार है। इस आहार में कम वसा वाले उच्च रेशेयुक्त खाद्य पदार्थ शामिल होते हैं तथा इसमें लाल मांस, अल्कोहॉल और प्रसंस्कृत भोज्य पदार्थ सीमित होते हैं।

2. चावल आहार (Rice Diet): यह आहार उच्चरक्तचापरोधी दवाओं के आगमन से पहले घातक उच्च रक्तचाप के लिए एक मौलिक उपचार के रूप में शुरू किया गया। मूल आहार में सख्त आहार प्रतिबंध शामिल थे, जिसमें सफेद चावल, चीनी, फल, फलों के रस, विटामिन और लौह तत्व के रूप में लगभग 2000 कैलोरी, 20 ग्राम प्रोटीन और फलों के रस के रूप में 700-1000 मिलीलीटर तरल प्रदान किया गया। इस आहार में सोडियम की मात्रा अत्यंत कम थी; लगभग 150 मिलीग्राम प्रति दिन और क्लोराइड की मात्रा लगभग 200 मिलीग्राम प्रति दिन।

तरल आहार

1. कैम्ब्रिज आहार (The Cambridge Diet): इस आहार को 1: 1 आहार के रूप में भी जाना जाता है जो 1960 के दशक में विकसित एक बहुत कम कैलोरी वाला भ्रामक आहार है। अपने विभिन्न रूपों में, इस आहार द्वारा प्रति दिन 330 से 1500 किलो कैलोरी के बीच ऊर्जा की मात्रा निर्दिष्ट की गई है। भोजन मुख्य रूप से तरल रूप में होता है जो भोजन के प्रतिस्थापन उत्पादों या आहार के भाग के रूप में बेचा जाता है।

2. स्लिमफास्ट (SlimFast): यह मूल रूप से सिर्फ डाइट शेक उत्पाद था। इसमें चॉकलेट, स्ट्रॉबेरी और वेनिला शेक शामिल थे जो नाश्ते और दोपहर के भोजन के स्थान पर लिए जाते थे।

डिटॉक्स आहार

यह मुख्य रूप से वह आहारिय योजनाएं होती हैं जो शरीर में विषहरण प्रभाव (detoxifying effects) का दावा करते हैं।

1. मास्टर क्लैन्ज (Master Cleanse): इस आहार को नींबू पानी आहार या नींबू डिटॉक्स आहार भी कहा जाता है। यह एक संशोधित तरल आधारित उपवास आहार है जिसमें आहार को मेपल सिरप और केयेन मिर्च (maple syrup and cayenne pepper) युक्त चाय और नींबू पानी से प्रतिस्थापित किया जाता है।

2. सक्रिय कोयला आहार (Activated charcoal diet): इसे चारकोल डिटॉक्स के रूप में भी जाना जाता है। सक्रिय चारकोल पाउडर, गोली और तरल रूप में उपलब्ध है। इस

आहार के समर्थकों का दावा है कि नियमित रूप से सक्रिय चारकोल का उपयोग शरीर को विषहरित और शुद्ध करता है, शरीर की ऊर्जा को बढ़ाता है और त्वचा में चमक लाता है।

3. व्हीटग्रास आहार (Wheatgrass Diet): इस आहार के प्रस्तावक इसके स्वास्थ्य गुणों के लिए कई दावे करते हैं, जिनमें सामान्य स्वास्थ्य को बढ़ावा देने से लेकर कैंसर की रोकथाम तक शामिल हैं। व्हीटग्रास पोटेशियम, आहारिय रेशा, विटामिन ए, विटामिन सी, विटामिन ई (अल्फा टोकोफेरॉल), विटामिन के, थायमिन, राइबोफ्लेविन, नियासिन, विटामिन बी 6, पैन्थोथेनिक अम्ल, लोहा, जस्ता, तांबा, मैंगनीज और सेलेनियम का स्रोत है। व्हीटग्रास में प्रोटीन भी पाया जाता है जिसमें प्रति 28 ग्राम में एक ग्राम से कम प्रोटीन होता है।

12.6 खाद्य मिथक (Food Fallacies)

खाद्य मिथक से तात्पर्य भोजन सम्बन्धी भ्रांतियों, अंधविश्वासों व धार्मिक परम्पराओं से है, जो किसी खाद्य पदार्थ को भोजन में प्रतिबंधित करती हैं। इन मिथकों के कारण व्यक्ति खाद्य पदार्थ द्वारा प्रदान किये जाने वाले पोषक तत्वों से वंचित रह जाता है। ऐसे ही कुछ खाद्य मिथकों का निम्नलिखित वर्णन किया गया है:

गर्भावस्था एवं धात्रीवस्था सम्बन्धी खाद्य मिथक

- गर्भावस्था में गर्म भोज्य पदार्थ नहीं दिये जाते क्योंकि यह माना जाता है कि इनसे गर्भपात हो जाता है। इस मिथक द्वारा गर्भवती स्त्री अनेक पोषक तत्वों से वंचित रह जाती है।
- कई क्षेत्रों में यह मान्यता है कि गर्भवती स्त्री के अधिक भोजन करने से होने वाले बच्चे का आकार भी बड़ा हो जाएगा, जिससे प्रसव में परेशानी होगी। अतः गर्भवती स्त्री को कम भोजन ग्रहण करने हेतु विवश किया जाता है। फलस्वरूप मातृक कुपोषण के साथ-साथ बच्चे का जन्म भार भी अत्यन्त कम होता है। इससे कई मामलों में मातृ एवं शिशु मृत्यु भी देखी गई है।
- कई गर्भवती महिलायें ये मानती हैं कि मछली व दूध को साथ-साथ लेने से उनका गर्भस्थ शिशु अपंग हो जाएगा।
- कुछ क्षेत्रों की मान्यता के अनुसार लौह-लवण की गोलियों से शिशु का रंग काला होता है। फलस्वरूप गर्भवती स्त्रियों में एनीमिया की समस्या और गम्भीर रूप धारण कर लेती है, जिससे मातृ मृत्यु की आशंका बढ़ जाती है।

- कुछ बुजुर्ग महिलायें ये मानती हैं कि गर्भवती स्त्री द्वारा पपीता तथा अन्नानस खाने से गर्भपात हो जाता है। वास्तव में गर्भवती स्त्री को इन फलों से विटामिन 'ए' की प्राप्ति होती है।
- कई परिवारों में गर्भवती स्त्री तथा हर प्रकार के बीमार व्यक्ति को घी अत्यधिक मात्रा में दिया जाता है। उनका मानना है कि इससे ताकत मिलती है। वास्तव में घी ऊर्जा तो प्रदान करता है, परन्तु अत्यधिक सेवन से शरीर में कॉलेस्ट्रॉल की मात्रा बढ़ने से हृदय रोग की सम्भावना भी बढ़ जाती है।
- कई क्षेत्रों में प्रसवोपरान्त महिला को सिर्फ उबला खाना दिया जाता है। ऐसा करने से धात्री माता की पोषणीय आवश्यकतायें पूरी नहीं हो पाती फलतः वह कुपोषित हो जाती है। ऐसी अवस्था में माता के दूध पर निर्भर शिशु भी कुपोषित हो जाता है।
- यह आम धारणा है कि प्रसव के बाद स्त्री अपना प्रथम दूध शिशु को नहीं दे सकती है क्योंकि यह दूध देखने में गाढ़ा, पीला व चिपचिपा होने की वजह से खराब माना जाता है। परन्तु वास्तविकता यह है कि यह शिशु को रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करने के साथ-साथ अत्यधिक पौष्टिक भी होता है। इसे नवदुग्ध या कॉलेस्ट्रम (colostrum) कहते हैं।

अन्य खाद्य मिश्रक

- बहुत से लोग सभी भोज्य पदार्थों को गर्म व ठण्डे वर्गों में विभाजित करते हैं। पपीता, नारियल, मिर्च, कटहल, आलू, मेवे, मांस आदि गर्म माने जाते हैं तथा दूध, दही, सब्जियाँ इत्यादि ठण्डी मानी जाती हैं। अनेक शारीरिक स्थितियों एवं मौसमों में इन्हें नहीं खाया जाता।
- कुछ मान्यताओं के अनुसार खट्टे फल व दूध को साथ लेने से दूध पेट में जाकर फट जाता है। अतः ऐसा नहीं करना चाहिए। परन्तु वास्तव में फल व दूध साथ लेने से किसी भी प्रकार की स्वास्थ्य हानि नहीं होती।
- यह कहा जाता है कि सर्दियों में खट्टे फल खाने से ठण्ड लग जाती है व गला भी खराब हो जाता है। परन्तु यह सच नहीं है, वास्तव में सभी खट्टे फल विटामिन 'सी' के मुख्य स्रोत हैं और विटामिन 'सी' हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है।

- कुछ लोगों में यह धारणा होती है कि सप्रेटा दूध या वसा रहित दूध पोषणविहीन होता है। जब दूध से क्रीम को हटा दिया जाता है, तो उसमें वसा की मात्रा कम हो जाती है, स्वाद बदल जाता है और क्रीम में निहित विटामिन ए का नुकसान होता है; लेकिन सप्रेटा दूध में उपलब्ध शर्करा ऊर्जा देती है; प्रोटीन ऊतक निर्माण में सहायक होता है; खनिज लवण, विशेष रूप से कैल्शियम और फास्फोरस दांतों और हड्डियों के स्वास्थ्य के लिए तथा थायमिन एवं राइबोफ्लेविन कार्बोहाइड्रेट चयापचय, शारीरिक विकास और पेलग्रा-निवारक विटामिन के रूप में आवश्यक होता है।
- कुछ लोगों की मान्यता होती है कि कुछ विशिष्ट फलों एवं सब्जियों के बीजों के अंतर्ग्रहण के कारण पथरी की समस्या होती है। वास्तव में जिन खाद्य पदार्थों में फॉस्फेट एवं कैल्शियम ऑक्जलेट तत्व अधिक मात्रा में पाया जाता है, उन खाद्यों के अधिक सेवन से पथरी हो सकती है। ये खाद्य पदार्थ हैं; पालक, चुकंदर, कोको पाउडर, भिंडी आदि।
- कुछ मान्यताओं के अनुसार चॉकलेट सेवन से मुँहासे हो जाते हैं। जबकि वास्तविकता यह है कि चॉकलेट मुँहासों का कारण नहीं बनता है। इसके विपरीत हाल के वैज्ञानिक अध्ययनों के अनुसार, चॉकलेट मस्तिष्क में सेरोटोनिन को बढ़ाता है जो शांत प्रभाव और स्थिरता पैदा करता है। मुँहासों का वास्तविक कारण तनाव एवं अधिक सक्रिय स्वेद ग्रंथियाँ हो सकती हैं।
- कई लोग यह मानते हैं कि चीनी के स्थान पर गुड़ का सेवन करने से रक्त शर्करा नहीं बढ़ती है एवं यह मधुमेह के रोगियों के लिए अच्छा है परंतु सत्य यह है कि गुड़ भी शर्करा या कार्बोहाइड्रेट का एक अच्छा स्रोत है जो मधुमेह के रोगी के लिए हानिकारक हो सकता है।
- कई लोग रिफाइन्ड तेल के स्थान पर सरसों के तेल या घी का उपयोग इस कारण करते हैं कि इससे शरीर में वसा संग्रहित नहीं होती है जो कदापि सत्य नहीं है। वसा का कोई भी खाद्य स्रोत समान मात्रा में कैलोरी प्रदान करता है अर्थात् 9 किलोकैलोरी प्रति ग्राम।
- इंटरनेट के इस युग में खाद्य पदार्थों से सम्बंधित कई जानकारियाँ विभिन्न इंटरनेट सम्बंधी सामाजिक मंचों पर साझा की जाती हैं। व्यक्ति को यह आवश्यक है कि इन जानकारियों पर वह आँख मूंद कर विश्वास न करे तथा सभी तथ्यों के बारे में भली प्रकार जानकर ही

उस खाद्य विशेष के उपभोग के तरीके का निर्णय ले। पोषण शिक्षा की इसमें अहम भूमिका है जो जन समुदाय को आहार एवं पोषण हेतु सजग बनाती है।

इन अनेक प्रकार के मिथकों एवं अंधविश्वासों से व्यक्ति विशेष का स्वास्थ्य तो खराब होता ही है साथ ही अक्सर कुछ ऐसी जटिलताएं भी हो जाती हैं, जो जीवनपर्यन्त परेशान करती हैं जैसे गर्भावस्था के दौरान कई खाद्यों को प्रतिबन्धित करने से शिशु का गर्भ में विकास सही प्रकार से नहीं हो पाता और वह जन्म से पहले ही किसी मानसिक व शारीरिक कमी से ग्रस्त हो जाता है। अतः इन खाद्य मिथकों पर विश्वास करने से पूर्व व्यक्ति को उस जानकारी की भली-भाँति जाँच कर लेनी आवश्यक है। जन समुदाय को पोषण शिक्षा प्रदान कर इन खाद्य मिथकों के प्रति लोगों को जागरूक किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. सही अथवा गलत बताइए।
 - a. भ्रामक आहार अक्सर अत्यधिक प्रतिबंधात्मक होते हैं।
 - b. खाद्य भ्रान्तियाँ सामाजिक, सांस्कृतिक, सामयिक और विषयगत रूप से हमेशा समान रहती हैं।
 - c. गोभी का सूप आहार में सोडियम की मात्रा उच्च होती है जो उच्च रक्तचाप का करक हो सकती है।
 - d. एटकिन्स आहार उच्च कार्बोहाइड्रेट वाला एक भ्रामक आहार है।
 - e. व्हीटग्रास आहार एक डिटॉक्स आहार है।
2. रिक्त स्थान भरिए।
 - a. वजन घटाने के लिए पेट और छोटी आंतों के हिस्सों को शल्य क्रिया द्वारा हटाने की क्रिया को कहते हैं।
 - b. कुछ आहार जैसे पूर्व में भ्रामक माने जाते थे, परंतु उपचारात्मक गुणों की कारण अब लाभकारी समझे जाते हैं।
 - c. सीलिएक रोग से ग्रस्त रोगियों के लिए आवश्यक है।
 - d. प्रसव के पश्चात स्त्री के प्रथम दूध को कहते हैं।

12.7 सारांश

खाद्य भ्रांतियों को किसी विशिष्ट समय काल में जन समुदाय में प्रचलित खाद्य रुझानों के रूप में भी जाना जाता है। भ्रामक आहार (Fad Diet) एक प्रकार का आहार होता है जो एक समय के लिए एक मानक आहार की सिफारिश के बिना लोकप्रिय होता है, और अक्सर अनुचित रूप से तेजी से वजन घटाने या निरर्थक स्वास्थ्य सुधार का दावा करता है। अलग-अलग दृष्टिकोणों और साक्ष्यों के आधार पर कई तरह के आहारों को शामिल करने वाली खाद्य भ्रांति की कोई एक निश्चित परिभाषा नहीं है। इस प्रकार के आहार के अलग-अलग परिणाम, फायदे और नुकसान हैं और यह हमेशा बदलते रहते हैं। यद्यपि सभी भ्रामक आहार स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं होते हैं, कई आहार संबंधी सलाहों/दावों की पहचान कर आहार के भ्रामक होने का पता लगाया जा सकता है जिनकी चर्चा प्रस्तुत इकाई में की गई। भ्रामक आहार कई प्रकार के होते हैं जैसे खाद्य विशिष्ट आहार जिसमें क्षारीय आहार, शिशु आहार, गोभी का सूप आहार, स्वच्छ भोजन, कुकी आहार, खाद्य संयोजन आहार, फ्रूटेरियनिज्म, ग्लूटेन मुक्त आहार, मैक्रोबायोटिक्स, रेवतचीनी आहार, होल30 आहार शामिल हैं। एटकिन्स आहार तथा पैलियोलिथिक आहार कम कार्बोहाइड्रेट / उच्च वसा वाले भ्रामक आहार हैं। प्रिटिकिन आहार तथा चावल आहार उच्च कार्बोहाइड्रेट / कम वसा वाले आहार हैं। कई डिटॉक्स आहार जैसे सक्रिय चारकोल आहार तथा व्हीटग्रास आहार भी प्रचलित भ्रामक आहार हैं। खाद्य मिथक से तात्पर्य भोजन सम्बन्धी भ्रांतियों, अंधविश्वासों व धार्मिक परम्पराओं से है, जो किसी खाद्य पदार्थ को भोजन में प्रतिबंधित करती हैं। प्रस्तुत इकाई में आपने गर्भावस्था, धात्रीवस्था से जुड़े तथा कुछ अन्य प्रचलित खाद्य मिथकों के बारे में भी जाना।

12.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. सही अथवा गलत बताइए।
 - a. सही
 - b. गलत
 - c. सही
 - d. गलत
 - e. सही

2. रिक्त स्थान भरिए।

- बैरिऐट्रिक सर्जरी
- मैडिटेरेनियन आहार
- ग्लूटेन मुक्त आहार (Gluten free diet)
- नवदुग्ध या कॉलेस्ट्रम (colostrum)

12.9 निबंधात्मक प्रश्न

- खाद्य भ्रान्तियों को परिभाषित कीजिए। भ्रामक आहार के स्वास्थ्य दावों के मूल्यांकन के बारे में विस्तृत व्याख्या कीजिए।
- भ्रामक आहारों के प्रकारों का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।
- खाद्य मिथक से आप क्या समझते हैं? गर्भावस्था एवं धात्रीवस्था सम्बंधी खाद्य मिथकों के बारे में बताइए।
- समुदाय में प्रचलित कुछ खाद्य मिथकों का वर्णन कीजिए।

इकाई 13: आपातकालीन स्थितियों में पोषण

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 आपातकालीन स्थिति में पोषण की अवधारणा

13.4 आपातकाल (Emergency)

13.5 आपदा (Disaster)

13.5.1 आपदा के प्रकार

13.6 आपदाओं में पोषणज आपात स्थिति

13.6.1 आपदाओं में कुपोषण

13.6.2 आपदाओं में पोषण मूल्यांकन

13.7 पोषणज आपातकाल के लिए व्यवहार्यता

13.8 पोषण हस्तक्षेप

13.9 आपातकालीन भोजन और सहायता का महत्व

13.9.1 आपातकाल में खाद्य सहायता कार्यक्रमों की प्राथमिकताएं

13.10 सारांश

13.11 पारिभाषिक शब्दावली

13.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

13.14 निबन्धात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना

सभी पोषण शिक्षा कार्यक्रमों, निर्देश और सीखने की स्थितियों में, प्रयासों को हमेशा पोषण को जनसंख्या के कमजोर वर्ग हेतु अधिक सुलभ बनाने और उन तक पहुँचने के लिए लक्षित किया जाता है तथा अधिकाधिक लोगों तक पहुँच की सीमा को विस्तृत करने और आपातकाल के दौरान पोषण को प्रमुख रूप से महत्व देने पर जोर दिया जाता है। पोषण और स्वास्थ्य का अटूट संबंध है और पोषण को प्रभावित करने वाले कारक अंततः स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। आहार अपर्याप्तता कुपोषण का एक प्रमुख योगदान कारक है, जो व्यक्ति की रोग प्रतिरोधक क्षमता को प्रभावित करता है। खराब पोषण की स्थिति से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है और इस प्रकार खसरा, मलेरिया या तपेदिक जैसे संक्रामक रोगों से रूग्णता बढ़ जाती है। रोग-कुपोषण का यह दुष्चक्र शिशुओं और छोटे बच्चों को विशेष रूप से प्रभावित करता है।

कुपोषण आपात स्थिति का एक सामान्य परिणाम है जो महिलाओं और छोटे बच्चों पर असामयिक प्रभाव डालता है। प्रभावित होने वाली जनसंख्या की पोषण स्थिति पहले ही खराब होती है, जो बाद में अधिक खराब हो जाती है क्योंकि आपदा उन्हें उनके बुनियादी ढाँचों, आजीविका और सामाजिक संरचनाओं से भी वंचित कर देती है। आपातकाल चाहे युद्ध, बाढ़, सूखा आदि किसी भी रूप में हो, भूख अक्सर पहली आपातकालीन स्थिति होती है। जब जनसंख्या लंबे समय तक पर्याप्त पौष्टिक भोजन का उपयोग नहीं कर पाती है, तो कुपोषण के परिणाम दिखाई देते हैं। विशेष रूप से जनसंख्या के संवेदनशील समूहों में मृत्यु दर और स्वास्थ्य पर कुपोषण के नतीजे तत्काल होते हैं। कुपोषण कुल बाल मृत्यु दर के 45 प्रतिशत के लिए जिम्मेदार है, और खराब पोषण उच्च मातृ मृत्यु दर तथा गर्भावस्था के खराब परिणामों के लिए भी उत्तरदायी है। खराब पोषण (अस्थायी आपातकालीन स्थितियों में भी) से बच्चे की वृद्धि एवं विकास की अपरिवर्तनीय क्षति हो सकती है। इसका अर्थ यह हो सकता है

कि युवा बच्चों की एक सम्पूर्ण पीढ़ी अपनी क्षमता तक नहीं पहुंच पाएगी जिसके दीर्घकालीन परिणाम सामुदायिक एवं राष्ट्रीय विकास में परिलक्षित होंगे।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त शिक्षार्थी;

- आपातकाल से परिचित होंगे;
- आपदा का वर्गीकरण जानेंगे;
- आपदाओं और आपातकाल में पोषण की भूमिका को समझ पाएंगे; तथा
- आपातकाल में खाद्य सहायता के उपयोग के महत्व को समझ पाएंगे।

13.3 आपातकालीन स्थिति में पोषण की अवधारणा

आपदाएं और आपातकाल पोषण, स्वास्थ्य और खाद्य सुरक्षा की प्रमुख चुनौतियां हैं। वे अक्सर भोजन की कमी, समुदाय के पोषण की खराब स्थिति और सभी आयु समूहों में अतिरिक्त मृत्यु दर का कारण बनते हैं। आवर्तक आपदाओं वाले क्षेत्रों में लोग घरेलू सामान की क्षति एवं विस्थापन के कारण “अस्थायी खाद्य असुरक्षा” की समस्या का सामना करते हैं। खाद्य आपूर्ति की अपर्याप्तता और अनिश्चितता उन्हें खाद्य असुरक्षित और अल्पपोषित बनाती है। दीर्घकाल से कुपोषित जनसंख्या की इन संकटों से बचने की संभावना कम होती है। कुपोषण आपातकाल स्थितियों जैसे सूखा, बाढ़, युद्ध, जन विस्थापन या आर्थिक अव्यवस्था की प्राथमिक विशेषता हो सकती है। किसी भी रूप में, पोषण संबंधी विचार किसी भी प्रमुख आपातकाल के अपरिहार्य तत्व हैं।

एक या एक से अधिक रूपों में कुपोषण अक्सर आपातकालीन स्थितियों; प्राकृतिक और मानव निर्मित दोनों की विशेषता होती है। जब जनसंख्या या जनसंख्या उपसमूहों की पोषण संबंधी जरूरतें पूर्ण रूप से पूरी नहीं होती हैं, तो कुपोषण के कुछ रूप (भुखमरी और अल्पपोषण) जल्द ही दिखाई देने लगते हैं, विशेष रूप से सबसे असहाय या कमजोर व्यक्तियों में। बाढ़ और सूखे जैसे विभिन्न कारणों से उत्पन्न अकाल और भोजन की कमी के दौरान मनुष्यों में भुखमरी और गंभीर कुपोषण की स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। इसके परिणामस्वरूप जनसंख्या में कम वजन वाले बच्चे, एनीमिया ग्रस्त माताएं, मरास्मस ग्रस्त बच्चे, स्कर्वी, बेरीबेरी, पेलाग्रा, विटामिन ए की कमी से उत्पन्न अंधापन और अन्य पोषणहीनता जनित रोग दिखाई देते हैं।

अल्पपोषण पांच साल से कम आयु के बच्चों की मौत के लिए उत्तरदायी महत्वपूर्ण कारकों में से एक है। यह अशुद्ध पानी या अपर्याप्त स्वच्छता स्थितियों के कारण होने वाले अतिसार तथा आंतों के कृमि के आवर्तक संक्रमण के साथ जुड़ा हुआ है। अतिसार कुपोषण के महत्वपूर्ण कारकों में एक है क्योंकि यह आंतों की दीवार में परिवर्तन कर उसके पोषक तत्वों को अवशोषित करने की क्षमता को कम कर देता है और जो लोग कुपोषण से पीड़ित होते हैं, वे अतिसार के लिए उच्च जोखिम में होते हैं। इस तरह यह एक ऐसा दुष्चक्र विकसित करता है जो बच्चों के वृद्धि और विकास में बाधा उत्पन्न करता है। जल आपूर्ति, स्वच्छता और बेहतर साफ सफाई स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार करते हैं जिन्हें पोषण के साथ एकीकृत कर कुपोषण को दूर करने में सहायता मिलती है। पीने के पानी तक पहुंच, स्वस्थ पर्यावरण और अच्छी स्वच्छता प्रथाएं अल्पपोषण की रोकथाम में बेहद महत्वपूर्ण हैं।

आपात स्थितियों में कुपोषण और सूक्ष्म पोषक तत्वों के हीनता जनित रोगों के प्रसार की दर उच्च होती है, जिससे प्रभावित जनसंख्या और विशेष रूप से कमजोर समूहों के बीच मृत्यु का खतरा बढ़ जाता है। विशेष आवश्यकताओं वाले समूहों की जरूरतों को पूरा करने के लिए पोषण कार्यक्रमों को आपातकालीन प्रतिक्रिया की अवधारणा पर तैयार किया जाना आवश्यक है। लिंग संवेदनशील, आयु संवेदनशील, विकलांगता संवेदनशील और आवश्यकता संवेदनशील कार्यक्रम एक आपातकालीन स्थिति के दौरान आश्रित लोगों का मौलिक अधिकार है। विशिष्ट समूहों के लिए पोषण कार्यक्रमों को लागू करने का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कार्यक्रम के सभी पहलू व्यक्ति विशेष की जरूरतों के प्रति संवेदनशील हों और यह सुनिश्चित करने पर विशेष ध्यान दिया जाता है कि पोषण कार्यक्रम लाभार्थियों की सभी जरूरतों के लिए समावेशी और सहायक हों। एक स्थायी तरीके से लागू किए जाने के लिए, विशेष आवश्यकताओं वाले लोगों के लिए पोषण सहायता को अन्य कार्यक्रमों जैसे एचआईवी और एड्स, बच्चे और किशोर स्वास्थ्य, दीर्घकालीन रोगों के प्रबंधन आदि में एकीकृत किया जाना चाहिए।

13.4 आपातकाल (Emergency)

आपातकाल एक आकस्मिक और अप्रत्याशित घटना है जो इसके दुष्परिणामों को कम करने के लिए तत्काल उपायों की मांग करती है। आपातकाल को निम्नलिखित में वर्गीकृत किया जा सकता है:

- **गम्भीर आपातकाल (Loud emergencies):** इसके अंतर्गत गम्भीर प्राकृतिक आपदाएं या युद्ध जैसी भयावह घटनाएं निहित हैं। ऐसे आपातकाल को काफी अंतरराष्ट्रीय प्रचार और बड़े पैमाने पर मानवीय प्रतिक्रिया प्राप्त होती है।
- **मूक आपात स्थिति (Silent emergencies):** इसके अंतर्गत वह आपदाएं निहित होती हैं जिन्हें सीमित अंतरराष्ट्रीय ध्यान और अपर्याप्त मानवीय प्रतिक्रियाएं प्राप्त होती हैं।

विभिन्न स्थितियों में आपातकाल की विविधता

- लंबाई (छोटी अवधि, दीर्घकालीन)
- कारण (प्राकृतिक, संघर्ष-संबंधी (जटिल), आर्थिक-राजनीतिक)
- प्रभाव (बुनियादी ढांचों, कृषि, स्वास्थ्य और सामाजिक प्रणालियों का विनाश)
- प्रभावित समूह (आंतरिक रूप से विस्थापित व्यक्ति, शरणार्थी, स्थिर जनसंख्या)
- मानवीय प्रतिक्रिया (बड़े पैमाने पर प्रतिक्रिया, कोई प्रतिक्रिया नहीं)

देश में सामान्य प्रकार की आपातकाल स्थितियाँ

- जटिल – संघर्ष संबंधी
- सूखा
- बाढ़ (अक्सर भूस्खलन के साथ)
- भूकंप
- अकाल

13.5 आपदा (Disaster)

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने आपदा को “अस्तित्व की सामान्य परिस्थितियों को बाधित करने और प्रभावित समुदाय के समायोजन की क्षमता के स्तर से अधिक नुकसान पहुंचाने वाली घटना के रूप में परिभाषित किया है”।

संयुक्त राष्ट्र के आपदा जोखिम न्यूनीकरण कार्यालय (United Nations Office for Disaster Risk Reduction) द्वारा परिभाषा “आपदा समुदाय या समाज की कार्यपद्धति में एक गंभीर व्यवधान है जिससे व्यापक मानविक, भौतिक, आर्थिक या पर्यावरणीय नुकसान

होते हैं जो प्रभावित समुदाय या समाज के अपने संसाधनों का उपयोग करने की क्षमता से अधिक होते हैं”।

13.5.1 आपदा के प्रकार

आपदाओं को अक्सर उनके कारण के आधार पर; प्राकृतिक या मानव निर्मित अथवा उनकी अभिव्यक्तियों के आधार पर; तीव्र शुरुआत आपदा या धीमी-शुरुआत आपदा के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। इसे भूकंप या बाढ़ जैसी अनोखी, विशिष्ट और अप्रत्याशित घटना के परिणामस्वरूप होने वाली स्थिति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसके विपरीत धीमी गति से शुरू होने वाली आपदा समय के साथ धीरे-धीरे सामने आती है और अक्सर विभिन्न घटनाओं का परिणाम होती है जैसे सूखा। इसलिए इन्हें मोटे तौर पर दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

- **आकस्मिक या तेजी से शुरू होने वाली आपदाएँ (Sudden or rapid-onset disasters):** प्राकृतिक आपदाएँ, जो भोजन तक पहुंच को प्रभावित करती हैं और / या जनसंख्या विस्थापन का कारण बनती हैं (बाढ़, चक्रवात, भूकंप आदि)। ऐसी आपदाएँ जीवन पर विनाशकारी प्रभाव डालती हैं।
- **धीमी शुरुआत वाली आपदाएँ (Slow onset disasters):** ये आमतौर पर सूखा और फसल का नष्ट हो जाना जैसी आपदाएँ हैं। ये मूक आपदाएँ जैसे सूखा, भुखमरी, महामारी, जीर्ण कुपोषण आदि भी जीवन पर बुरा प्रभाव डालते हैं।

13.6 आपदाओं में पोषणज आपात स्थिति

तनाव और अस्थिरता की असामान्य स्थितियाँ प्राकृतिक या मानव निर्मित आपदाओं के परिणामस्वरूप होने वाली आपात स्थितियों की विशेषताएं हैं। हालांकि प्रत्येक आपातकाल विशिष्ट और चुनौतीपूर्ण होता है, सामान्य स्थितियों में कुछ बदलाव पोषण संबंधी आपात स्थिति उत्पन्न करते हैं। इसमें निम्न शामिल हैं:

- **आजीविका रणनीतियों में परिवर्तन:** आय अर्जित करने और आवश्यक वस्तुओं और सेवाओं को प्राप्त करने हेतु सामान्य रणनीतियाँ आपातकाल में बाधित या कम कुशल हो जाती हैं। कम वांछनीय (भीख माँगना / आभूषण या घर का सामान बेचना) और कम-कुशल (कम मात्रा में भोजन करना या समझौता मजदूरी पर काम करना) रणनीतियों को

आपदा का सामना करने की रणनीतियों के रूप में संदर्भित किया जाता है और इन्हें अपनाया या विस्तारित किया जाता है।

- **निर्धनता की व्यापकता और तीव्रता में विस्तार:** आय में गिरावट और घर की लघु या दीर्घकालिक व्यवहार्यता के लिए आवश्यक संपत्ति का खोना।
- **प्रधान खाद्य पदार्थों तक पहुंच और उपलब्धता में कमी:** खाद्य और उत्पादक संसाधन नष्ट हो जाते हैं, उत्पादन विफल हो जाता है, व्यापार बाधित होता है और उत्पादों की बाजारों में पहुंच अवरुद्ध हो जाती है।
- **घरेलू तथा सामुदायिक संरचना और कार्यों में परिवर्तन:** मृत्यु, विकलांगता, प्रवास या सशस्त्र बलों के लिए स्वीकृति लोगों को अपने घरों और समुदायों से विस्थापित कर देती है। जो इससे बच जाते हैं उन्हें समाज में नई भूमिकाओं को मानते हुए स्वयं की क्षतिपूर्ति करनी पड़ती है। राजनैतिक बदलाव, सशस्त्र संघर्ष या घटते संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा से समुदायों में तनाव बढ़ता है जो समुदाय के सामान्य कार्यों को बाधित करता है।
- **मृत्यु और विकलांगता के लिए संवेदनशीलता में वृद्धि:** कई नए खतरे जैसे कुपोषण, रोग संचरण में वृद्धि, स्वास्थ्य सेवाओं में रुकावट या अवरुद्ध पहुंच, अपर्याप्त पानी और स्वच्छता और सुरक्षात्मक बुनियादी ढांचों, वस्तुओं और सेवाओं की हानि, मृत्यु और विकलांगता के लिए संवेदनशीलता को बढ़ाते हैं।

13.6.1 आपदाओं में कुपोषण

कुपोषण एक बीमारी नहीं है, बल्कि एक या एक से अधिक नकारात्मक कारकों (अपर्याप्त भोजन, अपर्याप्त देखभाल, खराब स्वच्छता और स्वास्थ्य सेवाओं के लिए अपर्याप्त पहुंच) का एक परिणाम है जो शरीर में तनाव की स्थिति उत्पन्न करता है। तीव्र कुपोषण (क्षीणता; wasting और/या शोफ; oedema) अपर्याप्त और खराब गुणवत्ता वाले भोजन के सेवन, कुअवशोषण या रोग से जुड़ी चयापचय आवश्यकताओं में वृद्धि के कारण पोषक तत्वों की हानि के कारण होता है। आपात स्थिति में चिंता का प्रमुख विषय मध्यम और गंभीर तीव्र कुपोषण का बढ़ता जोखिम है क्योंकि तीव्र कुपोषण का मृत्यु से दृढ़ सम्बंध है। कुपोषण के कारण बौनापन एक बच्चे को उसकी पूर्ण शारीरिक और मानसिक क्षमता तक पहुंचने से रोकता है तथा यह व्यक्ति के कार्य उत्पादन और राष्ट्रीय विकास पर बड़ा प्रभाव डाल सकता है। आपात स्थितियों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी आम है, विशेष रूप से भोजन राशन पर

निर्भर प्रभावितों में। विटामिन ए का सेवन अक्सर आपातकालीन स्थितियों में सीमित होता है क्योंकि ऐसी स्थितियों में खाद्य आपूर्ति अपर्याप्त या अनुचित होती है और व्यक्ति की विटामिन ए युक्त खाद्य पदार्थों तक पहुंच कम हो जाती है। उचित भोजन समर्थन के बिना, शरीर में विटामिन ए का भंडार गंभीर रूप से कम हो जाता है।

आपातकालीन स्थितियों में भीड़-भाड़ वाले आश्रयों, जनसंख्या विस्थापन के कारण व्यवधानों और स्वास्थ्य अवसंरचनाओं के खत्म होने के कारण संचारी और संक्रामक रोगों में वृद्धि हो जाती है। अतिसार, खसरा और निमोनिया जैसी बीमारियों का संचरण तेज हो जाता है और बाल मृत्यु दर बढ़ जाती है। आपात स्थिति में खसरा विशेष रूप से आम है और यह तीव्र कुपोषण और विटामिन ए की कमी को खतरनाक स्तर तक बढ़ा सकता है। प्रतिरक्षा प्रणाली के बेहतर तरीके से कार्य करने और बच्चों की स्वस्थ वृद्धि एवं विकास के लिए विटामिन ए आवश्यक है। महामारी विज्ञान के अध्ययनों से संकेत मिलता है कि विटामिन ए की पूरक खुराक बच्चों में दस्त और खसरा से जुड़ी निमोनिया की घटनाओं और गंभीरता में कमी लाकर मृत्यु दर और गंभीर रुग्णता को कम करती है। इसे रोकने के लिए यह सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है कि उन क्षेत्रों में जहाँ छोटे बच्चों का विटामिन ए का सेवन अपर्याप्त है, वहाँ स्तनपान, आहारिय सुधार, भोजन के प्रबलीकरण और पूरक आहार के माध्यम से विटामिन दिया जाए।

सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी तब होती है जब व्यक्तियों का आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों का अंतर्ग्रहण कम होता है अथवा किसी रोग या संक्रमण के कारण वे सूक्ष्म पोषक तत्वों को अवशोषित करने में असमर्थ होते हैं। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी एक प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। इसके अंतर्गत आवश्यक विटामिनों और खनिज लवणों जैसे विटामिन ए, आयोडीन, लौह तत्व और जिंक की कमी होती है। कम आय वाले देशों में रहने वाले ज्यादातर लोगों में आमतौर पर एक से अधिक सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी देखी जाती है। खाद्य पदार्थों की अनुपलब्धता, पोषण शिक्षा की कमी और कुछ सांस्कृतिक प्रथाओं की इस स्वास्थ्य समस्या में महत्वपूर्ण भूमिका है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से अतिसार, खसरा, मलेरिया और निमोनिया से संबंधित संक्रमण और मृत्यु दर के सामान्य जोखिम में वृद्धि होती है।

आपातकालीन स्थितियों में जनसंख्या को सामाजिक विनाश और भौतिक हिंसा का भी सामना करना पड़ता है, जिसका मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य और पारिवारिक संरचना पर प्रभाव पड़ता है। परिवारों में हिंसा और अत्यधिक संकट के अनुभव हो सकते हैं, जैसे मृत्यु, पारिवारिक अलगाव, बलात्कार (जिसमें अवांछित गर्भधारण हो सकता है), संपत्ति और

आश्रय का नुकसान तथा बाधित भोजन और उत्तरजीविता प्रणाली। यह मनोवैज्ञानिक आघात भूख के शारीरिक प्रभाव और अस्तित्व के लिए मानवीय सहायता पर निर्भरता के साथ मिलकर व्यवहार और भावनाओं में परिवर्तन पैदा करता है, जो आहारिय आदतों पर प्रभाव डालता है।

ये कठिनाइयाँ प्रभावी परवरिश के तरीकों और माँ-बच्चे के सम्बंधों को बाधित कर सकती हैं और नई स्थिति का सामना करने की क्षमता को प्रभावित कर व्यक्ति में उदासीनता या हीन भावना पैदा कर सकती हैं (जैसे भोजन प्रदान करने, तैयार करने तथा परिवार का पोषण करने की उनकी इच्छा और क्षमता)। देखभाल एवं पोषण प्रदान करने वालों के खराब पोषण, मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य के कारण बच्चों में पोषण उपचार की दक्षता सीमित हो सकती है जिस कारण उनमें अधिक कुपोषण देखने को मिलता है। परिणामस्वरूप, आपात स्थिति समुदाय के मनोसामाजिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव द्वारा दीर्घकालीन या तीव्र कुपोषण और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमियों के मामलों को उत्तेजित कर सकती है।

13.6.2 आपदाओं में पोषण मूल्यांकन

उद्देश्य

- अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत मानक तरीकों के प्रयोग द्वारा आपातकालीन प्रभावित जनसंख्या में कुपोषण की व्यापकता का पता लगाना।
- कुपोषण के प्रत्यक्ष, अंतर्निहित और बुनियादी कारणों की पहचान के लिए मानवमितीय जानकारी और विभिन्न संकेतक एकत्र करना।

आपदाओं में कुपोषण का मापन

आपातकालीन स्थितियों में निम्न विधियों द्वारा कुपोषण का मापन किया जा सकता है।

1. बच्चों में ऊंचाई के अनुरूप वजन (Weight-for-Height in children)

सर्वेक्षणों में तीव्र कुपोषण (क्षीणता) का पता लगाने के लिए “ऊंचाई के लिए वजन” सूचकांक का सबसे अधिक उपयोग किया जाता है। जनसंख्या की पोषण स्थिति का आकलन और निगरानी करने के लिए बच्चों में ऊंचाई के लिए वजन का मापन सबसे अच्छा संकेतक है जिसके मापन के लिए समूह प्रतिचयन विधि का उपयोग करके 6 से 59 महीने की आयु के बच्चों का सर्वेक्षण किया जाता है। आयु के अनुरूप ऊंचाई (height for age) में विलंबित वृद्धि, यानी “बौनापन”, दीर्घकालीन कुपोषण की स्थितियों में पाया जा सकता है। इस मामले में, आयु के अनुरूप वजन (weight for age) एक अधिमानित संकेतक हो सकता है क्योंकि

यह संकेतक वर्तमान अल्पपोषण का पता लगाता है, जो अक्सर आपदाओं में दृष्टिगत होता है जब सामान्य भोजन आपूर्ति श्रृंखला में व्यवधान के कारण पर्याप्त भोजन तक पहुंच नहीं होती है।

2. शरीर द्रव्यमान सूचकांक (Body Mass Index)

शरीर में वसा की मात्रा जानने हेतु शरीर द्रव्यमान सूचकांक/बॉडी मास इन्डेक्स (बी.एम.आई.) उपयुक्त साधन है। इसकी गणना के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है:

$$\text{शरीर द्रव्यमान सूचकांक} = \frac{\text{वजन (किलोग्राम)}}{\text{लम्बाई (मीटर}^2\text{)}}$$

16 से 18 के मध्य का अनुपात मध्यम कुपोषण और 16 से कम अनुपात गंभीर कुपोषण को दर्शाता है।

3. ऊपरी बांह के मध्य भाग का घेरा (Mid Upper Arm Circumference; MUAC)

ऊपरी बांह के मध्य भाग का घेरा नापने से मांसपेशियों के विकास के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। 1-5 वर्ष तक के बच्चों में पोषण स्तर के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए यह माप अत्यन्त उपयोगी है। यह एक सरल और व्यावहारिक माप है जिसका उपयोग समुदाय में गंभीर कुपोषण का पता लगाने के लिए एक कम प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा भी किया जा सकता है। पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों में ऊपरी बांह के मध्य भाग के घेरे का 115 मिमी से कम का माप गंभीर तीव्र कुपोषण का संकेतक है और बच्चों में मृत्यु दर का अनुमान लगाने हेतु यह उपयोगी है। इस माप का उपयोग पोषण कार्यक्रमों में सम्मिलित करने हेतु कुपोषित किशोरों और गर्भवती महिलाओं की पहचान करने के लिए भी किया जाता है। ऊपरी बांह के मध्य भाग के घेरे का 20.7 सेमी से कम का माप गंभीर जोखिम को इंगित करता है।

4. पोषणज शोफ (Nutritional Oedema)

पोषण संबंधी शोफ की उपस्थिति प्रोटीन की गंभीर कमी का एक संकेतक है जिसे त्वरित ध्यान और देखभाल की आवश्यकता होती है। भुखमरी के दौरान शरीर की संपूर्ण ऊर्जा आवश्यकताएं ऊतकों में मौजूद वसा, प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट के ऑक्सीकरण द्वारा प्राप्त होती हैं। ऊतकों के प्रोटीन का टूटना भुखमरी के दौरान लगातार होता है। एक वयस्क में प्रतिदिन उपयोग होने वाली ऊतक प्रोटीन की मात्रा 60-70 ग्राम तक हो सकती है, जो प्रति दिन लगभग 240-280 किलो कैलोरी प्रदान करती है, जबकि ऊर्जा की बाकि आवश्यकताएं

वसीय ऊतकों में मौजूद वसा के ऑक्सीकरण से प्राप्त होती हैं। भुखमरी या कुपोषण की स्थिति में प्रोटीन की कमी के परिणामस्वरूप ऊतकों में असामान्य द्रव प्रतिधारण पोषणज शोफ का कारण बनता है।

5. ऊतकों और शारीरिक वजन में कमी

भुखमरी के दौरान शरीर का वजन लगातार कम होता है। शरीर के वजन का कम होना सभी ऊतकों और अंगों को समान रूप से प्रभावित नहीं करता है। मांसपेशियां, यकृत, त्वचा का अधिक मात्रा में वजन कम होता है जबकि हृदय और मस्तिष्क का कम मात्रा में।

6. भुखमरी के दौरान कार्बोहाइड्रेट, वसा और प्रोटीन का चयापचय

भुखमरी के पहले और दूसरे दिनों के दौरान शरीर के कार्बोहाइड्रेट भंडार का उपयोग किया जाता है। तीसरे दिन से, ऊर्जा मुख्य रूप से वसा (80-90 प्रतिशत) और बहुत कम मात्रा में प्रोटीन से (10-20 प्रतिशत) प्राप्त होती है।

7. भुखमरी में शारीरिक और नैदानिक परिवर्तन

वसीय ऊतकों की वसा और मांसपेशियों के क्षय के कारण व्यक्ति बहुत कमजोर हो जाता है। रक्तचाप कम हो जाता है और स्पंदन दर धीरे-धीरे गिरने लगती है। धीरे-धीरे एनीमिया विकसित होता है। प्लाज्मा प्रोटीन के क्षय के कारण पैरों, हाथों और चेहरे में सूजन हो जाती है। कोमा के कारण कीटोसिस (एक चयापचयी स्थिति जिसमें रक्त या मूत्र में कीटोन तत्वों; एसिटोसेटेट, बीटा-हाइड्रॉक्सीब्यूटाइरेट और एसिटोन के उच्च स्तर देखे जाते हैं) विकसित होता है और व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।

8. अल्पपोषण

ऊर्जा का अपर्याप्त अंतर्ग्रहण अल्पपोषण का कारण है। यह विकासशील देशों में गरीबी, बीमारियों आदि के कारण कई व्यक्तियों में दिखाई देता है। कुपोषण के प्रभाव इस प्रकार हैं: शरीर के वजन में कमी, ऊतकों के प्रोटीन और वसीय ऊतकों के नुकसान के कारण क्षीणता, प्लाज्मा प्रोटीन में कमी के कारण शोफ, सामान्य कमजोरी, उदासीनता और रुचि की कमी।

13.7 पोषणज आपातकाल के लिए व्यवहार्यता

- जनसंख्या की पोषण संबंधी आपातकाल के प्रति संवेदनशीलता मौजूदा स्वास्थ्य और पोषण की स्थिति द्वारा प्रभावित होती है।

- एचआईवी और एड्स खाद्य असुरक्षा तथा गरीबी को बढ़ाते हैं और बड़े पैमाने पर श्रम बल और कृषि पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।
- गरीबी और अधिक शहरी दबाव, पीने के पानी की अपर्याप्त मात्रा, स्वच्छता एवं बुनियादी ढाँचों सम्बंधी निम्न स्तरीय सुविधा, शहरी प्रदूषण, भूमिहीनता और लगातार भोजन की कमी समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं।
- जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के कारण भविष्य में लगातार अधिक अकाल पड़ने की सम्भावना हो सकती है।

13.8 पोषण हस्तक्षेप

कुपोषण के कारणों की जानकारी प्राथमिक और माध्यमिक स्रोतों से एकत्र की जा सकती है जिसमें मौजूदा स्वास्थ्य और पोषण रूपरेखाएं, शोध रिपोर्ट, प्रारंभिक चेतावनी सूचना, स्वास्थ्य केंद्र रिकॉर्ड, खाद्य सुरक्षा रिपोर्ट और सामुदायिक कल्याण समूह शामिल हैं और इसमें मात्रात्मक और गुणात्मक दोनों जानकारी शामिल की जाती है। आपदा प्रभावित जनसंख्या के पोषण की स्थिति का प्रारंभिक मूल्यांकन आपातकालीन प्रतिक्रिया, राशन के घटकों और किसी भी अतिरिक्त चयनात्मक आहारिय कार्यक्रम की आवश्यकता की योजना बनाने में मदद करता है। पोषण संबंधी हस्तक्षेप, मुख्य रूप से आहारिय कार्यक्रम होते हैं। आपातकालीन प्रभावित जनसंख्या की पोषण संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सभी प्रमुख संगठनों जैसे संयुक्त राष्ट्र संस्था, द्विपक्षीय दाता, स्थानीय सरकार, गैर-सरकारी संगठन, समुदाय विशेषकर महिलाओं के बीच एक समन्वित दृष्टिकोण के लिए प्रतिबद्धता आवश्यक है।

ऐसे कार्यक्रमों में भोजन राशन की योजना प्रभावित समुदाय की भागीदारी के साथ बनाई जानी चाहिए। प्रभावित जनसंख्या की उचित भोजन और पोषण संबंधी आवश्यकताओं को निर्धारित करने की प्रक्रिया के दौरान विशेष रूप से महिलाओं से परामर्श दिया जाना चाहिए। आपदा के दौरान तात्कालिक उपाय के रूप में किसी भी जनसंख्या समूह जो उच्च पोषण जोखिम में हो, को प्रति सप्ताह प्रति व्यक्ति 3 से 4 किलोग्राम भोजन प्रदान किया जाना चाहिए। इस स्तर पर महत्वपूर्ण बात यह है कि संतुलित आहार न होने पर भी भोजन में पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा प्रदान की जाए।

जब तक आपदा पीड़ित जनसंख्या विशिष्ट भोजन सहायता पर निर्भर हो, खाद्य राशन द्वारा प्रति व्यक्ति प्रति दिन 1700 से 2000 किलो कैलोरी प्रदान करने का लक्ष्य रखना चाहिए। यह

भोजन जनसंख्या के भोजन पैटर्न का हिस्सा होना चाहिए। राशन में भोजन की मात्रा संकट के चरण और उपलब्ध संसाधनों पर निर्भर होनी चाहिए। भोजन राशन जितना संभव हो उतना सरल होना चाहिए: एक मूल भोजन (जैसे चावल, मक्का, गेहूं का आटा), ऊर्जा का एक केंद्रित स्रोत, (तेल या अन्य वसा) और प्रोटीन का एक केंद्रित स्रोत (जैसे सूखे या डिब्बाबंद मछली या डिब्बाबंद मांस)। मूल राशन के साथ, संवेदनशील समूहों (5 वर्ष से कम उम्र के बच्चे, गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाएं और कुपोषित व्यक्ति) को पूरक आहार दिया जाना भी आवश्यक है।

कुछ मामलों में, जनसंख्या की जरूरतों को पूरा करने के लिए अतिरिक्त सेवाओं को लागू किया जाना चाहिए। जैसे सामुदायिक-आधारित उपचारात्मक आहार कार्यक्रम शुरू करने का निर्णय पूरी तरह से गंभीर रूप से कुपोषित बच्चों की बड़ी संख्या की उपस्थिति पर आधारित है, जिन्हें तत्काल जीवन रक्षक उपचार की आवश्यकता होती है।

उपचारात्मक आहार कार्यक्रमों को स्वास्थ्य प्रणालियों की क्षमता को कम नहीं करना चाहिए। जहां तक संभव हो, कार्यक्रमों का लक्ष्य गंभीर कुपोषण के उपचार के लिए मौजूदा क्षमता को और अधिक मजबूत करने का होना चाहिए। आपातकालीन कार्यक्रमों के साथ ऐसी सेवाओं को अपनाने करने का निर्णय केवल आवश्यक होने पर ही लिया जाना चाहिए।

आपातकालीन स्थितियों में वृद्धों के लिए उपचारात्मक पोषण की योजना बनाते समय निम्नलिखित बिंदुओं पर विचार किया जाना चाहिए:

- पाचन संबंधी विकारों और दांतों की कमी को ध्यान में रखते हुए वृद्ध व्यक्तियों के लिए सुपाच्य भोजन दें (जैसे कि साबुत अनाज के बजाय अनाज का आटा)।
- भोजन परिचित और सांस्कृतिक रूप से स्वीकार्य होना चाहिए।
- कार्य हेतु भोजन कार्यक्रमों में वृद्धों को शामिल करें।
- सुनिश्चित करें कि वृद्ध लोगों के पास अपने भोजन को पकाने के लिए ईंधन, पानी और बर्तन जैसे संसाधन हों।
- सुनिश्चित करें कि वृद्ध लोगों के लिए उपलब्ध बर्तन प्रबंधनीय हों; जैसे खाना पकाने के छोटे बर्तन या पानी के एक बड़े बर्तन के स्थान पर दो छोटे बर्तन।
- भोजन की संयुक्त तैयारी के लिए वृद्ध लोगों को सहायक परिवारों के जोड़ें।

- वृद्ध लोगों के पोषण की स्थिति को प्रभावित करने वाले विशेष जोखिम कारकों और मुद्दों को समझें।
- सुनिश्चित करें कि वृद्ध लोगों के पास भोजन वितरण की पहुँच हो।

आपातकालीन स्थितियों में जनसंख्या का विघटन और विस्थापन शिशुओं और छोटे बच्चों के स्वास्थ्य और पोषण की स्थिति पर बहुत प्रभाव डालता है। बच्चों के पोषण और देखभाल को बाल स्वास्थ्य और स्थिरता को बढ़ावा देने वाले प्रमुख कारकों में से एक के रूप में पहचाना गया है। एक आपात स्थिति के दौरान कुपोषण बच्चे के जीवन के लिए एक बड़ा खतरा है; यह उनके संज्ञानात्मक, सामाजिक, शारीरिक और भावनात्मक विकास तथा क्रियात्मक कौशल पर भी प्रभाव डालता है। कुपोषण को रोकने का सबसे अच्छा तरीका विशिष्ट स्तनपान, उपयुक्त पूरक खाद्य पदार्थ और सहायक देखभाल वातावरण द्वारा बच्चों के लिए इष्टतम भोजन और देखभाल सुनिश्चित करना है। एक आपात स्थिति में पोषण के अतिरिक्त अन्य आवश्यक बातों जैसे निजी सुरक्षा, गोपनीयता और आश्रय आदि का भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

तालिका 13.1 खाद्य सहायता के प्रकार और उद्देश्य

क्रमांक	हस्तक्षेप	विवरण	उद्देश्य
1.	सामान्य वितरण	समग्र रूप से प्रभावित आबादी को खाद्य वस्तुओं के संयोजन का मुफ्त वितरण। यदि आबादी अपने स्वयं के खाद्य आपूर्ति से वंचित हो जाती है, या जनसंख्या में कुपोषण की दर असामान्य रूप से उच्च है, तो खाद्य राशन को पोषण की जरूरतों को पूरा करना चाहिए।	1. भोजन के सामान्य स्रोतों से वंचित आबादी की तत्काल खाद्य जरूरतों को पूरा करना। 2. अकाल की रोकथाम या आजीविका संरक्षण; मुकाबला करने वाली रणनीतियों को नुकसान पहुंचाने से रोकना। 3. आजीविका की प्राप्ति; सहायक कृषि गतिविधियों या पशुओं की पुनः प्राप्ति।

2.	पूरक पोषण	पोषण संवेदनशील समूहों (5 वर्ष से कम आयु के बच्चे, कुपोषित, गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाएं), सामाजिक तन्त्र से निष्कासित लोग जैसे एकाकी नाबालिग, स्वयं की देखभाल करने में असमर्थ लोग जैसे विकलांग और वृद्ध जन के लिए सामान्य वितरण के अतिरिक्त खाद्य सहायता का प्रावधान।	<ol style="list-style-type: none"> 1. अधिक जोखिम स्थितियों में जीवन बचाने के लिए मध्यम कुपोषित व्यक्तियों के लिए पोषण समर्थन। 2. गंभीर कुपोषण की रोकथाम। 3. उच्च आवश्यकताओं वाले लोगों में कुपोषण की रोकथाम। 4. पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों में कुपोषण की रोकथाम।
3.	उपचारात्मक पोषण कार्यक्रम	गंभीर रूप से कुपोषित बच्चों की संपूर्ण पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए चिकित्सीय उपचार के साथ विशिष्ट खाद्य प्रदान करना और उनका पुनर्वास।	जीवन बचाने के लिए चिकित्सा और पोषण संबंधी सहायता।

13.9 आपातकालीन भोजन और सहायता का महत्व

आपात स्थिति से प्रभावित संवेदनशील समूहों के पोषण की स्थिति की रक्षा करना आवश्यक है। तीव्र कुपोषण से पीड़ित व्यक्तियों के बीमार पड़ने और मरने की संभावना अधिक होती है। साथ ही, बीमार लोगों के कुपोषित होने की संभावना अधिक होती है। भोजन सहायता का उद्देश्य आपदा से प्रभावित लोगों हेतु भोजन की पर्याप्त उपलब्धता और पहुंच सुनिश्चित कर जीवन को बनाए रखना, जीवित रहने हेतु पर्याप्त खाद्य संसाधन प्रदान करना, आजीविका सुरक्षा और लोगों को घर के संसाधनों को दोबारा जोड़ने के लिए अल्पकालिक आय हस्तांतरण या प्रतिस्थापन प्रदान करना। आपात स्थिति कारकों की एक विस्तृत श्रृंखला को प्रभावित करती है जो कुपोषण, बीमारी (रुग्णता), और मृत्यु (मृत्यु दर) के जोखिम को बढ़ा

सकती है। इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि आपातकाल के दौरान जनसंख्या के भीतर विभिन्न कमजोर समूहों की पहचान की जानी चाहिए।

उन्हें निम्न के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है:

- **उनकी शारीरिक भेद्यता:** शिशु और छोटे बच्चे, गर्भवती और स्तनपान करने वाली महिलाएं, जीर्ण रोगों जैसे एचआईवी / एड्स से ग्रस्त लोग;
- **उनकी भौगोलिक भेद्यता:** वे लोग जो उन क्षेत्रों में रहते हैं जो सूखे या बाढ़ या संघर्ष के क्षेत्रों के अधीन हैं;
- **उनकी राजनीतिक भेद्यता:** उत्पीड़ित जनसंख्या
- **आंतरिक विस्थापन और शरणार्थी की स्थिति:** शरणार्थियों या आंतरिक रूप से विस्थापित व्यक्तियों के रूप में उनकी स्थिति।

13.9.1 आपातकाल में खाद्य सहायता कार्यक्रमों की प्राथमिकताएं

- जहाँ तत्काल आवश्यकता हो वहाँ तुरंत भोजन प्रदान करें, उदाहरण के लिए पृथक जनसंख्या में, संस्थानों, अस्पतालों, शरणार्थी शिविरों में तथा बचाव दल और सहायता कर्मियों के बीच।
- प्रभावित जनसंख्या की जनसांख्यिकीय विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए उनकी खाद्य जरूरतों का प्रारंभिक अनुमान लगाएं।
- खाद्य स्टॉक (देश के खाद्य भंडार, खाद्य सहायता संगठन आदि), परिवहन, भंडारण और वितरण की पहचान करें।
- स्थानीय रूप से उपलब्ध भोजन और आपूर्ति की सुरक्षा और उपयुक्तता सुनिश्चित करें।
- भोजन और पोषण की स्थिति की बारीकी से निगरानी करें, ताकि बदलती परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए भोजन की आपूर्ति और राशन को संशोधित किया जा सके।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।

- a. पांच साल से कम आयु के बच्चों की मौत के लिए उत्तरदायी महत्वपूर्ण कारकों में से एक है।

- b. के अंतर्गत गम्भीर प्राकृतिक आपदाएं या युद्ध जैसी भयावह घटनाएं निहित हैं।
- c. आपातकालीन स्थितियों में भीड़-भाड़ वाले आश्रयों, जनसंख्या विस्थापन के कारण रोगों में वृद्धि हो जाती है।
- d. शरीर में वसा की मात्रा जानने हेतु उपयुक्त मापक साधन है।
- e. भुखमरी के पहले और दूसरे दिनों के दौरान शरीर के भंडार का उपयोग किया जाता है।
- f. जब तक आपदा पीड़ित जनसंख्या विशिष्ट भोजन सहायता पर निर्भर हो, खाद्य राशन द्वारा प्रति व्यक्ति प्रति दिन किलो कैलोरी प्रदान करने का लक्ष्य रखना चाहिए।

13. 10 सारांश

प्राकृतिक और मानव निर्मित दोनों प्रकार की घटनाओं से मानव जीवन और सार्वजनिक स्वास्थ्य को खतरा उत्पन्न होता है। आपदा और आपातकालीन स्थितियाँ पोषण, स्वास्थ्य और खाद्य सुरक्षा की प्रमुख चुनौतियाँ हैं। आपातकालीन परिस्थितियों में कुपोषण के जोखिम के बारे में हाल के वर्षों में जागरूकता बढ़ी है और पोषण के क्षेत्र में आपातकालीन स्थितियों हेतु तैयारी और प्रतिक्रिया में सुधार हुआ है। वास्तव में, आपदाएं कुपोषण, संक्रमण और खराब स्वास्थ्य के दुष्चक्र को शुरू करती हैं जिस कारण रोगों का बोझ बढ़ जाता है और कुपोषित व्यक्तियों को कई बार आपदा से फैलने वाले पर्यावरणीय क्षरण के कारण संक्रामक रोगों के शिकार होने की संभावना भी होती है। भूख, स्वास्थ्य और सामाजिक सेवा प्रणालियों के खराब प्रदर्शन, कम टीकाकरण कवरेज और प्राथमिक देखभाल के खराब प्रावधान, लोगों को बीमारी और मृत्यु के लिए अधिक संवेदनशील बनाते हैं। यह समग्र आपातकालीन तैयारियों में पोषण के समावेश को भी दर्शाता है। राहत चरण और बाद के पुनर्वास और विकास के चरणों में पर्याप्त पोषण सुनिश्चित करने के लिए विशेष रूप से समझ और प्रयास आवश्यक हैं।

आपातकालीन स्थितियों में प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण और सूक्ष्म पोषक तत्वों की हीनता दोनों हो सकते हैं। इस प्रकार, मानव पोषण महत्वपूर्ण है। अचानक आने वाली आपदा जैसे तूफान, भूकंप, बाढ़ आदि में त्वरित भोजन प्रदान करने से ज्यादा महत्वपूर्ण कुछ नहीं है। भोजन और पोषण परिदृश्य के अलावा, आपदा के कारण पर्यावरण भी प्रभावित होता है जो आपदा के

गुणक प्रभाव में योगदान देता है। यह महत्वपूर्ण है कि पोषण से संबंधित हस्तक्षेपों को प्रभावित क्षेत्रों में आपातकालीन प्रबंधन के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण के अभिन्न अंग के रूप में देखा और चलाया जाए।

13.11 पारिभाषिक शब्दावली

- **कुपोषण:** अल्पपोषण अथवा अतिपोषण की स्थिति।
- **रुग्णता:** रोग/बीमारी की स्थिति।
- **आपदा:** ऐसी मानव निर्मित या प्राकृतिक घटनाएं जो समुदाय के अस्तित्व की सामान्य परिस्थितियों को बाधित करती हैं और नुकसान पहुंचाती हैं।
- **क्षीणता (wasting):** ऊँचाई के अनुरूप कम वजन।
- **बौनापन (stunting):** आयु के अनुरूप ऊँचाई में विलंबित वृद्धि।
- **शोफ (oedema):** भुखमरी या कुपोषण की स्थिति में प्रोटीन की कमी के परिणामस्वरूप ऊतकों में असामान्य द्रव प्रतिधारण।

13.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
 - a. अल्पपोषण अथवा कुपोषण
 - b. गम्भीर आपातकाल
 - c. संचारी और संक्रामक
 - d. शरीर द्रव्यमान सूचकांक/बॉडी मास इन्डेक्स
 - e. कार्बोहाइड्रेट
 - f. 1700 से 2000

13.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

- Disaster Management in India (2004) –A Status Report, Ministry of Home Affairs, National Disaster Management Division, August 2004 p.3.
- Keys, A. (1950). The Biology of Human Starvation, Vol. I. University of Minnesota Press, Minneapolis, U.S.A.
- Lusk, G. (1928). The Science of Nutrition, 4th Edition, Saunders, Philadelphia and London.
- M. Swaminathan. 1998. Metabolism in Starvation and Undernutrition chapter in Food and Nutrition. Vol.1 BPP. pp 630.
- UNHCR/UNICEF/WFP/WHO (2003). Food and nutrition needs in emergencies.
- United Nations International Strategy for Disaster Reduction (UN/ISDR) (2004).
- World Health Organization (1999). Management of severe malnutrition: a manual for physicians and other senior health workers.
- World Health Organization (2000). The management of nutrition in major emergencies. Geneva: WHO.
- World Health Organization (2004). Guiding Principles for Feeding Infants and Young Children during Emergencies.
- World Health Organization (2006). Mental Health and Psychosocial Well-Being among Children in Severe Food Shortage Situations, p2.

13.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. आपदाएं भोजन और पोषण की स्थिति को कैसे प्रभावित करती हैं? आपदाओं में खाद्य सहायता के क्या उद्देश्य हैं?
2. आपात स्थिति में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को विशेष रूप से क्यों संबोधित किया जाता है? इसका बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ता है?
3. आपातकालीन स्थितियों में पोषण मूल्यांकन के क्या उद्देश्य हैं? कुपोषण के मापन की विधियों का विस्तृत उल्लेख कीजिए।
4. “आपादा में खाद्य सहायता अत्यंत आवश्यक है”। इस कथन की विवेचना कीजिए।